नारी चेतना और अपराध

नारी चेतना और अपराध

एम ए अंसारी
उपमहानिरीक्षक कारागार
राजस्थान, जयपुर

पचशील प्रकाशन, जयपुर

© एम ए अंसारी

ISBN 81-7056-064-0

प्रकाशक पंचशील प्रकाशन
फिल्म कालोनी जयपुर 302003

संस्करण प्रथम 1989

मूल्य एक सौ पचास रुपया

मुद्रक शीतल प्रिंटर्स
जयपुर-302003

NARI CHETNA AUR APRADH
By M A Ansari

Price
Rs 150

प्रस्तावना

वतमान विश्व समाज मे नारी अस्तित्व एक भयकर सकटपूर्ण मोड से गुजर रहा है। नारी स्वातन्त्र्य व अधिकार की बातें तो की जा रही हैं किन्तु साथ मे नारी का शोषण नारी के प्रति क्रूरता व नारी के प्रति अन्याय भी एक सामान्य बात बन कर रह गई है। भारतीय सविधान की धारा 10 मे कहा गया है, 'वे सभी व्यक्ति जो आजादी से वचित हैं, उनके साथ सम्मानपूर्वक मानवीय व्यवहार किया जायेगा क्योकि सम्मान पाने का अधिकार सबको है।' मानव ससाधन विकास मन्त्रालय द्वारा महिला कैदियो पर गठित राष्ट्रीय विशेषज्ञ कमेटी के अध्यक्ष न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर सन्दर्भित रिपोर्ट मे कहते हैं— नारी के मानवीय अधिकारो की चर्चा भारतीय सविधान मे जीवन्त रूप से मिलती है लेकिन व्यवहार के धरातल पर एक बहुत बडा शून्य है हमे उसे बदलना है।'

इस शून्य का वृत्त और भी बडा और भयानक तथा सकटपूर्ण हो जाता है जबकि नारी अपराध के घेरे मे घिर जाती है। अपराधिक क्षेत्र की शून्यता की भयावहता की कल्पना तो मुक्त भोगी नारी द्वारा ही की जा सकती है। अपराध क्षेत्र मे ग्रसित नारी कितने ही रूप मे अपराध त्रासदी भोगती है, जिसके लिये यह आवश्यक नही कि वह स्वय अपराधी हो।

सामान्यतया जब हम नारी और अपराध की बात करते हैं तो हमारे सामने केवल अपराध करने वाली नारी का ही चित्र होता है जिसका वर्णन, विवरण व्याख्या व विवेचन किया जाता है किन्तु नारी व अपराध के सदर्भ मे विचार करते समय हम भूल जाते हैं उन अनगिनत नारियो को जो अपराध की शिकार होती है और जो अपराधियो द्वारा त्रस्त की गई हैं। अपराध का भयावह भूतिया महल नारी के कोमल वक्षस्थल पर खडा किया जाता है। इस प्रकार नारी और अपराध के सन्दर्भ मे कोई भी अध्ययन एक पक्षीय होगा यदि इसमे केवल अपराधी नारी का ही अध्ययन प्रस्तुत किया जाता है और अपराध त्रासदी से भयाक्रान्त व अपराध का कारण बनी महिलाओ की विभीषिका का वर्णन किया गया नही है प्रस्तुत अध्ययन मे तीन पक्षो का विवेचनकिया गया है —

(1) नारी के विरुद्ध अपराध

(अ) पुरुष द्वारा नारी के विरुद्ध (ब) नारी द्वारा नारी के विरुद्ध

(2) नारी के कारण होने वाले अपराध (3) नारी द्वारा किये गये अपराध

यह सही है कि हर अपराध करने वाला अपराधी तब तक नही माना जा सकता जब तक कि कानून द्वारा वह पकडा नही गया हो और उसको दण्डित नही नही किया हो। अपराध जगत् मे एकत्रित आकडो से दण्डित अपराधी महिलाओं

की सख्या की जानकारी तो मिल जाती है किन्तु महिलाओ के कारण होने वाले व महिलाओ के विरुद्ध होने वाले अपराधो के आकडे एकत्रित न करने व किये जाने के कारण इन अपराध विभीषिका से ग्रसित महिलाओ की सही सख्या की जानकारी मिलना कठिन है जिनके बारे में विवरणात्मक आधार पर ही इस समस्या की भयावहता को जाना जा सकता है। पुरुष व महिला अपराधियो की तुलनात्मक जानकारी प्राप्त करने पर यह तथ्य तो स्पष्ट है कि पुरुषो की तुलना म अपराधी महिलाओ की सख्या बहुत कम है किन्तु इस सन्दर्भ मे भूतपूर्व न्यायमूर्ति श्री पी एन भगवती के शब्द विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं ' प्रतिशत कम हो सकता है लेकिन हमारा अभिप्राय मनुष्य से है, प्रतिशत से नहीं।"

नारी सम्पूर्ण सृष्टि का मूल है। नारी की दहिक सामाजिक व आध्यात्मिक चेतना समग्र रूप से सामाजिक सरचना का केन्द्र बिन्दु है। जब यह चेतना उद्वेलित की जाती है उद्वेलन का कारण बनती है उद्वेलित हो जाती है तो सामाजिक व्यवस्था के विपरीत जो नारी चेतना के सन्दर्भ मे कृत्य जन्म लेता हैं वह अपराध कहलाता है क्योंकि समाज की विधिक रचना इसको इसी नाम से परिभाषित करती है।

यह सतत् तृषित नारी चेतना जब उद्वेलित पीडित व शोषित प्रतिशोषित होती है तो अपना अभीष्ट ढूढती है। नारी मे चेतना है वह चतन्य जीव है। उसका चैतन्य मन इसकी हृदय की सवेदनशीलता को नई अर्थ देता है वह जीना चाहती है सृष्टि के जीव को बीज रूप मे समेट कर, सृष्टा के रूप म, सतत सृजन म तृषिता के रूप मे पुरुष की अर्द्धांगिनी व सहचरी के रूप म।

यह नहीं कि उसमे पुरुष के साथ जीवन जीने के अधिकार मांगने की चेतना अभी ही जन्मी हो यह तो शाश्वत है सर्व कालिक है सनातन है सार्वभौमिक है किन्तु जब चतन्य को शून्यता की दिशा की ओर मोडा जा रहा हो जहाँ क्षितिज की सीमा मे भी जिसका अन्त नहीं दिखाई देता हो तो ऐसी स्थिति मे नारी अपने बारे मे अपने से सम्बद्ध जो भी है, उन सबके बारे में समाज सत्ता व सहयोग के बारे में वीर भोग्या वसुन्धरा के रूप म भोग की वस्तु माने जाने के बारे में योग कारक के रूप मे जीवन जीने के बारे म चेतन्य हो उठती है। उसकी चेतना कुनमुनाती है आंसू बहाती है फिर हुकार कर उठती है विद्रोह कर उठती है उस व्यवस्था के विरुद्ध, उन सबके विरुद्ध जो अनाचार विप्लव अपराध जाने कितने दुराचरण को जन्म देती है। अन्याय के विरुद्ध उस अपराध की पृष्ठभूमि में यही मूलभूत चेतना जो नारी म जन्मजात है और अपराध व अन्याय के प्रति मुखरित होना चाहती है इसको ही शब्द दिए हैं अभिव्यक्ति दी है।

एम० ए० अन्सारी

अनुक्रम

प्रथम भाग

नारी के विरुद्ध अपराध

अध्याय 1

नारी व अपराध रूपरेखा

अपराध तो होते हैं होते रहे थे और होते ही रहेंगे। यह तो मनुष्य की प्रकृति का आवश्यक अग है था और रहेगा। मानवीय सामाजिक जीवन बिताने के कर को चुकाने के रूप मे अपराध को सहना पडता है। सामाजिक जीवन को अन्तर्क्रियात्मक (अन्तर्यात्मक) प्रक्रिया के सन्दर्भ मे मानवीय पशुगत स्वभाव की प्रतिक्रियास्वरूप अपराध सामाजिक जीवन मे सहोदरी उत्पादन के रूप मे है जिसका अनचाहा अस्तित्व सदा रहा है सदा रहा था और कदाचित सदा रहेगा भी जब तक मनुष्य मानव से देवता नही हो जाता जो कि मानवता का अन्त ही होगा और जो सम्भव प्रतीत नही होता है। इस कुत्सित व्यवहार को अन्य और भी किसी भी नाम से पुकारा जाता रहा है—पाप दुष्कृति विचलन इत्यादि-इत्यादि।

यदि मनुष्य अकेला रहता होता तो इसके आचरण को कौन अच्छे बुरे पाप-पुण्य की परिभाषा मे बाधता ? फिर दया करुणा प्रेम द्वेषता अहकार घमण्ड हीनता प्रतिशोध जसी भावनाओ का कहा कसे किस प्रकार अपना अस्तित्व होता या महत्त्व होता ।

सामूहिक सामाजिक जीवन की माग के रूप म ही इन मानवोचित गुण व दोषो की भूमिका रची गई और मानव ने मानवीय कमनीय आचरण को विभिन्न शब्दो से पुकार कर सामूहिक सामाजिक उपयोगिता के आधार पर विभिन्न मूल्यो की मणिमाला म पिरो दिया। रात्रि का अपना महत्व है किन्तु दिन के परिप्रेक्ष्य मे रात्रि का महत्त्व और भी बढ जाता है जबकि रात्रि के परिप्रेक्ष्य मे दिन का। जीवन के उज्ज्वल धवल पक्ष की महत्ता उसके कालिमामय पक्ष के कारण और बढ जाती है। प्रेम की गर्मी रक्त के प्रवाह से अक्षुण्ण रहती है, कितना सुखद होता है प्रेममय अस्तित्व ? किन्तु जब यही उष्णतादायी रक्त प्रतिशोध के वशीभूत बहा दिया जाता है तो वह रक्तहीन शव कितना ठण्डा कितना भयावह कितना कारुणिक लगता है ? कितनी घृणा होती है उस रक्त पिपासु के पिशाच कृत्य से ? कितनी ठेस

लगती है संवेदनशील सामूहिक जीवन को पोषित करने वाली कोमल कमनीय कारुणिक मानवीयोचित भावनाओं को? तो फिर क्या संगठित करता है मानव अपने को? क्या संचय करता है? क्या सुख मिलता है उसको अधिक परिश्रम करने से? किंतु जब उसके श्रम से श्रृंगारित मानवीय मूल्यों की परिधि में मर्यादित साधनों से संचित श्री से उसको वंचित कर दिया जाता है तो किस प्रकार और क्यों नहीं क्रन्दन कर उठेगी सत्य व निष्ठा के गुणरस से पुष्टित मानवीय संवेदना? क्यों नहीं कांप उठेगा यह सामाजिक मन? क्यों नहीं क्रन्दन करेगी सामूहिक समाज अन्तर्चेतना? क्यों नहीं प्रतिक्रिया में उठ खड़ा होगा न्याय करने हेतु सामाजिक संगठन? चाहे जिस भी नाम से सम्बोधित किये जायें ऐसे आचरण दुराचरण विचलन पाप अपराध? शब्दों से तो मानवीय संवेदना की समझ परिलक्षित ही होती है कृत्य तो कृत्य ही रहेगा दुष्कृत्य तो दुष्कृत्य ही है जो सामाजिक संगठनात्मक सरस जीवन सर में विह्वलन उत्पन्न करे। सार्वभौमिक व सामाजिक भाषा में ऐसे कृत्यों को अपराध कहा जाता है क्योंकि समाज के न्याय की तुला में तुलन वाली विधिमार्गमयी पुस्तकों में विधि विपरीत आचरण का अपराध नाम से ही पुकारा जाता है, जिसके करने पर सामाजिक अन्तरात्मा को चोट पहुंचती है और जिसके उपचारस्वरूप दण्ड रूपी औषधि समाज की सरकार द्वारा ऐसे अपराध करने वाले समाज के सदस्य को सेवन कराई जाती है जिससे वह समाज के भौतिक व मानसिक स्वास्थ्य को भविष्य में कोई क्षति न पहुंचा सके। अपराध तो समाज में किये ही जायेंगे। अब भी हैं तब भी और आने वाले समय में भी रहेंगे क्योंकि पशु द्वारा हिंसात्मक आचरण मनुष्य के प्रति किया जाता है तो अपराध की परिभाषा में नहीं आता। यह तो मनुष्य का आपराधिक आचरण दूसरे मनुष्य के विरुद्ध होता है तभी अपराध माना जायेगा और वह भी विवेकशील व्यक्ति द्वारा किया गया दुराचरण।

समाज व्यक्तियों का समूह है जो अन्तर्क्रियात्मक जीवन सर्वभूत सुखाय निरामयाय भद्राणि दृश्याय जीते हैं। व्यक्ति कौन है? नर और नारी? इन दो प्रकार के प्राणियों से ही सृष्टि के प्रकोष्ठ की पूर्ति होती है। साथ में रहते हुए एक ही समाज एक समुदाय व एक ही परिवार में से सहयोगात्मक परक भी स्थितियाँ परिस्थितियाँ जन्म लेती हैं और उन पारिवेशिक परिस्थितियों में व्यक्ति वंशानुगत क्रम में पाये गये स्वभाव व चारित्रिक गुणों की अन्तर्द्वन्द्वात्मक अन्तर्क्रिया के फलस्वरूप अपराध शिशु जन्म लेता है।

यह स्थिति है तो फिर स्वाभाविक है कि मानवीय समाज में अपराध केवल मात्र पुरुष वर्ग का ही स्वामित्व या एक छत्र अधिकार नहीं है? दूसरा वर्ग अर्थात् महिला वर्ग भी अपराध जैसा कृत्य कर सकता है और करता भी है। कभी पुरुष महिलाओं के विरुद्ध अपराध करते हैं तो कभी महिलाएं भी पुरुषों के

विरुद्ध अपराध करती हैं और कभी कभी अवचेतन व चेतन मन में महिला से प्रेरित होकर या प्रेरणा पाकर पुरुष अन्य के विरुद्ध अपराध करता है या फिर वह ऐसी परिस्थितियां पाता है जिनमे महिला अपराध करने की पृष्ठभूमि तैयार करती है और वह अपराध इस पृष्ठभूमि में कर बैठता है जो परिस्थितियां महिला द्वारा स्वयं ही तैयार की हैं।

महिला भी जब अपराध करने पर कटिबद्ध होती है या विवश होती है तो वह भी अपराध करती ही है चाहे महिला कम संख्या में ही पुरुष की अपेक्षा यह दुराचरण करती है। वह जब अपराध करती है तो पुरुष वर्ग के विरुद्ध भी करती है है और महिला वर्ग के विरुद्ध भी। महिलायें स्वयं भी अपराध करती हैं अन्य महिलाओं को साथ लेकर भी अपराध करती हैं तथा पुरुषों के साथ मिलकर भी अपराध करती हैं। इस प्रकार महिलाएं अकेली भी अपराध करती हैं और अन्य के साथ मिलकर भी अपराध करती हैं। महिलायें सीधे ही अपराध कृत्य में भाग लेती हैं और कभी कभी महिलायें अपराध के षड्यन्त्र में भाग लेती हैं और अपराध की रूपरेखा तैयार करने में अपने बुद्धि कौशल व चातुर्य का परिचय देकर महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह करती है। ऐसे आपराधिक प्रकरणों की भी कमी नहीं है जिसमें महिलायें परवश होकर विवशतः अपराध करती हैं और अनिच्छा से उनको अपराध कृत्यों में लिप्त रहना पड़ता है। इस प्रकार महिलायें अपराध जगत की निवासी हो जाती हैं और अपराध विभीषिका को सहने हेतु विवश होती है। जब नारी अपने यथोचित सहृदय कोमल संवेदनशील व्यवहार को छोड़कर अपराध जैसा जघन्य व घृणित कार्य करती है तो उस समय नारी अपना नारीत्व का मूल खो बैठती है और यह नीर भरी करुणामयी सृष्टिसृजक-स्वरूपा नारी अपने नारी धर्म को छोड़ने पर घृणित तिरस्कृत व उपेक्षित हेय प्राणी की पंक्ति में आ खड़ी होती है।

समाज के सृजन का श्रेय नारी को है। नारी ने पुरुष को जन्म दिया और नारी उसकी जन्मदात्री भी बनी और अंकशायनी भी। जगत जननी ने प्रकृति रूप से पुरुष के सहवास से मानव बीज को अपने सृष्टि गर्भ में धारण किया और सृष्टि सृजन का सूत्रपात किया। सृजन के साथ ही नारी पुरुष पर निर्भर हुई जिसके संसर्ग सहवास व संबल के कारण नारी का न केवल भोग्या स्वरूप व अस्तित्व ही सार्थक रह सका अपितु उसका सृजक रूप भी आगे निसृत होता रहा। इस प्रकार आदि सृष्टि सिद्धान्त के अन्तर्गत नारी पुरुष की संगिनी सहवासिनी अंकशायिनी रही किन्तु इसके साथ-साथ वह पराश्रयी भी हो गई नारी का अस्तित्व पूर्णतया पुरुषाधीन हो गया। पुरुष ने नारी को सुख दिया और सुरक्षा भी। पुरुष ने नारी अस्तित्व को अपने अधीन किया और नारी पुरुष की भोग्या, आश्रिता व पराश्रिता बनी और आज

भी ममार के समागम से लेकर सामाजिक जीवन के उद्भव व अभ्युदय के साथ साथ आज के सुसभ्य व सुसस्कृत कहे जाने वाले समाज मे भी वह पुरुषाधीन है । पुरुष शासित है—पौरुष के विधान की व्यवस्था के अनुरूप अनुशासित रहने हेतु बाध्य है वह विवश है चाहे नारी पुरुष की एकमात्र आवश्यकता है जो इसके जीवन स्रोत की धुरी है उसके सुख के मूल मे है और उसके सृजन के मूल में है किन्तु साथ मे यह भी ध्रुव सत्य है कि नारी अपने कर्त्तव्यपरायणता से पुरुषाधिशासी समाज मे सदा अपने अधिकारो का प्रयोग करती आयी है उसके वात्सल्यमयी व ममतामयी अस्तित्व का सदा आदर होता आया है और उसकी सृजनात्मकता की पूजा होती है उसके अजस व ओजस्वी अक्षुण्ण शक्ति पुन्ज से पुरुष भयभीत भी रहा है और उसके समक्ष नतमस्तक होने के लिए विवश भी हुआ है । पार्वती जा के रूप मे मा मरियम के रूप म मा देवकी के रूप म माँ पार्वती के रूप मे माँ सीता के रूप मे नारी की पूजा सृष्टि साध्या स्वरूपा के रूप मे हुई है होती आई है और होती रहेगी ।

फिर भी मानवीय इतिहास के पृष्ठों म यह सच्चाई स्पष्ट शब्दो मे अंकित है कि नारी समाज पुरुष वग से अधिशासित रहा है नारी को सुरक्षा व सुख प्रदान करने के वदले नारी ने पुरुष वग को जो मूल्य चुकाया है उसन सामाजिक समता समानता के सिद्धात की प्राणवायु से जीवित सामाजिक अन्तर्चेतना व अन्तर्तात्मा को झकझोर कर रख दिया है। पुरुष अधिशासित सामाजिक व्यवस्था म नारी को तिरस्कृत किया जाता है नारी की उपेक्षा की जाती है नारी का अपमान किया जाता है नारी का शोषण किया जाता है और यहा तक कि नारी के साथ अमानवीय पशुवत हिंसात्मक व्यवहार किया जाता है नारी को शारीरिक व मानसिक पीडाए दी जाती हैं यातनाए दी जाती हैं उसको मारा जाता है पीटा जाता ह भूखा रखा जाता ह नगा रखा जाता है उसे लूटा जाता ह उसके शरीर को नोच कर उसे बलपूवक उठा कर ले जाया जाता ह उसका शील भग किया जाता ह उसकी मर्यादाओ का मखौल उडाया जाता हैं नारीत्व को नगा किया जाता ह उसको बेचा व खरीदा जाता है और यह भी ह उसको जहर देकर भूखा रख कर या फिर जला कर गला घाट कर फदा डाल कर गोली मार कर घायल करके मार दिया जाता ह ।

विडम्बना यह है कि इन सब कृत्यो मे जिसमे नारी के विरुद्ध अपराध किये जाते हैं नारी के सर्वस्व को उजाडा जाता ह नारी को मिटाया जाता ह नारी को फसाया जाता ह और नारी को मौत की माला का वरण कराया जाता ह उसमे नारी कहलाने वाली अन्य प्राणी भी सहकर्मी के रूप मे नारी के विरुद्ध पुरुष का ऐसे कुत्सित कृत्य मे साथ देती हैं सहयोग देती हैं और कभी-कभी स्वय भी एक नारी दूसरी नारी के विरुद्ध आपराधिक कृत्य करती है ।

भारतीय समाज जो मर्यादाओ का समाज है मान्यताओ का समाज है, आस्थाओ का समाज है भारतीय समाज धर्मप्राण है। आदि मुनियो महात्माओ व मनीषियो न जो जीवन के विधान सरचित कर सहिताएँ बनाई हैं भारतीय समाज उन सभी धार्मिक सहिताओं का आदर करता है और उनके अनुसरण म जीवन शली का ढाल कर उनके अनुरूप आचरण कर योग व क्षेम के लिए सासारिक सुखो-मुखी जीवन जीता हुआ मुक्ति व मोक्ष की कामना करता है और सत्यम् शिवम् सुन्दरम् मूल्यों को आधारभूत मान कर सत, चित व आनन्द की स्थिति को पाने की कामना करता है। सामाजिक जीवन को धार्मिक व्यवस्थाओ के अन्तगत सचालन करने वाले विधि-विधान की मान्यताओ का पालन भारतीय समाज के पुरुष व नारी दोनो वर्गों के लिए पुण्य है इनका उल्लघन पाप है। धम समाज-शास्त्रियो की दृष्टि म धम एक सामूहिक सामाजिक अन्तर्चेतना है जो किसी भी अगम अगोचर व अप्रत्याशित अनिष्ट की कल्पना मात्र से ही काप उठती है। व्यक्ति की व्यक्तिगत धार्मिक चेतना इसी सामाजिक चेतना का भाग है जिसको वह वशानुगत क्रम के रूप मे ही पाता है और इसी परिवेश मे उसका पोषण होता है और उसका पुष्टिकरण दृढीकरण होता है। भारतीय सामाजिक धार्मिक विधि विधान की पृष्ठिभूमि म यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि नारी की मुक्ति पुरुषाधीन है और नारी को पतिव्रता होना आवश्यक है। पति परमेश्वर का रूप हाता है और जो वेद मत्रो का मूल भी है अग्नि के साथ सात फेरो के साथ-साथ उच्चरित होते वेदमत्रो के अर्थस्वरूप पुरुष नारी का पति है उसका सरक्षक है उसका व उसकी सतान का पालक है और उसके इहलोक व परलोक दानो का ही नियामक है। एसी धार्मिक भावना मे पदा हुई व पालित क्या नारी कभी यह कल्पना भी कर सकती है कि पुरुष के अनुशासन के विरुद्ध विद्रोह कर वह जी भी सकती है जिसकी माग मे सिन्दूरी रग पुरुषाधीनता का परिचय देता हुआ साक्षी देता है कि नारी पुरुष की ही है उसकी अकशायिनी है उससे सुरक्षित है और पुरुष के बिना अपने अस्तित्व की वह कल्पना भी नही कर सकती। कितने ही जन्मो के बाद प्राप्त मानव योनि का लाभ उठा कर पति सेवा करके यदि इस भवसागर से नही तरी तो शरीर मे बदिनी आत्मा भटकेगी और तडपेगी, यह भारतीय नारी की सर्वोपरि मान्यता है।

ऐसी आस्थाओ के बीच पली भारतीय नारी क्या पुरुष उत्पीडन के विरुद्ध विद्राह के स्वर प्रस्फुटित कर सकती है? क्या भारतीय नारी उपद्रवी होकर पुरुष की बराबरी करने की बात कर सकती है? क्या उन सभी विधि व धार्मिक विधाना को बदलने का उनके विपरीत आचरण करने का साहस नारी मे है, जिनके ऊपर पुरुष का अधिशासी आधार मधारित है और पुरुष महात्म्य टिका हुआ है। महिलाओ को समानता का अधिकार देने शोषण से मुक्ति देने नारीत्व की रक्षा करने नारी

उत्थान नारी को हिंसात्मक व आक्रामक व्यवहार से छुटकारा दिलाने के सामाजिक व राजनतिक व आर्थिक स्तर बढ़ाने के लिए विधि विधान सरचना करने व कराने वाले कौन हैं ? इन विधि विधान की क्रियान्विति करने वाला कौन सा वग है—पुरुष वग जिसकी एकछत्रता व अहम व महत्ता की शिकार होती आई है—नारी। जब तक ये अनुत्तरित प्रश्न रहेंगे तब तक नारी वग को उत्पीडन सहना है शोषण को सहना है तिरस्कार को सहना है हिंसा को सहना है।

विधि सरचना के अन्तगत नारी के विरुद्ध किये जाने वाले जितने भी विचलन कारी कृत्य हैं जिनको अपराध के रूप म भारतीय दण्ड सहिता ने परिभाषित किया है उनका विवरण व विवेचन आवश्यक है।

भारतीय दण्ड सहिता मे महिलाओ के विरुद्ध परिभाषित आपराधिक कृत्यों को दो भागो मे विभक्त किया जा सकता है —

(1) हिंसात्मक अपराध (2) हिंसा विहीन अपराध।

महिलाओ के विरुद्ध हिंसात्मक अपराध की परिभाषा मे आने वाले मुख्य अपराध निम्नांकित हैं —

1 बलात्कार
2 अपहरण
3 स्वेच्छा उपहति (साधारण या गम्भीर चाट पहुचाना)
4 हत्या का प्रयत्न
5 हत्या

अध्याय 2

नारी और हिंसात्मक अपराध

नारी जैसी तरल सलिला कोमलांगी प्राणी जो संसार की करुणा को अपने अन्तमन मे मर्म के समान सजोये चलती है उस सवेदनशील प्राणी के विरुद्ध हिंसात्मक व्यवहार करना कहाँ तक उचित कहा जाये ? क्या इस कृत्य को घृणित, पुरुषत्व के कलक के रूप मे नही स्वीकार किया जाय ? क्या इसकी पुरुष के पौरुष की महत्ता को अध पतन का परिचायक नही माना जाय ?

न्यायिक दृष्टि से नारी के विरुद्ध किये जा रहे हिंसात्मक कृत्यो को अपराध रूप मे परिभाषित व विवेचित करने के पूर्व कुछ प्रश्नो का उत्तर देना आवश्यक है ? उसमे पहला प्रश्न उभर कर जो आता है वह यह है कि व्यक्ति समाज मे रहते हुए भी हिंसात्मक व्यवहार क्यो करता है ? क्यो आवश्यकता होती है, उसको हिंसात्मक व्यवहार करने की ? इस प्रश्न का उत्तर अन्य प्रश्नो को जन्म देता है जो कि रोनाल्ड एच बली ने अपनी पुस्तक वाइलेन्स एण्ड एग्रेशन (टाइम लाईफ इन्टर-नेशनल रीडर लण्ड वी पी) के पृष्ठ 5 पर पूछे हैं —

(1) क्या मनुष्य स्वभाव से हिंसात्मक है, अर्थात् क्या वह अपने जीवाणुओ मे एक अनियोजित उत्प्रेरणा या तीव्र इच्छा अपने साथियो को मारने या शारीरिक दृष्टि से हानि पहुचाने की लेकर चलता है ?

(2) क्या वह यह सब समाज मे सीखता है या उसको हिंसा करना समाज द्वारा सिखाया जाता है ? उन उदाहरणो के आधार पर व उस दृष्टिकोण के आधार पर जो कि वह सामाज मे परिलक्षित करता है ?

(3) यदि व्यक्ति हिंसात्मक ही पैदा हुआ है क्या उसके हिंसात्मक व्यवहार का नियन्त्रत करना असभव है ? दूसरी ओर यदि उसकी सीख उपज है उस सामाजिक सास्कृतिक परिवेश की जिसमे कि वह रहता है तो फिर ऐसी सभावना बनती है और आशा ज्योति दिखाई देती है कि फिर वह अपनी हिंसात्मक आक्रामकता पर नियन्त्रण पा सकता है और स्वय को आत्मघात आत्म विनाश से बचा सकता है,

उस सीखे हुए व्यवहार से और उन विचारों से जिनके कारण वह पशुओं से भिन्न ठहराया जाता रहा है।

मानव की हिंसात्मक प्रवृत्ति ने सदा उसके अहम् का तुष्ट किया है। शक्ति के आधार पर सत्ता की लालसा सदा मानव मे रही ह जिसकी क्रूर आकांक्षाओं की परिणिति के फलस्वरूप प्रतिफल पाने की दृष्टि से मानव अपनी शक्ति के बल पर दूसरे मानव पर आधिपत्य जमाता है अधिकार करता है और अन्य को अधिशासित करता ह। मानव की यह प्रवृत्ति आदिकाल से अब तक परिलक्षित होती रही है।

मनुष्य अपनी हिंसात्मकता से प्रेरित होकर अपनी शक्ति के मद म मदमस्त सात समुद्र पार भी शक्ति परीक्षण करने हेतु आतुर रहता है अपने अहम् अभिमान की तुष्टि हेतु वह राज्यो को जीतता ह अपना आधिपत्य जमाता आया है आज के आणविक युग म भी हिंसा के नगे ताण्डव नृत्य की गाथायें जो हिरोशिमा व नागासाकी की नगरो म द्वितीय विश्व युद्ध के पटाक्षेप के रूप मे सुनी जाती है वह मानवीय बबरता व पशाविक वृत्ति का इतिहास लिखने के लिए पर्याप्त है। आज जब कि मानव ने सम्पूर्ण विश्व को दस बार नष्ट करने के साधन व शस्त्र एकत्रित कर लिए है ता इस शक्ति मद मे उसकी हिंसात्मकता क्या नहीं कर दिखा सकती है मानवीय समाज के सदभ मे एक अनुत्तरित प्रश्न बन जाता है। कौन सबसे योग्य है ? कौन सबसे महान ह ? कौन सबसे बुद्धिमान ह ? जो सर्वशक्तिमान है जो अपनी बाहुपाश म सबको दबोच सकता है अधिशासित कर सकता ह ?

मनुष्य के ऐसे आक्रामक व हिंसात्मक स्वभाव की पृष्ठभूमि मे क्या ह ? यह हिंसात्मक प्रकृति क्या है ? हिंसात्मकता व आक्रामकता मे क्या सम्बन्ध ह ? क्या इनम अन्तर है ? महिलाओ के विरुद्ध किये जाने वाले आपराधिक व्यवहार के सदभ मे ऐसे प्रश्न उभर कर आते हैं जिनका उत्तर देना आवश्यक है।

मिस्टर बैली ने अपनी पुस्तक वाइलेन्स एण्ड एग्रेशन मे (पृष्ठ 9 पर) यह मत व्यक्त किया है कि सामाजिक वज्ञानिको की दृष्टि मे आक्रामकता उस व्यवहार को कहते हैं जो कि किसी अन्य व्यक्ति को शारीरिक या भावनात्मक चोट पहुचाने के उद्देश्य से किया जाता है। इस सदभ मे आक्रामकता वह हिंसात्मक व्यवहार है जा कि प्राणी अपने सजातीय प्राणी को चोट पहुचाने के उद्देश्य से करता है। श्री बली की दृष्टि म मनुष्य की तीव्र इच्छा जा कि भोजन की प्राप्ति हेतु जानवरो को मारने के लिए होती है उसको आक्रामकता नही कहा जा सकता।

वस्तुत जब मनुष्य अपनी ही जाति के प्राणी अर्थात् एक मनुष्य दूसरे मनुष्य को शारीरिक या भावात्मक रूप से चाट पहुचाने के उद्देश्य से आक्रामक

बनता है और जो व्यवहार करता है उसे आक्रामकतापूर्ण हिंसात्मक व्यवहार कहा जा सकता है। बस महोदय ने अपनी पुस्तक दी साइकोलाजी आफ एग्रेशन (न्यूयार्क जोहन विले 1961) आक्रामकता को चोट पहुंचाने वाले व्यवहार के रूप में माना है जो कि एक ऐसी प्रक्रिया है जो कि दूसरे व्यक्ति को गंदी उत्तेजना देती है। बरकोविट्ज की भी यही मान्यता है कि आक्रामकता किसी भी पदार्थ के विरुद्ध चोट पहुंचाने के उद्देश्य से किया गया व्यवहार है। काफमैन ने और स्पष्ट करते हुए अपनी मान्यता व्यक्त की है कि किसी भी व्यवहार को आक्रामक तब तक नहीं कहा जा सकता जब तक कि आक्रामक व्यक्ति का इरादा दूसरे व्यक्ति को चोट पहुंचाने का न हो।

क्या चोट शारीरिक होने पर ही व्यक्ति के व्यवहार को आक्रामक कहा जाएगा? क्या व्यक्ति के व्यवहार से दूसरे व्यक्ति को मानसिक आघात लगता है तो ऐसे व्यवहार को आक्रामक व्यवहार नहीं कहा जाएगा? मानसिक आघात की परिधि में डांटना, फटकारना, डराना, धमकाना, उत्पीडन करना, मानसिक शांति भंग करना और इस प्रकार के अन्य कृत्य करना जिसमें शारीरिक चोट नहीं पहुंचाई जाती है। वस्तुतः आक्रामक व्यवहार में दोनों प्रकार के व्यवहार सम्मिलित हैं। बस महोदय ने आक्रामकता के दो प्रकार बताये हैं—(1) आक्रोशजन्य आक्रामकता जिसके अंतर्गत आक्रामकता के शिकार को दर्द या चोट अतितीव्रता से होती है और वह व्यवहार इस चोट को पहुंचाने से परितुष्टित होता है। इस व्यवहार को बल मिलता है। (2) साधनात्मक आक्रामकता उस व्यवहार को परिलक्षित करती है जिसके अन्तर्गत आक्रामकता किसी उद्देश्य की पूर्ति का साधन बन जाती है। किसी को बिजली का झटका देकर आघात पहुंचाना या किसी की आलोचना करना—साधनात्मक आक्रामकता के उदाहरण हैं।

इसके साथ हमारी दृष्टि में अन्य प्रकार के आक्रामक व्यवहार के प्रकार हो सकते हैं—

(1) **गणनात्मक आक्रामकता**—इसके अन्तर्गत वह व्यवहार होता है जिसमें बहुत सोच समझ कर गणित के आधार पर उतना ही आक्रामक व्यवहार किया जाता है जितनी आवश्यकता होती है जिसका आक्रोशवश स्थिति में ध्यान नहीं रखा जाता है।

(2) **उद्देश्यहीन आक्रामकता**—इसके अन्तर्गत वह व्यवहार आता है, जिसमें पाशविक प्रवृत्ति के वशीभूत उद्देश्यहीन दिशाहीन आक्रामक व्यवहार होता है जिसमें आक्रामकता को किसी उद्देश्य की पूर्ति का साधन नहीं बनाया जाता और न ही इसका कोई उद्देश्य होता है जिसमें चोट पहुंचा कर आतंक फैलाया जाता है और भोले-भाले निर्दोष प्राणियों को चोट पहुंचाई जाती है।

(3) **कामुकतापूर्ण आक्रामकता**—इस आक्रामक व्यवहार मे व्यक्ति कामुकता की तुष्टि अपने आक्रामक व्यवहार से दूसरी स्त्री या पुरुष से मानसिक या शारीरिक चोट पहुचा कर करता है या करती है ।

(4) **विक्षिप्तावश आक्रामकता**—विक्षिप्त व्यक्ति द्वारा जो आक्रामक व्यवहार किया जाता है वह इस परिधि मे आता है । मानसिक संवेगात्मक स्थिति वाले विक्षिप्त व्यक्ति अपनी विवेकहीन स्थिति मे यह नही जान पाता कि उसका आक्रामक व्यवहार किसको कितनी चोट पहुचाने वाला व्यवहार हो सकता है । ऐसा व्यक्ति प्राय शारीरिक चोट पहुचाने वाला ही व्यवहार करता है मानसिक आघात पहुचाने वाला कृत्य नही ।

हिंसात्मक व्यवहार

साधारणतया आक्रामक व्यवहार के उग्र रूप को हिंसात्मक व्यवहार के नाम से जाना जाता है । यह हिंसात्मक व्यवहार दोनो (शारीरिक व मानसिक) रूप म गम्भीर चोट पहुचाने वाला हो सकता है । मैगारगी के शब्दो मे हिंसा वह आचरण है, जिसमे शक्ति का बाह्य प्रयोग होता है जिससे उत्पन्न चोट व्यक्ति को सम्पत्ति को या प्रतिष्ठा को क्षति पहुचाती है ।

वस्तुत हिंसात्मक व्यवहार वह व्यवहार है जिसके अ तगत एक व्यक्ति अपनी शक्ति के मद मे विधि का उल्लघन कर अनधिकृत चेष्टा करता है और दूसरे के स्वातन्त्र्य अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण अपने उद्देश्य की पूर्ति शक्ति का सीधा उपयोग करके करता है और दूसरे व्यक्ति को गम्भीर रूप से चोट पहुचाता है । यह गम्भीरता आक्रामकता और हिंसात्मकता के बीच एक बाल बराबर की सीमा निर्धारण करता है । आक्रामक व्यक्ति जब हिंसक हो उठता है तो परिणाम गम्भीर होते हैं यही हिंसात्मकता व आक्रामकता मे भेद दृष्टिगत होते हैं चाहे वे शारीरिक हो या मानसिक - विधिपरक अथवा विधि भजक ।

उक्त विवेचना के सदर्भ मे हिंसात्मक व्यवहार को दो भागो में बाटा जा सकता है—1 व्यक्तिगत हिंसा 2 सामूहिक हिंसा ।

1 **व्यक्तिगत हिंसा**—मानवीय प्रकृति का अन्तर्निहित भाग है—हिंसा । व्यक्तिगत सामाजिक जीवन सहकारिता एव प्रतिद्वन्द्वात्मकता दोना ही धुरियों पर चलता है । व्यक्तिगत जीवन की रंगभूमि व कर्मभूमि में कितने ही उद्देश्यों की पूर्ति हेतु प्रयास किये जाते हैं, जिनम सर्वोपरि उद्देश्य है सफलता । जीवन के अस्तित्व के सदर्भ मे ही मानव आजीवन सघर्षरत रहता है इस जीवन अस्तित्व के

म सामाजिक हिंसा जल्दी ही भडकती है। किसी समुदाय या जाति म सामान्यतया प्रतिष्ठा या अस्तित्व का प्रश्न उत्पन्न होने या ऐसा संकट होने पर अथवा जिस समूह का अस्तित्व भग होने की समावना होने पर सामूहिक हिंसा भडक उठती है जिसमे समाज के कुछ सक्रिय सदस्य अपनी प्रतिष्ठा के अनुरूप हिंसात्मक कार्यकलापो मे भाग लेते हैं और अन्य सदस्यों को चाहे-अनचाहे ऐसे आचरणो मे भाग लेना पडता है। हमारी दृष्टि मे हिंसात्मक साधनो का प्रयोग प्रत्येक निराश व हताश एव असुरक्षित व्यक्तियो का सहारा ह। हिंसक वही व्यक्ति होते हैं (चाहे व्यक्तिगत रूप से या सामूहिक रूप स) जो कि निराशा से उभर कर असुरक्षा की भावना से त्राण पाने के लिए विधिक मूल्यो व आदर्शों की परवाह नही करते व हिंसात्मक व्यवहार करते हैं।

व्यक्ति या समूह किन किन बिन्दुओ पर अधिक हिंसक होते हैं ? इस प्रश्न के उत्तर रूप मे पहले तो यह कहा जाना उपयुक्त होगा कि यह प्रत्येक व्यक्ति व समूह की मन स्थिति पर निर्भर करता है। फिर भी कुछ सामान्य बिंदु हैं जहा पर साधारणतया हिंसा का प्रयोग चाहे या अनचाहे अवश्य हो जाता है। प्रथमत असुरक्षित व्यक्ति या समूह अपने उद्देश्य की पूर्ति या बदले की भावना से प्रेरित होकर अपनी क्षतिपूर्ति (आर्थिक सामाजिक या धार्मिक) करने हेतु हिंसात्मक व्य-
...र करता है। द्वितीय हिंसात्मक व्यवहार दो प्रकार से होता है—प्रत्यक्ष रूप से
...ष रूप से। तृतीय हिंसात्मक व्यवहार जानबूझ कर जब किया जाता है तो
मान्यता म तो सामने वाले शत्रु को कमजोर समझ कर हिंसात्मक आक्राम-
व्यवहार किया जाता ह किंतु हमारी मान्यता के अनुसार हिंसात्मक व्य-
... करने वाला हथियारो का सहारा लेकर आक्रमण करन वाला
... मनोवैज्ञानिक दृष्टि से दुर्बल व असुरक्षित मनोवृत्ति वाला होता है
... तरीके से या आवेश मे शस्त्रो व अस्त्रो का सहारा लेता है और
करता है। हिंसा का सहारा ही उसकी दृष्टि म अतिम सफल
मनोवृत्ति हिंसात्मक व तीव्रता परिस्थितिजन्य होती है जैसी
उसी प्रकार का हिंसात्मक व्यवहार होता ह। यदि प्रतिपक्षी
हिंसात्मक व्यवहार से ही काम चल जाता है किंतु जब हिंसा
... का भाग हो तो उस समय इसकी विद्रूपता की मात्र
...। विडम्बना है कि धम जो मानवता का पोषक है किस
... मे मानवता का रक्त पिपासु हो जाता है और हिंसा
... हिंसा की रक्तरंजित पूजा को जन्म देता है।

... प्रवृत्ति

... मे हिंसात्मकता मनुष्य की प्रवृत्ति का प्रतीक है
... काल तक भी मनुष्य प्रकृति का एक भाव-

मानवीय स्वभाव मे जन्मजात हिंसक प्रवृत्ति होती है यह अवचेतन म निहित अतृप्त इच्छाओं मे तृप्ति के सवग मे अपने नगे रूप म सामने आती है और तृप्ति के सुख की अनुभूति को मूत रूप दने के प्रयास म यह हिंसक प्रवृत्ति अपरा धिक आचरण का कारण बन जाती है। जिस परिवेश मे व्यक्ति रहता है या कि उसकी परिवेशगत उप सस्कृति हिंसात्मक मूल्यों म विश्वास रखती है और इनकी पोषक व प्रशसक हो तो ऐसा व्यक्ति अपनी अतृप्त इच्छाओं की पूर्ति के लिए हिंसा त्मक व्यवहार का सहारा लेने मे कोई भेदभाव नही दिखाता। कारण यह है कि ऐसे व्यक्ति जिनका कमजोर समाजीकरण व अन्तरीकरण या उपसास्कृतिक हिंसक मूल्यो के सदर्भ म होता है वे बहुत आसानी से विवेकहीन होकर हिंसात्मक आचरण आत्मतुष्टि हेतु करने म नही चूकते। एक ही उपसस्कृति म पल सभी व्यक्ति हिंसक आपराधिक आचरण क्यो नही करते ? कुछ ही व्यक्ति ऐसा क्यो करते हैं ? ये प्रश्न विचारणीय है। व्यक्ति जिस सामाजिक या उपसास्कृतिक परिवेश म रहता है उसका प्रभाव उस व्यक्ति पर अवश्य पडता है किन्तु यह प्रभाव किस प्रकार व कितना अनुकूल व प्रतिकूल पडता है व्यक्ति के व्यक्तिगत गुणो के सदर्भ मे यह निर्भर करता है। किसी उत्तेजना की कितनी प्रतिक्रिया उस व्यक्ति द्वारा की जाती है व्यक्ति के व्यक्तिगत जैविक मानसिक गुणो पर यह निर्भर करता है। इसी कारण सभी व्यक्ति एक प्रकार की उत्तेजना पर समान व्यवहार नही करते अपितु प्रत्येक व्यक्ति की प्रतिक्रिया भिन्न भिन्न रहती है। साप की फुकार के सामने कुछ व्यक्ति भाग सकते हैं कुछ तमाशा देखन लग सकते हैं तो कुछ हथियार लेने दौड सकते हैं और कुछ जो भी हथियार हो उनसे साप पर वार कर सकते हैं। अहिंसक मूल्यो की पोषक सस्कृति मे पले व्यक्ति साप पर वार करने वालो को मना कर सकते हैं और ऐसे भी व्यक्ति हो सकते हैं जो कि साप को देवता मान कर हाथ जोड कर प्रणाम कर सकते हैं। इस प्रकार एक उत्तेजना के प्रति विभिन्न प्रतिक्रियाए दिखाई देती हैं जो व्यक्ति के परिवेशात्मक मूल्यो के सदर्भ मे व्यक्तिगत गुणो से प्रभावित होती है। इस कारण एक उपसस्कृति मे पले व्यक्तियो का व्यवहार भिन्न भिन्न होता है और इसी कारण सभी व्यक्तियो का समान रूप से हिंसक व्यवहार नही होता और इस प्रकार सभी व्यक्ति अपराधी भी नही होते।

2 सामूहिक हिंसा—क्या व्यक्ति व्यक्तिगत रूप से हिंसक होता है या फिर वह किसी समूह के सदस्य के रूप मे ही हिंसक होता है ? क्या हिंसक व्यक्ति ही हिंसा करने हेतु समूह बनाते हैं ? या हिंसक समूह का सदस्य होने पर व्यक्ति को स्वत ही हिंसक होना पडता है ?

सामूहिक हिंसा क्यो और कैसे भडकती है ? जिस समाज समुदाय जाति का अस्तित्व ही हिंसात्मक जैसे झगडे लडाइया व युद्ध पर आधारित हो उस समुदा

मे सामाजिक हिंसा जल्दी ही भडकती है। किसी समुदाय या जाति मे सामान्यतया प्रतिष्ठा या अस्तित्व का प्रश्न उत्पन्न होने या ऐसा संकट होने पर अथवा जिस समूह का अस्तित्व भग होने की संभावना होने पर सामूहिक हिंसा भडक उठती है जिसमे समाज के कुछ सक्रिय सदस्य अपनी प्रतिष्ठा के अनुरूप हिंसात्मक कार्यकलापो मे भाग लेते हैं और अन्य सदस्यो को चाहे-अनचाहे ऐसे आचरणो मे भाग लेना पडता है। हमारी दृष्टि म हिंसात्मक साधनो का प्रयोग प्रत्येक निराश व हताश एव असुरक्षित व्यक्तियो का सहारा है। हिंसक वही व्यक्ति होते हैं (चाहे व्यक्तिगत रूप से या सामूहिक रूप से) जो कि निराशा से उभर कर असुरक्षा की भावना से त्राण पाने के लिए विधिक मूल्यो व आदर्शों की परवाह नही करते व हिंसात्मक व्यवहार करते हैं।

व्यक्ति या समूह किन किन बिंदुओ पर अधिक हिंसक होते हैं? इस प्रश्न के उत्तर रूप म पहले तो यह कहा जाना उपयुक्त होगा कि यह प्रत्येक व्यक्ति व समूह की मन स्थिति पर निर्भर करता है। फिर भी कुछ सामान्य बिंदु हैं जहा पर साधारणतया हिंसा का प्रयोग चाहे या अनचाहे अवश्य हो जाता है। प्रथमत असुरक्षित व्यक्ति या समूह अपने उद्देश्य की पूर्ति या बदले की भावना से प्रेरित होकर अपनी क्षतिपूर्ति (आर्थिक सामाजिक या धार्मिक) करने हेतु हिंसात्मक व्यवहार करता है। द्वितीय हिंसात्मक व्यवहार दो प्रकार से होता है—प्रत्यक्ष रूप से व परोक्ष रूप से। तृतीय हिंसात्मक व्यवहार जानबूझ कर जब किया जाता है तो सामान्य मान्यता म तो सामने वाले शत्रु को कमजोर समझ कर हिंसात्मक आक्रामकता का व्यवहार किया जाता ह किंतु हमारी मान्यता के अनुसार हिंसात्मक व्यवहार मे विश्वास करने वाला हथियारो का सहारा लेकर आक्रमण करने वाला व्यक्ति या समूह मनोवैज्ञानिक दृष्टि से दुर्बल व असुरक्षित मनोवृत्ति वाला होता है और वह योजनाबद्ध तरीके से या आवेश म शस्त्रो व अस्त्रो का सहारा लेता है और हिंसात्मक आचरण करता है। हिंसा का सहारा ही उसकी दृष्टि मे अतिम सफल सहारा होता है यह मनोवृत्ति हिंसात्मक व तीव्रता परिस्थितिजन्य होती है जसी परिस्थितिया होती है उसी प्रकार का हिंसात्मक व्यवहार होता ह। यदि प्रतिपक्षी कमजोर ह तो फिर कम हिंसात्मक व्यवहार से ही काम चल जाता है किंतु जब हिंसा धर्मान्धता के दमन व विश्वास का भाग हो तो उस समय इसकी विद्रूपता की मात्र कल्पना ही की जा सकती है। विडम्बना है कि धम जो मानवता का पोषक है किस प्रकार अपनी धार्मिक मदान्धता मे मानवता का रक्त पिपासु हो जाता है और हिंसात्मक धार्मिक विश्वास के अतगत हिंसा की रक्तरंजित पूजा का जन्म देता है।

नारी के विरुद्ध पुरुष की हिंसात्मक प्रवृत्ति

कुछ भी हो हमारी दृष्टि म हिंसात्मकता मनुष्य की प्रवृत्ति का प्रतीक है जो सभ्यता के शैशव काल से आज सौम्य काल तक भी मनुष्य प्रकृति का एक आव-

श्यक अग बन चला है। नारी जो मानवता का आदि स्रोत है और शारीरिक दृष्टि से पुरुष की तुलना मे दुवल व अशक्त है उस निबल प्राणी पर पुरुष अपनी अधिशासी प्रवृत्ति का प्रदशन करने हेतु व अपने तुच्छ पुरुषत्व के अह की तुष्टि हेतु नारी पर अत्याचार करता है गाली गलौच करता है मारपीट करता है और उसको मार तक देता है। चाहे ऐसा करने मे हिंसक पशुवृत्ति की आत्मतुष्टि अवश्य हो जाती हो किंतु ऐसा व्यवहार पुरुष के पुरुषत्व पर कालिमा स्वरूप है। नारी जो भार्या है धरा है विश्वात्मा है और जो भोग्या पूज्या दोनो ही है उसके साथ हिंसात्मक व्यवहार वस्तुत पुरुष मनोविज्ञान व सामाजिक सरचना विधि व विधान के सदम मे विचारणीय गम्भीर प्रश्न ह।

नारी के विरुद्ध

नारी के प्रति पुरुष हिंसात्मक क्यो होता है और कब होता है—ये भी साथ मे जुडे प्रश्न हैं जिनके उत्तर सापेक्षिक हैं। नारी के प्रति हिंसात्मक व्यवहार मुख्यत दो भूमिकाओ मे अधिक सम्भव होता है—(1) पत्नी के रूप मे (2) प्रेमिका के रूप मे। इनके अतिरिक्त अन्य भूमिकायें भी हैं जिनमे पुरुष नारी के प्रति हिंसक हो उठता है पुरुष के उद्देश्य की पूर्ति मे नारी के साधक बनने के स्थान पर बाधक की भूमिका अभिनीत करने के सदम मे।

पत्नी के रूप मे जब पारस्परिक असामजस्य की स्थिति आती है तो फिर पति व पत्नी केवल ववाहिक सूत्र मे बधे हुए सामाजिक व्यभिचारी जीवन व्यतीत करते हैं— शारीरिक रूप से जुडे हुए जब वे मन से अलग होते हैं तो ऐसी असामजस्यता की स्थिति मानसिक अलगाव पदा करती है। इस मनोवृत्ति के साथ एक छत के नीचे भौतिक स्तर पर शारीरिक जीवन व्यतीत करने वाले तथाकथित पति पत्नी कहलाने वाले प्राणी मधुरता से रिक्त कमले व कडवेपन से सिक्त जीवन व्यतीत करते हैं। यह मानसिक अलगाव पुरुष के पुरुषाथ को चुनौती देता है और उसका अह चोट खाता है वार्तालाप झगडे का रूप लेता है एक दूसरे के प्रति घृणा जन्म लेती है जिससे उनको एक दूसरे की अच्छाई मे भी बुराई दृष्टिगत होती है और कमजोर पडा पुरुष अपनी पत्नी के प्रति हिंसक हो उठता है।

विवाह सुरक्षा देता है प्यार का सौदा नही करता है। यह सुरक्षा सामाजिक है मानसिक सुरक्षा व सुख तो पारस्परिक सबधो की देन होती है जो एक दूसरे के मानसिक स्तर पर समझने पर ही सम्भव होता है। पति विवाह के फलस्वरूप पत्नी के शरीर को पाने का तो अधिकार प्राप्त कर लेता है किन्तु पत्नी का मन पाने के लिये उसके मन को वशीभूत करना तो पति के पतित्व पर ही निभर करता है। इस भाव मे उसकी बरात मे जाने वाला या उसके शुभ जीवन की कामना करने वाला

कोई भी शुभेच्छु उसकी सहायता नही कर सकता । पारिवारिक सम्बन्ध के बीच नया जीवन प्रारम्भ करने वाले दम्पत्ति जब शारीरिक स्तर पर मिलते हैं तो उनका मानसिक लगाव भी स्वत ही साथ-साथ प्रारम्भ होता है यदि उसमे विगत परिस्थितिया या वतमान स्थितिया बाधक नही बनें । ऐसा भी प्राय हो जाता है कि पूव मे किसी की रही प्रेयसी को अन्य अनचाहा पुरुष पति रूप मे मिलता है या किसी पुरुष को प्रेयसी के स्थान पर अन्य स्त्री पत्नी के रूप मे मिलती है । यदि इस पृष्ठभूमि मे पति पत्नी मिलते हैं तो फिर सवेदनशील परिस्थितियो मे वैवाहिक जीवन जीना प्रारम्भ करना व विगत को भूल वतमान को आत्मसात करना कठिन अग्नि परीक्षा है जो पवित्र अग्नि की लौ के समक्ष ली गई शपथ को निभाने हेतु देनी होती है । यदि कोई अविश्वासात्मक परिस्थिति उत्पन्न नही होती ह या नही की जाती है तो जीवन गाडी चल निकलती है किन्तु ऐसी स्थिति म जब दोनो मे से एक भी जीवन साथी असहिष्णु या शकालु हो उठता है ता फिर निबल से बलवान की लडाई प्रारम्भ हो जाती है और तूफान सौम्य सामाजिक दाम्पत्य जीवन को मिटाने को तत्पर हो जाता है ।

आज का सामाजिक विधान अधिनायकवाद व आर्थिक तन्त्र पर अधिक टिका हुआ है । विवाह भी एक अनुबध है जो कि दो जीवन साथियो के बीच नही होता अपितु विवाह तय करने वालो के बीच होता है उसमे मुख्य बिन्दु होता है दहेज । पूव मे वधू पक्ष पुत्री पालन का शुल्क वसूल करते थे और वर पक्ष को माता के दूध का ऋण चुकाना पडता था । यह प्रथा आदिवासियो मे अभी भी प्रचलित ह किंतु इस तथाकथित सभ्य समाज मे दूल्हा बिकता है और खुले आम बिकता है । विवाह मे जीवन साथी कसे हो? गौण बिंदु है वर कितना कमाऊ है, उसकी आर्थिक स्थिति कसी है इस कुबेर पुत्र की क्या इच्छाएँ हैं उसके पिता श्री क्या मागने के लिए कटिबद्ध हैं इन सब आर्थिक मापदण्डो के बीच चिरजीव/आयुष्मान व आयुष्मती के प्रणय बधन के ग्रहो का मेल बिठाया जाता है और पुण्य बेला निर्धारित कर नेह निमन्त्रण मानस के राजहसो को बुलाने के लिए गणेश अर्चना के साथ सादर भेजे जाते हैं । वधू का मूल्य उसके साथ लाये गये मूल्यवान मूल्यो से आका जाता है और नये घर मे स्थान भी व सामाजिक प्रतिष्ठा भी तद्नुरूप ही आकी जाती है । उसका सत्कार भी दहेज की राशि की तुलना मे होता है । यदि वधू पक्ष मेहमानो की आवभगत मे ही अपने सामथ्य के अनुरूप व्यय करते है और दहेज कम दे देते हैं या फिर सौदे के अनुरूप दहेज के सामान मे कमी कर देते हैं तो ऐसी स्थिति मे बहू के सारे गुण दुगुण मे बदल जाते है वह परिवार मे सौभाग्यकाक्षिणी के स्थान पर दुर्भाग्यावतारिणी हो जाती है, उसको ताने दिए जाते है उसका तिरस्कार किया जाता है उसके सेवाभाव को दुर्भावना से देखा जाता है । कचनसी काया कनक" शीला न होने पर कनक दिखाई देती है और आगन म रजनी गधा सी खिलने वाली

बहू धतूरे के फूल सी आखो मे खलने लग जाती है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि वर पक्ष वधू को आय का अजस्र स्रोत समझ लेते हैं। जब कभी उनको आवश्यकता हो वधू अपने पिता पक्ष से पति पक्ष के लिए धन लाकर उनकी आवश्यकता की पूर्ति करें। कभी कभी तो ऋण के बहाने से राशि मागी जाती है तो कभी अन्य बहानो से। यदि राशि बहू ने लाकर नही दी तो फिर बहू पर अत्याचार, अनाचार, दुराचार होते हैं। यदि राशि लाकर दे दी गई और नही चुकाई गई तो फिर भी वही दुर्व्यवहार अनाचार व हिंसात्मक आचरण। इस सदर्भ मे ससुर सास देवर व ननद की भूमिका भारतीय समाज मे जगत् विख्यात है और इनका व्यवहार प्रश्न चिह्नात्मक घेरो मे सदेह से परे देखा जाने लगा है। दहेज के पीछे बहुओ को जला कर जहर देकर या अन्य यातनाए देकर मारे जाने की घटनाएँ समाचार पत्रो मे बहुलता से पढ़ी जाने वाली घटनाएँ हो गई हैं। इन घटनाओ ने विवाह जैसी पवित्र व आवश्यक सामाजिक व्यवस्थात्मक संस्था के औचित्य पर प्रश्नचिह्न लगा कर रख दिया है।

इसी सदर्भ मे एक मनोवैज्ञानिक पक्ष का उल्लेख भी आवश्यक है कि जब वधू नये घर मे आती है तो पारिवारिक प्रतिष्ठा व वैभव की तुलनात्मक टीका टिप्पणी भी होती है। वर पक्ष अपने अहम् मे अपने को उच्च समझता है और जब वधू बड़े घर की हो और नये घर मे अपने पिता के घर की प्रशंसा करती हो तो वर पक्ष मे उसकी सास व ननद को यह बात पसंद नही आती। ननद अपने पिता की हीन स्थिति या तुलनात्मक दृष्टि से आर्थिक विषमतात्मक स्थिति के बारे मे एक शब्द भी नही सुन सकती है। इसके साथ साथ यह भी निर्विवाद स्त्रियोचित मनोवैज्ञानिक सार्वभौमिक सत्य है कि बहू भी अपने मायके (वधू पक्ष) की बुराई नहीं सुन सकती जो कि स्वाभाविक भी है क्योकि जिस घर मे उसने जन्म लिया जिसका नून व दूध उसकी रगों मे बहता हो जिस घर मे वह बड़ी हुई है और जिस घर ने पाल पोस कर पराये घर को सौंपा वह अपने मूल घर की बुराई कैसे सहन कर सकती है? यह स्थिति जब सहनशीलता की मर्यादाओ को पार कर लेती है तो उभय पक्ष अपनी प्रतिष्ठा के अनुरूप एक दूसरे से वाक् युद्ध मे जुट जाते हैं आरोप प्रत्यारोपों का आदान प्रदान होता है और ऐसा ही होता है कि बहू अपने ससुराल मे अकेली होती है यहां से ही फिर अनगिनत दुर्व्यवहार हिंसात्मक व्यवहार की कहानी प्रारम्भ हो जाती है। अकेली बहू उस घर मे अत्याचार की शिकार होती है और उसको कभी कभी मायके की प्रतिष्ठा-वेदी पर प्राणाहुति तक देनी पड़ती है।

ऐसे भी प्रकरण हैं कि पत्नी रूप मे अपने पति से न जुड़ कर स्त्री ससुराल में किसी अन्य निकटतम संबंधी से जुड़ जाती है या फिर पड़ोसी या अन्य पर-पुरुष

से जुड जाती है या कोई पूव प्रेमी हो तो उससे सबघ बनाये रखती है तो उन सब परिस्थितियो की जानकारी मिलने पर परिवार की प्रतिष्ठा बचाये जाने के नाम पर ऐसी स्त्री की हत्या तक कर दी जाती है।

ऐसे भी प्रकरण सामने आये हैं कि पति के सेना मे होने पर, विदेश चले जाने पर व लम्बी बीमारी के कारण इलाज के लिए दूर जाने या रहने पर इस कालिक अतराल मे फलस्वरूप पत्नी के जीवन मे कोई पर पुरुष आ जाता है। पति के लौट कर आने पर जब इस व्यभिचारी व्यवहार की जानकारी पति को मिलती है तो पत्नी को कुलटा रूप मे पाकर वह आक्रोश मे पत्नी के प्रति हिंसात्मक व्यवहार करता है और ऐसी परिस्थितियो मे पत्नियो की हत्या तक हो जाती है।

प्रेमिका के रूप मे

जब कोई कोई स्त्री प्रेम रोग से ग्रसित हो जाती है और प्रेम ज्वर सर पर चढ कर बालने लगता है तो उस समय स्त्री का केवल मात्र एक ही चिंता रहती है, वह सतत् प्रेमी के बाहुपाश मे आबद्ध रहने की! वह सामाजिक मान-मर्यादा पारिवारिक प्रतिष्ठा व भविष्य के बारे मे लेश मात्र भी चिंतित नही रहती। वह चाहती है प्रेम मिलन। इस प्रयोजनार्थ वह अपने प्रेमी के साथ पलायन कर जाती है।

इसके विपरीत ऐसी भी परिस्थितिया आती है जब कि कोई पुरुष किसी स्त्री से प्रथम दृष्टि मे प्रेम कर बठता है और वह अपने हृदय की अतरतम गहराइयो से उस स्त्री से प्रेम करने लगता है। वह उसकी प्रतिमा की अहर्निश मन-मंदिर म पूजा करता है' चाहे यह चाह मूक ही हो पर उस स्त्री को पाने की लालसा हृदय म सजोये वह विक्टोरियाकालीन मध्ययुगीन नायक के समान अपनी प्रेयसी को येन केन प्रकारेण पाना चाहता है चाहे उस स्त्री द्वारा ऐसे प्रेमी के प्रेम को स्वीकार ही नही किया हो। ऐसी स्थिति मे ऐसा दीवाना प्रेमी उस स्त्री को बलात उठा कर ले जाता है और उसके साथ अपनी काम पिपासा शाति हेतु बलात्कार जसा अपराध भी करता है।

अवरोधक की भूमिका

कभी-कभी कोई प्रेमी व प्रेमिकाए आपस मे मिलना चाहते हैं तो ऐसी स्थिति म सास ननद या पत्नी जब ऐसी स्थिति को देख कर अवरोध उत्पन्न करते हैं स्थिति वश एसी महिलाओ को डराने के लिए अवरोध को समाप्त करने के लिए या फिर साक्षी समाप्त करने के लिए उनके विरुद्ध हिंसात्मक व्यवहार किया जाता रहा है।

ऐसे भी आपराधिक प्रकरण सामने आये हैं जब किसी पत्नी या पति परस्त्री गामी होता है और अन्य स्त्री को प्यार करता है तो वह अपनी प्रतिद्वन्द्वी महिला के प्रति हिंसक व्यवहार करता है जो अपराध की गणना में आता है।

कभी कभी चोर व डकैत किसी घर में घुस कर चोरी करते हैं या डकैती डालते हैं या राह में लूट पाट करते हैं और उस समय महिलाएँ अपने आभूषण उनके सुपुर्द नहीं करती या चाबी देने में अवरोध उत्पन्न करती हैं तो चोर डकैत या राहजन ऐसी महिलाओं के प्रति आपराधिक व्यवहार करता है।

कभी कभी ऐसा भी होता है कि पति के माता पिता या बहन भाई ऐसा महसूस करते हैं कि जो स्त्री वह रूप में आई है वह कम दहेज लेकर आई है या असुन्दर है या फिर काफी दहेज लेकर आई है यदि उसको समाप्त कर दिया जाये तो पुनर्विवाह कर पुनः अच्छी खासी राशि दहेज के रूप में प्राप्त की जा सकती है। इस लोभ से प्रेरित होकर भी महिलाओं के साथ अमानुषिक व्यवहार होता है जो आपराधिक परिधि के अन्तर्गत आता है।

महिलाओं के प्रति हिंसक व्यवहार—सांख्यिकी सर्वेक्षण

भारतीय ब्यूरो आफ पुलिस रिसर्च एण्ड डवलपमैन्ट गृह मन्त्रालय भारत सरकार द्वारा प्रमाणित आंकड़े क्राईम इन इण्डिया 1971, 1976, 1978, 1979 की रिपोर्ट के अनुसार भारत में महिलाओं के विरुद्ध किये जा रहे अपराधों में निरंतर वृद्धि हो रही है। महिलाओं के विरुद्ध छेड़छाड़ से लेकर भगाने व हत्या करने तक सभी प्रकार के अपराध वृद्धि उन्मुख हैं। उदाहरणार्थ 1971 में बलात्कार के अपराध की संख्या 2487 अंकित की गई थी जबकि 1979 में बलात्कार के अपराधों की संख्या 4300 हो गई। इस प्रकार प्रति दिन 12 व 24 घण्टों में कहीं न कहीं प्रति दो घण्टे के अन्दर एक बलात्कार का अपराध समूचे भारत में घटित होता है। इसी प्रकार राजधानी दिल्ली में 1980 में वधू को जलाने के 421 प्रकरण पंजीकृत किये गये थे 1982 में यही संख्या बढ़ कर 619 हो गई। दहेज हत्या के प्रकरणों पर दृष्टिपात करें तो 1980 में कुछ राज्यों में स्थिति इस प्रकार रही—पंजाब में 25 उत्तर प्रदेश में 16 हरियाणा में 24 राजस्थान में 2 गुजरात में 5 पश्चिमी बंगाल में 4 महाराष्ट्र में 3 जम्मू व कश्मीर में 3 उड़ीसा में 2 व बिहार मध्य प्रदेश व हिमाचल प्रदेश प्रत्येक में एक एक अपराध घटित हुआ।

महिलाओं के विरुद्ध किये गये अपराधों की संख्या पंजीकृत अपराधों की तुलना में कितनी ही अधिक होती है किन्तु लोक-लाज के डर से सामाजिक मूल्यों के दबाव के अन्तर्गत महिलाओं के विरुद्ध किये गये अपराधों की रिपोर्ट पुलिस में

नही की जाती है। यहा तक कि दहेज हत्या प्रकरणो में भी कुछ ही प्रकाश मे आते हैं क्योंकि शव की शल्य चिकित्सा व अन्य कारणो से चुप्पी साध ली जाती है।

नारी के विरुद्ध किये जाने वाले हिंसक अपराध—नारी के विरुद्ध हिंसात्मक अपराधो का विवेचन दो भागो मे प्रस्तुत है—

(1) पुरुष द्वारा नारी के विरुद्ध।

(2) नारी द्वारा नारी के विरुद्ध।

(1) पुरुष द्वारा नारी के विरुद्ध हिंसात्मक अपराध—विधिक दृष्टि से नारी के विरुद्ध पुरुष द्वारा किये गये मुख्य अपराधो का विवरण निम्नाकित रूप से है—

1 बलात्कार—भारतीय दण्ड सहिता 1860 की धारा 376 के अन्तगत बलात्कार एक दण्डनीय अपराध है जिसके लिए बलात्कारी को आजीवन कारावास तक की सजा से दण्डित करने का प्रावधान है।

भारतीय दड सहिता की धारा 375 मे बलात्कार के अपराध की व्याख्या की गई है जिसके अनुसार 375—जो पुरुष एतस्मिन पश्चात् (नीचे लिखे हुए) अपवादित दशा के सिवाय किसी स्त्री के साथ निम्नाकित पाँच भाति ही परिस्थितियो मे से किसी परिस्थिति मे मैथुन करता है वह पुरुष बलात्कार करता है यह कहा जाता है—

पहली —उस स्त्री की इच्छा के विरुद्ध।

दूसरी —उस स्त्री की सम्मति के बिना।

तीसरी—उस स्त्री की सम्मति से जबकि उसकी सम्मति उसे मृत्यु या उपहति के भय म डालकर अभिप्राप्त की गई है।

चौथी —उस स्त्री की सम्मति से जबकि वह पुरुष यह जानता है कि वह उस स्त्री का पति नही है और उस स्त्री ने सम्मति इसलिए दी है कि वह विश्वास करती है कि वह पुरुष उसका पति है।

पाचवी—उस स्त्री की सम्मति से या बिना सम्मति के जबकि वह सोलह वर्ष से अधिक आयु की हो।

स्पष्टीकरण—बलात्सग के अपराध के लिए प्रवेशन पर्याप्त है।

अपवाद—पुरुष का अपनी पत्नी के साथ बलात्कार नही है जबकि पत्नी 15 वर्ष से कम आयु की नही है।

बलात्कार विश्व मे सभी देशो के अन्दर होता है। विडम्बना है कि पुरुष नारी के कौमाय के मूल्य को बहुत ऊचा आकता है और इसको महत्व देकर इसका आदर करता है। विवाह के समय नारी के कौमाय को ही महत्व देकर विवाह किया जाता है किन्तु वही पुरुष पशाचिक कामुकता के वशीभूत होकर उसी कौमाय को भग करता है और नारी के शील के साथ खिलवाड कर अपनी क्षणिक पशुवत् तुष्टि के पीछे उस महिला का जीवन बर्बाद कर देता है जहां न आयु का ब धन है और न धम की सीमा है न सौन्दय का मानदण्ड है और न जाति की मर्यादा।

पाश्चात्य देशो मे जहा पर डेटिंग व पुरुष मित्र रखने की प्रथा प्रचलित है और काम क्षेत्र मे बहुत ही उदार दृष्टिकोण है वहा पर भी महिलाओ की इच्छा के विरुद्ध किया गया शारीरिक ससग एक दण्डनीय अपराध माना गया है। पूव म खाडी देशो मुख्यत इस्लामिक देशो मे तो बलात्कारी को मृत्यु दण्ड से दण्डित किया जाता है जिसकी विधि।यह बताई गई है कि उसके पुरुष अग को काट दिया जाता है या फिर उसको बोरे मे ब द कर बीच चौराहे पर डाल दिया जाता है और फिर सभी राहजन उसको इतने पत्थर मारते हैं कि वह पत्थरो की मार से मर जाये।

पाश्चात्य देशो मे जहाँ पर नतिकता और धार्मिक व्यवस्था मे अन्तर किया जाता है उन देशो मे भी जहाँ पर ईसाई धम की अधिक मान्यता है बलात्कार को एक पाशविक कृत्य माना गया है। अमेरिका जो कि पाश्चात्य भौतिक संस्कृति का मुख्य केन्द्र समझा जाता है वहाँ पर बलात्कार के अपराध की वार्षिक दर सम्पूर्ण जनसख्या के अनुपात मे 1 लाख व्यक्तियो के पीछे लगभग 26 है कनाडा मे 8 0 है इगलण्ड मे 5 4 बताई गई है (वेस्ट राय एण्ड निकोलस अण्डर स्टैंडिंग मैनसुमल अटैक्स, लन्दन हिनेमन एजूकेशनल बुक्स लिमिटेड 1978)।

उक्त आकडो की तुलना मे भारत म बलात्कार के प्रकरणो की सख्या काफी कम है। क्राइम इन इडिया 1978 की रिपोट पृष्ठ सख्या 12 (1979) पृष्ठ सख्या 4 47 [19 (9) पृष्ठ सख्या 10] के अनुसार 1974 म बलात्कार के पजीकृत प्रकरणो की सख्या 2962 थी जो कि सम्पूर्ण जनसख्या मे एक लाख व्यक्तियो को आधार मानने पर 0 5 ही गणना म आती है किन्तु पिछले एक दशक मे बलात्कार के अपराधो की सख्या मे अप्रत्याशित वृद्धि हुई है। 1975 मे बलात्कार के अपराधो की सख्या 3376 थी वह 1976 मे बढ़ कर 3893 हो गई। 1977 म जो सख्या 4058 थी वह 1978 म बढ़ कर 4558 हो गई 1979 मे 4300 मे बलात्कार प्रकरण सख्या 3376 थी वह 1980 में पाच वर्षों के अन्तराल में 5023 हो गई इस प्रकार वृद्धि डेढ गुना से अधिक हुई। 1979 में 4,300 बलात्कार के प्रकरण

पजीकृत हुए जिनमे सर्वाधिक प्रकरण मध्य प्रदेश मे पजीकृत हुए जिनकी सख्या 790 रही और अ य प्रान्तो की सख्या निम्नाकित रूप से है—

उत्तर प्रदेश	—	708
पश्चिमी बगाल	—	500
बिहार	—	418
महाराष्ट्र	—	371
राजस्थान	—	202

वस्तुत उक्त साख्यिकीय स्थिति बलात्कार अपराध का सही चित्रण उपस्थित नही करती क्योकि भारत जसे मा यताओ व मर्यादा वाले देश म सामाजिक प्रताडना निष्कासन व उपक्षा के भय से बलात्कार जसे प्रकरणो को दबाया जाता है और पुलिस मे रिपोट अधिकाश प्रकरणो म बदनामी के भय से नही की जाती है। अन्वेषण व अभियोजन द्वारा अपराध के तरीको से भी क्षुब्ध होकर बलात्कार के शिकार और अधिक बदनामी से बचने के लिए गवाह देते समय तथ्यो को छिपा लेते है क्याकि विरोधी पक्ष का अभिभाषक अपनी बहस मे बहुत ही गवेषणात्मक प्रश्न पूछता है जो कि लोकलाज की परिधि मे उत्तर देत समय भारतीय नारी के वश की बात नही रह पाती।

बलात्कार की समाजशास्त्रीय व आपराधिक दृष्टि से उन तत्वो की विवेचना करना आवश्यक हो जाता है, जो कि बलात्कार जसे अपराध के लिए उत्तरदायी है। सामा यतया बढते जा रहे नगरीकरण य त्रीकीकरण नगरीय जीवन का आर्थिक विषमता झोपडी सस्कृति की वृत्ति औद्योगीकरण सह शिक्षा सह काय, चलचित्र टेलीविजन वीडियो कसेट उत्तेजक सगीत भडकीले व उत्तेजक नृत्य स्ट्रिपटीज (नग्न नृत्य) ब्ल्यू फिल्म्स उत्तेजक कामुक साहित्य महिलाओ के प्रति बदलता दृष्टिकोण—पूज्या से भोग्या की ओर नारी द्वारा अर्द्ध-नग्न व उत्तेजक शृ गार प्रसाधनयुक्त खुले म अकेले म घूमने की प्रवृत्ति सिकुडते हुए धार्मिक बधन एव बदलते सामाजिक मूल्य अर्थ प्रधान सामाजिक व्यवस्था आदि ऐसे ही तत्व हैं, जो कि बलात्कार के अपराध को ज म देते हैं। पुरुष जब कामाध होता है अपनी पत्नी व प्र यसी स दूर होता है तो फिर वह अकेली मिलने वाली फशन परस्त महिला की ओर आकर्षित हो जाता है और अपनी पशाचिक काम पिपासा को बलात्कार के माध्यम से शात करता है। बलात्कार की शिकार सुशील भोल-भाली नारी अपनी पवित्रता खो जाने से जीवन को जीना निरथक समझती है और वह आत्म हत्या कर मृत्यु का वरण कर लेती है। इस कारण बलात्कार का अपराध समस्त अपराध सख्या म 0 3 प्रतिशत होत हुए भी महिला के प्रति किय जाने वाले

हिंसक अपराधों में सर्वोच्च स्थान पर है। इस अपराध को सामाजिक दृष्टि से गम्भीरतम अपराध माना जाता है क्योंकि इस अपराध की शिकार नारी का सारा जीवन इससे प्रभावित होता है।

बलात्कार कहां पर नहीं होते ? कामुकता किसी वर्ग विशेष व समुदाय सम्प्रदाय विशेष की देन नहीं है। संसार के सभी धर्मों ने बलात्कार को निषिद्ध व्यवहार माना है। बलात्कार तो कामुक व्यक्ति का व्यक्तिगत पाश्विक व्यवहार है जिसका सम्बन्ध न धर्म से है न शिक्षा से और न सामाजिक प्रतिष्ठा से ही। कामातुर तो मतिहीन होता है और मैथुनिक कृत्य करने में पशु तुल्य होता है। बलात्कार के लिए महिला का सुन्दर होना भी आवश्यक नहीं है। केवल मात्र उसका महिला होना ही पर्याप्त है चाहे वह कुमारी हो या विवाहित हो सुन्दर हो या असुन्दर। जहाँ पर और जब भी अवसर मिलता है ऐसी मनोवृत्ति वाले व्यक्ति बलात्कार कर बैठते हैं। यह भी नहीं कि अशिक्षित व अर्द्ध शिक्षित ही बलात्कार करते हैं। शिक्षित भी अछूते नहीं रहते किन्तु एक बात सामान्य रूप से मान्य है कि बलात्कार अकेले में ही सम्भव होता है और जहां पर काम करते समय या घूमते समय स्त्री व पुरुष अकेले पड़ जाते हैं तो पुरुष की पैशाचिक कामुकता जागने पर बलात्कार जैसा आपराधिक कृत्य सम्भव है। आवश्यक नहीं कि दरिद्र बालायें या महिलायें ही, बलात्कार की शिकार होती हों। शिक्षित कामकाजी महिलायें पुरुषों के साथ अकेले में काम करती हैं तो पुरुष वर्ग बलात्कार कर बैठता है। अध्ययनों के आधार पर व समाचार पत्रों में प्रकाशित समाचारों के आधार पर प्राईवेट सेक्टर में काम करने वाली महिलाओं को उनके नियोजक ठेकेदारों के पास काम करने वाली मजदूर महिलाओं को ठेकेदार उनके मुंशी सम्प्रेक्षण गृह व अनाथालयों की आवासिनियों को उनके प्रबन्धक अस्पताल में भर्ती मरीज व परिचारिकाओं को वहाँ पर पदस्थापित अधिकारी या कर्मचारी घरेलू नौकरानियों को उनके मालिक व दैनिक मजदूरी पर नियुक्त महिलाओं को उनके पर्यवेक्षक अपने घृणित चरित्र के वशीभूत कामुकता में मदांध होकर बलात्कार जैसा कृत्य कर बैठते हैं। ये बलात्कारी ऐसे घृणित व्यक्ति होते हैं कि पागल गूंगी बहरी अन्धी महिलाओं व भिखारी महिलाओं से भी बलात्कार करने में नहीं चूकते।

यह भी भावना बलात्कार के विरुद्ध जुड़ी हुई कि वस्तुतः बलात्कार जैसा अपराध होता ही नहीं है। कोई भी पुरुष किसी नारी के साथ संसर्ग नहीं कर सकता जब तक उसकी इच्छा नहीं हो। जब कि इच्छा से युगल काम क्रीड़ा में मग्न हो जाते हैं और उनको जब कोई देख लेता है तो बदनामी से बचने के लिए परिवार के निष्कासन व सामाजिक प्रतिष्ठा के भय से महिला अपने प्रेमी पुरुष को

बलात्कारी का नाम दे देती है वह तार्कि- बची रहे तर्क यह है कि बलात्कार जसी क्रिया सम्भव ही नही हो सकती यदि महिला का प्रतिरोध निरंतर जारी रहे जब तक कि वह बेहोश न हो जाये अथवा बेहोश न कर दी जाये। यहा तक भी कहा जाता है कि आपसी वैमनस्य होने पर शत्रु पक्ष से प्रतिशोध लेने के लिए बलात्कार या बलात्कार प्रयास के झूठे मुकदमे दायर कर दिये जाते हैं ताकि समाज व कानून की सहानुभूति बलात्कार की शिकार महिला की ओर हो जाये और शत्रु पक्ष कानूनी दाव पेच का शिकार होकर सीखचो मे बद हो जाये। यह भी सुना जाता है कि बदले की भावना से प्रेरित होकर पुलिस से मिल कर चरित्रहीन पेशा करने वाली महिलाओ की सेवायें अर्जित की जाती है। उनका राशि देकर बलात्कार के शिकार के रूप मे प्रस्तुत की जाती हैं। कभी-कभी असामाजिक तत्व किसी सज्जन व सीधे धनवान व्यक्ति स धन ऐंठने के लिए चरित्रहीन महिला से बलात्कार के प्रकरण रजिस्टर करवा देते है।

बलात्कार के अपराध के बारे मे जो उक्त धारणाएँ बनी हैं उनमे आशिक रूप से सत्यता हो सकती है किन्तु भारतीय परिवेश म पली नारी अपन शील व मर्यादा का मूल्य चुका कर प्रतिशोध साधन बनने को तयार नही हो सकती। जहा तक इच्छा से साथ देकर काम क्रीडा मे लीन महिला द्वारा बलात्कार का आरोप लगा कर स्वय को बच निकलने का प्रश्न है यह एक विचारणीय बिन्दु अवश्य है किन्तु फिर भी बलात्कार के सभी प्रकरणों मे यह सही सिद्ध नही होता क्योकि लोक लाज से बचने की चिंता करने वाली नारी अपने प्रेमी के साथ यह खिलवाड नही कर पायेगी और यदि सामाजिक दवाव म आकर वह ऐसा कृत्य करती है तो आगे साक्षी देते समय वह मुकर जाती है जिससे अपराध सिद्ध नही हो पाता। अत सिद्ध दोष बलात्कार आपराधिक कृत्यो के बारे म यह धारणा भारतीय सामाजिक मूल्यो के परिप्रेक्ष्य म सही सिद्ध नही हो पाती है।

जहा तक चरित्रहीन महिलाओ को बलात्कार के शिकार के रूप मे प्रस्तुत करने व होन का प्रश्न है ऐसे प्रकरण अवश्य प्रस्तुत होते हैं किन्तु आगे जाकर अभियोजन मे ऐसे प्रकरण महिला के चरित्र की रिपोट व स्वास्थ्य परीक्षण रिपोट के आधार पर असफल हो जाते हैं किन्तु फिर भी अभियुक्त को अपने आपको निर्दोष सिद्ध करने मे काफी समय लग जाता है और उसको भारी मानसिक यत्रणा व आर्थिक क्षति के दौर से गुजरना पडता है। एसी महिलाओ के विरुद्ध कोई कानूनी कार्यवाही की व्यवस्था न होने के कारण ऐसे प्रकरण पजीकृत किय जाते हैं।

इसके अतिरिक्त जहा रक्षक ही भक्षक हो जाते हैं वहा पर व्यवस्था उल्टे पर ही तो चलेगी सीधी नही। पुलिस न्याय व्यवस्था बनाये रखन के लिए तैनात

की जाती है किन्तु मेरे योग्य सेवा ?" की तरती के नीचे डण्डा लेकर बठने वाले पुलिस कर्मी बलात्कार करने मे नही चूकते और कानूनी दाव पेच म माहिर होन क फलस्वरूप बच निकलते है। रात्रि गश्त के दौरान अकेली मिलने वाली महिलायें पुलिस हिरासत मे रात्रि मे पुलिस लॉकप म बन्द की जान वाली महिलायें अपराध मे लिप्त जनो की सम्बन्धी महिलायें—पुलिस कर्मियो की बलात्कारी हिसक प्रवृत्ति की शिकार होती हैं। बहुचर्चित मथुरी (1979) हमीदा बी (1979), माया त्यागी (1980 व बसन्ती देवी (1981) के प्रकरण पुलिस बलात्कार के ज्वलन्त उदाहरण है जिनसे क्षुब्ध होकर माननीय उच्चतम न्यायालय ने बलात्कार के सन्दर्भ मे साक्षी अधिनियम के प्रावधानो को भी बदलने के सम्बन्ध मे व्यवस्था दी है। ऐसा प्रतीत होता है मानो पुलिस कर्मियो के पास बलात्कार करने का लाइसन्स हो। वस्तुत अपनी कानूनी स्थिति एव कानूनी ज्ञान का लाभ उठा कर पुलिस कर्मी नशे की हालत मे ऐसे कृत्य करते हैं। यह गहन चिन्तन व विचार सम्बन्धी बिन्दु है जो नीति निर्धारको के लिए बहुत चिन्ता का विषय होना चाहिए।

क्या बलात्कारी सामान्य पुरुष होता है या विकृत मनोवृत्ति वाला असामान्य व्यक्ति ? यदि सामान्य व्यक्ति भी जब बलात्कार जसा घृणित काय करता है तो वह भी असामान्य दूषित मनोवृत्ति वाला व्यक्ति ही कहलायेगा। जहा तक बलात्कार को अधिकार रूप मे प्रदर्शित की जाने वाली मनोवृत्ति का प्रश्न है जिसका प्रदशन गावों म जागीरदार भोली भाली कमजोर कृषि मजदूर औरतो के साथ नीची समझी जाने वाली जाति की महिलाओ के साथ किया करते थे उस सामन्ती मनोवृत्ति का अब स्वतन्त्र भारत मे कोई स्थान नही है किन्तु फिर भी कहा जाता है कि बिहार राज्य मे यह मनोवृत्ति विशेष रूप से आज भी पाई जाती है। इस सदभ म इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि भारतीय सविधान म प्रदत्त मूल अधिकारो के परिप्रेक्ष्य मे पुरुष का यह अधिकार लेशमात्र भी नही कि वह नारी का हिंसात्मक शोषण का साधन समझे और अपनी पाशविक मनोवृत्ति का शिकार अबला, विवश व असहाय नारी को बनाय। यदि ऐसा होता है तो स्वतन्त्र भारत की सामाजिक व्यवस्था दोषी है समाज की सत्ता स्वरूपा सरकार पापी है जो नारी के शील की रक्षा न कर सके वह सरकारी व्यवस्था दयनीय ही कही जा सकती है।

बलात्कार के प्रकार

बलात्कार के अपराध दो प्रकार के होते हैं—(1) वे अपराध जिनम एक ही व्यक्ति बलात्कार करता है और (2) वे बलात्कार के अपराध जिनम एक स अधिक व्यक्ति सामूहिक रूप से बलात्कार करते हैं। ऐसे कृत्य म व्यक्तियो का एक समूह होता है जिनका सामान्य उद्देश्य पाशविक काम पिपासा की शान्ति या फिर शत्रु

पक्ष की नारी के साथ बलात्कार के माध्यम से उसका शील भंग करके बदले की आग को शान्त किया जाता है। इस प्रकार के पुरुष वर्ग द्वारा शत्रु पक्ष की मर्यादा के साथ खेल कर उनको नीचा दिखाया जाता है। ऐसे प्रकरणो मे इतना ख्याल नही रखा जाता कि ऐसी पाशविक प्रवृत्ति के साथ बदला लेने से उनकी पाशविकता ही सामने आती है और समाज उनको घृणा की दृष्टि से देखता है।

बलात्कार के प्रकरण जिनमे एक ही महिला व एक ही पुरुष सम्मिलित होते हैं उनमे बलात्कार के प्रकरणो मे प्रेरक तत्व क्या होते हैं? इन प्रेरक तत्वो के क्या आधार हैं? परिस्थितिगत स्थितियो पर ये आधार निर्भर करते है। सामूहिक बलात्कार के प्रकरण मे मुख्यत बलात्कार का आधार काम सुख न होकर प्रतिशोध लेना ही मुख्य होता है क्योकि मनुष्य अपनी पाशविकता के वशीभूत कितना ही वीभत्स काय करे किन्तु वह इस क्रिया मे काम सुख तो प्राप्त नही कर सकता। फिर इस उद्देश्य से समूह की सगठनात्मक शक्ति भी उभर कर नही आ पाती क्योकि एक समूह के सभी सदस्य जो पाशविक हिंसा मे विश्वास रखते हैं किस प्रकार निरीह अबला के साथ जघन्य काय करने के लिए तत्पर होते हैं और इस प्रकार के व्यक्तियो का एक साथ एकत्रित होना इस मनोवृत्ति पर मनोवैज्ञानिक दृष्टि से प्रश्न चिन्ह अकित करता है। फिर इस प्रश्न से जुडा प्रश्न है—नियोजित बलात्कार व अनियोजितत बलात्कार।

अनियोजित बलात्कार के सन्दभ मे सामूहिक बलात्कार केवल मात्र काम सुख के लिए किया जाये मानव बुद्धि के तार्किक आधार पर इस प्रश्न का उत्तर कठिनता से प्राप्त हो सकता है। हा यदि कोई उत्तर है तो मानवीय अप्रत्याशित विचित्र प्रकृति मे जिसके सन्दभ मे यह कहा जा सकता है कि मनुष्य कब क्या कर बैठे? यह बात एक व्यक्ति विशेष के बारे मे तो कही जा सकती है किन्तु कामुक व्यक्तियो का एक समूह बने और सभी एक साथ मिलकर पशाचिक व पाशविक काम-पिपासा को शान्त करने के लिए बलात्कार को माध्यम बनायें और उसके लिए योजना बनायें शिकार तलाश करें या फिर जब कभी कोई अकेली महिला मिल जाये तो उसके साथ बलात्कार करें। इस स्थिति का उत्तर काम क्रीडा के सन्दभ मे तक से परे दिखाई पडता है। अत सामूहिक बलात्कार के पीछे कामुक सुख से अधिक प्रतिशोध का प्रेरक तत्व अधिक तार्किक प्रतीत होता है। यह तो अपवाद रूप ही माना जायेगा कि किसी महिला की सुन्दरता या कामुकता के दीवाने एक समूह के सभी सदस्य एकजुट होकर कामुकता का नग्न नृत्य करें। डाकुओ द्वारा लूट का माल समझ कर महिलाओ के साथ सामूहिक बलात्कार की घटनायें तो प्रकाश मे आयी है। इन प्रकरणो मे तो पाशविक काम वासना की भूख ही बलात्कार के मूल मे होती है।

एकल बलात्कार प्रकरणो म जब प्रेरक तत्व व कारणो की चर्चा की जाती है तो सबसे पहले उन परिस्थितियो पर विचार करना होता है जो इन स्थितिया को जन्म देती हैं। बलात्कार की शिकार महिला के सदभ म इस पर विचार सभव ह जो दो प्रकार से हैं—(1) वे जिनमे कुछ महिलायें ही बलात्कार की शिकार होती हैं और (2) वे जिनम कोई ही महिला बलात्कार की शिकार होती है।

प्रथम कुछ महिलाम्रो के बलात्कार की शिकार होन के सदभ म यह परिस्थितिजनक प्रश्न और भी स्पष्ट स्थिति चाहता है। यह उन परिस्थितियो की ओर इगित करता है जिसम महिला का व्यवहार और काय की स्थितिया जहा पर एक पुरुष व एक महिला ही निर्मित करती है। काय करते हुए एकात के क्षण हो काम पर आते जाते समय सुनसान या एकात राह मे छिपन व भागने का स्थान हो चिल्लाने पर भी किसी की सहायता के लिए न आने की सभावना हो तो ये सब परिस्थितिया बलात्कार मे साधक स्थितिया होती हैं। इसके साथ साथ बलात्कार से ग्रसित महिला की विशेषतायें भी इसमें सहायक सिद्ध होती हैं। यह होता है कि एक समझदार सुदर महिला जब काम पर जाती है तो अश्रृगारित जाती है और घर पर अपन पति के साथ जाने पर श्रृगार करके जाती है। कुछ महिलाए जो महिलागत नैसर्गिक सदाचार रखन का स्वभाव वाली होती हैं व अपन कत य स्थल पर घर से बाहर निकलते समय भडकीला श्रृगार कर बाहर निकलती हैं जो पुरुष की कामुकता को मौन निमत्रण देती हैं। सौदय का मूल्याकन प्रत्येक व्यक्ति के बस की बात नही और वह सौदय जो शारीरिक न होकर बौद्धिक हो। सौदय प्रदशन वह भी भडकीले श्रृगार के साथ केवल मात्र मनुष्य की पाश्विक कामुक प्यास को बढाती है और मनुष्य की सदा ही नारी के साथ पाश्विक ससग की इच्छा और सुदर या मनभावन नारी पर अधिकार कर भोगने की सतत् इच्छा उसकी पशुता को भडकाती है और वह मन ही मन ऐसी महिला को पाने की लालसा सजो लेता है। फिर हो सकता है कि वह प्रेम जाल फेंके व काम बाणो से रतिमति को आहत करना चाह कितु जब अपन प्रयासो मे सफल न होने पर वह बलात्कार जसा जघन्य व हिंसक आचरण भी कर बैठता है।

तीसरा विचारणीय बिदु है बलात्कारी का आचरण व चरित्र। समाज म सयमी सदस्य सामान्य रूप से मिलते है और असयमी व अनुशासनहीन व्यक्ति अपवाद रूप म हैं। मनुष्य की नैसर्गिक प्रवृत्ति भी है कि वह सौदय को प्यार करे और भोग हेतु प्राप्त करे कितु समाज मे उसकी मर्यादित सीमायें निर्धारित की हुई हैं जिनके अन्तगत ही वह अपनी सतत् सौंदय साधना एव कामना की कमनीयता को निखार सकता है व भाग्याथ प्राप्त कर सकता है। भवरे का अधिकार है कलियो

व फूलों पर मण्डराने का व रसपान करने का किन्तु भ्रमर को फूल नष्ट करने का अधिकार नहीं है। मनुष्य का अधिकार है सामाजिक व्यवस्था के अन्दर अनुशासित होकर नारी के सौंदर्य से नयन सुख प्राप्त करने का और समाज की व्यवस्था के अन्तर्गत सौंदर्य पान करने का। समाज में कुछेक व्यक्ति ऐसे होते हैं जो सामाजिक मान्यताओं की चिन्ता नहीं करते। वे सामाजिक अनुशासन से अपने को ऊपर समझते हैं सामाजिक बंधन में बंध कर नहीं रह पाते व समाज में आत्मतुष्टि के लिए वीरभोग्या वसुंधरा के सिद्धांत पर अनैतिक व अनुशासनहीन जीवन जीते हैं। वे काम पिपासा को बलपूर्वक बुझाना चाहते हैं। ऐसे व्यक्ति समय पाकर विवश व असहाय अबला के साथ बलात्कार जैसा कृत्य कर बैठते हैं। ऐसे व्यक्ति अधिकतर नशे के आदी होते हैं और मदिरा मद में मत्त होकर वे और भी पशुवत आचरण करते हैं और कामुकता के गन्दले नाले में खुद डूबते हैं और पराई स्त्री तक को डुबो लेते हैं। बलात्कार जैसा घृणित अपराध करते हैं।

व्यक्ति की चारित्रिक विशेषतायें दुर्गुण के आधार पर बलात्कारियों को निम्नांकित रूप से वर्गीकृत किया जा सकता है। गरहार्ड के अनुसार इन वर्गीकरणों को सक्स ऑफेंडर्स एन एनलेसिस आफ टाईप्स में दर्शाया है जो निम्नांकित रूप से है —

(1) कष्ट पहुंचा कर सुखी होने वाले मनुष्य

ऐसे व्यक्ति जो कि महिलाओं से घृणा करते हैं वे महिलाओं को शारीरिक कष्ट देते हैं और महिलाओं को हुई पीड़ा में उनको आत्मसुख मिलता है। ऐसे व्यक्ति बलात्कार करके बड़ा आनन्द पाते हैं। ये व्यक्ति मानसिक रोगी ही कहलायेंगे क्योंकि इनका यह कृत्य विकृति की संज्ञा में ही आता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से ऐसे कष्ट देकर सुख पाने वाले व्यक्तियों को मानसिक विकृति वाले रोगी कहा जाता है जिनको अंग्रेजी में सेडिस्ट (Sadist) की संज्ञा दी जाती है जिनको जितनी महिला पीड़ा से तड़पेगी उतना ही इनको सुख मिलेगा वह भी काम पीड़ा से सम्बन्धित।

(2) नैतिकता शून्य विचलनकारी

संसार में तीन प्रकार के व्यक्ति होते हैं—(1) नैतिकता में विश्वास रखने वाले (2) नैतिकता में अविश्वास रखने वाले (3) नैतिकता के मामले में तटस्थ जो न नैतिक हैं और न ही अनैतिक। इसमें नैतिकता में विश्वास करने वाले व्यक्ति न तो महिलाओं के प्रति हिंसक होते हैं और न ही बलात्कार कर सकते हैं किन्तु नैतिकता में अविश्वास रखने वाले व नैतिकता से तटस्थ व्यक्ति महिलाओं के प्रति

नतिक मूल्य व मान्यताओ से बधे न होने से नारी के भोग्या रूप मे सुख प्राप्ति का साधन समझते हैं और महिलाओ के साथ बलात्कार करने मे उनकी अर्तात्मा पर कोई प्रभाव नही पडता है ।

(3) पियक्कड

ऐसे व्यक्ति जो पीने के पश्चात् अपना होश खो बैठते हैं और नाना प्रकार के काल्पनिक भय से ग्रसित हो जाते हैं । वे कल्पना करते है कि अमुक औरत उनसे प्यार करती है या उनको चाहती है और वह उसको बुला रही है । उसके साथ काम क्रिया करेगी । इस नशे की ललक या बहक मे महिला के पास वे पहुच जाते हैं और बलात्कार जसा अपराध कर बठत हैं ।

(4) दोहरे मापदण्ड वाले पुरुष

ऐसे बुगला भक्तो की भी ससार म कमी नही । ऊपर से सफेद पोश सज्जन दिखाई देने वाले दाढी वाले तिलकधारी पाखण्डी पडित/मुल्ला महिलाओ को आकर्षित करते हैं और फिर बलात्कार करते है । वे दोहरे मानदण्ड से सोचते हैं । कभी कभी सतान प्राप्ति की इच्छुक महिलाएँ तात्रिक व ज्योतिषियो के दुष्चक्र में आ जाती हैं और उनसे मेल मिलाप बढा लेती है । अनुष्ठान व क्रियाकाण्ड के नाम पर उनका सानिध्य बढता जाता है और बलात्कार की सभावना और बढ जाती है ।

बदनाम बस्तियो म रहने पर चरित्रहीन महिलाओ के साथ रहने पर भी कई बार भले घर की महिलायें बलात्कार जसी जघ य घटना का शिकार हो जाती है । कुछ महिलायें पुरुष की बाहरी चमक दमक से प्रभावित होकर अपनी सामाजिक मान प्रतिष्ठा बढाने हेतु धनी वभवशाली युवको से मेल मिलाप बढा लेती हैं जिसका दुष्परिणाम कभी कभी उन्हे बलात्कार की शिकार होने जैसी घटना के रूप भुगतना पडता है ।

बलात्कार क्यो किया जाता है इसके विविध कारण हो सकते हैं जो जवकीय व मनोवज्ञानिक सामाजिक व भौतिक सभी प्रकार के होते हैं जिनम मुख्य कारण निम्नाकित है —

(1) महिला द्वारा प्रोत्साहन

काम की पशाचिक शक्ति का आवेग बडा प्रचण्ड है । जब चाहे या अनचाहे किसी महिला से एसा व्यवहार हो जाता है जिससे कि पुरुष गलत अथ

लगा लेता है और समझ लेता है कि वह या तो दुश्चरित्र है या उससे प्यार करती है। कभी कारुणिक परिस्थितियों मे जब कोई व्यक्ति किसी महिला की सहायता करता है और उस महिला द्वारा प्रदर्शित उदार व्यवहार दर्शाया जाता है तो कतिपय पुरुष इसका गलत अर्थ लगा लेते हैं कभी विश्वास म कोई महिला किसी पुरुष के साथ बाहर चल देती है यात्रादि मे वाहन म साथ बठ जाती है तो इन परिस्थितियो मे कामुक प्रवृत्ति का पुरुष महिला के साथ हिंसात्मक बलात्कारी व्यवहार कर बठना है। महिला द्वारा इस प्रकार किये गये व्यवहार को वह पुरुष प्रोत्साहन के रूप मे लेता है। कभी कभी अपने का अधिक सजा कर रखने वाली महिला जो कि काम वासना का भडकाती है उसको भी व्यभिचारिणी समझ कर उसकी ओर पुरुष आकर्षित होता है। जब वह पाता है कि वस्तुत महिला दुराचारिणी नही है तो वह अपनी काम पिपासा का बलात्कार के माध्यम से बुझाना चाहता है। इस प्रकार शौकीन मिजाज युवा महिलायें शौकीन मिजाज अल्हड़ युवा-पुरुषो की काम भावना की शिकार हो जाती है।

कुछ महिलायें आधुनिकता के नाम पर स्वच्छन्द विचारधारा वाली होती हैं वे पार्टियो मे भाग लेती हैं क्लबो म स्वच्छन्द आचरण करती हैं नृत्य करती हैं गीत गाती हैं और शराब का प्याला हाथ मे लेकर पुरुषों के साथ अनर्गल गपशप करती है। ऐसी स्त्रियो के व्यवहार मे उनके ससर्ग म आने वाले पुरुष महिलाओ द्वारा मूक निमन्त्रण समझते हैं और फिर बलात्कार जसी घटना घटित होने की स्थितिया बनती हैं।

इस सदर्भ मे यह प्रश्न उभर कर आता है कि यदि महिला प्रतिरोध करे तो क्या पुरुष बलात्कार कर सकता है ? इस सदर्भ मे यही कहा जा सकता है कि प्रतिरोध न करने वाली महिलाएँ व कामुक पिशाचकाय पुरुष से भयभीत महिलायें ऐसे बलात्कारी पुरुष का काय आसान कर देती हैं। प्रतिरोध उत्पन्न करने वाली महिलाओ के साथ बलात्कार आस न काम नही जब तक उनको शारीरिक चोट पहुचा कर बेहोश न कर दिया जाये बलात्कार सम्भव नही हो सकता। इस सदर्भ मे महिला की भूमिका महत्वपूर्ण इस प्रकार हो जाती है कि अपनी भूमिका के आधार पर महिला निष्क्रिय हो सकती है महिला क्रियाशील हो सकती है और महिला अचानक हुए हिंसक कामुक आक्रमण से हतप्रभ हो सकती है।

(2) अतिरेक कामुकता

फ्राइड के अनुसार कामेच्छा एक बहुत ही शक्तिशाली इच्छा है जो जाग्रत होने पर सभी इच्छाओ से बलवती होती है। यह इच्छा व्यक्ति के साथ

जन्म से होती है जो नवजात शिशु के दूध पीने के ढग से स्पष्ट परिलक्षित होती है। कामेच्छा जीवनदायिनी सजीवनी भी है और अनियन्त्रित होने पर यह मृत्यु का निमन्त्रण भी है। मानव शरीर सरचना मे कुछ ग्रथिया होती हैं जिनमे से रस निकलता है इसी प्रकार की काम-ग्रन्थिया भी हैं जिनमे आवश्यकता से अधिक रस निकलने से व्यक्ति मे कामेच्छा सामान्य व्यक्ति की तुलना मे अधिक जाग्रत होती है और जब इच्छा का प्रभाव सर पर चढ कर बोलता है तो फिर वह कामाध होकर उचित व अनुचित कुछ भी नही देख पाता और केवल मात्र काम पिपासा शात करना चाहता है। सभ्यता के प्रगति पथ पर अग्रेषित मनुष्य ने अपने को सुसस्कृत करने का प्रयत्न किया है किन्तु आहार निद्रा, भय व मैथुन ये चार मूल भावनाए या मूल प्रवृत्तिया जो कि मनुष्य एव पशुओ मे समान हैं मनुष्य के साथ प्रारम्भिक सृजन काल से आज दिनाक तक चली आ रही हैं। मनुष्य ने अपने को मानव बनाने के प्रयत्न मे इन भावनाओ को सुसस्कृत परिष्कृत किया है। उसने अपने आपके अन्तर का नियन्त्रीकरण करने का प्रयत्न किया वाह्य जगत मे अपने आपका समाजीकरण करने का प्रयत्न किया है।

फिर भी समाज मे अपवाद के रूप मे ऐसे मनुष्य भी हैं जो कि शरीर की काम भूख मिटाने के लिए मैथुन का सहारा नग्न रूप मे असामाजिक ढग से लेते हैं और बलात्कार जैसा घृणित अपराध करते हैं। चाहे शरीर मे गोनेड ग्रथियो के अधिक रस स्राव व नियन्त्रण के अभाव मे या चाहे मानसिक दौर्बल्य के कारण उत्पन्न विवेकहीनता के फलस्वरूप या फिर मानसिक रुग्णता के प्रभाव मे, जो कुछ हो कामुकता के वशीभूत होकर बलात्कार जैसा अपराध मनुष्य करता है। जब प्रौढ व्यक्ति चार पाच वर्ष की बालिका के साथ कुकर्म करता है तो उसको मानसिक रोगी ही कहा जायेगा कुवारा व्यक्ति जो यह नही जानता कि स्त्री ससर्ग सुख क्या होता है वह तो वर्षों बिना मैथुन को रह सकता है, किन्तु विवाहित पुरुष जिसने स्त्री समग सुख भोगा है और ऐसा व्यक्ति जब अपरिहार्य परिस्थितियो मे परिवार से दूर रहता है तो उसमे काम वासना भडकना स्वाभाविक है जिससे कामुकता के वशीभूत वह बलात्कार जैसा कुकृत्य भी कर बैठता है।

यह भी कहा जाता है कि ऐसा व्यक्ति अपने परिवार से दूर रहता है तो वह अधिक कामेच्छु होता है क्योकि इसी इच्छा की पूर्ति नही हो पाती और कामुकता अतुष्ट रह जाती है। वह रात्रि मे सुनसान जगहो मे या अपने मोहल्लो के सुनसान मकान जिनमे महिला अकेली रहती हो या अकेली जा रही हो महिला की तलाश मे भटकता है और जब कभी कोई अकेली महिला मिल जाय तो अपनी काम पिपासा को शात करने हेतु बलात्कार कर बैठता है।

(3) नशा

पीने की आदत वालो को जब शराब पीने लगता है तब वे विवेकहीन व सवेगशील हो जाते हैं। नशे से पूर्व सौम्यता व विवेकाधिराज दिखने वाला व्यक्ति नशे का दास होने पर वह पशुवत हो जाता है। नशे की हालत मे उसकी प्रसूत कल्पनायें व सवेग उसके व्यवहार को इतना प्रभावित करती हैं कि वह विवेकहीन हो जाता है। विवेकहीन होने पर उसकी पाशविक कामुकता भड़क उठती है और उस समय उचित व अनुचित का विवेक खोकर वह व्यक्ति किसी भी प्रकार की महिला के साथ बलात्कार कर सकता है। ऐसा बलात्कारी समय व परिस्थिति एव पात्र की कभी भी परवाह नही करता। यह भी समाचार पत्र बताते हैं कि कोई कोई पिता या भाई अपनी पुत्री या बहिन के साथ भी बलात्कार जैसा कृत्य नशे मे कर बैठता है।

(4) महिला जाति के प्रति घृणा

कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं जिनके जीवन मे कतिपय ऐसे अनुभव हो जाते हैं कि वे महिला जाति से घृणा करने लग जाते हैं। चाहे यह प्रेम मे विफलता के कारण हो या जीवन मे महिला से मिले धोखे, फरेब विश्वासघात या फिर क्रूर व दुर्व्यवहार भेदभाव आदि के कारण हो ऐसे व्यक्ति महिलाओ से घृणा करने लगते हैं। यह घृणा महिला वर्ग को भी नीचा दिखाने वाले व्यवहार मे परिलक्षित होती है कि जिस नारी वर्ग ने धोखा दिया है फरेब किया है जीवन बर्बाद किया है उस नारी से बदला लेने नीचा दिखाने के लिए कष्ट पहुचाने के लिए बलात्कार जैसा घृणित कार्य किया जाता है जिसमे काम भावना की तृप्ति मुख्य प्रेरक तत्व नही होती।

(5) आकस्मिकता

कभी कभी ऐसा होता है कि ऐसी परिस्थितियाँ जन्म लेती हैं कि व्यक्ति में एका एक कामेच्छा उत्पन्न होती है और वह अवसर का लाभ उठा कर अपनी कामेच्छा पूरी करने पर तत्पर हो जाता है। जगल से अकेले लकडी काटते या पशु चराते पोखर पर अकेले नहाते सुदर निर्जन स्थान मे जब कोई महिला पुरुष को मिल जाये तो कोई व्यक्ति आकस्मिक मिलन का लाभ उठाकर काम पिपासा शात करना चाहता है, तो कोई बलपूर्वक बलात्कार करने से नही चूकता। ऐसी स्थिति मे पुरुष का न कोई मतव्य होता है और न कोई प्रेरक तत्व केवल मात्र एकात मिलन की आकस्मिकता ही बलात्कार के लिए उत्तरदायी स्थिति होती है।

(6) पाखण्डता

कभी कभी धार्मिक परिवेश मे या सामाजिक सम्बन्धो के अन्तगत महिलाओ से मेलजोल बढा लिया जाता है। व्यक्ति रिश्तो के नाम पर राखिया बधवा लेते हैं और सान्निध्य का लाभ उठाकर बलात्कार जसा अपराध करने से नही चूकते।

(7) बलात्कारी त्रासदी

बलात्कार मे शिकार महिला की मन स्थिति क्या होती है ? उसको कितनी गहन पीडा से गुजरना होता है ? यह सहज कल्पना का विषय है। यह एक चिन्तनीय प्रश्न है। बलात्कारी के साथ तो न्यायालय क्या करता है यह अलग बात है किन्तु बलात्कारी बलात्कार की शिकार महिला का तो जीवन ही बर्बाद कर देता है। वह धोबी के कुत्ते से भी बदतर हो जाती है वह घर की रहती है न घाट की। यदि विवाहित महिला ह तो पति उसको नही रखेगा पीहर वाले अपनी लोक लाज से बचन के लिए उपेक्षित करेंगे बच्चे घृणित दृष्टि से देखेंगे। यदि अविवाहित बाला ह तो कोई विवाह करने को तत्पर नही होना है। समाज मे परिवार की प्रतिष्ठा गिरती ह। मौहल्ले गाव म चर्चा का विषय हो जाता ह। उपेक्षित व घृणित दृष्टिया उठती हैं। चचल निगाह इतजार करती दिखाई देती हैं। कुलटा कुलकलकी के रूप म समझी जाने लगती ह। ऐसी अबला से यदि कोई विवाह भी करने को तयार होता ह तो दया भाव से द्रवित होकर यह समझ कर कि वह दया की पात्र ह और विवाह करना एक धम का काम है जिसका यह भावना जीवन पयन्त कचोटती रहती ह। ऐसी भग्न हृदया नारी अपना जीवन जीती है। एकान्त क्षणों म चिन्ता के समुद्र म डूबत बाहर निकलन। इस प्रकार बलात्कार से ग्रस्त नारी स्वय को खोती है स्वय की अस्मिता खोती है अहम् को खोती है सामाजिक प्रतिष्ठा खाती है और खोती है—पति का विश्वास माँ-बाप का प्यार सबधियो का दुलार भविष्य की आकाक्षाए स्वप्निल ससार की कल्पनायें। उसको क्या मिलता है जीवन मे—तिरस्कार! आलोचना! उपेक्षा! पुलिस म वेदना! चिकित्सकीय परीक्षण! व न्यायालय के दौरान लज्जा! शील भग प्रश्न! जहाँ पर हर दृष्टि खरीददार की सी उठती है वह क्या हो जाती है एक गिरी हुई औरत शील भग औरत।

बलात्कार नियमान्तर्गत विधि व्यवस्था

भारतीय सविधान मे प्रदत्त मूल अधिकारो के परिप्रेक्ष्य म पुरुष को यह अधिकार लेशमात्र भी नही है कि वह नारी को हिंसात्मक शोषण का साधन समझे और अपनी पाशविक मनोवृत्ति का शिकार अबला विवश व असहाय नारी को बनाये। यदि ऐसा होता है तो स्वतन्त्र भारत की सामाजिक व्यवस्था दोषी है। समाज की सामाजिक व्यवस्था दोषी है।

बलात्कार जैसे अपराधो की सामाजिक विभीषिका से त्रसित भारतीय समाज को राहत पहुचाने के लिए सरकार द्वारा कतिपय विधेयक पारित कर इस अपराध पर नियन्त्रात्मक अकुश लगाने पर विचार किया है।

2 महिला हत्या

भारतीय दड सहिता की धारा 299 व 300 मे हत्या के अपराध को परिभाषित किया है। हिंसात्मक मानव वध कब हत्या माना जाता है और कब नही, इसकी व्यवस्था इन धाराओ मे की गई है। वस्तुत विधिक दृष्टि से प्रत्येक मानव वध हत्या अपराध नही माना जाता है। जब मानव वध उन परिस्थितिया मे किया जाता है जिनका न्यायिक औचित्य होता है उन परिस्थितियो मे वह अपराध करता है तो वह हत्या का अपराध नही माना जाता। हत्या का अपराध वह मानवीय वध है जिसको कि हत्या के इरादे से पूर्ण जानकारी के साथ किया जाता है।

भारतीय दण्ड सहिता की धारा 299 व 300 मे निम्नांकित रूप से हत्या के अपराध को परिभाषित किया गया है—

299–आपराधिक मानव वध—जो कोई मृत्युकारित करने के आशय से या ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने के आशय से जिससे मृत्यु कारित हो जाना सम्भाव्य हो या यह ज्ञान रखते हुए कि यह सम्भाव्य है कि वह उस कार्य से मृत्यु कारित कर दे कोई कार्य करके मृत्यु कारित कर देता है वह आपराधिक मानव वध का अपराध करता है।

स्पष्टीकरण–1

वह व्यक्ति जो किसी दूसरे व्यक्ति को जो किसी विकार रोग या अग शथिल्य से ग्रस्त है शारीरिक क्षति कारित करता है और तद्द्वारा उस दूसरे व्यक्ति की मृत्य त्वरित (शीघ्र) कर देता है उसकी मृत्यु कारित करता है वह समझा जाएगा।

स्पष्टीकरण–2

जहा कि शारीरिक क्षति से मृत्यु कारित की गई है वहाँ जिस व्यक्ति ने ऐसी शारीरिक क्षति कारित की हो उसने वह मृत्यु कारित की है यह समझा जाएगा यद्यपि उचित उपचार और कौशलपूर्ण चिकित्सा करने से वह मृत्यु रोकी जा सकती थी।

स्पष्टीकरण–3

मा के गर्भ मे स्थित किसी शिशु की मृत्यु कारित करना मानव वध नही है, किन्तु किसी जीवित शिशु की मृत्यु कारित करना आपराधिक मानव वध की कोटि मे आ

सकेगा यदि उस शिशु का कोई भाग बाहर निकाल आया हो यद्यपि उस शिशु ने श्वास नहीं ली है या वह पूर्णत उत्पन्न नहीं हुआ हो।

300–हत्या—आगे बताई अपवादित दशाओं को छोड कर आपराधिक मानव वध हत्या है यदि वह काय जिसके द्वारा मृत्यु कारित की गई हो मृत्यु कारित करने के आशय से किया गया हो अथवा

दूसरी—यदि वह ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने के आशय से किया गया हो जिससे अपराधी जानता हो कि उस व्यक्ति की मृत्यु कारित करना सभाव्य है, जिसकी वह अपहानि कारित की गई हो अथवा

तीसरी—यदि वह किसी व्यक्ति को शारीरिक क्षति कारित करने के आशय से किया गया हो और वह शारीरिक क्षति जिसके कारित करने का आशय हो प्रकृति के मामूली अनुक्रम मे (साधारणत) मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हो अथवा

चौथी—यदि काय करने वाला व्यक्ति यह जानता हो कि वह काय इतना सकट पूर्ण है कि पूरी सम्भाव्यता है कि मृत्यु कारित कर ही देगा या ऐसी शारीरिक क्षति कारित कर ही देगा जिससे मृत्यु कारित होना सम्भाव्य है और वह मृत्यु कारित करने या पूर्वोक्त रूप की क्षति कारित करने की जोखिम उठाने के लिए किसी प्रति हेतु (प्रयोजना) के बिना ऐसा करे।

अपवाद–1 आपराधिक मानव वध कब हत्या नहीं ?

आपराधिक मानव वध हत्या नहीं है यदि अपराधी उस समय जबकि वह गम्भीर और अचानक प्रकोपन से आत्म सयम की शक्ति से वचित हो सयम नहीं रख सके। उस व्यक्ति की जिसने कि वह प्रकोपन (क्रोध) दिया था मृत्यु कारित करे या किसी अन्य व्यक्ति की मृत्यु भूल या दुघटना वश कारित करे।

ऊपर का अपवाद निम्नलिखित परतुकों के अध्याधीन है—

पहला—यह कि वह प्रकोपन (गुस्सा) किसी व्यक्ति का वध करने या अप हानि करने के लिए अपराधी स्वय न बहाने से तथा स्वेच्छ प्रकोपित नहीं किया हो।

दूसरा—यह कि वह प्रकोपन किसी ऐसी बात द्वारा न दिया गया हो जो विधि के पालन म या लोक सेवक द्वारा ऐसे लोक सेवक की शक्तियों के विधि पूर्ण प्रयोग मे की गई हो।

तीसरा—यह कि वह प्रकोपन किसी ऐसी बात द्वारा न दिया गया हो जो प्राईवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के विधि पूर्ण प्रयोग मे की गई है।

स्पष्टीकरण—प्रकोपन (क्रोध व गुस्सा) इतना गम्भीर और अचानक था या नही कि अपराध को हत्या की कोटि मे जाने से बचा दे यह तथ्य का प्रश्न है।

हत्या का अपराध सबसे जघन्य अपराध माना जाता है क्योंकि इसमे जीवन की व्यक्तिगत क्षति होती है और वह ऐसी क्षति होती है जिसकी पूर्ति किसी भी रूप म सम्भव नही होती है। हत्या का अपराध और भी अधिक घृणित व गम्भीर तब हो उठता है जबकि पुरुष नारी की हत्या करता है उस नारी की जिसकी रक्षा का भार पुरुष पर है और जो पुरुष आश्रिता है पुरुष को समर्पित है। पुरुष द्वारा नारी वध यह पुरुष के पौरुष पर तमाचा है उसकी हीनता का प्रतीक है व उसकी पाश्विकता व पशाचिकता की क्रूर अभिव्यक्ति है।

नारी की हत्या करने के लिए मनुष्य मन मे वमनस्य पाले और इस मतव्य के साथ हत्या जैसा कृत्य करे यह कसी विडम्बना है। यह प्रश्न और भी ज्वलत हो उठता है जबकि पति अपनी पत्नियो की हत्यायें करते हैं, जिन पत्नियो को वे पूर्ण समपरण के साथ जीवन पर्यन्त रक्षा भार सुख सागर रूप मे स्वीकार करते हैं। उन पत्नियो के साथ यह निमम अत्याचार कि उनकी इहलीला ही समाप्त कर दी जाये, वाह रे पौरुषपूर्ण पुरुष! रक्षक रूपी पति! जो जीवन व मरण का साथी है जिससे पत्नी की मुक्ति है जनम-मरण के ब धन से वह पति अपनी पत्नी से मुक्ति पाने के लिए कितना सुगम उपाय ढू ढता ह वध। वध करके हत्या के अपराध से बचना चाहता है।

उक्त मानवीय सवेदनात्मक स्थितिया जो सामाजिक जीवन की आधारभूता है हमको सहज ही यह विचार करने के लिए बाध्य करती हैं कि महिलाओ की हत्या के पीछे क्या प्रेरक तत्व हैं? क्या कारण हैं, जिनके वशीभूत महिलाओ की हत्यायें होती हैं? इस प्रकार की हत्याओ मे क्या समरूपता ह? वस्तुत ऐसे कौन से पुरुष हैं जो महिलाओ की हत्यायें करते हैं या वे कौन सी महिलायें हैं जो महिला होते हुए भी महिलाओ की हत्या करती हैं या सहयोग करती हैं? ऐसी कौन सी महिलायें हैं जो हत्याओ का शिकार होती हैं? इनका हत्याओ से क्या सम्बध होता ह? हत्या के अपराध म हत्या की शिकार महिलाओ की क्या भूमिका होती है?

उक्त सभी प्रश्नो का उत्तर दिया जाना आवश्यक भी है। कई विद्वानो ने इस प्रकार के अध्ययन प्रस्तुत किए है जिनके आधार व परिस्थिति के अवलोकन व विवेकशील विवेचन के आधार पर इन अहम् प्रश्नो का उत्तर दिया जाना आवश्यक है।

हत्या व हत्याओ की शिकार महिलाओ के सबध

यह तो कोई पागल या चोर-लुटेरा या डकत ही होगा जो कि आजन्म स्थितियो मे अनजान महिलाओ की हत्या करता हो अन्यथा अधिकाश प्रकरणो मे

मे हत्यारे व हत्या की शिकार महिलाएँ परस्पर परिचित होते हैं पूरण परिचित होते हैं, घनिष्ठ रूप से परिचित होते हैं। अधिकाश रूप से निरीह पत्निया ही पति द्वारा हत्या की शिकार होती हैं या फिर होती हैं प्रेमिकायें या फिर प्रेम म बाधक महिलाएँ या फिर बीच-बचाव करने वाली अभागी महिलाएँ। पारिवारिक असामजस्य व दाम्पत्य जीवन असामजस्य का अभाव ऐसे तत्व हैं जो कि मुख्यतया महिला हत्याओ के प्रेरणामूलक कारण बन जाते हैं।

महिलाओ द्वारा भी उन महिलाओ की हत्या अधिकतर होती है जिनका वे जानती हैं जिससे उनके पारिवारिक सबध होते हैं—बहुएँ बेटिया या सास या ननद व अन्य सबधी महिलाएँ आदि हत्या की शिकार होती हैं।

इस प्रकार यह मान्यता है कि प्राथमिक सामाजिक सबधो म जीवन यापन करने वाले पुरुष व महिलायें ही हत्या के अधिकाश रूप मे इस अपराध मे लिप्त होते हैं।

सदर्भित इस मान्यता को बल मिला है कई अध्ययनो से। सन् 1885 1905 की अवधि मे इगलैण्ड व वेल्स मे अध्ययन किया गया जिसके आधार पर 487 हत्याओ मे से 124 पत्नियो की हत्यायें उनके पतियो ने की थी। 115 प्रेमिकाओ की हत्यायें उनके प्रेमियो द्वारा की गई थी। वोलफ गग ने फिलाडेलफिया मे जो अध्ययन किया उसके निष्कर्ष रूप मे भी यही तथ्य उभर कर आया कि हत्यारे व हत्या की शिकार महिलाएँ वैयक्तिक घनिष्ठ प्राथमिक सबध वाले व्यक्ति होते हैं। उसके अनुसार 65% व्यक्ति प्राथमिक सबध वाले होते हैं जिनम 41 प्रतिशत पत्निया होती हैं जो पतियो द्वारा मारी जाती हैं।

शक्फ (नन्ट पेटनस इन क्रिमिनल होमिसाइड 1958 पृष्ठ 11 204) शिसबन व वलन ने इगलण्ड मे 1958 व 1968 की अवधि के बीच का अध्ययन किया जिसका निष्कर्ष भी यही था कि पत्निया ही महिलाओ मे हत्या की अधिकाश सख्या मे शिकार होती हैं।

(मरडर 1958 से 1968 लन्दन 1969 एहोम आफिस रिपोट ऑन मडर)

मैक्डोनल्ड ने भी 19वी व प्रारभिक 20वी शताब्दी के अध्ययन से यही निष्कर्ष निकाला कि हत्या की शिकार महिला सामान्यतया घनिष्ठ सबधो वाली महिलाएँ होती हैं। मैक्डोनल्ड डथ पेनाल्टी एण्ड हामिसाइड 19-11 67

1930 मे जमनी मे वान हार्निग ने अध्ययन किया जिसम निष्कर्ष यह निकला कि 62 प्रतिशत हत्या की शिकार महिलाएँ पत्निया थी जिनकी हत्या उनके पतियो द्वारा की गई।

हास वोन होर्डिग (दी क्रिमिनल एण्ड हिज्ज विक्टिम 1948 पृष्ठ 392)

1 शिक्षा

जहा तक अपराधी व अपराध की शिकार महिला के शैक्षणिक स्तर का प्रश्न है यह सामान्य रूप से माना जाता है कि अशिक्षित व्यक्ति ही महिला वध या पत्नी वध करते है क्योंकि अशिक्षा अविवेक को जन्म देती है और अविवेक आक्रोश को। आवेश मे अपने क्रोध को नियन्त्रित न करने के कारण पति अपनी पत्नी या किसी भी अन्य महिला की हत्या कर देता है किन्तु इसके साथ यह भी सदेह किया जा सकता है कि शिक्षित पति अपनी पत्नियो की हत्या भी कर देते है और उनको आत्महत्या के रूप म प्रस्तुत करने मे सफल हो जाते है जिससे वे पकडे नही जाते हो जब कि अशिक्षित ऐसा नही कर पाते हैं और वे पकडे जाते हैं तथा दडित कर दिए जाते ह। हमारी मान्यता यह है कि जब पुरुष के अन्दर छिपा उसका पशु जगता है तो वह अन्धा हो जाता है। चाहे पुरुष शिक्षित हो या अशिक्षित जब वह प्रतिशोध की ज्वाला में जलता है तो उसको कुछ भी दिखाई नही देता न उसको अन्तरात्मा की फुसफुसाहट सुनाई देती है और न उसको विवेक की दहाड ही सुनाई पडती है क्रोध मे पागल वह न तो कानून की चिन्ता करता है और न सामाजिक बधन व मर्यादाओ की ही। वह हत्या कर ही बैठता है भावावेश मे आकर। चाहे फिर आक्रोश शात होने पर वह आसुओ का समुद्र बहाये या पश्चाताप की अग्नि मे अहर्निश जलता रहे।

यह सब परिस्थितिवशात स्थितिगत होता है, जसी स्थिति होती ह व जितने उकसाने वाले तत्व होते हैं, उसी के अनुसार उत्तेजनात्मक प्रतिक्रिया होगी किन्तु यह सब व्यक्ति के व्यक्तित्व पर निर्भर करता है जिसम उसके परिवेश का भी योगदान होता ह। यथा वह व्यक्ति जो अपने परिवार मे अपनी पत्नी के व्यभिचारी व्यवहार के प्रति उतना आक्रामक व उत्तेजनात्मक व्यवहार नही करेगा जिसने अपनी माता या बहिन का व्यभिचारी आचरण देखा ह जितना कि वह व्यक्ति जिसने अपने परिवार मे पतिव्रत धर्म की पूजा होती देखी ह। इस प्रकार व्यक्ति की उत्तेजना किस प्रकार प्रतिक्रियात्मक व्यवहार को जन्म देती ह प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तिगत गुण व्यक्तित्व सरचना व उसके परिवेश पर निर्भर करते हैं। पत्नी से जो अपेक्षाएँ व्यक्तिगत, पारिवारिक या सामाजिक होती हैं और जब वह उन आकाक्षाओ के अनुरूप व्यवहार नही कर पाती ह और अपनी अपेक्षित भूमिका नही निभा पाती ह तो असामजस्यात्मक स्थितियाँ उत्पन्न होती हैं और उनके अन्तर्गत व्यक्ति अपना प्रतिघाती व आक्रामक व्यवहार कर बठता ह जो व्यक्ति के स्वभाव व चरित्र पर निर्भर करता ह।

शिक्षा का योगदान व्यक्ति के व्यक्तिगत गुण सरचना मे एक प्रभावी कारक हो सकता ह जिससे कि परिणामो के भय से या फिर अन्य उपलब्ध विकल्प यथा तलाक आदि के द्वारा छुटकारा पाने के सदभ मे शिक्षित व्यक्ति विवेक के आधार पर

विपरीत परिस्थितियों को टाल जाता है और हत्या न कर विचार कर सकता है,
"वह अफसाना जिसे अंजाम तक लाना न हो मुमकिन। उसे एक खूबसूरत मोड़ देकर छोड़ना अच्छा।"

इस प्रकार शिक्षित व्यक्ति नारी हत्या जैसे अपराध से अधिकांशत दूर रह सकता है, यह सम्भावना है किन्तु सत्यता तो आंकड़ों के घेरे में ही बंद है।

2 आयु

जहाँ तक आयु वर्ग का प्रश्न है युवावस्था ही ऐसी अवस्था है जिसमें प्यार भी अधिक होता है और घृणा भी। इस आयु मे भी आक्रोश अधिक आता है और जीवन की समस्याओं को बलपूर्वक सुलझाने मे पुरुष अधिक विश्वास करता है। अधिकांश युवाजनों के लिये शक्ति ही समस्या निवारण का साधन होता है बलवान ही प्रत्येक वस्तु पर अधिकार जमा सकता है। युवावस्था संवेगात्मक अवस्था है जहा भावनात्मक आवेश व संवेगात्मक आक्रोश अपना रंग दिखाता है। जहा जीवन मे असामन्जस्य की स्थिति आ जाती है उस समय संवेगात्मक स्थिति में विवेकहीन पुरुष निरीह पत्नियों की हत्या तक कर बैठते हैं। इस प्रकार 20 से 30 वर्ष की आयु ही ऐसी आयु हो सकती है, जिस आयु वर्ग मे पत्नी हत्याओं की घटनाएं सर्वाधिक घटित हो सकती है। अपराध शास्त्री अध्ययनों से भी इस धारणा की पुष्टि होती है।

3 गरीबी व कमजोर आर्थिक स्थिति

क्या गरीबी की रेखा के नीचे या मध्यम आय वर्गीय परिवारों मे ही पत्नियों की हत्याएँ अधिक होती हैं ? क्या गरीबी या मध्यम आय का सम्बन्ध पत्नी हत्याओं से अधिक है। कहा जाता है कि प्रेम समृद्धि मे बढता है जबकि दुर्दिनों मे घटता है गरीबी कलह मूलक है और कलह से क्रोध उत्पन्न होता है निराश व हताश पत्नी क्रोधावश पत्नी पर हाथ उठाते हैं। वे पत्नियों की आवश्यकताओं की पूर्ति तो नहीं कर सकते किन्तु उनको चुप अवश्य कर देते हैं। पत्नी हत्या करके उनकी आवाज को सदा के लिए शांत कर देते हैं। इस प्रकार दरिद्रता कलह मूलक होकर असामन्जस्य की स्थिति उस सीमा तक उत्पन्न कर देती है कि पति जो अपनी आर्थिक स्थिति सुधारने मे अक्षम होता है तो निराश पति अपनी निराशा को आक्रामकता के माध्यम से प्रकट करता है और उसकी निरीह पत्नी उसकी शिकार होती है जिसकी इहलीला समाप्त कर दी जाती है उसके पति के द्वारा।

इस प्रकार पत्नी हत्या की घटना आर्थिक विषमताओं से घिरे परिवारों में अधिक होने की सम्भावना बनी रहती है।

नारी हत्या के विविध कारण—पूर्वोक्त कारको के अतिरिक्त नारी हत्या के क्या कारण हो सकते हैं ?

क्या पुरुषो द्वारा महिलाओ की हत्या हो जाती है ? या फिर हत्या कर दी जाती है ? पत्निया ही अधिकतर क्यो मारी जाती हैं ? क्योंकि ये पतियो के सानिध्य मे होती हैं एव उनम सामजस्य का अभाव पति को हत्या के लिए प्रेरित करता है ।

बिना कारण कोई हत्या नही हो सकती चाहे गलत फहमी ही कारण रहा हो महान नाटककार शेक्सपीयर की नायिका डेस्डिमोना उसके हब्शी पति आथेनो द्वारा मारी गई चरित्रहीन होने के सदेह मे जबकि मरने के पूव भी उसके मुह से आथेलो का नाम ही निकल रहा था और मृत्यु के पश्चात् भी सात्विक मुस्कान उसके चेहरे पर थी ।

मुख्यत पत्नी हत्या के पीछे जो कारण होते हैं उनमे मुख्यत निम्नाकित कारण हैं—

1 व्यभिचारिणी नारी

कोई भी पुरुष व्यभिचारी स्त्री को पसन्द नही करता । जब पुरुष अपनी पत्नी को पर पुरुष के अको मे देख लेता है या पर पुरुष अक शायिनी के रूप मे देख लेता है तो फिर वह उसको एक क्षण भी जीने नही देना चाहता है । उसके व्यभिचारी आचरण को सहन नही कर पाता जिससे भावावेश मे वह क्रोध के वशीभूत उस प्रपन्चा व्यभिचारिणी पत्नी की हत्या कर देता है । जिससे वह पति व्रत धम की अपेक्षा करता है ।

2 पत्नी द्वारा अवरोधक भूमिका

जब पति परस्त्रीगामी होता है और उसके प्रेम के नाम पर परस्त्री से अवध सबध हाते हैं तो पत्नी इस सबध से क्षुब्ध होकर प्रतिरोध करती है । पत्नी व उसकी प्रेमिका अपने मिलन मे पत्नी को बाधक मानते हैं । अत शूलरूपी पत्नी को हटाने के लिए पति अपनी पत्नी की हत्या कर देता है ताकि वह अपनी प्रेमिका को अपना सके ।

इसी क्रम में जब पति किसी दुर्व्यसन जसे जुआ व शराब का शिकार होता है और पत्नी पति को समझाती है तो पति पत्नी के प्रति वितृष्णा की भावना मे ग्रसित हो जाता है और गृह कलह म वाक युद्ध के दौरान क्रोधित होकर पत्नी की हत्या कर बठता है ।

3 पत्नी के प्रति घृणा

कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं जिनके विवाह उनकी इच्छा के विरुद्ध होते हैं, वे कुरूप, अशिक्षित झगडालू अहकारी पत्नियाँ पाकर वितृष्णा से भर उठते हैं वे अपनी पत्नियों से घृणा करते हैं और कभी कभी छोटे झगडो म मारपीट के दौरान हत्या जैसी घटना घटित हो जाती है।

4 प्रेमिकाओ की हत्या

जब प्रेम की परिस्थिति मिलन मे नही हो पाती तो प्रेमी यह निश्चय कर लेता है कि यदि प्रेमिका उसकी न हो सकी तो वह उसको अन्य की नही होने देगा।

इसी क्रम मे यह भी देखा गया है कि जब प्रेमी अपने प्रेम मे असफल हो जाता है और उसकी प्रेमिका उसका धोखा देकर पर पुरुष से प्रेम करने लगती है तो प्रेमी ईर्ष्या की अग्नि मे जलने लगता है और वह यही धारणा बना लेता है कि उसकी प्रेमिका चाहे उसको न चाहे वह किसी और को चाहेगी तो मुश्किल होगी। यदि उसकी प्रेमिका उसकी न हो सकी तो वह पर की भी नही हो सकती। इस प्रकार असफल प्रेमी अपनी प्रेमिका की जीवन लीला ही समाप्त कर लेता है।

5 प्रतिशोध के रूप मे

जब इच्छित वस्तु की प्राप्ति न हो तो प्रतिशोध के रूप म प्रेमिका या प्रतिद्वन्द्वी की पत्नी बहिन या अन्य सम्बन्धी महिला की प्रतिशोध लेने के लिए हत्या करदी जाती है।

6 इच्छानुरूप व्यवहार न करने पर

जब डकत या राहजन लूटपाट करते हैं और महिलाओ से घर की चाबी या गहने मागते हैं तो न देने पर उनको जान से मार दिया जाता है क्योंकि डकत व लुटेरा के मस्तिष्क मे एक ही बात रहती है कि वे लूट का माल लेकर जल्दी से जल्दी भाग जायें। जब कोई भी प्रतिरोध करता है तो वे कोई दया नही दिखाते और महिलाओ तक की हत्या कर देते हैं।

7 झगडे मे बीच बचाव के दौरान

जब दो विरोधी दलो मे झगडा होता है और लडाई हथियारो से होती है तो उस समय महिलाए बीच-बचाव के लिये आ जाती हैं और वे दुर्भाग्यवश मारी जाती हैं।

8 झगडे मे सहयोगी होने के कारण

जब पुरुष आपस मे लडते हैं तो घर की स्त्रियाँ सहयोग के लिये आ जाती हैं। झगडे के दौरान जब हथियार चलाये जाते हैं तो सहयोगी के रूप मे आई महिलाओ की भी हत्या हो जाती है।

9 अवैध सम्बन्धो से बचाव के रूप मे

प्राय यह भी देखा जाता है कि जब अवैध सम्बन्धों की जानकारी निकट सम्बन्धी महिला को हो जाती है, तो अवध सम्बन्ध वाले स्त्री व पुरुष ऐसी महिलाओ की हत्या कर देते हैं, ताकि वे बदनाम न कर सके और प्रेमी युगल बदनामी से बच सकें।

10 काम वशीभूत

ऐसा भी सुना जाता है कि वैश्याए जो अनतिक शारीरिक व्यापार करती हैं वे कामांध पुरुष को अवसर देन से मना कर देती हैं तो ऐसा कामुक पुरुष ऐसी वश्या का वध कर देता है जो उसको बुलाकर उसकी काम पिपासा को शात न कर उसका अपमान करती है। ऐसी हत्याए प्राय उस समम अधिक हाती हैं जबकि वे अकेलापन पात हैं और पुरुष नशे मे हाते हैं।

11 सुखवादी विकृत मनोवृत्ति

कुछ पुरुष ऐसे होने हैं जो विकृत मनोवत्ति के होते हैं और परपीडा मे सुख का अनुभव करते हैं। वे स्त्रियो के मुह से निकलती चीखो से काम रूप मे उत्तेजित होते हैं और स्त्री के शरीर की चोटो से निकले रक्त को देखकर उनको परम सुख का अनुभव होता है। वे स्त्रियो को पीडा पहुचाते समय इतनी पीडा पहुचाते हैं कि ऐसी स्त्रियाँ मर भी जाती हैं।

12 परिवार का बोझ न वहन करने पर

कभी कभी पति जा कि रुग्णता के कारण या शारीरिक अक्षमता के कारण या मनोविकार के वशीभूत अपने परिवार का भरण-पोषण करन म समर्थ नही होते हैं तो वे अपनी पत्नियो की हत्या इस कारण कर देते हैं ताकि उन पर भरण पोषण का भार ही नहीं रहे। ऐसे व्यक्ति स्वय भी आत्म हत्या कर लेते हैं या करने का प्रयास करते हैं। पति क्रोधावश पत्नी पर हाथ उठा लेता है और वह उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति तो नही कर सकता किन्तु उसकी हत्या कर उसकी आवाज को सदा के लिए शान्त कर देता है। इस प्रकार जब दरिद्रता कलह मूलक होकर असामञ्जस्य की स्थिति इस सीमा तक उत्पन्न कर देती है कि निराश पति जो

अपनी आर्थिक स्थिति सुधारने मे अक्षम होता है वह अपनी निराशा को आक्रामकता के माध्यम से प्रकट करता है और उसकी निरीह पत्नी इसकी शिकार होती है जिसकी इहलीला समाप्त कर दी जाती है उसके पति के द्वारा ही।

इस प्रकार पत्नी हत्या की घटना आर्थिक विषमताओ से घिरे परिवारों म अधिक होने की सम्भावना बनी रही है।

13 सम्पत्ति सम्बन्धी झगड़े

कभी-कभी बँटवारे की नौबत सयुक्त परिवार मे आती है और इस बीच भाइयो के बीच उनकी पत्निया बोलती हैं और अधिकार जताती हैं, तो ऐसी स्थितियो मे क्रोधावश परिवार की महिलाओ की हत्या हो जाती है।

कभी कभी ऐसा भी होता है कि पत्नी उसके पिता की सम्पत्ति की एक मात्र उत्तराधिकारिणी होती है और वह अपनी सम्पत्ति पति के नाम नही कराती है ऐसी स्थिति मे स्वार्थ लोलुप पति पत्नी की हत्या कर सम्पत्ति पर अधिकार जमाना चाहता है और कई पति ऐसा करते भी हैं।

14 पत्नी की लम्बी बीमारी

पत्नी का अधिक लम्बे समय तक बीमार रहना भी कष्टमूलक होता है। लम्बी बीमारी के कारण पत्नी चिडचिडे स्वभाव की हो जाती है वह ईर्ष्यालु व तुनक मिजाज हो जाती है। कभी कभी पति क्षुब्ध होकर पत्नी को चुप करने हेतु प्रहार कर बैठता है जिससे उसकी मृत्यु हो जाती है। ऐसे भी दानव नर पिशाच हैं जो लम्बी बीमारी से पीडित पत्नी से छुटकारा पाने के प्रयास मे उसकी हत्या ही कर देते हैं—दवा न देकर भूखा रखकर या अन्य माध्यम से।

15 छोटे-छोटे झगडे

कभी कभी छोटी छोटी बातो पर पति पत्नी का आपस मे विवाद हो जाता है बच्चो की पढाई आवारागर्दी या सास ससुर ननद-देवर के व्यवहार एव पीहर की बुराई आदि विषयो पर विवाद हो उठता है और कभी-कभी विवाद उग्र रूप धारण कर लेता है जिसमे पति पत्नियो पर प्रहार कर बठते हैं जिससे पत्नियों की हत्या तक हो जाती है।

16 पत्नियो का उत्तेजनाकारी व्यवहार

कभी कभी पत्निया पतियो का सामना करती हैं बराबरी करती हैं, गालियां देती हैं और पति को कहती हैं कि उसमे हिम्मत है तो उन पर हाथ उठाये या उनको मार दे। इस प्रकार की उत्तेजनात्मक स्थितियां उत्पन्न कर वे स्वय मृत्यु को निमन्त्रण

देती हैं और पति आवेश मे मारते पीटते हैं, पत्नियां प्रतिरोध करती है, तो उनकी हत्या तक हा जाती है।

17 झूठ बोलने की आदत

सामान्यतया झूठ तो सभी बोलते हैं कोई कम ता कोई अधिक किन्तु कुछ महिलायें अधिक झूठ बोलती हैं। ऐसा क्यो ? कारण मनोवैज्ञानिक है। जो भी व्यक्ति अपने आपको मानसिक रूप से असुरक्षित समझता है वह अधिक झूठ बोलता है। इस असुरक्षित मन स्थिति के पीछे उस व्यक्ति का भय होता है जिसके सामने या जिसके लिए झूठ बोला जाता है। पुरुष सत्ता वाले समाज मे नारी किसी भी भूमिका मे परिवार मे ही पुरुष से डरती है। मा पिताजी से भय खाती है। बहू सास, ससुर ननद देवर, जेठ पति से भयभीत रहती है। बालक माता-पिता से भयभीत रहते है। इस असुरक्षित मन स्थिति के पीछे जो भय कारण है, उसके अर्तनिहित गर्भ मे जो मूल भावना छिपी रहती है वह है अनिष्ट व अनाचार तथा दुराचार की भावना। कोई कार्य मर्यादाहीन परम्पराहीन व्यवस्था विपरीत तथा इच्छा विपरीत होने पर कोई आर्थिक क्षति होने पर कमजोर व्यक्ति झूठ का सहारा लेकर अपने दोष को छिपाने का प्रयत्न करते हैं। महिलायें जो परिवार मे अधिशासित है वे पुरुष से अनिष्ट की कल्पना मात्र से भयभीत हो जाती है और झूठ का सहारा लेती है।

जिस परिवार मे मुखिया का स्वभाव क्रोधी होता है उस परिवार मे दोष छिपाने के लिए व वस्तुस्थिति पर पर्दा डालने के लिए उस परिवार के सदस्य झूठ का सहारा लेते हैं।

परिवार मे पत्नी झूठ कम बोलती है या अधिक उसके पति के साथ किस प्रकार के सम्बन्ध हैं, पर निर्भर करता है। यदि पति के साथ सम्बन्ध सामन्जस्यपूर्ण हैं सम्बन्ध मधुर है पारस्परिक सौजन्यमय हो तो ऐसी स्थिति मे परिवार का वातावरण खुला खुला सा रहता है। पति पत्नी एक दूसरे को जीवन साथी मानते हुए खुलकर समस्याओ के समाधान की चर्चा करते हैं और एक दूसरे के गुण व दोष को नही छिपाते। ऐसे मुखर मुखरित परिवार मे झूठ बोलने की आवश्यकता नही होती।

इसके विपरीत जिस परिवार मे पुरुष क्रोधी होता है पति पत्नी मे सम्बन्ध कटु होते हैं पति झगडालू होता है उस परिवार मे पत्नी की आदत झूठ बोलने की हो जाती है। जब वह अपने को अनादर, दुर्व्यवहार से बचाने के लिए झूठ का सहारा लेती है तो पति पत्नी मे अविश्वास हो जाता है। इस अविश्वास का

झझावात उनकी पारिवारिक गृहस्थी की चारदीवारी को हिलाकर रख देता है। ऐसी मन स्थिति मे कभी कभी पति अधीर होकर पत्नी को पीटने लगता है। कभी कभी इस मारपीट के दौरान पत्नी की हत्या हो जाती है।

18 सामाजिक मान्यता

भारतीय सस्कृति के बहुचर्चित तीन सोपान—गगा गीता नारी है। गगा पावनता की प्रतीक रूपा आराध्या है पतितपावनी है मुक्ति प्रदायिका है। गीता–भारतीय आध्यात्मिक जीवन के व्यवहारिक मानदण्डो व वयक्तिक मूल्यों की नैतिक सार्थकता की परिचायिका है। भारतीय मान्यता के मूल म नारी सष्टि राध्या अजस्र सजनमूला भारतीय सास्कृतिक जीवन की परिष्कृत शुद्धता निमलता व पवित्रता की अनाध्रगात पुष्पवत् कोमलता की प्रतीक है। नारी चरित्र व चित्रण भारतीय सस्कृति का दपण है। बहुनाम धारिका, बहुनाम चर्चिता नारी स्त्री है क्योकि स्त्ये' शब्द व्युत्पत्ति मूला लज्जा से सिकुडने वाली लज्जा भूषण शोभना शीलवती नारी ही स्त्री है जो पोषित की सज्ञा से विभूषित है क्योकि वह सेविका है नारी 'वामा' है क्योकि वह नकार से सौदय सजन करती है पुरुष को रिझाने वाली रम्भा है पुरुष का भार धारण करने वाली भार्या है। मनमोहक मुद्रा मे प्रस्तुत होने वाली रसिका दारा है रमण म सहचरी है तन्वागी कोमलागी रमणी है। नारी ललना है क्योकि वह चचलता चपलता लालसा इच्छा तष्णा आकाक्षा परिपूर्णा है। साथ ही नारी सागर के समान गम्भीरमना है जिसकी चारित्रिक लहरें पुरुष रूपी किनारे से टकराती है और तट के आलिगन मे अपनी पहिचान पाती रहती हैं। नारी के अन्तमन की गहराइयो मे जो पुरुष खोया व डूबा है वही ही उसका सुखमोही है। पुरुष की अर्धांगिनी कहलाने वाली नारी पुरुष को प्रकृति के रूप मे धारण करने वाली है वह सृष्टिगत सारी सवेदनाओ की मूक सदेशिका है फिर भी विडम्बना है कि नारी सृष्टि का बोझ धारण किये हुए भी माता के रूप मे वदनीया होते हुए भी अबला कहलाती है।

ऐसी नारी भारतीय सामाजिक सस्कृति की पोषक है किन्तु यही नारी रूढि की शिकार है। पिता के परिवार पर बोझ है और विवाहोपरान्त पति पर आश्रिता है। यही नही नारी को पराई करना पुण्य है पिता के घर पर रखना पाप है।

सामाजिक मान्यता ह कि पुत्री का पिता समाज मे छोटा आदमी माना जाता है। पुत्र के पिता का मान समाज म होता है। पुत्री को पराई करने पर सदा ही पिता पक्ष को पुत्री के ससुराल पक्ष से दबना होता है उनका आदर

व सत्कार करना होता है उनकी उचित व अनुचित सभी बातो को वरीयता देनी होती है।

भारत मे कुछ समाज ऐसे हैं जहा कुलीनता व कुल प्रतिष्ठा को वरीयता दी जाती है। जिनमे पुत्री जन्म को हीनता का प्रतीक माना जाता है। यह ईश्वर का अभिशाप माना जाता है। भविष्य मे सारी ग्लानि हीनता हेयता की स्थिति ही उत्पन्न न हो वह पुत्री के जन्म लेते ही दूध न पिलाकर या नशे की चीज खिलाकर मार देते हैं जिससे भविष्य मे कोई बरात लेकर उनके द्वार पर न आये और उनकी प्रतिष्ठा अक्षुण्ण बनी रहे तथा बेटी के बाप के रूप मे होने वाली हीनता व हेयता से बचा जा सके। उस नारी के कारण जिसके स्पदन मे चिर निस्पन्द भरा हो जिसके पग पग पर सगीत उभरा हो जिसकी श्वासो मे स्वप्न पराग भरा हो जिसकी छाया म मलय बयार चलती हा जो नवजीवन अकुरा हो जो अखण्ड विकास को गति देने वाली हो जो मधुश्री हो मधुप्रिया हो व मधुर स्मृति प्रेरिका (प्रेरण) हो जो स्मित चादनी सी खिली हो प्राकृतिक सौन्दय आगार की साकार प्रतिमा हो जो निरूपमा हो कवि सृजनशीला कल्पना का आधार हो जो चरम आसवित का तन लिये, त्याग की ज्योति के साथ साथ मधुर मधुर जलने वाली दीपिका हो, जिसके तन मे तार भी हो आघात भी हो, झकार भी हो वह कुलवती नारी अखण्ड सुहाग की कामप्रिया शलभ जिसके प्राण मे हो फिर भी दीपक को जसे निष्ठुर फूक मारकर बुझा दिया जाता है वसे उसकी प्राण ज्योति को बुझा दिया जाता है उसके अस्तित्व को अग्नि का सौंप दिया जाता है।

19 व्यभिचारिणी होना

पत्नी का व्यभिचारिणी होना भी हत्या कारण बन जाता है। परस्त्रीगामी पति को विवशता म सहन कर सकती है कि तु पुरुष की यह मानसिकता है कि चाहे वह परस्त्रीगामी है कि तु वह अपनी पत्नी को पर पुरुषगामी व अकशायनी देखने की बात ही क्या उसके इस समाचार से ही उद्वेलित हा उठता है। उसका पौरुष कभी भी यह सहन नही कर सकता कि उसकी पत्नी परपुरुषगामी हो वश्यावृत्ति करती हा या चरित्रहीन हो। वह ऐसी पत्नी के सान्निध्य को एक क्षण के लिए भी सहन नही करता। यहा तक कि आपराधिक जन जातिया जिनम वेश्यावृत्ति को एक व्यापार या धन्धा माना जाता है उसम भी विवाहित स्त्रिया धन्धा नही करती हैं उन परिवारो मे पुत्रिया धन्धा करती है किन्तु बहुए अनतिक दहिक व्यापार नही करती। मध्य प्रदेश की बैरनी आपराधिक जन जाति राजस्थान की कजर जनजाति व गुजरात व महाराष्ट्र की नाग या मंग जन जाति इसके उदाहरण हैं जहा अनतिकता मे भी नतिकता छिपी है। भीरू पति पत्नी को समझाने की चेष्टा

करता है वह पत्नी के माता पिता व सम्बन्धियों का सहारा लेता है किन्तु जब साधन चुक जाते हैं तो पत्नी की हत्या कर वह अपना हिसाब चुकता करता है—पौरुष की चुनौती को स्वीकार कर परपुरुष-सहचरी होने का प्रतिशोध लेता है। कभी-कभी यह भी देखने मे आया है कि चरित्रहीन बहिन को उसके सगे भाई या पिता भी परिवार की प्रतिष्ठा का आंच पहुँचाने वाली होने से परिवार की प्रतिष्ठा बचाने हेतु हत्या कर देते हैं।

कभी कभी महिला अपने परिवार के किसी सदस्य जस श्वसुर, जेठ या देवर या निकट सम्बन्धी भानजे व भतीजे के साथ प्रेम सम्बन्ध कर लेती है तो घर का बदनामी से बचने के लिये ऐसी स्त्री की हत्या कर दी जाती है।

20 प्रेम पलायन

कभी कभी कुआरी बाला अपने कल्पना लोक के नायक के साथ भविष्य क सुनहरे स्वप्निल महल बनाने के लिए अपने घर से पलायन कर जाती है। जब इस पलायन की रिपोट पुलिस मे लिखाई जाती है और वह युगल पकडा जाता है तो बालिका के परिवार वालो को भारी आत्म ग्लानि होती है। प्रेमी तो जेल की चार दीवारी म बन्द होता है प्रेमिका सम्प्रेक्षण गृह मे भेज दी जाती है वहाँ से पिता का परिवार उसको मुक्त कराता है। फिर लोकलाज के भय से समय पाकर किसी बहाने से कुछ परिवार ऐसी बालिकाओं की हत्या कर देते हैं जिससे भविष्य म परिवार मे होने वाली अशान्ति व अनिष्ट से छुटकारा मिल सके।

21 विधवा महिलाओं की हत्या

भाई के जीवित होते हुए स्त्री पति के ज्येष्ठ भ्राता की पुत्रीवद् होती है और कनिष्ठ भ्राता को माता के समान, किन्तु भाई की मृत्यु के पश्चात् ही वह भार्या भारस्वरूप हो जाती है। आयु व सम्पत्ति की दृष्टि से वह किसकी बन कर रहे यह प्रश्न उत्पन्न होता है। यदि वह अन्य पुरुष के प्रेम जाल मे फसती है तो पति का परिवार पक्ष इसको बाधा पहुँचाता है और ईर्ष्यावश हत्या भी कर देता है। यदि जातिगत परम्परा वशीभूत वह छोटे भाई से नाता कर लेती है तो बडा भाई ईर्ष्या की दृष्टि से देखता है। आपसी सम्बन्धो मे कटुता हत्या का कारण बन जाती है।

22 रोमास मे प्रतिद्वन्द्विता

प्रेम किया नहीं जाता प्रेम हो जाता है प्रेम एक रोग है जो लग जाता है प्रेमी प्रेमांध होते हैं वे एक दूसरे पर हृदय से न्यौछावर होते हैं प्रेमातिरेक म वे लोकलाज भविष्य की यथार्थता सभी भूल जाते हैं—वे नदी नाव सयोग के साथ मिल जाते हैं और भावी लहरो को अपना जीवन मुल समर्पित कर देते हैं।

प्रेमी युगल अपने आप मे सिमट कर रहता है अपनी भावनाओ को कल्पनामय गहराइयो मे खोये रहते हैं, ऐसे युगल को समाज हेय दृष्टि से देखता है। प्रेमिका को दुश्चरित्रा माना जाता है और अन्य मनचले युवक भी ऐसी बालाओ की ओर कामुक दृष्टि से देखते हैं अंकपाश मे बाधना चाहते हैं कामुक क्रीडा मे सहभागी बनना चाहते हैं।

ऐसी स्थिति मे प्रतिद्वंद्विता उत्पन्न होती है प्रेमी व प्रतिद्वन्द्वी म तनाव उत्पन्न होता है जो वैमनस्यता व प्रतिशोध की सीमा तक आ जाता है। इस विषमता का मूल्य चुकाना पडता ह प्रेमिका को जिसको प्रेमी से अलग होने की चुनौती दी जाती है अलग करने के उपाय किये जाते हैं मिलन मे खलनाकी भूमिका निभाई जाती है प्रेमिका के न मानने पर हिम्मत दिखाने पर प्रतिशोधवश उसकी इहलीला समाप्त कर दी जाती है।

23 साम्प्रदायिक वैमनस्यता

कभी कभी दो समुदायो के बीच आपसी वमनस्य होता है। धम के नाम पर दो समुदाय के अंधविश्वासी व्यक्ति आपस मे लडकर मानवता का खून बहाते हैं। यह लडाई सामाजिक प्रतिष्ठा को लेकर प्रारम्भ होती है और धम के ठेकेदार तथा कथित व्यक्तिगत स्वार्थों को लेकर आग मे घी डालने का प्रयत्न करते हैं। यह लडाई इतनी खखार हो जाती है कि एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति की जान माल का शत्रु हो जाता ह। एक समुदाय दूसरे समुदाय को समाप्त करने पर तुल बैठता हैं। घृणित योजनाए बनती हैं और अवसर मिलने पर महिलाओ का अपहरण बलात्कार व हत्या तक की जाती हैं। इस घृणित वर्बर कृत्य को विजय का प्रतीक माना जाता ह।

इसी प्रकार दो या अधिक जातियो के बीच आपस म वमनस्यता होती ह आपस मे झगडे होते हैं वारदातें होती हैं खुलकर आमने सामने सघष होते हैं छलावे की चालें चली जाती हैं एक दूसरे को नीचा दिखाने मे परिवार के परिवार मौत के घाट उतार दिये जाते है, महिलाओ तक को नही छोडा जाता है। बिहार व उत्तर प्रदेश के जातिगत झगडे व हत्याओ के समाचार आये दिन पढने को मिलते रहते हैं। कुर्मी मल्हा व ठाकुर जातियो के आपसी सघष के समाचार मुख्य रूप से सामने आये है। इस बदले की आग मे कितनी ही महिलाओ की प्राण आहुति दी गई है। फूला दवी डकत द्वारा कितनी महिलाओ के जातिगत सघष मे मारे जाने के समाचार मिलते रहे हैं। वग सघष मे भी महिलाओ का अपहरण किया जाता है व मौत के घाट उतार दिया जाता है।

24 दहेज

जिस स्नेह से नेह निमन्त्रण भेजे जाते हैं बरातियों का स्वागत किया जाता है, फूल मालाए डालकर गले मिला जाता है, पकवानो से पलकें बिछाकर सत्कार किया जाता है आपसी प्रेम, सद्भाव व स्नेह की कामना के साथ दुल्हन को विदा किया जाता है वही प्रेममय वातावरण थोडे ही समय मे रक्त रंजित हो जाता है। वहू की मृत्यु के समाचार मिलते हैं तो पुत्री के माता पिता चीत्कार कर उठते हैं। क्या हो गया ? कैसे हो गया ? क्यो हो गया ? ये सारे प्रश्न एकाएक कौंधते हैं और इनका उत्तर पाने के लिये पुलिस की प्रेस की व न्यायालय की शरण ली जाती है।

बहू हत्या दहेज के लालच के वशीभूत किये जाने के समाचार समाचार पत्रो की सुर्खियो मे अपनी व्यथा स्वय कहते पढे जाते हैं। पिछले दशक के मध्य से दहेज की समाजिक बुराई एक हत्या का आपराधिक कारण बन जायेगी यह भारतीय सामाजिक वैवाहिक परम्पराओ की रुग्णता का परिचायक है जिसको अर्थ प्रधान लोलुपता ने विषाक्त कर सामाजिक ववाहिक व्यवस्था के औचित्य पर बहुत बडा प्रश्नचिन्ह अंकित कर दिया है।

विवाह एक धार्मिक अनुष्ठान है जिसको पूरा करना प्रत्येक पिता का कत्तव्य होता है। वदिक काल से ही भारतीय समाज मे प्रत्येक पिता अपनी कन्या को नया घर बसाने के लिए यथा शक्ति धन देता आया है। यथाशक्ति से अर्थ यह है कि जितनी उसकी इच्छा उसका सामर्थ्य व उसकी क्षमता है वह कन्यादान के रूप मे देता आया है। कन्या का विछोह और उसके साथ उसके सामर्थ्यानुसार धन दान पिता के धार्मिक कत्तव्य की पूर्ति पुत्री ऋण के रूप मे मानी जाती रही है।

कालान्तर से चली आ रही यह पवित्र सामाजिक परम्परा जो धार्मिक कृत्य के रूप मे मानी जाती रही है, वतमान मे आधुनिक अर्थप्रधान युग की आकाक्षाओ व इच्छाओ के बोझ से दब गई है। आज की जीवन गणित के सवाल आर्थिक लोलुपता के पृष्ठो पर हल किये जाते हैं। वर पक्ष विवाह तय करते समय मां के प्रसव व दूध पिलाने के व्यय से लेकर अपने पुत्र की शिक्षा-दीक्षा व शिक्षा पर जितना व्यय किया गया है, उसको मय ब्याज के वधु पक्ष से वसूल करना चाहता है। विवाह मे अब मुख्य बिन्दु है जो सब विचारणीय ह—आर्थिक प्राप्ति दहेज के रूप मे सुन्दर व सुशील कानन बाला भी चाहिए साथ मे कचनवाली भी होना चाहिये। विवाह वेदी पर बठी पति पत्नी अग्नि की साक्षी के साथ सुन्दर जीवन स्वप्न सजोये होते हैं तो दूसरी ओर दोनो पक्ष के अन्य सदस्य मेल मिलाप

की बात के स्थान पर मोल तोल के अनुरूप सामान बटारने व हिसाब किताब करने मे व्यस्त हाते है। शास्त्रो मे यथाशक्ति यथाइच्छा जो कन्या दान देने का विधान था उसके विपरीत वर पक्ष की यथाइच्छा दहेज देने की बात होती है और यही सारे स्नेह मिलन का आधार होता है और अन्य सभी विचार अपवाद रूप म होते है। आज विवाह कर पुन वधु नही लायी जाती अपितु घर मे वह लाई जाती है, जिसका उत्तरदायित्व अपने पति के साथ प्रणय सम्ब ध ही निभाना नही है अपितु वह परिवार की सेविका होना भी है जिसको सभी सदस्यो के साथ सामजस्य निभा कर निर्वाह करना हाता है।

नारी के जीवन मे तीन क्रूरतम अभिशाप माने जाते हैं—1 दहेज 2 बहु पत्नी 3 आर्थिक विषमता। नारी इन तीनो मे से किसी एक भी जाल म फसती है तो शिकारी के जाल म फसी मछली की तरह तडप तडप कर अपनी जान दे देती है।

स्वप्निल सुख की कामना मे सुखद भविष्य की कल्पना के साथ नये घर मे प्रवेश करने वाली एक अपरिचिता का सामाजिक मान्यतावश अपना सवस्व समर्पित करने पर बदले म केवल मात्र भोजन वस्त्र व आश्रय चाहने वाली नारी को जब अपने जीवन डगर पर चलते समय कटकीण राहो से गुजरना होता है तो उसका कोमल मन करुण क्रन्दन कर उठता है वह घबरा जाती है जिस घर म मृत्यु पयन्त तक वरण कर साथ रहने के वादे के साथ आई है धमपत्नी के रूप मे प्रविष्ट हुइ है उसी घर मे वह जब सत्कार के स्थान पर तिरस्कार पाती है एक सवेदनशील कमनीय व्यक्ति के स्थान पर व्यापार विनिमय की वस्तु मानी जाने लगती है कोमल काया पर स्नेहिल स्पश के स्थान पर उत्पीडन पाती है तो वह हतप्रभ हो उठती है वह किकर्तव्यविमूढ हो जाती है वह बिना नीड के पक्षी की तरह हो जाती है, जिसके पर भी काट दिये गये हो वह अब जिस घर मे है वह हाथो का बनाया है हृदयो से नही यहा उसका कोई अपना नही जो हैं सभी उसका शोषण करने वाले हैं। वह जिस घर को छोड आई है वह अब पराया है बाबुल ता बगिया का माली था जब तक यह चिडिया उसके उद्यान तरू पर नीड बनाये थी, अब वह नीड छूट चुका है और वह वहा से उड चुकी है अब वह लौटकर पुन इस तरू पर नही जा सकती उसकी नियति तो ठीक वैसी ही है, जसी कि आसुओ की लडियो की होती है—एक बार आखो से वहे पलको का सहारा छूटा कपोलो पर बहे और फिर नष्ट हो गये। अब क्या हो? कहाँ जाये? नेह के स्थान पर तिरस्कार? प्रेम के स्थान पर पीडा? मिलन के स्थान पर विछोह? सुख के स्थान पर वेदना? कितनी दारुणिक व कारुणिक स्थिति हो उठती है उस महिला की, जिसके ऊपर नियतिवशात अपार कष्ट का पहाड टूट पडता है।

न्याय की कोई सीमा नहीं होती भिखारी की कोई इज्जत नही होती हाथ फैलाने वाले को कोई शर्म नहीं आती मांगने वाले को नतिकता की परवाह नही होती। जो सौदेबाजी करते हैं वह लाभ का ही ध्यान मे रखकर चलते हैं। पुत्र विवाह भी जिनकी दृष्टि म एक सौदा है वह पूरा लाभ प्राप्त करना चाहते हैं जिसकी सिद्धि शुभ हो या अशुभ उनको कोई चिन्ता नही होती है। उनके दहेज की भूख जब नहीं बुझती है और दिये गये दहेज से वे सतुष्ट नही होते हैं तो वे बहू से और दहज लाने हतु कहते हैं कि तु जब वह असमथ होती है, तो फिर उसका तिरस्कार किया जाता है उसका अनादर किया जाता है उसको मानसिक व शारीरिक यातनाए दी जाती हैं उसके साथ गाली गलौच का व्यवहार किया जाता है उसको पडौसियो व सम्बन्धियो से मिलने नही दिया जाता, पीहर जाने पर रोक लगा दी जाती ह उसकी मूलभूत आवश्यकताओ की पूर्ति म बाधा डाली जाती ह भरपेट भोजन भी उपलब्ध नही कराया जाता समय पर नहाने की सुविधाए नही दी जाती चन से सोने भी नही दिया जाता मारपीट की जाती है यदि बच्चे वाली ह, तो उसके बच्च क लिए दूध दवा तथा फलो का प्रबन्ध नही किया जाता ह उसको भूखा रखा जाता ह इन यन्त्रणाओ के बोझ से वह टूट जाती ह वह विक्षिप्त हो जाती या किसी गम्भीर रोग से पीडित हो जाती है जिससे उसकी इहलीला समाप्त हो जाती ह या फिर उससे जल्दी छुटकारा पाने के लिये उसको जहर देकर या फन्दा डालकर या फिर जलाकर मार दिया जाता ह।

जहर देकर या फन्दा डालकर मारने की जो आपराधिक विधिया अपनाई जाती हैं उनके पीछे एक ही बात रहती ह कि इन हत्याओ को पर्याप्त साक्ष्य क अभाव मे आत्महत्या का रूप द दिया जाये। जलाकर मारने की विधि इसलिये अपनाई जाती है ताकि यह अस्वाभाविक मृत्यु स्वाभाविक व सामान्य दिखाई दे। बहू रसोई मे खाना बनाती है और इसी दौरान उसकी नायलोन की साडी आग पकड लेती है और बहू जलकर मर जाती है। जलकर मरने वालियो मे बहू ही एक मात्र प्राणी होती है जिससे रसोई की आग को मोह होता है सास व ननद व अन्य घर क सदस्य आज तक जलत नही सुन गये।

वस्तुत दहज के लालची व्यक्तियो की मन स्थिति क्या है? क्या अ य सामान्य व्यक्तियो से भिन्न होते हैं? क्या वे हिंसा मे विश्वास करने वाले जीव हैं? वे स्वाथ के वशीभूत मानव वध भी कर लेते है? प्रश्नो का उत्तर अपेक्षित है—

दहेज के लालची सास व श्वसुर की मन स्थिति के सम्बन्ध म विचारणीय बात यह हो सकती है कि ऐसे व्यक्ति असामान्य रूप से लालची भी होते हैं जो बिना कमाये धन की प्राप्ति म विश्वास रखते हैं तथा धन किसी भी माध्यम से प्राप्त

हो उसके साधनो के नतिक औचित्य मे विश्वास नही करते। मुर्दों के शवो के कफन को उतार कर बेचन वाले शमशान म मुर्दे को अधजला छोडकर लकडियो को बुझाकर बेचने वाले रोते बिलखते स्वजनो से मुर्दे की चिता सजाने के नाम पर मु हमागा पसा वसूल करन वालो की क्या मन स्थिति होती है ? क्या यह सामाय मन स्थिति होती है ? ऐसी ही मन स्थिति दहेज के लोलुप भूखे भेडिये की होती है जो धन न मिलने पर भेडियो की तरह घुरति है और निस्सहाय की गदन पर सीधा प्रहार करते हैं रक्त पीते हैं मास नोचते हैं और धीरे धीरे चटकारे लेकर खाते है। आश्रय ढूढन आयी सास व श्वसुर को माता-पिता के स्थान पर मानने वाली बहू को जो उनकी पुन वधु पुत्री से भी अधिक मायता है उसकी हत्या करने वाले इन दुजनो की मन स्थिति निश्चय ही असामाय ह जो कि भेडिये के समान ह।

ऐसे व्यक्ति ऐसा भी समझते हैं कि जो कुछ यह बहू ले आई वह सही है इसको मार दो दूसरी बहू ले आयेंगे और वह साथ मे और धन ले आयेगी। इस स्वार्थाधता के वशीभूत हत्या करन वाले व्यक्ति क्या सामाय जन हैं ? अवश्य ही वे असामाय हिंसक पशुवत मनोवृत्ति वाल जीव हैं जिनका एकमात्र स्थान सीखचो के पीछे ही हो सकता है।

ऐसे पति जो अपनी नव विवाहिता पत्नियों पर होते अत्याचार के या तो मूकदशक होते हैं या सहयोगी होते हैं उनकी मनोवृत्ति के बारे मे क्या कहा जा सकता है ? क्या वे भी हिंसात्मक संस्कृति की उपज है ? या फिर उस परिवेश के अतरग भाग हैं जहा पर निरीह नारियो पर अत्याचार होता रहता है। वस्तुत ऐसे भी उस दूषित आर्थिक लोलुपता की मनोवृत्ति वाले परिवेश मे पलकर बडे हुए हुए है जो कि माता पिता की सत्ता को सर्वोपरि मानते हैं जो माता पिता की पसद व नापसद को ही अपना सब कुछ मान कर चलते हैं या फिर पत्नी के व्यवहार से क्षुब्ध होकर या फिर उसकी चारित्रिक कमिया या कुरूपता से विमुख व क्षुब्ध होकर या तो तटस्थ हो जाते हैं या शीघ्रातिशीघ्र ऐसी पत्नी से पीछा छुडाने मे अपने माता पिता भाई बहिन को सहयोग देते हैं व प्रोत्साहन देते हैं।

क्या पत्नियो की हत्या दहेज लोलुपता मे करने वाले परिणामो से भिज्ञ होते हैं ? दहेज लोलुपता हत्या करने वाले अवश्य ही परिणामो से भिज्ञ होते हैं किन्तु जसी कि हर सुनियोजित ढग से अपराध करने वाले अपराधी की मानसिकता होती है कि वह अपराध ऐसे ढग से करेगा कि वह कानून की पकड से बाहर रहेगा और वास्तविक उद्देश्य की पूर्ति करेगा। यदि ऐसा नही हो तो फिर चोर चोरी करन न निकलें व डकत डकतिया न डालें। हर सुनियोजित प्रकार से अपराध करने वाला अपनी क्षमता व चातुय पर विश्वास रखता है और अपराध करता है।

इसी प्रकार की मनोवृत्ति वाले बहू के हत्यारे होते है जो सुनियोजित ढंग से बहू की हत्या करते हैं। वे ऐसा प्रयत्न करते हैं कि घटना स्वाभाविक मृत्यु दिखाई दे। ऐसी आपराधिक घटनाओं मे सजा भी बहुत कम प्रकरणों म होती है क्योंकि स्वतन्त्र साक्ष्य नही मिल पाता, परिस्थितिजनक साक्ष्य के आधार पर यदि निचली अदालत सजा भी दे दे, तो उच्च न्यायालय से फासी की सजा म भी अभियुक्त बरी होते आये हैं। इस प्रकार दण्ड की सीमाए होने से दहेज लोलुप हत्याए करने वालों को बल मिलता है। एकमात्र दण्ड का आधार जिस पर अभियुक्तो को न्यायालय दण्डित करने हुतु पर्याप्त साक्षी मान लेता है वह है मृत्यु पूव का कथन जो कि अपराध का शिकार किसी दण्डनायक के सामने देता है किन्तु इस प्रकार के कथन की भी कई समस्याए है। प्रथमत अपराध का शिकार तत्काल मर जाय तो मृत्यु पूव कथन का प्रश्न ही नही। द्वितीय अपराध की शिकार महिला जब बेहोशी म ही दम तोड द तो उस समय कथन लिपिबद्ध नही किया जा सकता। तृतीय अपराध की शिकार महिला डरकर भी बयान नही दे पाती क्योकि वह जानती है कि जीवित रहने पर पुन उसी घर म उसे रहना है हो सकता है कि उसकी सहृदयता से प्रभावित होकर पति का परिवार उसको पुन अपना ले और सारे कटु अनुभव भुला दिये जाये हो सकता है कि वह सदा के लिये अपग हा जाये ऐसी स्थिति म उसका कोई ठार ठिकाना भी नही रहेगा। यदि सन्तानवती है तो उसे और भी गहराई से सोचना होना है उसके द्वारा पति व उसके परिवार के सदस्यो के विरुद्ध बयान दने पर उसकी सन्तान का क्या होगा जीवित रहने पर उसकी सन्तान के भरण पोषण का क्या होगा यदि पति को सजा हो जायेगी और जेल म रहेगा ? पति के माता पिता, बहिन भाई तथा भावज के विरुद्ध बयान दने पर क्या वह पति का खोया विश्वास व प्रेम पुन प्राप्त कर सकेगी ? ऐसे सभी व्यवहारिक विचार ऐसी स्त्री के मस्तिष्क म आते हैं जिससे वह वास्तविक अपराधियो के नामों के बारे मे होठ सी लेती है। इसके अतिरिक्त जब अपराध की शिकार महिला अपने पति परिवार के विरुद्ध बयान देती है तो उस पर भी दुराचरण व व्यभिचारिता के आरोप लगाये जात हैं जिससे उसके पिता पक्ष की मान मर्यादा पर आच आती है। उसका भविष्य की चिन्ता होती है। उसके सामने यह प्रश्न चिन्ह रहता है कि क्या वह पतृक सहायता से पुनर्जीवन प्रारम्भ कर सकती है ?

इन आपराधिक अन्वेषणो मे पुलिस की भी अपनी सीमाए होती हैं। स्वतन्त्र साक्षी के अभाव म ससुराल पक्ष की महिला सदस्यो का तत्काल गिरफ्तार करन क मुद्दे भ्रष्ट होत हैं। महिला सगठनो की भूमिका विषय को ज्वलन्त बनाने मे सहयोगी तो है ताकि पुलिस आपराधिक हत्या प्रकरण को किसी प्रभाव के वशीभूत दबा न दे किन्तु इसके साथ साथ जो मानसिक दबाव पुलिस पर बनता है और जो दायित्व एकाएक आ पडता है वह शीघ्र परिणाम की दृष्टि से जल्दबाजी के कारण साक्ष्य

व स्थिति का पूर्ण आकलन करने में बाधक हो जाता है जिसके फलस्वरूप न्यायिक युद्ध में साक्षी हथियार निष्क्रिय हो जाते हैं और अपराधी बच निकलते हैं।

इस स्वार्थ लोलुप मनोवृत्ति वाले परिवार के भवर जाल में फसी महिला क्या करे? रूपवती कूलविहीन लहर सी कहा जाय? जो विवाह को वरदान समझकर आयी हो जो अखण्ड सौभाग्यवती समझकर कुलभूषण रूप लेकर आई हो जो बीन रूप में मधुर रागिनी से पति परिवार को संगीत मय करने आई हो जो उर में पुष्प खिलाये मधुर स्मित चान्दनी सी खिली खिली सी, जो नयन में जलद सजोये तृषित चातक सी पिया के घर पीइ पीइ के मधुर स्वर से मुखरित होती हो वह नीर भरी दुख की बदली के समान क्षितिज भृकुटि पर घिर धूमिल चिन्ता का अविरल भार बनी उस पूरे पति परिवार में अकेली पड़ी पड़ी किसी कोने में उपेक्षित पड़ी-पड़ी, घुटी घुटी सी अपरिचय के इतिहास के पन्ने पलटती हुई, सुख की सिहरन का अन्त निहारते हुए जो कल उमड़ी थी वह आज मिटने को तत्पर अकेले अकेले विस्तृत नभ के एक अकेले कोने में इस आशा में कि उसका निष्ठुर पति उसका अपना हो जाय उसकी खोज में लगी हुई छाह से भरे उन्मन प्राण लिये काल की तम जलधि में निराहित होने की प्रतीक्षा करती रहती है।" बंधन में बंधा दाम्पत्य जीवन जब अभिशाप सिद्ध होता है उसकी सारी संवेदनशीलता दहेज लोलुपता के विकराल दहेज लोलुप माग की लपलपाती जिह्वाओं के सामने चीत्कार कर उठती है भयातुर होकर शिकारी के तीर से आहत हिरणी सी जीवन प्राण की भिक्षा मागती सी दिखाई देती है। विडम्बना है जब रक्षक ही भक्षक हो जाय तो त्राण कहा पर। पिता पक्ष की ओर दृष्टिपात करती है तो सामाजिक परम्परा बीच में अवरोधक बन खड़ी होती है वह यह कि पिता के घर से डोली जायगी, तो पत्नी की अर्थी ही उसके ससुराल से निकलेगी अर्थात् उसका जीवन पर्यन्त घर ससुराल में ही है। यह धारणा एक सांस्कृतिक धरोहर के रूप में उसके अन्तमन में बसी होती है जिस विश्वास को लेकर ही वह ससुराल की देहरी पर पग धरती है। परिवार विगठन से पिता पक्ष पर आच आती है सामाजिक प्रतिष्ठा गिरती है और अन्य कुंवारी कन्याओं को वर मिलने में कठिनाई होती है। पिता विवाह करने के पश्चात् निश्चिन्त हो जाता है और यह महसूस करता है कि उसका एक दायित्व तो कम हुआ और वह अगले सामाजिक दायित्व के बारे में सोचने लगता है। पहले तो ऐसी ताड़ित सताई हुई महिला अपने पिता को माग से अवगत ही नहीं कराती यदि कराती भी है तो स्पष्ट शब्दों में नहीं। जब एक माग पूरी भी हो जाये तो दूसरी मांग सामने आ जाती है। इस प्रकार माग पूर्ति का अन्त ही नहीं हो पाता।

कभी कभी जब अपनी पुत्री पर अत्याचार होने के समाचार मिलते हैं तो माता पिता ध्यान ही नहीं देते और यह समझकर उपेक्षा कर देते है कि नये प्रारम्भ

लिये जीवन मे ऐसे असामजस्यकारी क्षण तो आते ही रहते है समय के साथ साथ सभी ठीक हो जायेगा। कुछ माता पिताओ की अपनी विवशता भी होती है जो जानते हुए, समझते हुए भी कुछ नही कर पाते तो कुछ महिलाओ के माता पिता नहीं होते केवल भाई व अन्य सम्बन्धी होते हैं जो वैवाहिक ऋण को चुकाकर भार मुक्त होते हैं। उनकी पत्नियां विवाहोपरान्त उनकी बहिन के जीवन म उनके भाइयो को अधिक रुचि नही लेने देती या भाई भी अपने उत्तरदायित्वो के वशीभूत कोई अपेक्षित ध्यान नही द पाते। परिणामस्वरूप आशाहीन स्नेहहीन दीपक के समान निराश्रिता बहू दहेज वेदी पर आहूत कर दी जाती है। सामाजिक दायित्व का यह वीभत्स रूप देखने म आता है। फिर क्या शेष रह जाता है? सामाजिक चेतना पर एक बोझ, करुण क्रन्दन के अस्फुट शब्द दया के दो आसू। धीरे धीरे समाज मे सब सामान्य हो जाता है। परम्परानुसार विवाह रचाये जाते है। समाज इन घटनाओ को कुछ समय के बाद भूल जाता है और सामाजिक जीवन सामान्य गति चलता रहता है। फिर कभी किसी दहेज हत्या की घटना की सूचना मिलती है समाचार पत्र खोजपूर्ण सूचनाए देते हैं तो फिर एक बार सोई हुई समाज की अन्तर्चेतना थोडी करवट लेती है आखें खोलती है और फिर इस अस्वाभाविक मृत्यु को सामाजिक सबधो की असामाजिक देन समझ कर एव अस्वाभाविक सबधो को स्वाभाविक देन समझकर फिर अपनी चिर निद्रा मे सो जाती है। कभी कभी घटनाए इतनी ज्वलन्त व वीभत्स कारी होती हैं कि सामाजिक न्याय चेतना जगती है और कानून बनाने के अपने कर्तव्य को पूरा करती ह और इसकी क्रियान्विति सौप देती ह, उसी सामाजिक तन्त्र के एक भाग शासक तन्त्र को जिसको इस पीडा का ज्ञान ही नही आभास ही नही। जिसकी पुत्री दहेज लोलुपता की शिकार हुई उसकी पीडा को वही जान सकता ह वह भाई जान सकता ह जिसकी बहिन विवाह वेदी से उतरकर दहेज की बलि वेदी पर आहूत कर दी गई। अस्तु सामाजिक सत्ता तन्त्र कुछ उपाय तो करता ही ह कानून बनाने का सजा के प्रावधान का, इस आशा के साथ कि इस विधि रचना का कोई व्यावहारिक फल अवश्य होगा।

दहेज हत्या निवारण का उत्तर ढूढना होगा इन हत्याओ के कारणो म इनके प्रेरक तत्वो म?

दहज हत्या निवारण क उपाय मिल सकते है। सामाजिक चेतना म जो सामाजिक स्थायित्व सुख शाति यात्रिक व्यवस्था की पोषक ह उन सामाजिक परम्पराओ म सुदृढ सामाजिक व्यवस्था का बल छुपा ह उस सामाजिक परिवेश म जिसकी व्यक्ति उपज ह जिसके अन्तक्रियात्मक व्यवहार स उसके सामाजिक सबधो को मूर्त रूप मिलता ह। सामाजिक व्यवहार ही व्यक्ति का समाज म रहने का द ड बनाता है। असामाजिक व्यवहार व्यक्ति को समाज म रहने क अधिकार स वचित

कराता है। सामाजिक सगठनात्मक क्रियाओ सामाजिक लाभ शुभ के विपरीत आचरण विधि की परिधि मे बाध कर अपराध रूप मे परिभाषित कर दिया जाता है जिसमे समाज की सरकार विधि निषिद्ध व्यवहार करने व विधि वाछित व्यवहार न करने के फलस्वरूप स्थापित न्यायिक पद्धति से दण्डित करती है।

प्रस्तुत दहेज के कारण किये गये हत्या के अपराध के पीछे चार प्रश्न जुडे हुए है—(1) व्यक्ति अपराध क्यो करता है ? (2) व्यक्ति हिंसात्मक अपराध क्यो करता है ? और (3) व्यक्ति महिलाओ की हत्या क्यो करता है ? (4) महिलाओ की हत्या दहेज के लिये क्यो की जाती है ?

अपराधशास्त्रियो ने महिला दहेज हत्याओ को विभिन्न रूप से समझाने का प्रयत्न किया है।

विधिक प्रावधान

यद्यपि दहेज निरोधक अधिनियम 1961 मे ही पारित कर दिया गया तथापि इसके बावजूद पिछले दशक के मध्य मे दहेज विभीषिका एक सामाजिक बुराई के स्थान पर एक आपराधिक त्रासदी बन गई। दहेज हत्याओ की घटनाओ मे हुई निरतर वृद्धि ने सामाजिक जन चेतना को हिलाकर रख दिया। कही विवाह जसी पवित्र सामाजिक स्थायित्व प्रदायिनी सस्था मे से जन विश्वास उठ जाये सामाजिक जगत् इस कल्पना मात्र से सिहर उठा। भारतीय विधि चितक राजनीतिज्ञ अपराधशास्त्री व सामाजिक चितक इस समस्या के हल के उपाय सोचने पर विवश हुए। परिणामत दी डावरी प्रोहिबिशन अमण्डमेट एक्ट जो कि दहेज निवारण (सशोधन) विधेयक 1984 को 2 अक्टूबर 1985 से क्रियान्वित किया गया। पूर्व विधेयक मे अपराधियो के लिये छ माह की सजा व 5 000/– की राशि के जुर्माने की सजा का प्रावधान था जिसके विपरीत नवीन दहेज निवारण विधेयक मे 2 वर्ष की सजा व 10 000/– के जुर्माने तक का प्रावधान किया है। यह भी आवश्यक माना गया है कि भारत सरकार के असाधारण गजट सूचना दिनाक 9 अगस्त 1985 मे दिये गये नियमानुसार वर व वधु को विवाह के समय दिये गये उपहारो की सूची बनानी होगी जिस पर दोना के हस्ताक्षर अनिवार्य हैं।

इस सदर्भ मे विचार करना होगा कि क्या इस अधिनियम को क्रियान्वित करने वाली शासकीय कार्यपालिका प्रभावी कार्य कर अधिनियम के उद्देश्य की पूर्ति करायेगी ? क्या नियम बनाने से कानून की सरचना करने से दहेज समस्या व उससे उत्पन्न अपराधो का नियत्रण हो सकेगा ? यदि नही तो फिर इस समस्या निवारण हेतु क्या प्रभावी प्रक्रिया अपनाई जाये ?

सरकार को भी प्रयत्न होना चाहिये कि दहेज विरोधी कानून केवल पुस्तकों की भाषा ही न रहें, अपितु ऐसे प्रयत्न किये जायें कि वे भारतीय आदर्श की रक्षा करने में समर्थ हों। इनको उन मानवीय संवेदनाओं से जोड़ा जाय जो भारतीय संस्कृति मूल्यों के बीज में है।

सुविख्यात न्यायविद डा. लक्ष्मीमल्लम सिंघवी के अनुसार कानून मानव की गरिमा का मार्ग प्रशस्त करता है। कानून एक पूरी संस्कृति का संविधान है। उसी में कानून की सार्थकता है। कानून मनुष्य को मनुष्य से मूल्य को मूल्य से और देश से देश को जोड़ता है उसी के साथ आर्थिक आजादी का मूल्य सामाजिक आजादी का मूल्य इन सबके समीकरण के लिए मनुष्य की गरिमा और बंधुता की दृष्टि से सोचता है। वे आगे कहते हैं हमारे संविधान के प्राक्कथन में ही लिखा है बंधुता का सिद्धान्त। उसमें यही लिखा है मनुष्य की गरिमा व राष्ट्र की एकता बंधुता होगी तभी मनुष्य की गरिमा स्वीकार होगी और यही बात मानव अधिकारों के लिए सबसे ज्यादा जरूरी बात है कानून कुछ भी नहीं अगर उसमें हृदय के संविधान की संवेदना न हो। कानून केवल दावपेच नहीं है बल्कि मेरी दृष्टि में वह इस शाश्वत संवेदना का अरण्यारण्य है। (धर्मयुग 27 सितम्बर 1987 पृष्ठ 35)।

आवश्यकता है कानून को समाज के हृदय व मन के संविधान से जोड़ने की जिससे देश के समाज का कानून सामाजिक व सांस्कृतिक प्राथमिक मूल्यों को संरक्षण दे सके व सामाजिक कुरीतियों का निवारण कर सके जिससे सामाजिक व्यवस्था सुदृढ़ता सचेतना व समृद्धि की आंच आती है।

दहेज विरोधी जैसे समाज सुधारक व पोषित संस्थाओं से जुड़े कानून अपने उद्देश्य की पूर्ति में प्रभावी तभी हो सकते हैं जबकि ये जन चेतना जन मानस व जन संवेदनाओं को आत्मसात किये हो जनोपयोगी हों और व्यवहारिक क्रियान्वयन सम्भावित हो।

भारतीय दण्ड संहिता की धारा 498 ए में क्रूरता को परिभाषित किया गया है जो कि स्पष्ट नहीं है। क्या क्रूरता हिंसात्मक है या हिंसाहीन भी हो सकती है? क्या क्रूर व्यवहार वह व्यवहार है जिसमें शरीर पर चोट लगना आवश्यक है? क्या क्या मन पर लगी चोट हिंसात्मक व्यवहार मान जाने के लिए पर्याप्त नहीं है। पुर हिंसात्मक व्यवहार क्रूर व्यवहार की संज्ञा में नहीं आता। कानून के ऐसे अस्पष्ट प्रावधान स्वयं अन्वेषण व न्यायिक प्रक्रिया में बाधक हैं जिनकी अस्पष्टता का लाभ अभियुक्तों को मिलता है और वो दोषमुक्त भी हो जाते हैं।

वस्तुतः दहेज विवाह का अभिन्न अंग मान लिया गया है। शताब्दियों से पिता कन्यादान करते आये हैं और यथाशक्ति अपनी पुत्री को धन देते आये हैं। इस

आधुनिक युग में कुछ वर्षों से जहाँ महगाई ने अपना रंग दिखाया है, भौतिकवाद ने भी अपना प्रभाव इसके साथ साथ दिखाया है... विकराल रूप में सामने आयी है और इसने एक अपराध लहर को जन्म दिया है, जिसकी शिकार हो रही हैं हमारी मासूम भोली दुल्हिया। जब हम इनको जलाकर मारने के समाचार आये दिन पढ़ते हैं तो हम विवश से असहाय से, विचारमग्न हो जाते हैं किन्तु कर कुछ भी नहीं पाते।

परिवार समाज की आधारभूत इकाई है जिसका आधार विवाह है जो कि धार्मिक अनुष्ठान है सामाजिक आवश्यकता है स्वस्थ शारीरिक पोषण की परम्परा है मन की तुष्टि की आस्था है सुरक्षाभूत है विश्वासपरक है। इस मूलभूत संस्था पर सामाजिक सुख समृद्धि शांति व्यवस्था टिकी हुई है जिसके अभाव में सामाजिक संस्था सन्नपशील होकर पुनः आदि युग में लौट सकती है जहां जंगल का राज ही चलता था जो कि निरकुशता व पशुता की स्थिति थी।

अतः किसी भी मूल्य पर समाज की बहुहित संस्था को बनाये रखना है यदि समाज को अपना अस्तित्व अक्षुण्ण रखना है। विवाह केवल पति पत्नियों को ही नहीं मिलाता अपितु यह दो परिवारों में मेल कराने वाली सामाजिक व्यवस्था है। सफल विवाह पर ही वर वधू के दोनों पर परिवारों की सुख व शांति निर्भर करती है। विवाह के विफल होने पर दोनों परिवार अशान्त होते हैं दुःखी होते हैं व टूटते हैं बिखरते हैं तो समाज में इस प्रक्रिया से एक रुग्ण स्थिति उत्पन्न हो जाती है जो समाज के सामान्य स्वस्थ जीवन के लिए दुःखद है।

भारतीय विवाह पद्धति के दो पक्षों पर विचार करना होगा। प्रथम दो पक्षों द्वारा विवाह तय करना और दूसरा पत्नी का पति पर पूर्ण आश्रित होना। प्रथमतः परम्परागत रीति रिवाजों के अनुसार वर या वधू तय करते समय दोनों पक्षों के माता-पिता व सम्बन्धियों का कर्तव्य होता है कि बहुत ही विवेक से वर वधू का चयन किया जाय। पिता की यह विवशता है कि वह अपनी पुत्री को कुंवारी नहीं रख सकता किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि वह योग्य वर की तलाश न कर जल्दबाजी में ऐसा निर्णय ले ले कि उसको व उसकी पुत्री को जीवन पर्यन्त पश्चाताप करते रहना पड़े। इस योग्य वर की तलाश में ही दहेज की आवश्यकता का प्रश्न उत्पन्न होता है जो वर की योग्यता के साथ जुड़ा हुआ होता है।

यह आवश्यकता और भी अधिक विचारणीय होती है जबकि वधू कामकाजी व कमाऊ नहीं होती आवश्यकतानुसार शिक्षित नहीं होती सुन्दर नहीं होती व पति पर पूर्ण आश्रित होती है। अतः वैवाहिक स्थिति का दूसरा पक्ष जो कि पूर्ण आश्रिता का है वर के चयन से जुड़ा होता है और दहेज के प्रश्न को और अधिक

प्रभावी कारक बना देता है। इस आधार पर तय किये गये विवाह बहुत ही सूझ बूझ के साथ किये जाने चाहिये। हर पिता अपनी पुत्री के लिए सुशील पर आर्थिक रूप से सम्पन्न शिक्षित एवं अच्छी आय वाला वर ढूंढता है वह माग के अनुसार दहेज न देने का सामर्थ्य न रखने हुए भी वादे कर लेता है और जब वह वादे पूरे नही कर पाता तो उसकी पुत्री की दुदशा देखना पडता है बुरे दिन भोगने पडते हैं दुर्भाग्यवश उसे यह संसार तक छोडना पडता है। यह भी प्राय होता है कि मध्य वर्गीय परिवार अपने से अधिक धनवान कमाऊ व अच्छी आय वाला वर अपनी पुत्री के लिए तलाश करता है ऐसा करते समय वधू पक्ष वर पक्ष की सम्पन्नता का ध्यान मे रखता वर के गुण व अवगुणो पर ध्यान नही देते उसकी आय का अनुमान तो लगाते है किन्तु उसके व्यसन व खर्च करने की आदतो पर विचार नहीं करते, वर परिवार की पृष्ठभूमि पर भी विचार नही करते एव कुल लक्षणो को भी विचार परिधि म नही लाते इस स्थिति म तय किय गय विवाह जब असफल होते हैं दहेज की लोलुपता के कारण तो फिर भयकर परिणामो की आकाक्षा या समाचार आश्चर्य उत्पन करने वाले नही होना चाहिये।

इस विवेचन के सन्दभ म जो निष्कर्ष निकलता है वह यह है कि दहेज समस्या का निराकरण केवल विधिक प्रावधानो से सम्भव नही हो सकता है। इसके लिए आवश्यक है सामाजिक मानसिकता म परिवतन। बेटी के लिए सुयोग्य वर की तलाश का आधार। केवल मात्र आर्थिक सम्पन्नता ही नही होना चाहिये अपितु अन्य नैतिक गुण भी होना चाहिये। दूसरा मुख्य विचारणीय प्रश्न है वर परिवार व उसकी पृष्ठभूमि व उसके दायित्व यदि ऐसा परिवार है कि जिसम वर क कुवारी बहिनें हैं तो स्वाभाविक है कि ऐसे परिवार को अतिरिक्त धन की आवश्यकता होगी जिसके लिए माग होना सभव है ताकि एक पक्ष से राशि प्राप्त कर अपनी कन्याओं को दे दे और इस प्रकार विवाह वर चयन सौदेबाजी बन सकती है। वर चयन करते समय इन सभी पक्षो पर विचार आवश्यक है भावावश म बिचौलियो के कहने पर जल्दी विवाह तय नही कर दना चाहिय। वधू पक्ष को चाहिय कि जानकार परिवार म ही सम्बन्ध कर। दूरवासी नगरो म विवाह तय करत समय वर व उसके परिवार की सम्पूर्ण जानकारी धीरे धीरे अपने स्तर पर परोक्ष रूप स एकत्रित करें और पूर्ण विश्वास होन पर ही रिश्ता तय कर।

पूर्व म सगाई करन के पश्चात् काफी समय बाद विवाह की जो सामाजिक परम्परा थी वह विवेकशील परम्परा इस कारण से दिखाई दती है कि वधू पक्ष को इस बीच वर पक्ष को व वर पक्ष को वधू पक्ष को परखने व समझने का समय मिल जाता था। इसके साथ साथ बाल विवाह कर कई वर्षों पश्चात् वयस्क या युवा होने पर बहू को गौना करवाकर ससुराल ले जाने की प्रथा थी यह एक कुरीति अवश्य

है किन्तु इस प्रथा के पीछे भी कदाचित यही भावना रही होगी कि वर पक्ष व वधू पक्ष एक दूसरे के उत्तरदायित्व से मुक्त हो जायें। फिर भी बाल विवाह कुरीति इस कारण से है कि अवयस्कावस्था में बनाये गये पति व पत्नी एक दूसरे को पसन्द न कर एक दूसरे के लिये आजीवन भार बन जाते हैं नारकीय जीवन व्यतीत करते हैं किन्तु ऐसे विवाहों में सामाजिक परम्परानुरूप पारिवारिक घनिष्ठता व परिचय के आधार पर तय किये गये विवाहों में दहेज की समस्या नहीं होती। इस कारण यह देखने में आया है कि दहेज हत्या की घटनाएं ग्रामीण क्षेत्र की बजाय कस्बों व नगरों में अधिक घटित होती दिखाई देती हैं और यह समस्या मध्यम आय वर्गीय परिवारों की है जो अपनी पुत्रियों को शिक्षित कर अच्छे वर की तलाश में दहेज लोलुप व्यक्तियों के चुंगल में फंस जाते हैं। महानगरों में यह समस्या इस कारण भी अधिक है कि विस्तृत क्षेत्र होने व वर पक्ष के किराये के मकान बदलने या तबादले पर स्थान बदलने के कारण वर पक्ष की वास्तविकता का पता नहीं लग पाता। जल्दी में विवाह तय करने के उत्सुक माता पिता वर पक्ष के किराय की लायी साज-सज्जा से प्रभावित होकर अपनी बेटियों का विवाह तय कर बैठते हैं। समाचार पत्रों के विज्ञापन के आधार पर किये गये विवाहों में भी खतरा रहता है क्योंकि परिचय की कमी होती है। अतः आवश्यकता है इस प्रकार की शिक्षा प्रचार की कि वधू के लिये सुशील व सुयोग्य वर कैसे ढूंढा जाय। आवश्यकता है यह सिखाने की कि वर के चरित्र व परिवार के परिवेश को अधिक वरीयता दी जाये।

आवश्यकता है इस प्रकार की शिक्षा देने की कि विद्यालयों व महाविद्यालयों में अध्ययन करने वाले छात्र व छात्राएं मानवीय मूल्यों का सही अर्थ समझें। पुरुष स्त्री की महत्ता व आदर्श को समझें इसी प्रकार स्त्री पुरुष की मानवीय चारित्रिक विशेषता को महत्त्व दें। शिक्षा का यह भी एक उद्देश्य होना चाहिये कि शिक्षित छात्र व छात्राएं अपने व्यक्तित्व की सही पहिचान कर सकें व दहेज विरोधी सेना के रूप में शैक्षणिक संस्थाओं से बाहर निकली बालिकाओं में यह विश्वास होना चाहिये कि वे बिकाऊ जानवर नहीं हैं जिनकी कीमत लगाकर खरीदा जा सके। वे यह अभियान चलायें कि दहेज मांगने वालों से विवाह नहीं करेंगी। यदि वधू पक्ष चुपचाप भी सौदा तय करें तो ऐसे विवाह करने से ना करदें। यदि ऐसी घटनायें घटित होने लगीं तो अवश्य ही वर पक्ष को सोचने को विवश होना पड़ेगा। यदि लड़की कंवारी नहीं रह सकती तो क्या लड़का कंवारा रह सकता है? क्या अविवाहित लड़के चारित्रिक पतन की ओर नहीं बढ़ेंगे? क्या अविवाहित जवान लड़कों के माता पिता उनके भविष्य के लिए चिंतित नहीं रहते? यदि लड़की के माता-पिता थोड़ी भी हिम्मत करें तो वर पक्ष भी सोचने को विवश होंगे। हो सकता है कि यह भी समय आ जाय कि वर पक्ष को वधू पक्ष को राशि चुकाकर विवाह

करना पड़े जैसा कि आदिवासियों में वर पक्ष द्वारा 'घापा' चुकाकर विवाह करने का रिवाज है।

किन्तु यह सब कुछ तभी सम्भव हो सकता है जबकि एक गम्भीर प्रभावी जन चेतना दहेज विरोध में तैयार हो। इस चेतना को लाने में समाज का जवान में सत्तारूढ़ दल के कर्मठ कार्यकर्ताओं का निष्ठापूर्ण योग बहुत ही प्रभावी सिद्ध हो सकता है क्योंकि वे सरकारी तन्त्र का भी क्रियाशील बना सकते हैं और जन चेतना के लिये मंच दे सकते हैं। सरकारी तन्त्र से जुड़े होने के कारण शासक दल के कार्यकर्ताओं की बात प्रभावी होती है, जिससे जन मानस बदल तो सकता है। विरोधी राजनीतिक दलों को भी अपने प्रभाव का उपयोग कर दहेज प्रथा जैसी कुरीति का समाप्त करने के लिये पूर्ण प्रयत्न करने चाहिये। यहां तक कि सामाजिक कुरीतियों को समाप्त करने जैसे कार्यक्रम चुनाव घोषणा पत्र का भाग होना चाहिये ताकि जन समर्थन भी मिल सके। यह समय है कि केवल मात्र वादों के आधार पर नहीं व कानून का और कठोर बनाने से ही इस समस्या का अंत नहीं होगा अपितु दृढ़ निश्चय व साहस से और भी कठोर कानून बनाकर इस समस्या का समाधान करना होगा। साथ में ऐसे आदर्श युवकों का तैयार किया जा सकता है जो बिना दहेज के गरीब किन्तु योग्य कन्याओं का वरण करें तथा बिना दिखावे के साधारण समारोह में विवाह करें। ऐसी प्रवृत्ति वाले युवकों को सरकारी संरक्षण प्राप्त होना चाहिये व रोजगार देने में भी वरीयता दी जानी चाहिये। इसके अतिरिक्त दहेज लालुपता के कारण किये गये अपराधों के गम्भीर परिणामों से भी चलचित्र आकाशवाणी एवं दूरदर्शन आदि प्रचार तन्त्रों से जन साधारण को अवगत कराते रहना चाहिये ताकि निरोधक प्रभाव उत्पन्न हो सके।

दहेज लेकर किये जा रहे विवाह समारोह का बहिष्कार करना चाहिये और ऐसे समारोह में बरात में जाने वालों को भी कानूनी रूप से अपराधी घोषित किया जाना चाहिये।

जिस किसी मोहल्ले में भी ऐसे विवाह समारोहों का आयोजन हो उसकी तत्काल सूचना सम्बन्धित को देने का कर्तव्य सम्बन्धित क्षेत्र के कार्यकर्ताओं या मोहल्ले के प्रबुद्ध नागरिकों का होना चाहिये।

महाराष्ट्र के समान जिला व तहसील स्तर पर दहेज विरोधी चौकसी समितियां बना दी जानी चाहिये जिसमें प्रशासनिक अधिकारी क्षेत्र के नेता व सामाजिक कार्यकर्ता सम्मिलित हों। ये समितियां दहेज के आधार पर तय किये गये विवाह सम्बन्धों की जानकारी मिलते ही अविलम्ब उचित कार्यवाही करें।

प्रत्येक विवाह का सरकारी पंजीकरण आवश्यक बना दिया जाना चाहिये जिसमें विवाह में प्राप्त उपहारों की सूची की सूचना देना भी आवश्यक बनाया जाये। इस प्रकार के पंजीकरण में विवाहोपरान्त होने वाले दहेज विवादों का सही चित्र सामने आ जायेगा और यह भी स्पष्ट हो जायेगा कि वस्तुतः विवाह हुआ है। वर पक्ष भी वधू के साथ किसी प्रकार का दुर्व्यवहार या आपराधिक घटना घटित करने के पूर्व सोचने पर विवश हो जायेगा।

तलाक व अलग रहने के कानून उदार बनाना आवश्यक है ताकि दो विपरीत दिशा में चलने वाले प्राणी प्रतिपल नहीं मरें एक क्षण अलग होकर अपना स्वतन्त्र जीवन जियें ताकि आजीवन आमदी में मानसिक अलगाव के जीवन से मुक्ति मिले।

वर्तमान में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह व्यवस्था दी है कि दहेज में प्राप्त सामान पत्नी की व्यक्तिगत सम्पत्ति है पति या उसके परिवार का उसमें कोई हिस्सा या हस्तक्षेप नहीं है। इस प्रावधान को प्रभावी करने पर दहेज की सम्पत्ति का विवरण सरकारी कार्यालय में दिया जाना आवश्यक है ताकि तलाक व अलगाव के समय स्त्री को अपने दहेज का पूरा सामान व राशि वापस मिल सके। ऐसे अलगाव के समय बच्चों की स्थिति दयनीय होती है और उत्तराधिकार व संरक्षण का प्रश्न उत्पन्न होता है। इस विवाद को कानूनी तरह से सुलझाने के स्थान पर अलग होने वाले दम्पत्ति आपसी समझौते के आधार पर तय कर लें। स्थिति यह होती है कि ममत्व पितृत्व से अधिक शक्तिशाली भावना है। पिता बच्चों से अलग रह सकता है किन्तु सामान्यतया माता अपने बच्चों से अलगाव सहन नहीं करती। विषम मानसिक अलगाव की स्थिति में बच्चों का मोह पति पत्नी को एक ही रहने दें, किन्तु आवश्यक होने पर आपसी समझौते पर ही बच्चों का उत्तरदायित्व उन पर छोड़ दें। परिवार न्यायालय ऐसे प्रकरणों को यथा शीघ्र ही निबटाये ताकि टूटन कहीं आपराधिक घटना का रूप न ले ले।

माता पिता का उत्तरदायित्व

यह तो सम्भव नहीं कि दहेज हत्या के सभी प्रकरणों में माता पिताओं को पूर्व सूचना नहीं मिलती हो। कुछ घटनाओं के घटित होने के पूर्व जब वधू के माता पिता को दहेज की मांग या दुर्व्यवहार तिरस्कार की सूचना मिलती है तो काफी अधिक संख्या में माता पिता उपदेशक होकर लम्बे पत्र पुत्री को लिख देते हैं और आशीर्वाद देते हैं कि वह ससुराल में ही सकुशल रहे। जब वास्तव में दहेज हत्या की घटना घटित हो जाती है तब रोते चिल्लाते बेटी के ससुराल पहुंचते हैं कानूनी कार्यवाही की मांग करते हैं। यदि सूचना मिलते ही माता पिता.

पूवक ध्यान दें तो कदाचित ऐसी घटनाए टल सकती हैं। क्या कानूनन इस प्रकार वधू क माता-पिता भी इस हत्या के लिय उत्तरदायी नहीं हैं ? क्या कानून ऐसे माता पिता जो असामञ्जस्य की सूचना मिलने पर भी चुप बठे रहते हैं हत्या के अपराध म अग्र सहायक नहीं मानता ? यदि ऐसी व्यवस्था कानून की धारा म कर दी जाये तो चाहे सामाजिक अन्तर्चेतना के सन्दभ म मानवीयता के आधार पर ग्राह्य न हो, फिर भी कानून की दृष्टि से यह बहुत ही उपयोगी प्रावधान होगा ताकि माता पिता भाई-बहिन या अन्य जो भी सग सम्ब धी या पडौसी दहेज के सदभ म क्रूर व्यवहार की जानकारी मिलत ही यथा समय दहेज विरोधी समिति या पुलिस जो भी सरकारी सस्था हो को सूचित करें अन्यथा वे भी हत्या के सहयोगी व दोषी माने जायेंगे।

आवश्यकता है सह शिक्षण सस्थाओ की स्थापना की जिसम छात्र व छात्राए एक साथ अध्ययन करें। छात्र व छात्राओ के अलग-अलग सस्थाओ म अध्ययन करने पर वे एक दूसर को नजदीक से नहीं देख पात और शारीरिक व भावनात्मक विकास के अनुरूप सामाजिक व मानसिक विकास न होने पर वे विपरीत लिंग के प्रति रूमानी कल्पनाओ में खो जात है व स्त्री व पुरुष के शारीरिक मिलन का ही सुख की चरम सीमा व परिणिति मानत हैं। वे यह नहीं समझ पाते कि ववाहिक जीवन केवल शारीरिक सुख मात्र नहीं है अपितु एक आत्मिक अनुभूति प्राप्ति का साधन है। अलग अलग रहकर शिक्षा ग्रहण करते हुए आयु विवाहोन्मुख छात्र व छात्राए एक दूसरे वग को नहीं समझ पात जिससे वे एक दूसरे से शरीर से मिलकर भी पूर्णतया नहीं मिल पाते। स्त्री को पुरुष की व पुरुष को स्त्री की जीवन म क्या आवश्यकता होती है ? सामूहिक जीवन का क्या महत्व होता है ? वे तब तक नहीं समझ पाते जब तक कि व आयु के दोराह को पार नहीं कर लेत और व्यस्तता के व्यस्त क्षणो में सच्चे साथी का जीवन म महत्व का पता लग पाता है। जब तक काफी विलम्ब हो जाता है।

यदि बालक व बालिकाए सह शिक्षण सस्थाओ म एक साथ शिक्षा प्राप्त करत है तो न केवल बालिकाओ म समानता की भावना ही जागेगी अपितु उनमें शशवकाल से ही आत्मनिर्भरता आत्मसम्मान व आत्मविश्वास आत्मानुशासन की भावना जागेगी। ये भावनाए आगे चलकर पूर्ण विकसित होने पर नारी जो पुरुष के समक्ष दुबलता व हीनता महसूस करती आयी है वह ऐसा नहीं कर पायगी।

आवश्यकता है शिक्षा के माध्यम से मानवता पोषक मूल्यो के सामाजिक व व्यक्तिगत दोनो प्रकार के जीवन म उतारने की। शिक्षा मानव मूल्यो की पोषक होनी चाहिये जो यह सिखाये कि अपने बारे म भातर या बुरा व्यवहार सारे प्राणी

मात्र के बारे मे बुरा है। इस प्रकार आत्मन परोचेति परेषा न समाचरेत" या विद्या सा विमुक्तया के उद्देश्य से दी जाने वाली शिक्षा अवश्य ही मानवता पोषक है जहा सभी सुखी हो सभी निरोगी हो व सभी भद्रगुणग्राही हो व दुःख से दूर रह आदि आदर्शों की कामना करने वाले शिक्षार्थी हो तो ईश्वर से की जाने वाली प्रार्थना के अधकार से प्रकाश की ओर ले जा मृत्यु से अमृत की ओर ले जाने वाली भावना सार्थक व सफल हो सकती है। यदि शिक्षा मानवता को पशुता से मुक्त कराती है, तो मानवीय गुण दया करुणा सहयोग सहायता परोपकारी आदि स्वत ही मानव व्यवहार मे उद्भूत होगे और समाज एक स्वर्गीय सुखमय जीवन की कल्पना को साकार कर सकता है किन्तु जब शिक्षा मनुष्य को परोपकारी नही बना पाती तो उसमे जन्मजात मूल प्रवृत्तिजन्य जो क्रोध, ईर्ष्या विषाद, लाभ स्वार्थ मद मोह आदि भावनाएँ हैं उनका सामाजिक सस्कृतिकरण न होने के कारण शिक्षा के सही सामाजिक सरचना के उद्देश्य की पूर्ति नही हो पाती।

अत आवश्यकता है इस प्रकार की शिक्षा की, जो कि मानव जीवन के सही अर्थ व महत्व को समझा सके सामाजिक जीवन की व्यक्तिगत जीवन मे उपयोगिता बताए कि ववाहिक जीवन के सही मूल्यो की व्याख्या कर सके सास्कृतिक धरोहर के प्रति अनुराग उत्पन्न कर जीवन म कलात्मकता की आवश्यकता बता सके। इस प्रकार दहेज उन्मूलन मे शिक्षा का महती योगदान हो सकता है।

दहेज हत्या प्रकरण मे नारी के विरुद्ध किये जा रहे अत्याचार मे जब नारी दूसरी नारी के प्रति अत्याचारिणी होती है या अत्याचार म सहयोगी होती है तो क्या वतमान शिक्षातन्त्र जो व्यक्ति के समाजीकरण व अन्त करण के परिष्कार के लिये उत्तरदायी है वह अपने उद्देश्य पूर्ति म असफल नही है? जो नारी अपनी सन्तान के सुख व समृद्धि शुभ लाभ तथा स्वास्थ्य की अहर्निश कामना करती है वह नारी दूसरे की सतान के प्रति इतनी निष्ठुर निर्दयी व निर्मोही कसे हो जाती है? क्या वह यह नही सोच पाती कि उसकी कन्या के साथ भी कोई ऐसा ही व्यवहार कर सकता है और यदि करे तो वह कसा महसूस करेगी? ऐसा क्यो नही सोचती आज की प्रबुद्ध नारी? अपने को बहू या मा के स्थान पर समझकर देखे कि जब उसकी अपनी पुत्री के साथ थोडा भी दुर्व्यवहार होता है तो वह कसे छाती कूट-कूट कर विलाप करती है किन्तु जब वह बहू पर या भाभी पर अत्याचार करती है तो उसको उस समय दया क्यो नही आती है?

समाज म ऐसी सवेदनात्मक मूल्यवती शिक्षा क्यो नही है जिससे नारी तो नारी के प्रति सवेदनशील हो और दहेज आदि की सौदेबाजी का विरोध करे और इस प्रकार के अन्याय की विरोधी हो। यदि परिवार की महिलाए इस प्रकार का

विरोध करने लगें और अपने पुत्र/भाई के लिये उपयुक्त जीवन संगिनी ही लाने के लिये सोचें तो फिर दहेज हत्या व अन्य सर्वाधित कुरीतियों से उत्पन्न अपराध नियन्त्रित हो सकते हैं। क्या सीता की व्यथा को मन्दोदरी ने नहीं समझा था? यदि शूर्पणखा जैसी नारी दूसरी नारी का मान मर्दन कराने के लिए उत्तरदायी थी तो सीता के सतीत्व का आदर करने वाली महिलाएं भी थी। जब हम प्राण देश के धार्मिक ग्रन्थ इस प्रकार की शिक्षा देते हैं तो फिर उनको जीवन दर्पण में प्रतिबिम्बित करने में भारतीय नारी क्या झिझकती है? यदि नारी के विरुद्ध उत्पीड़न में नारी अपनी भूमिका निबाहना छोड़ दे और पुरुष का साथ देना छोड़ दे तथा अपने नारीत्व को दूसरी नारी में देखना प्रारम्भ कर दे तो फिर इन सभी कुछ समस्याओं का हल मिल जायेगा।

25 सती के रूप में हत्या

सती अग्नि स्नान या विधवा दहन—सती प्रथा नारी उत्पीड़न का चरम बिन्दु है जिसके बारे में विभिन्न विचारधारायें प्रचलित हैं। कुछ रूढ़िगत धार्मिक विचारधारा वाले व्यक्ति सती प्रथा को एक धार्मिक अनुष्ठान मानते हैं और इसकी प्रशंसा करते हैं—सती होने वाली महिला को शक्ति पुञ्ज के रूप में माना जाकर उसको देवी रूप दिया जाता है और तदनुसार उसकी पूजा अर्चना व आराधना होती है। सती स्मारक बनाये जाते हैं मंदिर निर्मित किये जाते हैं सतियों की प्रतिमायें सजायी जाती हैं। मेले लगाये जाते हैं आरती उतारी जाती है और आरती ज्योति को नयनों से सत्कार किया जाता है श्रद्धा से दर्शन किये जाते हैं प्रसाद ग्रहण किये जाते हैं चिह्न धारण किये जाते हैं और सती चित्र शक्ति व सत्व प्रेरणा स्वरूप घर में अन्य देवी-देवताओं के चित्रों के साथ पाये जाते हैं।

दूसरी ओर ऐसे भी समाज सुधारक चिन्तक मानव धर्म रक्षक की कमी नहीं है जो कि सती होने सती कराने को विधवा दाह की संज्ञा देते हैं और इसको वध व हत्या मानते हैं तथा नारी जाति के प्रति घोर जघन्यतम अपराध मानते हैं। सती प्रथा को सीधी-सादी भोली भाली विधवाओं को अग्नि को समर्पित कर उनसे छुटकारा पाये जाने का घृणित उपाय बताया जाता है। प्रश्न करते हैं कि क्या विधवा को समाज में जीने का अधिकार नहीं है? क्या पति के साथ जीवित अग्नि में प्रवेश करने का कोई विधिक विधान है? क्या यह नारी जाति को बलशाली मान कर उसकी इहलीला समाप्ति का नाटक नहीं? नारी की मृत्यु पर पुरुष अग्नि प्रवेश कर साथ क्यों नहीं मरता? नारी ही क्यों सती हो पुरुष क्यों नहीं? क्या यह असहाय नारी पर पुरुष का अत्याचार नहीं? नारी मन व सच्चरित्राचरण की ही परीक्षा क्यों की जाती है पुरुष के सतत्व की क्यों नहीं? पुरुष के बिना स्त्री को जीवित रहने का अधिकार क्यों नहीं? पत्नी के समानाधिकार नियम से बच्चों को

भी मा की ममता से वंचित किया जाता है वैसा विधान है ? पति प्रेम की अतिरेकता का उत्तर क्या उसके साथ जल कर मर जाना ही है ? क्या पति की अनुपस्थिति म विधवा रूप मे पति के द्वारा अधूरे छोडे गये कतव्य के उत्तरदायित्व की पूर्ति करना पत्नी का कतव्य नही है ? क्या उन उत्तरदायित्वो का निर्वाह न कर पति के शव के साथ जल कर मर जाना कायरता नही ? या पति की मृत आत्मा की सतुष्टि के लिए क्रिया कम न करा कर आत्मा का भटकते छोडना अधम नही ? क्या सती इसलिए कराई जाती ह ताकि पति की मृत्यु के पश्चात् विधवा परिवार पर बोझ बन कर न रह ? ताकि उसकी सारी सम्पत्ति परिवार जन बाट लें ? वह परिवार मे आशक्ति व्यभिचार न फैला सके ? उसका दुराचरण समाज मे क्लेश का कारण न बन ? क्या पति की मृत्यु के पश्चात् विधवा को जीवित रहने का अधिकार नही ? यदि अधिकार है तो केवल मात्र श्वास लेने का या नारकीय यातनाओ के साथ प्रात और साय के रूप मे दिन गिन कर शनै शनै जीते जीते मरने का ? क्या विधवा को ससम्मान जीने का कोई अधिकार नही है ? यदि नही तो क्यो नही ? क्या अग्नि समपण ही उसकी नियति है ?

उक्त प्रश्नो का न धार्मिक न सामाजिक और न विधिक उत्तर उपलब्ध होन के कारण सती प्रथा को सामती शासकीय सामाजिक कुरीति मानकर कानून बद करने के लिए अधिनियम शताब्दी पूव ही पारित कर दिया गया था। ब्रिटिश काल मे 1829 म लाड विलियम बैंटिक के समय सती प्रथा को बद कर दिया गया था। उस समय 27 नम्बर का रेगुलेशन पारित किया गया था उसके आधार पर बाद मे जाकर भारतीय दण्ड सहिता की धारा 306 व 309 मे इसको आपराधिक कृत्य के रूप मे समाविष्ट किया गया, किंतु इस कानून की विडम्बना यह है कि पश्चिमी बगाल के राज्य के अतिरिक्त अ य और किसी राज्य द्वारा इसको कानून रूप मे पारित नही किया गया।

सती क्यो होती हैं ? क्या उस धार्मिक मा यता के आधार पर होती हैं जिसके अनुसार महिला पति के साथ जीवित चिता मे जल कर प्राणाहुति दे दे और पति क शरीर के साथ साथ जल कर इहलोक की जीवन यात्रा समाप्त कर दे जिससे स्वग म भी दोनो ही साथ साथ चिरकाल तक पति-पत्नी के रूप मे रह ताकि उनकी मोक्ष हो ? क्या सती होने का निर्णय व्यक्तिगत कारण से या पति के अगाध आत्मिक प्रेम के कारण होता है ? जिसमे शरीर गौण होता है और विभि न शरीरो म रहन वाली दो देह एक आत्मा शरीर के नश्वर होते हुए चिर मिलन के लिए तत्पर होती हैं एव नाशवान शरीर का त्याग कर अग्नि को समर्पित कर आत्मायें अपने चिरबधन मे एक रूप हो बध जाती है। साथ जियेंगे व साथ मरेंगे के आत्मिक लगाव के कारण क्या यह समव होता है ?

क्या सती होने के पीछे मानसिक रुग्णता होती है ? क्या पत्नी पति के बिना इतना असहाय व विवश महसूस करती है कि वह अपने जीवन का पति विहीन होने पर शून्य समझती है तथा निराशा के गर्त में गिरी हुई मानसिक संवेगात्मक स्थिति में यह निर्णय लेती है कि वह पति विहीन बिना पति के नहीं रह सकती और इस संवेगात्मक स्थिति में वह पति के साथ जल कर मर जाने का निर्णय लेती है ?

क्या सती होना सामन्तवादी शासकीय परम्परा है जिसके अनुसार नारी शक्ति है पुरुष शौर्य का प्रतीक है तो नारी शक्ति का अजस्र स्रोत है। बिना शक्ति के शिव भी शव है। पुरुष के पुरुषार्थ में शक्ति समाविष्ट होती है। शक्ति का ओजस्व रूप पौरुष व शौर्य में है जिसके अलगाव की कल्पना शक्ति नहीं कर सकती शौर्य व शक्ति एक दूसरे के पूरक हैं। शक्ति में सौन्दर्य भी है और पुरुष का शौर्य उसका रक्षक है उसका संरक्षक है और उसका आधार व आगार है। शक्ति अपने सौन्दर्य सृजन के रूप में पौरुष शौर्य की सहचरी है नारी है आश्रिता है पुरुष के रक्षक काट होते हैं। पुरुष की सौन्दर्यात्मक आभा काटों के संरक्षण पर ही निर्भर करती है। जब पौरुष आगार समाप्त हो जाता है शौर्य ज्योति एकदम बुझ जाती है तो शक्ति आधारहीन हो जाती है और अपने वास्तविक स्वरूप में एक रूप होने व समन्वय होने के कारण शारीरिक मोह त्याग कर वास्तविक पौरुष शौर्य पुन्ज में मिलन को आतुर हो जाती है। पति मिलन की चिरप्यास सांसारिक सुख साधनों के सामर्थ्य से परे है और क्षितिज के उस पार निःशरीर मन पक्षी उड़ चलते हैं, आत्मिक मिलन की सतत् आस व साध लिए चिर मुक्त प्यास लिए। इस भावना को बल मिलता है भारतीय समाज की जाति व्यवस्था की धरोहर क्षत्रिय जाति में जो सूर्यवंशी सिंहवंशी होते हुए शक्ति आराधना को आधार मानते हैं। शक्ति के बल पर शासन किया और शक्ति की आराधना में अपनी मुक्ति मांगी। मां दुर्गा महिषासुर मर्दनी सिंह वाहिनी के रूप में पूजा और आज भी जय माताजी के साथ ही अपना सामाजिक जातिगत जीवन जीते हैं राजपूत जाति के क्षत्रिय जन।

ऐसी धार्मिक जातिगत शासन सामंती मान्यताओं के परिवेश में पली बालायें, जैसी कि भ्रामक विचारधारा है शक्ति व शौर्य के सही अर्थ को समझती हैं और अग्नि जिन दो देहों को एक करती है शक्ति व शौर्य का मेल कराती है उसी अग्नि को देह समर्पित कर अखण्ड आत्मिक ज्योति पुन्ज में मिलने की इच्छा से महिलायें सती हो जाती हैं अपने मृत पति के शक्तिहीन शौर्यहीन शरीर को गोद में लेकर अग्नि यज्ञ में अपने प्राणों की आहुति देकर पति के साथ महाप्रयाण कर जाती हैं।

क्या सती होना सामाजिक आवश्यकता है ? पति के मरने के पश्चात् पत्नी निःसहाय हो जाती है ? रूढ़िगत भारतीय समाज में विधवा को अपशकुन माना

जाता है ? उसको दुर्भाग्य का रूप माना जाता है ? कुलटा कुलक्षणी भाग्यहीन माना जाता है ? कई परिवारो मे तो यह मान्यता भी है कि अपशकुना बहू के आने पर ही उस घर का बेटा मरा। ऐसी बहू को कौन सत्कार की दृष्टि से देखेगा ? धार्मिक पुण्य अनुष्ठानो व अवसरो पर विवाह उत्सव व अन्य सुख के अवसरो पर विधवा की उपस्थिति अपशकुन मानी जाती है और उसको इसमे सम्मिलित होने मे रुकावट डाली जाती है। विधवा की कामुकता बलात करने के लिए उसको शृंगार नहीं करने दिया जाता बिना नमक का भोजन दिया जाता है। कुश या घास अथवा कष्टकारी बिस्तर बिछाने को दिया जाता है विधवा को व्रत व उपवास करन के लिए विवश किया जाता है। सफेद कपडे पहनने का दिए जाते हैं। पूजा अचना मन न होते हुए भी करनी पडती है उसका सर मूड दिया जाता है। पुरुष वग से मिलने पर पाबदी होती है। पडौस की महिलाएँ भी विधवा को अपशकुनी समझती हैं और उसे देख कर रास्ता काट कर निकल जाती हैं। युवा विधवा का जीवन नारकीय हो जाता है। कदाचित इस सामाजिक नृशस व्यवस्था से शकित व डरी हुई विधवा यही श्रेयस्कर समझती है कि शेष जीवन पय त नारकीय यातनाओ के साथ जीवन जीने से तो यही उचित रहगा कि पति के साथ ही चिता म जल कर महा प्रयाण कर लिया जाये।

क्या पति की मृत्यु के पश्चात् विधवा को जीने का अधिकार नहीं ? यदि अधिकार है तो तिरस्कृत उपेक्षित यातनामय जीवन जीने का ? क्या नारी देश मे सवेदनशील आत्मा का निवास नहीं ? पत्नी की मृत्यु के पश्चात पति ससम्मान समाज म जीवित रह सकता है तो पत्नी विधवा रूप मे क्यो नही ? यह सामाजिक आवश्यकता आर्थिक दासता के अधीन है। पत्नी का पति पर आर्थिक शारीरिक व सामाजिक रूप से आश्रित होना ही उसकी इस नियति के लिए उत्तरदायी है।

यदि सती प्रथा सामाजिक आवश्यकता नही है तो फिर भी यह सामाजिक आवश्यकता कब से बनी ? वसे तो रामायण काल म भी सती होने के प्रसग आये हैं। रावण पुत्र मेघनाथ की पत्नी सुलोचना सती हुई थी। पौराणिक काल मे सती स्त्री का अथ पतिव्रता के रूप मे लिया जाता रहा है। इसी प्रसग मे सीता अनुसूया व सावित्री का नाम सती स्त्री के रूप मे लिया जाता रहा है। इस प्रकार सती शब्द का जो अथ है वह सच्चे अर्थों मे एक पति के प्रति पूर्ण निष्ठा सवस्व त्याग, समपण पवित्र एकाग्रता से है। जो स्त्री एक ही पति को सर्वस्व मान कर पर पुरुष की कल्पना तक नहीं करती और उसके अ तमन दर्पण मे एक ही पति पुरुष की छवि अकित रहती है, वह स्त्री सती कहलाती थी। सती का अथ पति के शव के साथ जल कर मरने का उल्लेख नहीं मिलता है। सती प्रथा/विधवा दहन प्रथा व परम्परा सम्ब धी उक्त सभी प्रश्नो के उत्तर ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य मे दिये जा सकते हैं जो कि धार्मिक व सामाजिक पक्षा का स्पष्ट करे।

सती प्रथा व विधवा दहन ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

विधवा दहन या पत्नियों को मृत पतियों के शवों के साथ जलाने का कोई नई प्रथा नहीं है जो केवल मात्र भारत में ही प्रचलित हो।

आस्ट्रेलियन नेशनल युनिवर्सिटी के विद्वान श्री अजित कुमार रे ने अपनी पुस्तक— विडोज आर नोट फोर बर्निंग ' मे वर्णन किया है कि अमेरिकन इण्डियन समुदाय कामाचे में यह प्रथा प्रचलित थी कि जब किसी व्यक्ति की मृत्यु होती थी तो उसकी सबसे प्रियतम पत्नी की हत्या कर दी जाती थी ताकि वह परलोक में भी अपने पति का साथ दे सके। यही प्रथा केलीफार्निया व अफ्रीका में भी प्रचलित बताई गई। देहोमे में यह प्रथा प्रचलित थी कि जब राजा की मृत्यु होती थी उसकी सभी रानियों की टांग तोडकर जिन्दा ही उसके साथ स्मारक में गडवा दिया जाता था। युगाण्डा मे भी यह प्रथा प्रचलित बताई गई कि जब कोई राजा मरता था तो उसकी कब्र के आस-पास जो घेरा बनाया जाता था उसमे उसकी रानियों को बन्द कर दिया जाता था जहां पर वे भूख व प्यास से तडप तडप कर प्राण त्याग देती थी। टामार में यह प्रथा थी कि जब कोई व्यक्ति मरता था तो उसकी एक औरत को फांसी लगाकर मरना होता था। चीन मे उन पत्नियों का सम्मान होता था जो अपने पति के साथ आत्महत्या कर लेती थी। प्राचीन यूनान व मिस्र में भी विधवा दहन के उदाहरण मिलते है।

सती प्रथा धार्मिक व्यवस्था नहीं है और न ही यह धार्मिक आस्था है यह धारणा धार्मिक ग्रन्थों के आकलन से उभर कर आई है। भारतीय धार्मिक ग्रन्थ जो संख्या में लगभग पांच हजार माने गये हैं, तीन भागो मे विभक्त किये गये हैं— (1) सूत्र (2) स्मृति व (3) निबंध एवं वृत्ति। मिताक्षरा को अंतिम धार्मिक ग्रन्थों की सीमा माने जाने पर धर्मशास्त्र शताब्दियों से भारतीय चिन्तन का सार है।

धर्म शास्त्रों के अंतर्गत ईसा पूर्व 300 वर्ष तक सती प्रथा का कोई उल्लेख नहीं मिलता है। वैदिक काल में यह प्रतीकात्मक स्थिति थी कि विधवा स्त्री मृतक के पास लेट कर वापिस जीवित लौट आये— इय नारी पति लोक वृणाना नि पद्यत उपत्वा मर्त्य प्रेत्य। धर्मपुरानमानुपालन्ती तस्य प्रजा दविण चेह धाहि। वैदिक काल में स्त्रियां पति के शव के साथ चिता पर लेटती अवश्य थी किन्तु उन्हें बचा लिया जाता था। डॉ. अल्टेकर की कृति दि पोजीशन ऑफ वीमन इन हिन्दू सिविलाइजेशन में भी इस तथ्य की पुष्टि होती है। जब युद्ध काल में युद्ध व रणक्षेत्र में पुरुषों की मृत्यु सामान्य चीज बन गई तो राजनीतिक सामाजिक व मनोवैज्ञानिक परिस्थितियों के वशीभूत वैदिक काल की व्यवस्था में से लेट कर वापिस लौट आने की प्रक्रिया निकाल दी गई जिसके फलस्वरूप विधवा को मृतक पति के साथ जला कर मारा जाना प्रथा व परम्परा बना दी गई और इस प्रकार साथ जल कर मरने की

व्यवस्था को सहकरण" सहगमन' अन्वारोहण 'या अणवरण" आदि विभिन्न नामों से पुकारा जाने लगा। इस प्रकार जल कर साथ मरने की क्रिया को पति-पत्नी दोनो के लिए स्वर्ग प्राप्ति का साधन माना जाने लगा।

स्मृतियो के आकलन से स्पष्ट है कि मनुस्मृति व याज्ञवल्क्य स्मृति मे सती प्रथा का कोई उल्लेख नही मिलता। ईसा पूर्व छठी शताब्दी मे लेकर दूसरी शताब्दी में रचित गृह्य सूत्रो म विधवाओ को पति के साथ जल कर मर जाने के विरुद्ध व्यवस्था दी गई है। भारद्वाज गृह्य सूत्र मे तो यह व्यवस्था दी गई कि पति की मृत्यु के पश्चात् उसकी विधवा पवित्र गृह अग्नि को जलाय। आश्वायन गृह्य सूत्र म तो यह आज्ञा दी गई है कि पति के शव के साथ लेटी विधवा को उठाया जाये व कहा जाये कि वह जीवितो के ससार म उठे।

तुल्योवयद्देन पतिस्थानी योन्तेवासी।
नरछावासोदी स्वय निर्जीवलोकमिति ।।'

इसके विपरीत कुछ धार्मिक ग्रथ है जिनम सती प्रथा को आशिक रूप से परीक्षा रूप म या वकल्पिक रूप म स्वीकार किया है। विष्णु धम सूत्र के अनुसार विधवा पति के साथ जल कर प्राण त्याग दे यदि वह पति की मृत्यु के बाद ब्रह्मचय का पालन नही कर सकती हो। व्यास और बृहस्पति भी सती होने को वकल्पिक रूप म स्वीकार करते हैं कि विधवा स्त्री अपने पति की मृत्यु के पश्चात् पति कल्याण हेतु सतीत्व जीवन व्यतीत करे किन्तु वह एसा कर सकने की मन स्थिति वाली न हो तो पति के शव के साथ ही जल कर मृत्यु वरण करे। वहद्देवता के अनुसार क्षत्रियो के अतिरिक्त अन्य वण की स्त्रिया इच्छा से तो सती हो अन्यथा नही किन्तु व्यास स्मृति मे यह व्यवस्था है कि ब्राह्मणी अपने मृत पति के शव के साथ अग्नि प्रवेश करे और जीवित रहने की स्थिति मे शृ गारहीन सात्विक जीवन व्यतीत करे। व्रत उपवास रखते हुए तपस्या करे।

मिताक्षरा ही एक मात्र धमशास्त्र है जिसम सती प्रथा की प्रशसा की गई है। वृदहारीत के अनुसार साध्विया के लिए पति के साथ जल कर मरने के अतिरिक्त कोई धम नहीं है। इसी के अनुरूप पाराशर ने भी कहा है कि सती साढे तीन करोड वर्षो तक स्वग मे ही पति के साथ निवास करती है। पति के साथ मरने की व्यवस्था है जो भी वकल्पिक ही कहा जाये कि सती के अथ पवित्र पति धम को माने वाली स्त्री को सती कहा जाये तो पाराशर स्मृति की व्यवस्था के अनुसार पति के साथ जलकर मरने वाली प्रथा के अनुमोदन रूप मे स्वीकाय नहीं हो सकती।

इसके विपरीत ऐसे कई टीकाकार भी है जिन्होने वदिक भावनाओ की रक्षा करते हुए सती प्रथा की स्पष्टतया भत्सना की है। स्मृति चन्द्रिका के अनुसार ब्रह्मचय निन्दनीय ही है किन्तु सती प्रथा तो जघन्य है —

'तदतद धर्मातरपि ब्रह्मचय धर्मादि
जघन्य निकृष्ट फलत्वात ।'

मेधातिथि भी विधवा दहन के विरुद्ध थ । उनका स्पष्ट कथन है कि 'पतियो के साथ मरना स्त्रियो के लिए निषिद्ध है ।"

'उमत्येव पति मनुमरणेप्रवि स्त्रिया प्रनिरथे । अपराक का मत मानव कल्याण के सदभ मे अत्यन्त लाभकारी है, जिसके अनुसार स्त्री पति की मृत्यु के पश्चात् उसका भला कर सकती है उसके साथ मर जाने पर ता वह आत्मघातिनी कहलायेगी ।

अनुवतेत जीवन्त न तु यार्यस्मृत पतिभू ।
जीवद भर्ताहित् कुर्यान मरणादात्मघातिनी ।।"

इस प्रकार निष्कपत कहा जा सकता है कि भारतीय धमशास्त्रो म विरल ही धमशास्त्र हैं जो वैकल्पिक रूप से या आशिक रूप से सती प्रथा को मान्यता देते हैं, अन्यथा अधिकाशत वदो से लकर स्मृति व अन्य धमशास्त्रो में सती के समथन म कुछ भी उल्लेख नही है और जो भी ह वह विपरीत है । वस्तुत चातुवण्य के समाज सती प्रथा को भारतीय समाज ने न कभी अनिवाय माना है और न अपरिहाय । इस प्रथा को न तो व्यापक समथन प्राप्त है और न ही व्यवहारिक रूप से इसका कोई आवश्यक पालन ही है । कभी कभी धर्मान्ध रूढ़िगत समाज म मोक्ष का मोह दिखा कर नशा करा कर प्रोत्साहित कर ढोल व ताशो व नारा जय जयकार शख ध्वनि के मध्य महिलाओ को मृत पतियो के साथ जला दिया जाता रहा है । इस प्रकार विष्णु खरे के शब्दो मे— सती प्रथा का कारण प्रमाण और समथन शास्त्रो संस्कृति और पुनजन्म म नही सामाजिक और अपने निजी मानसिक तथा बौद्धिक रोगो म ही खोजा जा सकता है ।'

विधवा दहन दो जीवितो के ससार मे लौटने वाली परम्परा

नवभारत टाईम्स दिनाक 26-9 87 ।

सती प्रथा के उद्भव के विषय म ता सस्कृत विज्ञो के यहाँ तक विचार हैं कि सती प्रथा का उद्गम भारतवष म नही हुआ अपितु सती प्रथा अर्थात् विधवा दहन के उद्भव का मूल यूनानी सभ्यता म पाया जाता है । डा पाण्डुरग परमन काने के अनुसार विधवा दहन यूनानी प्रजाति के अनुसार अतिरिक्त जमन स्लाव व अन्य प्रजातियो म भी प्रचलित थी किन्तु यह प्रथा कवल मात्र राजा व सामतो तक ही सीमित थी जिनका यह विश्वास था कि व मृत्यु के पश्चात् भी

समस्त सासारिक सुखो का भोगते रहगे। जिसमे पत्नी सुख भी है यदि वह साथ ही जल कर मरती है।

भारत म सती प्रथा का प्रादुर्भाव ब्राह्मण काल मे ही होना पाया जाता है क्योकि वेदो म इसका कोइ उल्लेख नही है और न ऐसा मत्र ही है जो कि इस अवसर पर उच्चारित किया जाता हो। प्राचीन गुह्य सूत्रो मे भी सती प्रथा का कोई उल्लेख नही मिलता बताया। भारत मे कुषाण साम्राज्य क दौरान यह प्रथा लाई गई प्रतीत होती है क्योकि कुषाण शासक कनिष्क के समय के प्रसग का उद्धरण (उपछृण) मेक्समूलर की कृति प्राचीन सस्कृत साहित्य के इतिहास मे मिलता है। कुशाकरो पर जिनका राज्य उत्तर भारत अफगानिस्तान पाकिस्तान व मध्य एशिया म था यूनानी सभ्यता का गहरा प्रभाव था। यहा तक कि व यूनानी भाषा तक बोलत थे सभी प्राचीन धमशास्त्र जिनका सबध पथिनारी अगिरास एव यग्रपाद से है ने सती प्रथा अर्थात् विधवा आत्मदहन की निन्दा की है। केवल मात्र विष्णु पुराण या महाभारत म एक उदाहरण तथा रामायण म एक उदाहरण जिसमे कि राक्षस राजा रावण द्वारा शील भग करने के कारण एक ब्राह्मण महिला ने आत्मदाह किया था के अतिरिक्त अन्य धम ग्रन्थो म सती प्रथा का कोई उल्लेख नही है। डा काने के अनुसार यह प्रथा भारत मे वतमान युगके प्रारम्भिक काल मे विकसित हुई और 10वी शताब्दी के आस-पास दक्षिण भारत म फली।

वरानिका आवनस के अनुसार सती प्रथा का पौराणिक प्रसग है जिससे सम्भवत सती प्रथा का उद्भव प्रतीत होता है। दक्ष की पुत्री सती का स्वयम्वर रच कर विवाह हेतु राजाओ को आमत्रित किया गया किन्तु राजा दक्ष न शिव का उनकी ग दी आदतो व कुरूप आकृति के कारण स्वयम्वर म आमन्त्रित नही किया किन्तु दक्ष की पुत्री सती शिव की अनन्य भक्त थी और उसन प्रण ले लिया कि वह शिव के अतिरिक्त अन्य और किसी का वरण नही करेगी। जब सती ने शिव को अनुपस्थित पाया तो उसने शिव से प्रकट होने की प्राथना की और उसने हवा मे वर माला का फेंका जिसको शिव ने स्वीकार किया। फलस्वरूप राजा दक्ष को सती का विवाह शिव से करना पडा।

राजा दक्ष ने शिव से बदला लेने क लिए एक यज्ञ किया जिसमे अपने दामाद के अतिरिक्त अन्य सभी राजाओ व दवताओ को आमन्त्रित किया। सती ने जब राजाओ को अपने पिता के महल की ओर जाते देखा और उसके पति महादेव शिव को आमन्त्रित न करने की जानकारी मिली तो उसने अपन पिता राजा दक्ष के पास पहुँच कर अपने पति शिव को आमन्त्रित करने की प्राथना की किन्तु सती की

प्रार्थना स्वीकार न करने पर उसने यज्ञ की पवित्र अग्नि में अपने शरीर को समर्पित कर दिया और जल कर भस्म हो गई।

सम्भवतः इसी पौराणिक आधार पर सती मन्दिरों के निर्माण व उपस्थिति को समझाया जा सकता है।

डा. काने के अनुसार सती प्रथा का प्रथम उद्गम प्रथमतः राजाओं व सामन्तों तक सीमित रहा किन्तु जब ब्राह्मणों में भी यह प्रथा प्रचलित होने लगी तो ब्राह्मण टीकाकार व धर्मशास्त्रियों ने इस प्रथा के बारे समर्थन देने प्रारम्भ कर दिया। औरत के रूप में मृत्योपरान्त मिलने वाले लाभों का आधार बनाया जैसे कि सती होने वाली महिला स्वर्ग में उतने दिन तक रहेगी, जितने उसके सर में बाल हैं अनुमानतः 3½ करोड़ वर्षों तक। यदि किसी महिला का पति किसी ब्राह्मण की हत्या कर देता है या मित्र की हत्या करता है या कृतघ्नता का दोषी है तो ऐसे व्यक्ति की मृत्यु के पश्चात् यदि उसकी पत्नी उसके मृत शरीर को गोद में लेकर अग्नि स्नान करती है तो वह मृतक अपने पापों से मुक्ति पा जायेगा। इसी प्रकार हरित के अनुसार जो विधवा आत्मदाह करती है वह तीन परिवारों को पापों से मुक्ति दिलाती है। अपने पिता का परिवार माता का परिवार व पति का परिवार।

यह मत भी प्रचलित किया गया कि वह स्त्री जिसने जल कर प्राण आहुति नहीं दी पुनर्जन्म में कभी स्त्री के रूप में जन्म नहीं ले सकेगी।

किन्तु सती वे ही महिलायें हो सकती थीं जो उस समय न तो गर्भवती हों और न उनके छोटे छोटे बच्चे हों उसने मासिक धर्म की आयु प्राप्त करली हो और उस समय रजस्वला से न हो।

केवल मात्र बंगाल प्रान्त में ही सती प्रथा प्रचलित थी जिसका कारण यह बताया गया कि बंगाल के उत्तराधिकार कानून में बिना पुत्र वाली विधवा पति के सम्पत्ति की व पति की पैतृक सम्पत्ति की पूर्ण उत्तराधिकारिणी होती थी। अतः उसको इस अधिकार से वंचित करने के लिए विधवाओं को सती होने अर्थात् आत्म दाह करने के लिए विवश किया जाता था।

सन् 1829 में लार्ड बंटिंग ने जब इस सती प्रथा को रद्द किया तो भारतीय समाज में उसकी कोई व्यापक प्रतिक्रिया न होना इस बात का प्रमाण है कि सती प्रथा भारतीय धार्मिक विश्वासों के मूल में नहीं थी और न इसका सामान्य रूप से प्रचलन था और न बाद इसके प्रचलन के बारे में गम्भीर था। कोलब्रूक एक संस्कृत विद्वान जो कि 1795 में भारत में था ने लिखा है कि

सती (विधवा दहन) की घटनायें अधिक सख्या म घटित नही होती थी और उस समय भी कभी कभी घटित हाती थी इस व्याख्या से स्पष्ट है कि सती प्रथा न भारतीय मूल मे है और न धार्मिक विश्वासो से जुडी है। पौराणिक आधार जिसमे महादेवी पावती ने सती रूप म प्राणोत्सग किये थे वह महादेव की प्रतिष्ठा के सदम मे अपने पति के अपमान क दुख म दुखी होकर किये थे न कि मृत्यु के पश्चात्। इसके विपरीत प्रचलित परम्परा म मृत पति के शव के साथ आत्मदाह कर प्राण त्यागने की परम्परा रही जिसका इस धार्मिक पौराणिक आख्यान से कोई सम्बध नही। महादेवी सती द्वारा जो अगाध पति प्रेम का प्रदशन किया जिससे महिला पति प्रेम पतिनिष्ठा पति सेवा की प्रेरणा ले सकती है। यह आख्यान प्रचलित सती प्रथा अर्थात् विधवा आत्मदाह या विधवा दहन का धार्मिक आधार नही बन सकता।

जसे जस मानव समाज विकासोमुख होता रहा ये प्रथाएँ धीरे धीरे भूली जाती रही। भारत मे कानूनन सती प्रथा का अन्त सन् 1829 म हुआ किन्तु इसका भी रूढिवादी हिन्दू समाज घटक द्वारा घोर विरोध किया गया किन्तु फिर भी लाड बेटिंक जो 1823 मे गवनर जनरल पद पर आरूढ हुए इस प्रथा को समाप्त करने के लिए कटिबद्ध थ और इस अभियान मे उनका साथ दिया भारत के समाज सुधारक राजा राममोहन राय व ईसाई मिशनरिया द्वारा। राजा राममोहन राय सती प्रथा से व्यक्तिगत रूप से क्षुब्ध थे क्योकि उनके विरोध के बावजूद उनके परिवार ने उनके भाई जगमोहन की मृत्यु के पश्चात् उनकी भाभी को सती हान के लिए बलपूवक विवश किया। राजा राममोहन राय को कई प्रकार के तर्कों द्वारा सन्तुष्ट किया गया किन्तु उन पर कोई प्रभाव नही पडा। राजा राममाहन राय को समझाया गया कि सती हाना गौरवान्वित कृत्य है जा प्रतिष्ठा मूलक है व बहादुरी का सूचक है यह माक्ष प्राप्ति का साधन ह, प्रतिव्रत धम एकनिष्ठता का प्रमाण है पति भक्ति की परीक्षा है और आत्माओ के पूण मिलन का एकमात्र साध्य है। राजा राममोहन राय ने सती प्रथा समाप्ति का बीडा उठाया और उसकी समाप्ति के लिए जुट गये।

हेस्टिंग क एन साइक्लोपीडिया आफ रिलिजन एण्ड एथिक्स के अनुसार प्राचीन काल म विधवा दहन की जो प्रथा थी उसको वैदिक काल मे पुनर्विवाह को वरीयता देकर अमान्य कर दी गई। हेस्टिग के मतानुसार वदिक काल मे काफी समय पश्चात् विधवा दहन की पुरातन प्रथा को ब्राह्मणो द्वारा विधवा की सम्पत्ति पर आधिपत्य जमाने के लालच स प्रेरित होकर पुनर्जीवित करने के प्रयत्न किये गये। प्रोफेसर एच एच विल्सन ने अपने प्रबन्ध व व्याख्यान जो हिन्दू धम पर

ये एक त्रुटि की व्युत्पत्ति को इंगित किया जो कि ब्राह्मणों के मस्तिष्क की उपज थी। ब्राह्मणों द्वारा जानबूझ कर सती प्रथा को सम्बल देने हेतु 'अग्रे' शब्द को 'आग्नेह' म परिवर्तित कर दिया अरोहन्तु जनया यानि अग्नेह (माताओं को अग्नि गर्भ म प्रविष्ट होने दो)। मैक्समूलर ने अपनी कृति सिलेक्टेड एसेज आन लैंगवेज माइथोलोजी एण्ड रिलिजन में इस परिवतन की बहुत निन्दा की है और इसको पुरोहितवाद की सिद्धांतहीनता का ज्वलन्त उदाहरण माना है। ब्राह्मणों द्वारा भारत के अधिकांश भागों म अपनी पत्नियों पर इस परिवर्तित अर्थ को लागू नहीं किया अन्य जातियों के मस्तिष्कों म ब्राह्मणों के द्वारा सती प्रथा पुनर्प्रारम्भ के सन्दर्भ मे ब्राह्मणों के प्रति संशय उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त था। प्राप्त शास्त्र के आधार पर हिन्दू धर्म ऐसी व्यवस्था नहीं देता कि पति की मृत्यु के पश्चात् उसकी पत्नी को सती हो ही जाना चाहिए। पौराणिक आख्यानों व धर्म ग्रंथों म जो देवियां सती रूप मे प्रख्यात है और पूजनीया मानी गई हैं उसका एकमात्र कारण उनकी पति के प्रति सत्य निष्ठा है।

वर्तमान स्वरूपा सती प्रथा का प्रादुर्भाव इस आर्यव्रत म विदेशी आक्रमणों के साथ हुआ। आततायी आक्रमणकारियों की काम पिपासा व अपमान से बचने के लिए योद्धाओं की कुलीनाएँ सामूहिक रूप से अग्निस्नान कर प्राण उत्सर्ग करती रहीं इस प्रकार पति शवों के साथ जिन्दा जलने से उनको देवी समान माना जाने लगा और उनकी जय जयकार होने लगी तथा यह कृत्य लोक प्रतिष्ठा का साधन बन गया। सम्भवत इसी आधार पर यह प्रथा चल निकली व प्रचलित हो गई। मुगल काल म विशेषत सम्राट अकबर द्वारा सती प्रथा को रोकने का मानस बनाया था किन्तु राजपूत राजाओं के राज्य ब्राह्मण व अन्य जातियों द्वारा समर्थन व इसके प्रचलन और लोक मान्यता को ध्यान म रखकर सम्भवत मुगल शासकों द्वारा इस कुप्रथा समाप्ति के लिए कोई प्रभावी उपाय नहीं किये गये।

अंग्रेजों द्वारा भारत मे आधिपत्य जमाने से पहले अनेक देशी राज्यों म सती प्रथा प्रचलित बताई गई। अंग्रेज लेखक इंगलस देवार के अनुसार सम्पूर्ण भारत म सन् 1815 के पूर्व प्रति वर्ष दो हजार स्त्रियाँ जलकर सती हो जाती थी महाराजा रणजीत सिंह के साथ दाह संस्कार के समय उनकी छह रानियाँ उनके शव के साथ सती हो गई थीं। राजपूताना के चित्तौड़ जैसलमेर सहित कई किलों म हुए जौहर सामूहिक सती की ही मिलती जुलती घटनायें थीं। तत्कालीन बंगाल प्रेजिडेन्सी म सती प्रथा का प्रचलन बहुत अधिक था। प्रख्यात अंग्रेज इतिहासकार विन्सेन्ट स्मिथ के अनुसार अंग्रेज सरकार ने भारत मे सती प्रथा के विरुद्ध 25 वर्षों तक कोई कार्यवाही नहीं की। अंग्रेज शासकों के मन म सती प्रथा के विरुद्ध विरोध का भाव अवश्य था किन्तु वे बहुसंख्यक भारतीय हिन्दू समाज की भावनाओं

मे हस्तक्षेप करने का साहस नही जुटा सके। इसी कारण अंग्रेज सरकार ने सन् 1805 तक सती प्रथा को रोकने के प्रभावी उपाय नही किये। शनै-शनै सती जैसे अमानवीय कृत्य ने विदेशी शासको की अन्तरात्मा को भी उद्वेलित कर दिया और परिणामत विवश होकर सन् 1805 म ही हिन्दू विधि के अन्तर्गत सती प्रथा के बारे म विचार जानने के लिए अंग्रेज सरकार द्वारा एक सदर दीवानी अदालत की बैठक बुलाई गई इस बैठक मे हिन्दू पण्डितो द्वारा जो व्यवस्था दी गई वह इस प्रकार है—

> चारो वर्णों की हर स्त्री को अपने मृत पति के साथ सती होने की इजाजत है। इसमे शर्त यह होगी कि उसके कोई छोटा बच्चा नही हो वह गर्भवती नही हो अशुद्ध नही हो तथा रजस्वला होने की उम्र पार कर चुकी हो।

उक्त व्यवस्था की भी पालना नही हो सकी और विधवाओ को सती के नाम पर भस्म किया जाता रहा। लार्ड मिन्टो ने साहस करके सती प्रथा को नियन्त्रित करने के उद्देश्य से कानून बनाया जिसके फलस्वरूप बगाल म थोडा सा प्रभाव पडा। अंग्रेज इतिहासकार विन्सन स्मिथ के अनुसार बहुत कम स्त्रियाँ अपनी इच्छा से सती होती थी। सती होने का दृश्य अत्यन्त घृणास्पद और निकृष्टतम होता था। अंग्रेज शासको द्वारा बगाल प्रेजिडेन्सी म सती सम्बन्धी जो आकडे एकत्रित कराये थे उनके अनुसार सन् 1815 मे 378 1816 म 442 1817 म 707, 1818 म 849 1819 म 650 तथा 1820 मे 597 महिलाओ ने अपने पति की मृत देह के साथ जीवित ही अग्नि स्नान करके अपनी जीवन लीला समाप्त कर दी। अन्ततोगत्वा सन् 1829 मे लार्ड विलियम बैंटिक ने कानून बनाकर सती प्रथा के विरुद्ध स्मरणीय प्रभावी कार्यवाही की। राजा राममोहन राय ने पूरा साथ दिया। 4 दिसम्बर 1829 के कानून की धारा 17 के अन्तर्गत फौजदारी अदालतो म सती प्रथा को गैर कानूनी घोषित किया गया। कानून की प्रस्तावना मे यह स्पष्ट किया गया—

> हिन्दू धर्म म सती प्रथा आदेशात्मक कर्तव्य नही माना गया है। सम्पूर्ण भारत मे सती प्रथा प्रचलित नही है। कुछ जिलो मे तो इसका अस्तित्व ही नही है। जिन क्षेत्रो म यह ज्यादा प्रचलित है वहा यह कलकपूर्ण अपराध नारी के साथ अमानवीय अत्याचार की सीमा लाघ जाता है। अधिसख्य हिन्दू इस हृदय विदारक प्रथा से दुखी हैं। वे इसे गैर कानूनी व घृणित मानते हैं।

इस कानून को यथा स्थिति मान लिया गया हो ऐसी स्थिति नही बनी। रूढिगत भारतीय हिन्दू समाज के पण्डितो द्वारा इसका घोर विरोध किया गया।

आठ सौ ब्राह्मणो द्वारा इस कानून क विरुद्ध याचिका प्रस्तुत की, जिसको प्रीवी काउंसिल को भिजवाया गया। फ्रांसिस केरी इस अपील को लेकर गये जो स्वयं इस विचार के थ कि भारतीय हिंदुआ को अपने धम की पालना की स्वीकृति दी जानी चाहिये। राजा राममोहन राय पूव से ही इग्लण्ड म थे। उनके मित्र विलियम केरी जो कि महान सेवाभावी थे श्री राजा राममोहन राय को अपना पूण सहयाग दिया। श्री केरी यह उपदश देत थे कि मानव से ईश्वर को महान वस्तुओं की अपेक्षा करनी चाहिये और उसको भगवान क लिए भी महान काम करने चाहिये। श्री केरी भारत म प्रिंटिंग प्रेस लाये थे परिणामत प्रीवी काउंसिल द्वारा बेनडिक के कानून को 1833 म अपने निणय मे बहाल रखा।

जसा कि होता आया है कानून अपने आप म किसी बुराई को समाप्त करने म पर्याप्त नही होता है। सती प्रथा एक कठिन सामाजिक समस्या थी। इसके अतिरिक्त कितने ही ऐसे राज्य भी थे जो सीधे ही ब्रिटिश साम्राज्य के अधीन नही थे जिसके फलस्वरूप इन राज्यो म लाड बेनडिक के अध्यादेश का कोई नही था। इस प्रकार सती प्रथा इस कानून के बावजूद भी 1862 तक प्रचलित रही।

भारत म अंतिम रूप स सती प्रथा को समाप्त करने का श्रेय डलहोजी को जाता है। अपने प्रशासन पर पुनरेक्षण करते हुए डलहोजी ने अपनी कायवाही विवरण (28 फरवरी 1856 पराग्राफ 146) मे लिखा है कि जिन स्वतन्त्र राज्यो म सती घटनायें घटित हुईं उस घटना की निंदा करने का कोई अवसर नही छोडा गया और जो राज्य अंग्रेज शासन के अधीन थ उनमे घटना घटित होने पर सजायें दी गइ। लाड डलहोजी के सती प्रथा की समाप्ति के लिए कठोर प्रयत्नो का वणन करते हुए इतिहासकार ट्रोटर न अपनी पुस्तक इण्डिया अण्डर विक्टोरिया म लिखा है कि उदयपुर, अलवर व बीकानेर के महाराजाओ को सती के सम्बन्ध म जो निर्देश दिये थ वे निर्देश धमकी के रूप म थे और सकारात्मक आदश के रूप म मान्य थे।

उक्त कानून क परिप्रेक्ष्य म विचार करन पर यह तथ्य सामन आता है कि सती प्रथा के रूप म तो ब्रिटिश शासन म समाप्त हो गई किन्तु धम और परम्परा के रूप म कुछ राज्यो म कुछ जातियो म सती की घटनायें घटित होती रही। आज स्वतन्त्र भारत म यदा कदा सती घटनायें घटित होती रही हैं।

वस्तुत वतमान म जो सती प्रथा कानून बन्द है वह मध्यकालीन समय स चली आ रही प्रथा की जो वस्तुत जौहर के रूप म प्रचलित हुई और भारत म एक सामाजिक कुरीति क रूप म चलती रही। मध्यकालीन युग जब क्षत्रिय राजाओं

पर अन्य आततायियो द्वारा आक्रमण होता था तो योद्धा युद्ध में जाने के पूर्व निर्देश दे देते थे कि यदि वे लौट कर न आयें तो सारी रानियाँ अग्नि में जल कर भस्म हो जायें ताकि विजेता मलेच्छ शासक उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके शील के साथ खिलवाड़ न करें। अलाउद्दीन खिलजी ने चित्तौड पर आक्रमण किया था रानी पदमनी को प्राप्त करने के लिए किन्तु राजा रतनसिंह युद्ध म वीरगति को प्राप्त हुए और रानी पदमनी ने अन्य रानिया के साथ जौहर की ज्वाला म जल कर अपने प्राणो की आहूति दे दी थी जो रानी पद्मनी के सत्व की परीक्षा थी।

इस प्रकार सती रूप म विधवा दहन क्षत्रिय शासक समाज की आवश्यकता थी जिससे कि सुन्दर रानियो की प्राप्ति के लिए किए जाने वाले आक्रमण ब द हो जायें और इस उद्देश्य से किये जाने वाले आक्रमणो के विजेताओ के उद्देश्य की पूर्ति न होने से वे निराश होकर पुन इस कारण आक्रमण न करें। शन -शन यह प्रथा स्त्री के सतीत्व की परीक्षा और मोक्ष प्राप्ति का साधन समझी जाने लगी तथा यह जो एक समय की ऐतिहासिक आवश्यकता धार्मिक अनुष्ठान का रूप हो गई या ग्रहण कर ली गई। यह सत्य है कि भारत म भी सामाजिक परम्परा धम का रूप ले लेने पर जन अन्तर्चेतना से जुड जाती है और इसका पालन न करना अधर्म व पाप की सना मे आता है। यदि धम का अथ समाजशास्त्रियो के विचारो से सहमत होते हुए सामूहिक सामाजिक अन्तर्चेतना माना जाये तो जो भी सामाजिक परम्परा होती है जिनका व्यवहारिक प्रचलन होता है और अपनी सतत सामाजिक व्यवस्था की उपयोगिता के कारण मूल्यो का रूप ग्रहण कर लेती हैं वे उस समाज की धार्मिक आस्थाओ का अग बन जाती है जिनकी पालना पुण्य है और अवहेलना पाप बन जाता है।

हमारी दृष्टि म भी सती प्रथा ऐसी ही ऐतिहासिक आवश्यकता से प्रादुर्भावित सामाजिक परम्परा है जो कि शासक वग की सामाजिक व्यवस्था के जुडन के कारण एक धार्मिक आस्था का रूप ले गई जिसका उद्‌भव केवल मात्र इस उद्देश्य से था कि विजेता आक्रमणकारी हारे हुए राजा की महारानी व नारियो की प्रतिष्ठा के साथ खिलवाड न कर सकें इनको जीत की वस्तु तो समझ कर नारी समुदाय का अपमान न कर सकें। वस्तुत यह प्रथा क्षत्रिय समाज की आन बान व नारी समाज के सम्मान की रक्षाथ एक आवश्यकता थी ताकि मलेच्छ आततायियो से अपने स्वत्व की रक्षा की जा सके ताकि युद्ध मे जीत के मद म मदाध व्यक्ति हारे हुए योद्धाओ की विधवाओ की दुर्गति न कर सकें नारी जाति की प्रतिष्ठा को नग्न न कर सकें और नारी का स्वत्व कामुक भेडियो का भोजन न बन सके।

इस ऐतिहासिक आवश्यकता से उपजी सती प्रथा जब जन सामान्य की पालना का विषय बनने लगी और पति के साथ चिर सुहाग व अखण्ड सौभाग्यवती

धार्मिक भावना से जोड़ी जाकर भोली-भाली विधवाओं को विवश कर आग में जला कर पति की चिता में ही जला कर मारा जाने लगा तो इस कुप्रथा को, विवश होकर की जाने वाली हत्या विधि को कानून 1829 में ब्रिटिश काल में बन्द कर दिया गया। इसके साथ साथ विधवा विवाह को एक आवश्यक सामाजिक आवश्यकता मानी जाकर प्रोत्साहन दिया जाने लगा। बाल-विवाह जैसी कुरीति को बन्द किये जाने के लिए कानून बनाये जाये, जिसका एक कारण यह भी था कि बाल्यावस्था में विवाह बन्धन में बंधी बाला शैशवावस्था में ही विधवा हो जाती थी तो उसके पति की मृत्योपरान्त या तो उसे उसके पति के शव के साथ सती कर दिया जाता था या फिर आजीवन पुनर्विवाह न कर यन्त्रणामय पाशविक जीवन व्यतीत करने के लिए विवश किया जाता रहा था।

भारत में सती प्रथा का प्रचलन सामन्ती शासकीय ऐतिहासिक आवश्यकता थी और उसका अन्य कोई औचित्य नहीं दिखाई देता। धर्म शास्त्र का कोई उत्तर विश्वास के तर्क में भी उपलब्ध नहीं होता अन्यथा सामाजिक सांस्कृतिक धार्मिक व मनोवैज्ञानिक आधार पर सती प्रथा अर्थात् विधवा दहन का उल्लेख नहीं है।

इस सब के बावजूद भी स्त्रियां अपने मृत पति के शव के साथ जल कर मरती है अर्थात् प्रचलित भाषा में अपने सत्व (सतीत्व) की परीक्षा देती है और करोड़ों वर्षों तक स्वर्ग में रहने का बीमा कराती है। कानूनन यह प्रथा बंद है। धर्मशास्त्रों के माध्यम से इसका प्रचार नहीं। फिर भी यह सब क्यों होता है? एक ही दृष्टान्त क्या होता है?

प्रश्न बहुत ही गम्भीर है और संसार भी है इसका उत्तर हमारी शताब्दियों पुरानी मानसिकता से जुड़ा है जो आधुनिक युग में भी दृष्टिकोण का भेद पूर्ण प्रश्न न होकर वर्षों के चिन्तन के आधार पर निर्भर है। आवरण चाहे बदले किन्तु सदियों की यात्रा तय कर आधुनिक युग में प्रविष्ट मानव की जड़ मानसिकता नहीं बदले, तो फिर क्या परिवर्तन है? क्या बदलाव है? क्या अलगाव है? प्राचीनता से विरोधाभास व वैचारिक टकराव को आधुनिकता नहीं कहा जा सकता। आधुनिकता का अर्थ है—सदियों पुराने दृष्टिकोण में मानवीय मूल्यों के परिपेक्ष्य में बदलाव विचार पद्धति में परिवर्तन व्यावहारिक जीवन में क्रियान्वयन।

नारी के सन्दर्भ में और विशेषकर भारतीय नारी के सन्दर्भ में यदि यह कहा जाय तो अतिशयोक्ति नहीं है कि आज भी पुरुष प्रस्तर युग का अवशेष है, जो आज भी नारी को दासी मानता है और नारी बिना पुरुष के अपने अस्तित्व की कल्पना मात्र नहीं कर सकती। वह जन्मजात व जीवनपर्यन्त पुरुष आश्रिता है,

सुरक्षा चाहता है। शशवकाल मे पिता युवावस्था म पति वृद्धावस्था मे पुत्र को स्त्री का सुरक्षा भार सम्भालना होता है। भारतीय नारी का पति उसका परमेश्वर है यही प्रशिक्षण वह ज म से लेकर मृत्यु पूव तक पाती है जिसकी पालना ही नारी धम है। बाल्यकाल से ही नारी को यह बताया जाता है कि युवा होने पर पति नामक पुरुष का सुपुद कर दी जायेगी जो उसका शेष जीवन का मृत्यु पयन्त पूण स्वामी होगा। बाल्यकाल से ही हर पल कन्या को यह अहसास कराया जाता है कि स्त्री एक पराया धन है। पिता के पास धरोहर रूप मे है जिसको वह पति रूपी प्राणी के सुपुद कर अपन कत्तव्य की इतिश्री मानता है। स्त्री के अवचेतन व अद्ध चेतन तथा चेतन मस्तिष्क म यह भावना बठ जाती है कि पति ही उसका सवस्व है जीवनधार कणधार है सरक्षक है उपभोग कर्त्ता है उसको पति के लिए ही जीना है चाहे पति उसके लिए नही जीये पति के पुष्पो से भी पत्नी को प्यार करना होता है उसके काटो से भी प्यार करना होता है। पति का दिया हुआ गम भी पत्नी को प्यारा होता है क्योकि पति की दी हुई चीज ह। पति के बिना जीवन अधूरा ह पति की वह अर्धांगिनी है जिसके बिना पत्नी का सारा ससार सूना है उसकी उमगें सूनी है उसकी माग सूनी ह उसके हाथ सूने हैं उसकी पायल सूनी ह।

पत्नी के लिए पति की मृत्यु जीवन का सबसे बडा अभिशाप है जो वज्रपात के समान ह उल्लासित जीवन वाटिका तुषारापात के समान है। भारतीय समाज मे विधवा का जीवन अभिशप्त जीवन ह। रूढिगत विचारधारा के अ तगत पतिविहीन निराश्रित विधवा को त्रासदी भोगनी पडती ह जीना पडता ह उपेक्षित और उल्लासहीन कष्टमय जीवन, जिसमे हर पल एक पहाड दिखाई देता ह। शरीर चेतनामय रहता है किन्तु मन मृतप्राय होता ह जहा न सुख के क्षण हैं न होठो पर हसी तैरती ह और न हृदय मे उल्लास ही रहता ह अ दर मन मे शू य बाहर शू य तिमिरतम मय जीवन श्वासोच्छ्वास की क्रिया चलती रहती ह। इस प्रकार भारतीय विधवा नारी एक जीता जागता शव ह जिसम न जीवन स्प दन ह न भविष्य की आशा किरण न उषा की लाली।

हो सकता ह ऐसे घोर उपेक्षित आश्रित व निसहाय जीवन जीने की कल्पना से कुछ महिलायें पति की मृत्यु पर इस मन स्थिति म आ जायें कि पति बिना प्रतिपल जल जल कर घुट घुट कर मरने से तो अच्छा ह कि पति के साथ ही जल कर मर जायें ताकि परलोक मे भी स्वग मे करोडो वष रहने का आन द मिल सके।

कितनी दुखद है आवरण की त्रासदी! एक ओर तो पुरुष प्रधान समाज महिलाओ को समान अधिकार देने की बात करता है किन्तु दूसरी ओर हम

के प्रति जड मानसिकता को विरासत मे लेकर चलते हैं। आवरणमय विचारों का प्रचार तो बहुत होता है किन्तु वास्तविकता यह है कि पुरुष अपने पुरुषत्व की परिणिति ही इसमे मानता है कि वह नारी पर शासन करे, उसको शासित करे। हम चाहे कानूनों म सशोधन कर सविधान मे बराबरी के अनुच्छेद जोड कर नारी उत्थान का नाटक अवश्य करत हैं किन्तु हमारी वास्तविक दृष्टि अपरिवर्तित ही रहती है हमारे सस्कार यथ वत् चले आते हैं। हम एक ओर तो बदलती व्यवस्था से नवोदित सामाजिक चेतना का भी स्वीकार करना चाहते हैं किन्तु दूसरी ओर हम अपने परम्परागत सस्कारमय विचारो को भी नही त्यजना चाहते हैं जिनके अन्तगत नारी को वीरभोग्यावसुन्धरा माना जाता है। कानून की अपनी सीमा है वह परम्परागत सस्कारो को सुप्त जडचेतनाओ को नही बदल सकता है वह परिवतन लाना चाहता है किन्तु कानून की पालना भी एकपक्षीय होती है विधिक विधान का भार भी नारी को ही उठाना पडता है। कानून भी इस पर ही लागू होते है और बदलाव का फल भी उसे ही भोगना पडता है। यदि ऐसी सामाजिक व्यवस्था नारी के प्राणो की आहुती हन को विवश करती है तो उसमें विवश नारी का क्या दोष है।

इस विवश नारी का दहन क्यो किया जाता रहा है जबकि सती प्रथा सामाजिक आवश्यकता है जब यह सार्वभौमिक मान्यता के आधार पर टिकी हुई सामाजिक प्रथा नही है जब यह भारतीय सामाजिक जीवन पद्धति के मूल में निहित नही है जब सती प्रथा सामाजिक तन्त्र के ताने बाने म बुना एक दृढ परम्परा नही है तो फिर भारतीय समाज की विभिन्न जातियो म सस्कारगत रूप मे समाज रूप से विद्यमान क्यो है ?

(1) आर्थिक पक्ष विषय पर विचार करने के सन्दर्भ म यह स्पष्ट करना होगा कि सती के दो प्रकार है—एक तो वह घटना जो कि वर्षों में कभी-कभी घटित होती है और दूसरा महामारी स्वरूपा। राजा राममोहन राय ने सामाजिक बुराई के रूप म जो सती प्रथा थी उसको ही समाप्त करने हतु प्रयत्न किये थे। अत हमें समस्या पर घटना के रूप म सामाजिक प्रथा के रूप म विचार करना होगा। इस सन्दर्भ मे सती प्रथा जो भारतीय समाज म एक महामारी के रूप म उठी उसके ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य म तीन काल हैं—(1) प्रथम काल तो वह जबकि दक्षिण में विजयनगर साम्राज्य का अन्त हो रहा था (2) जबकि राजपूती राज्य दर मध्ययुग म आक्रमण हो रहे थे (3) जबकि 18वी शताब्दी के अन्त म 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ म ब्रिटिश शासन का विस्तार हो रहा था। इस अन्तिम काल से ही वतमान सती घटना का सम्बन्ध है जिसके परिप्रेक्ष्य म ही वतमान में इस घटना का जो व्यापक प्रभाव पड़ा है, उसके विविध पक्ष पर विचार आवश्यक है।

यह घटना कही महामारी का रूप न ले ले इसी सन्दभ मे इस पुनरावृत्ति को रोकने हेतु सामाजिक मूल्या मानदण्डो के सन्दभ म विचार आवश्यक है ।

जब हम 18वी शताब्दी व 19वी शताब्दी के प्रारम्भ मे सती प्रथा पर दृष्टिपात करते हैं तो यह जानकारी मिलती है कि पूव भारत मे सती प्रथा उच्च जाति वग मे प्रचलित थी । यह जाति समूह जो कि सम्पूण जनसख्या का मात्र 10 प्रतिशत ही था आध से अधिक सती घटनाओ मे योगदान देता था । अन्य योगदान उन विकासोन्मुख जातियो का था जो कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विस्तार का लाभ उठा रही थी । द्वितीय सती नगरीय क्षेत्र मे भी अधिक प्रचलित थी जिन पर पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव पडता जा रहा था । उस समय सती प्रथा की आस पास क्षेत्र मे महामारी इतनी तेजी से फली कि मात्र कलकत्ता शहर मे 4 वष के अन्दर 1500 सती की घटनायें घटित हुईं जो कि कुल अभिलिखित पजीकृत प्रकरणो का 2/3 भाग था इसके बावजूद सती घटनायें वहा भी अधिक थी जो क्षेत्र ब्रिटिश साम्राज्य के राजनतिक व आर्थिक प्रभाव मे आ गये थे ।

तृतीय सती की घटना सम्बन्धी प्रकरणो मे सती घटनाओ का आधार ब्रिटिश राज्य के प्रभाव से भारतीय समाज मे बढता गया । विचारका के अनुसार तो कुछ उच्च जाति के बगाली जो ब्रिटिश प्रभाव से भारतीय परम्पराओ से दूर हो गये थे उनके द्वारा सती प्रथा को सम्पत्ति विवाद को सुलझाने का एक माध्यम ही बना लिया गया और यह दृश्य इच्छा प्रेरित था । विधवा की मृत्यु के पश्चात सम्पत्ति के सारे अधिकार परिवार जनो का ही मिल जाते थे ।

इस प्रकार सती प्रथा ब्रिटिश साम्राज्य की देन थी न कि हिन्दूवाद की । यद्यपि हिन्दू परम्पराए भी इसके साथ थाडी बहुत जुडी हुई थीं । सती प्रथा के बारे म यही विचार तात्कालिक गवर्नर जनरल वारेन हैस्टिंग्स (1813–1823) के ईसाई मिशनरी जसे जोशुआ माशमन व राजा राममोहन राय के भी थे जिनके द्वारा सती प्रथा के आधुनिक सम्बन्ध को स्वीकार किया गया । यह भी स्वीकार किया जाना सही है कि यद्यपि सती प्रथा का सम्बन्ध हिन्दू परम्पराओ से है तथापि इस प्रथा का महामारी रूप तात्कालिक समाज की देन है जो कि ब्रिटिश राज्य के प्रभाव मे अपनी वास्तविक परम्पराओ को खो रहा था । उस समय आर्थिक मानदड समाज पोषित अध्यात्मिक मूल्य व परम्पराओ पर हावी हो रहे थे । समाज के पूजीपति वग ने मानवीय प्रेम व सद्भावना की बलि देकर अपने आर्थिक स्वाथ की पूर्ति हेतु सती प्रथा का सहारा लिया जो उनके पाप को धो नही सकता । आज भी सती की घटना के पीछे यह ता भावना स्पष्ट रूप से परिलक्षित है कि जिस परिवार की महिला सती होती है उस परिवार की महिमा बढती है सामाजिक क्षेत्र म

उनका मान बढ़ता है जिससे उनकी आर्थिक साख बढ़ती है। यदि सती के यादगार मे मन्दिर का निर्माण हो या मेला लगे तो उस परिवार को आर्थिक लाभ भी प्राप्त हो सकता है। यद्यपि सीधे रूप से आर्थिक उत्थान की भावना न रहे तथापि परोक्ष रूप मे मान-सम्मान की वृद्धि परिवार के साख की वृद्धि की भावना निहित होती है अन्यथा आज के वैज्ञानिक प्रबुद्ध समाज मे सती की भावना रखने वाली व निश्चय करने वाली महिलाओ को जीवन जीने के महत्त्व व मूल्य के बारे म समझाने का प्रयत्न क्यो नही किया जाता ? पति की मृत्यु से उत्पन्न शून्य मे जो निराशा की भावना घनीभूत हो जाती है उसमे आत्महत्या या मृत्युवरण की बात सोचा जाती है उस समय उस महिला को सही सलाह क्यो नही दी जाती या मार्ग दर्शन क्यो नही किया जाता ? दिवराला सती काण्ड इसका एक उदाहरण है। इससे निष्कर्ष यह निकलता है कि सती के परिवार को जो प्रतिष्ठा मिलती है वह भावना प्रोत्साहन के रूप म विद्यमान रहती है।

(ii) दार्शनिक पक्ष—सती धर्म के सन्दर्भ मे सती प्रथा की महिमा चाहे आनन्दकुमार स्वामी द्वारा गाई जाती हो या फिर पुरी के शंकराचार्य द्वारा सती प्रथा का औचित्य बताया जाता है किन्तु यह सत्य है कि कलयुग म सती धर्म की सापेक्षता का औचित्य सती काण्ड जैसी घटनाओ से सिद्ध नही किया जा सकता। इस आधुनिक युग मे सती धर्म की मान्यता संस्कारगत रूप से पति के साथ ही प्राण त्याग कर साथ ही चिता मे जल कर महाप्रयाण करना है और जो ही एकमात्र मुक्ति और मोक्ष का आधार है तो इस धारणा को परम्परा रूप म स्वीकार नही किया जा सकता। तार्किक रूप से इसके अतिरिक्त मोक्ष का कोई अन्य विकल्प ही नही है तो फिर शेष जो भी विधवाए हैं क्या उनकी मुक्ति सम्भव नही ? क्या उनके द्वारा पति शव के साथ आत्म-दहन न कर ऐसा पाप किया गया है कि उनकी आत्मा को मुक्ति नही मिलेगी ? आज की वैज्ञानिक विवेकशील यथार्थिक परम्परा इस दार्शनिक तर्क को मान्यता नहीं देती। यदि यह अन्तिम क्रिया ही मोक्ष का आधार है तो फिर क्यो नही आजीवन व्यभिचार कर पति की मृत्यु पर अग्निदाह म शरीर उत्सर्ग कर दिया जाये। सती प्रथा के सदर्भ म वर्तमान यथार्थिक कसौटी पर यह तर्क सही नही उतरता और आधुनिक भारत इस कृत्य को कायरता मानता है जीवन के यथार्थ से घबराकर मृत्यु का वरण करना पाप माना जाता है जिस जीवन की रचना का अधिकार आपको नही है उस जीवन को समाप्त करने का आपको क्या अधिकार है ? क्या यह महापाप नही है ? यह आत्म हत्या है जो कि सबके सामने धुन म की जाती है। यदि पति के प्रति इतना प्रेम है तो आस्था के दीप जलाये रखे जायें स्नेह सिक्त बाती मधुर मधुर जलती रहे और पति विहीन जीवन म व्याप्त तिमिर को तिरोहित करती जायें। मार्गों के महत्

भी तो जिया जा सकता ह मधुर स्मृतियाँ स्मरण करने पर कितनी सुखदायी होती हैं। पति सङ्ग के बिताये गये आनन्दमय क्षणो की स्मृति मे शेप जीवन के दुखी दिन भी बिताये जा सकते हैं। मधुर मधुर दीपक की तरह जलती हुई। विधवा महिला देवी के रूप मे ही नही अपितु महादेवी के रूप मे जीवन जी सकती ह।

इस क्रम मे सती ' का एक और अर्थ भी उभर कर आया है। वह यह है कि पति के आकस्मिक निधन का समाचार मिलने ही जो पत्नी प्राण त्याग देती है उसको भी सती की सज्ञा दी जाती है क्योकि यह मान्यता है कि पति का बिछोह उसको सहन नहीं हो सकता और पति से उसका इतना आत्मिक लगाव था कि वह भी साथ ही पार्थिव शरीर को छोड कर साथ चल दी और ऐसे पति पत्नियो का साथ ही दाह सस्कार किया जाता है इस भावना के अधीन कि जिनको मृत्यु भी अलग न कर सकी उनको अलग दाहसस्कार अलग अलग करने का समाज को क्या अधिकार है ?

इस क्रम मे उन पतियो/प्रेमियो का भी नाम लिया जाता है जो पत्नि/प्रेमिका के आकस्मिक निधन के समाचार को सुन कर ही तत्काल प्राण त्याग देते हैं।

उक्त के सदर्भ मे प्रेमातिरेकता इसका कारण हो सकता है किन्तु आकस्मिक निधन की सूचना से लगा आघात हृदय सहन नही कर सकता और ऐसे व्यक्ति मृत्यु गति को प्राप्त हो जाते हैं तो यह आकस्मिक मृत्यु की श्रेणी में ही आने वाली घटनाए हो सकती हैं।

इस बिन्दु को स्पष्ट करने के लिए लॉर्ड टैनीसन की प्रसिद्ध कविता होम दे ब्रोट या वारियर डेड ' का उल्लेख करना होगा। जब उस महिला के योद्धा पति के शव को लाया गया तो उस दृश्य को देखते ही पत्नी की चेतना शून्य हो गई। बहिन हिली न डुली। वह एक पलक अपने पति के मृत शरीर को निहारती रही। यदि वह नहीं रोती है तो आकस्मिक आघात के फलस्वरूप उसकी मृत्यु हो सकती है उसको रुलाने के अनेक उपाय किये गये। उसके पति की प्रशस्ति का बखान किया गया उसके प्रेम आख्यानो का वर्णन किया गया। जब किसी का प्रभाव नही पडता तो एक बूढी औरत ने महिला के बच्चो को उसकी गोद मे रख दिया तो वह चीत्कार कर रो पडी मेरे बच्चे मैं तेरे लिए जीवित रहूगी।'

आधुनिक युग म विधवा को जीवित रहना है अपने पति के सम्मान के लिए अपने पति की सन्तान के लिए। मृत्यु का वरण कायरता है यथार्थ का सामना करना पतिधर्म की पालना है। पतिधर्म निष्ठा की परीक्षा तो पतिविहीन होन पर ही

है पति के साथ छाया की तरह चलने पर नहीं पति की अर्थी उठने पर उसके सहज उत्तरदायित्व की पालना का भार ससम्मान लेकर चले वही सही पतिधर्म परायणता है पतिधर्म निर्वाह है।

(iii) समाजशास्त्रीय पक्ष—श्री आशिष नन्दी ने अपने लेख दी साश्यो लाजी आफ सती' (इण्डियन एक्सप्रेस दिनांक 4 अक्टूबर) में अपनी मान्यता अभिव्यक्त की है जिसके अनुसार आधुनिक व्यक्ति सति की घटना को सार्वजनिक आत्महत्या" मानता है जो कि जन मुनि श्री बद्री प्रसाद द्वारा हरियाणा के छोटे से गांव में सथारा के नाम किये जा रहे प्राण उत्सर्ग या आचार्य विनोबा भावे द्वारा अन्न जल व औषधि त्याग कर किये गये मृत्यु वरण से भिन्न नही है जिनको विधिक दृष्टि से अंधविश्वास से प्रेरित आत्म हत्या की सज्ञा दी जा सकती है। प्रबुद्ध आधुनिक समाज द्वारा इन घटनाओं पर कोई उत्तेजना या जन चेतना नही दिखाई और न कोई आवाज उठाई किन्तु जब शक्तिहीन दीन हीन अशिक्षित ग्रामीण भारतीय समाज अज्ञानता या अंध विश्वासस्वरूप जब कोई ऐसा कृत्य कर बैठता है तो सारा आधुनिक समाज आलोचना का विषय बन जाता है। बहुमख्यक भारतीय ग्रामीण समाज के अंध विश्वास से उद्भूत आत्मघाती प्रवृत्तिया जो प्रबुद्ध भारतीय समाज के लिए आलोचना या प्रतिक्रिया का विषय बनता है और जिसका उदाहरण राजस्थान के सीकर जिले के दिवराला गाव म 4 सितम्बर को होने वाली रूपकवर सती घटना के रूप मे देखने को मिला है और जा ज्वलन्त समस्या के रूप मे बहुचर्चित रहा। उक्त विचार प्रश्न चिन्हात्मक हैं व चुनौतीपूर्ण भी।

आज की भारतीय सामाजिक नतिकता दोराहे पर खडी है सामाजिक सबध एक ओर तो अपने परम्परागत सास्कृतिक मूल्यो को पोषित कर साथ लेकर चलना चाहते हैं दूसरी ओर आज पाश्चात्य विचारो से परिपूर्ण बाजारू नतिकता के प्रहारो को भी झेलते हुए चलना होता है। आज की भारतीय आधुनिकता न तो पूर्णतया परम्परागत भारतीय ही है और न वर्तमान पाश्चात्य सस्कृति मूल्य पोषक पूर्ण आधुनिकता। वर्तमान मे जो आधुनिक अर्थव्यवस्था का प्रादुर्भाव हुआ है और जो पाश्चात्य विचारो पर आधारित है उससे भारतीय सामाजिक पारम्परिक मूल्यो का विघटन हुआ है। आज ही राजनीतिक अर्थव्यवस्था का एकमात्र उद्देश्य भौतिक सुख-साधन जुटाना है। पारम्परिक सास्कृतिक मूल्य जो जीवन जीने के लिए आवश्यक हैं जो पारम्परिक सामाजिक सबधो के पोषक हैं उनकी उपेक्षा की जा रही है। आज राज्य ही एकमात्र पारस्परिक सामूहिक सामाजिक सबधों का निर्धारक बन गया है। आर्थिकता, सास्कृतिक सामाजिकता पर हावी है। प्रत्येक सामाजिक सबध

की व्याख्या या सामाजिक समस्या का समाधान राजनीतिक आर्थिक नीति के आधार पर होता है। भारतीय सास्कृतिक मूल्या के सदम म नही जो मूल्य परमार्थ के अमृत रस से परितोषित होते हैं।

कुछ भी हो सती जसी घटनाएँ हमारी रुग्ण भारतीय परम्पराओं की अभिव्यक्ति हैं। ये रुग्ण परम्पराएँ हमारे सबके आस पास बिखरी पडी है जिनके निवारण के लिए समाज व हमारी सरकार को बहुत कुछ करना पडेगा। यदि दिवराला जस सुदूर गाँवा म प्रचलित अधविश्वास तापित परम्पराओं को निवारण के लिए प्रयत्न किय जाते तो सम्भवत सती जसी घटनाओं की पुनरावृत्ति न हो।

सती के सदम मे सथारा के रूप म जैन मुनि श्री बद्री प्रसाद के प्राण त्याग व आचाय विनोबा भावे के प्राणोत्सग के प्रसग आये हैं जिनको स्पष्ट करना भी उचित होगा। राजस्थान के नगर कोटा मे चातुर्मास कर रहे जन मुनि आचाय समद सागर ने दिगम्बर जन मदिर मे दिनाक 17 अक्टूबर का एक सभा का सम्बोधित करत हुए सती व सथारा मे अतर स्पष्ट किया। सती प्रथा का विरोध करते हुए उन्होंने व्यक्त किया कि जन धम म सलेखना सथारा आत्महत्या नही है जब कि सती होना आत्महत्या है। आत्महत्या म उन्माद के वशीभूत हो मानव अपने प्राणों का त्याग कर गुनाह करता है जबकि सलेखना मे वह मानव जीवन की ऊचाइयो को प्राप्त करता ह (दनिक नवज्योति दिनाक 15-10-87)।

जहा तक वधिक दृष्टि से सती प्रथा के अतगत किये गये आत्मदहन व अन्न-जल त्याग कर किये गये मृत्यु वरण का प्रश्न है दोनों ही प्रक्रियाओं मे मृत्युवरण तो होता ह। व्यक्ति स्वय ही प्राणो का उत्सग करता है यह अस्वाभाविक मृत्यु है, चाहे अप्रत्याशित नही है। फिर भी इन दोनो विधि से मृत्युवरण मे अतर अवश्य है सती प्रथम म मृत्युवरण सकारात्मक है जबकि आचाय विनोबा भाव व जैन मुनि श्री बद्री प्रसाद के सदम मे मृत्युवरण नकारात्मक है। सती होने पर विधवा चिता मे चलकर प्राण आहुति देती है जो सकारात्मक कृत्य है जबकि जन मुनि सथारा मे व आचाय, विनोबा भावे अन्न जल व औषधि त्याग कर शरीर से मुक्ति पाने व आत्मा को कष्ट से बचाने के लिए आत्मोत्सग किया है। अत कानून की दृष्टि मे भी पूव कृत्य सकारात्मक कृत्य द्वारा किये जाने से आत्महत्या का अपराध माना जायेगा। जबकि नकारात्मक विधि से किया गया मृत्युवरण आत्महत्या की सज्ञा मे नही आता क्योंकि दोनो प्रकार के कृत्यो के उद्देश्यो मे अतर है।

रूस व अन्य देशो मे दयावश वध (मर्सी किलिंग) को सरकार की मान्यता बताई गई है जिस नीति के अन्तर्गत अक्षम रुग्ण विकारयुक्त अनावश्यक रूप से

व्यक्ति का जीवित रखने मे ता अच्छा है कि उसका कष्टो से मुक्ति दिलाने हेतु दया वश उसके लिए ऐसे उपाय किये जायें कि वह प्राण त्याग दे। इसी सन्दर्भ म जन मुनि व आचाय विनोवा भावे द्वारा शरीर त्याग प्रकरण पूर्णतया आत्महत्या के रूप मे नही माने जा सकते। दूसरा अन्तर यह है कि सती प्रथा का दृश्य सामाजिक हिंसा का दृश्य उत्पन्न करता है और इस प्रकार सामाजिक हिंसा को प्रोत्साहन मिलता है जिससे सामाजिक व्यवस्था सम्बन्धी मूल्यो पर विपरीत प्रभाव पडता है। यदि सभी स्त्रिया अपने पतियो के शव के साथ आत्मदाह कर सती होने लगी तो फिर उस दम्पत्ति की सन्तान व अन्य उत्तरदायित्व भार कौन वहन करेगा? सामाजिक व्यवस्था कसे बनी रहेगी? जो समाज नारी व पुरुष की समानता की भावना का पोषक है सरक्षक है, वह अपनी व्यवस्था सम्बन्धी नीति के विरुद्ध नारी जाति के उत्पीडन की स्वीकृति सामाजिक हिंसा के माध्यम से कसे द सकता है जिसकी जडें धार्मिक मदान्धता या अन्धविश्वास म जमी हुई मिल सकती है किन्तु मानव धर्म के पोषक मूल्यात्मक तात्विक धारणाओ व तत्वो से जिसका दूर का भी सम्बन्ध नही है।

सती प्रथा के समाजशास्त्रीय पक्ष मे निष्कर्षत यह कहा जा सकता है कि सती प्रथा आज के प्रबुद्ध भारतीय समाज म न ता एक सामाजिक आवश्यकता है और न धार्मिक आस्था की प्रतीक न स्वस्थ सामाजिक परम्परा की द्योतक है और न आध्यात्मिक विश्वास की पोषक है। आधुनिक भारतीय सामाजिक तन्त्र मे विधवाओं के दहन के स्थान पर उनका सरक्षण उनके मृत पतियो के प्रति प्रदर्शित सही सम्मान है। सच्चा प्रेम बलिदान चाहता है सुखा का बलिदान सघर्ष का आह्वान सरलता के स्थान पर कठिनता के साथ जीवन जीने का विधि हाथ निमन्त्रण मिलता है तो उसे दविक इच्छा मानकर शिरोधाय करना चाहिए एव शेष जीवन के महा भारत में सामाजिक सच्चाइयो के साथ जीवित रहकर अन्तिम सास तक लडना चाहिए। भारत की ललनाओ को इसी नतिक सदेश पालन की आवश्यकता है। परम्पराओं का पालनार्थ स्वीकार करने के पूर्व उनके औचित्य व सापेक्षता तथा सामाजिक व धार्मिक मान्यताओ की तार्किकता को देखना होगा। नारी को जीवन जीने का मौलिक अधिकार है। पति के साथ जीवन जीने का अधिकार है तो पति विहीन भी जीवन जीने का अधिकार है उसको पशुवत बबरतापूर्ण तरीके से मारने का अधिकार किसी का भी नही है। ऐसी मान्यताओ का न धार्मिक आधार है और न आध्यात्मिक मान्यता है। अन्धविश्वास या धार्मिक मदान्धता की आधी म नारी के जीवित रहने का अधिकार उडाकर नही ले जाया जा सकता। प्रशसनीय तो वह सामाजिक व्यवस्था है जो कि विधवा को ससम्मान जीवित रखे वही सतीत्व का सही सम्मान है।

इस सन्दर्भ म मृणाल पाडे के विचार जो सुदर्शना द्विवेदी द्वारा (धर्मयुग—11 अक्टूबर 1987 पृष्ठ 47) प्रस्तुत किये गये उद्धृत करने योग्य हैं— *दरअसल सती*

की परम्परा का धर्म से कुछ लेना-देना नही है इसका वतमान स्वरूप उस काल की देन है जब मुगल आक्रमणो के दौरान योद्धाओ के खेत रहने पर उनके पराजित होने पर शत्रु के हाथा अपनी सभावित दुर्गति की आशका से उनकी स्त्रिया आत्मदाह या जौहर कर लेती थी वह एक विशिष्ट परिस्थिति से जन्मा आत्मोत्सर्ग था पति की पूजी मानकर पत्नी का दाह नही।'

भारतीय समाज की यह एक विचित्र मानसिकता है कि पति न रहे तो उसके साथ स्वय जलकर मरना बडी शूरता और त्याग का उदाहरण मान बठती है जिसके वशीभूत लाखा लोग सती दशन सती स्थल दशन व सती महिमा मण्डन करने प्रसाद पाने व मनोकामना पूर्ण होने की लालसा सजोये बठे रहते हैं। इस मानसिकता के सन्दर्भ मे मृणाल गोर के विचार हैं—

स्त्री की अस्मिता और समान अधिकारो की बात करने वाले इक्कीसवी सदी की ओर बढने का दम भरने वाले समाज मे एक अठारह वर्ष की नवयुवती का पति की चिता पर जल मरना शर्मनाक और क्षोभजनक तो है ही यह कृत्य यह भी रेखाकित करता है कि पति के बिना स्त्री को शून्य मानने वाली विचारधारा आज भी हमारे समाज मे है।'

हमे स्वतन्त्र भारत मे नारी समानता व समता अधिकार के सन्दर्भ मे इस पुरानी विचारधारा व मानसिकता से जूझना होगा, जिसके लिये हमे भागीरथी प्रयत्न कर तपा तपावनी गगा को नारी मुक्ति हेतु पुन धरती पर लाना होगा। सामाजिक कुरीति को मानवीय मूल्यो के सन्दर्भ म दूर करना होगा ऐसी समस्याओ का हल राजनीतिक आवश्यकता व समीकरण के आधार पर न ढूढ कर सामाजिक व्यवस्था व कल्याण के सन्दर्भ म ही तलाश करना होगा जो कि एकमात्र आवश्यकता है।

रूप कुवर सती काण्ड–एक ज्वलन्त विधवा दहन त्रासदी

4 सितम्बर 1987 को दिवराला रूप कुवर सती काण्ड सीकर राजस्थान मे सती प्रथा की इस क्रम मे एक ऐसी घटना है जो कि 18 वर्षीय युवती से सम्बद्ध होने के कारण व ऐसी राजपूत जाति विशेष जिसमे सती प्रथा ऐतिहासिक परम्परा के रूप मे रही थी यह प्रकरण अत्यधिक चर्चित व चिंतनीय हो गया। इस सती काण्ड को माननीय उच्च न्यायालय राजस्थान के महिमा मण्डित वजन आदेश के पश्चात् भी 14 सितम्बर को चुनरी रस्म के रूप म हजारो व्यक्तियो के बीच मनाया गया। इस प्रकरण से सती घटना सम्बन्धी कितने ही धार्मिक सामाजिक राजनीतिक व मनोवैज्ञानिक प्रश्न जुड गये। जन भावना व जन धार्मिक अन्तर्चेतना से

जुड़ा यह सती प्रकरण हिन्दू धार्मिक स्वतन्त्रता व अधिकार से सम्बद्ध हो जाने से एक कानूनी प्रश्न बन गया। दो विचारधाराएं इस प्रश्न से जुड़ गई हैं—एक ओर तो तथाकथित कट्टर धर्मपंथियों जातिगत एतिहासिक प्रतिष्ठा वालों भोले भाले श्रद्धालुओं का पक्ष है तो दूसरी ओर समाज सुधारकों नवीन मानवीय संवेदनशील मूल्यों के समर्थक प्रगतिशील चिन्तकों का पक्ष है। दोनों पक्षों के बीच सत्ता से एक लम्बा युद्ध चलता आया है जिसमें आस्था और सत्ता के द्वन्द्व में भारतीय समाज उलझ कर रह गया है।

रूप कुंवर सती काण्ड सर्वत्र चर्चा का विषय बन गया और अनेकों तर्क-वितर्क परस्पर विरोधी सूचनाओं के घेरे में यह प्रकरण ज्वलन्त समस्या के रूप में उभर कर आया, जिसके सन्दर्भ में राजस्थान सरकार द्वारा सती निरोधक अध्यादेश भी पारित कर दिया और भारत सरकार ने भी सती निरोधक कानून बनाया।

इस प्रश्न के सन्दर्भ में यह विवेचन आवश्यक है कि क्या सती गौरव परम्परा के रूप में रूप कुंवर सती प्रकरण प्रथम घटना है या फिर अन्य घटनाएं भी घटित हुई हैं। राजस्थान में सती परम्पराएं थी और रही हैं। चित्तौड़ में रानी पद्मनी के सती प्रकरण को जौहर की संज्ञा दी जाये तो इसके अलावा भी राजस्थान में सती परम्परा रही है सती श्रद्धा अर्चना व पूजा तथा प्रसाद का विषय रही है। राजस्थान के झुंझुनू नगर में राणी दादी' सती का मन्दिर है जो कि लगभग साढ़े छह सौ वर्ष पूर्व सती हुई थी। राणी सती नारायणी देवी महाजन परिवार की थी और उसी परम्परा में उस परिवार की अन्य महिलाएं भी सती हुई जिनके मण्डप भी मन्दिर में बने हुए हैं।

झुंझुनू जिले के राणी सती मन्दिर के अतिरिक्त अलवर जिले का नारायणी माता का मन्दिर सीकर जिले का सती सावित्री मन्दिर व राणी सती का मन्दिर अजमेर जिले के ग्राम उजार्यो व परेड गांव में, बीकानेर में सुमणी माता का मन्दिर व देव कुण्ड सागर का मन्दिर प्रसिद्ध है किन्तु ऐसा कहा गया है कि जिन स्थानों पर राजपूत महिलाएं अथवा अन्य जाति की महिलाएं सती हो जाती थी उन्हें महासतियां स्थल कहा जाता रहा था। चित्तौड़गढ़ आहड़ उदयपुर जोधपुर तथा बीकानेर में महासतियों के स्थल विशेष उल्लेखनीय बताये गये हैं। मारवाड़ में ढोलाण जी व जसलमेर के जसाल में राणी भटियाणी सती स्थल विशेष उल्लेखनीय हैं। उदयपुर के पास महासतिया स्थल पर महाराणा प्रताप के पुत्र अमरसिंह की 10 रानियां 9 खवासनें तथा 9 सहेलियां सती हुई थी। जोधपुर के पास मण्डोर में पचकुण्ड नाम के स्थल पर अनेक राजाओं के स्मारक बने हुए हैं जहां उनकी रानियां सती हुई थी। बामवाडा के निकट नागवाडा में व कुम्भलगढ़ में मामा देवी

स्मारक आज भी उस युग की सती परम्परा का प्रतीक बताया जाता है। जयपुर मे भी अनेक स्थानो पर सती मदिर तथा राजा महाराजाओ की छत्रियाँ बनी हुई है जहाँ उनकी रानिया सती हुई थी।

ऐसे प्रमाण प्रचुर मात्रा म मिलते है कि राजस्थान म सती प्रथा केवल राजपूत जाति मे ही सीमित नही थी अपितु अन्य जातिया यथा महाजन ब्राह्मण सोणवाल मीणा नाई आदि जातियो म सतिया हुई है। वस्तुत लोक आस्था अ ध भक्ति धार्मिक श्रद्धा अन्धविश्वासो क वशीभूत सती स्मारक मनोकामना पूर्ति के स्थल माने जाने लगे वे सावजनिक श्रद्धा केन्द्र बन गय। किंवदतिया प्रचलित हो गई कि सत' चढने पर ही कोई स्त्री जि दा आग मे जलने की हिम्मत जुटा पाती है। यह दविक चमत्कार की पराकाष्ठा है जो पति एकनिष्ठ धम पालन से जन्म लेती है और इसके फलस्वरूप वह स्त्री दविक शक्तिया प्राप्त कर लती है। वह जिस पानी मे हाथ डालती है वह मेह दी का रूप ले लेता है एव मेह दी के हाथो की छाप दीवारो पर लगाती है जिसमे से इत्र की सुग ध स्वत आन लगती है। ऐसी किंवदतिया हैं कि सती अपने गहनो को चहेते श्रद्धालुओ को बाट देती है। वह सभी के प्रश्नो का उत्तर देती है तथा जिस समय वह चिता पर पति का शव गोद म लेकर बठती है तो चिता मे एकाएक आग प्रकट होती है और वह सभी को आशीर्वाद देती हुई सत मन से प्रसन्नचित्त अग्नि म जलकर लोकधाम म विहार करती है और अखण्ड सौभाग्यवती होती है। ऐसी मान्यता भी है कि सती आत्म दहन से अपने पति और स्वय के पापो से मुक्ति प्राप्त कर लेती है और पति क साथ 350 मिलियन वर्षो तक स्वग मे साथ रहगी। प्रचलित किंवदतिया यह भी हैं कि जो महिला सती अचना करती है उसका सुहाग अमर होता है अर्थात् वह स्त्री पति के पूव ही मृत्यु को प्राप्त होगी। बाझ स्त्रिया सती प्रताप से प्रसूता बन जाती ह दारिद्रय हरण होता है और अन्य सभी प्रकार की मनोकामना पूरी होती हैं। चढावे के रूप मे माँ दुर्गा को जो चढावा चढता है उसी के अनुरूप नार्योचित चढावा चढाया जाता है जिसमे मेहदी चूडी चूडा चुनरी चोटी इत्यादि मुख्य होते हैं। ये सब वस्तुएँ अमर दाम्पत्य प्रेम की प्रतीक मानी जाती हैं जो चिर सुहाग चिन्हो के रूप मे धारण किय जाते हैं। अधिक धनवान पूरी पोशाक जिसम लहगा व पोलका तथा आभूषण भी होते है का चढावा श्रद्धापूवक चढाते हैं। रसोइयाँ बोलत हैं और सामूहिक भोज का आयोजन करते है। सती के चमत्कार से दुधारू पशु नष्ट नही होते प्राकृतिक आपदाओ से वह गाँव सुरक्षित रहता है। दुधारू पशु अधिक दूध देते हैं धन धान्य प्रचुर मात्रा मे पदा होता है। इस प्रकार अन्य कितनी प्रकार की मान्यताए व मत मतान्तर व कहानियाँ प्रचलित हैं जिससे सती महात्म्य गौरव व गरिमा आस्था, अध विश्वास प्रचलित होते चले जाते हैं।

वस्तुत सती महात्म्य का एकमात्र सामाजिक उद्देश्य पत्नियो मे पति धर्म निर्वाह हेतु पति एकनिष्ठा के गुण का वर्धन करना ही रहा होगा और पति निष्ठा विवाहित नारी का सर्वोत्तम चारित्रिक गुण के पोषक के रूप मे समाज मे यौन व्यभिचार को रोकने के माध्यम के रूप मे ही इस प्रकार की सती महिमा पूजा अर्चना प्रचारित की गई हो, किन्तु सती का अर्थ पतिव्रता नारी सत्व धर्म से न लेकर पति शव के साथ अग्नि दहन करने वाली नारी से जोडने पर सती प्रथा जैसी कुरीति ने जन्म लिया है। आज राजस्थान मे सती मन्दिर स्मारक व समाधियाँ हैं प्रतिवर्ष मेले जुडते हैं, ये आयोजन वास्तव मे स्त्रियो मे पति अनुराग पतिनिष्ठा एवं पतिव्रत धर्म के पालन के चमत्कार से अवगत कराकर उनका चारित्रिक रूप से पति के प्रति निष्ठावान बनाने का ही एक शिक्षा माध्यम है। इन मेलो को पति धर्म पालन सन्देश माध्यम के अतिरिक्त अन्य और कुछ भी नही मानना चाहिये और इसी रूप मे कदाचित इनका आयोजन भी किया जाता रहा हो। भारतीय नारी अविवाहित समय से ही पति निष्ठा के प्रति जागरूक रहे ताकि विवाह पूर्व वह यौन दुराचरण से बचने के लिये उसको मानसिक व आध्यात्मिक बल मिलता रहे और विवाहित स्त्रियाँ अपने पतिधर्म एकनिष्ठा पालन के प्रति स्थिर रहे। राणी सती या महासती समाधियां प्रतीक हैं भारतीय नारियो को चारित्रिक गुण सन्देश देने के। यही तो भारतीय समाज की विशेषता है कि नारी एवं पुरुष को समर्पित है जो ही उसका सर्वस्व जीवन पर्यन्त तक है जबकि पाश्चात्य समाज मे विवाह एक समझौता है और पर पुरुष संगम व एक ही जीवन मे कितने पुरुषो से नाता जोडना व तलाक देकर विवाह करना तो एक सामान्य बात है तो पाश्चात्य जीवन को भौतिकवादी अविश्वासी चिन्तायुक्त बनाता रहता है। भारतीय समाज मे परिवार स्थायित्व व संघटन ऐसे ही पति धर्म निष्ठा जैसे गुणो पर टिका है। जैसी भारतीय समाज की परम्परा रही है कि किसी भी सामाजिक व सांस्कृतिक मूल्य को धार्मिक परम्परा पुराण आख्यान या विश्वास से जोड देता है जिससे कि उसकी पालना अक्षुण्ण होती है और फिर साथ मे प्रारम्भ होती है अतिरेक मे अंध विश्वासी पालना अशिक्षित शिक्षाविहीन धार्मिक संस्कार से पोषित धर्मभीरू असुरक्षित मनोवृत्ति वाले समाज मे धार्मिक अंधविश्वास अकथनीय व अलौकिक का लौकिक भय अनर्थ की आशंका से बलवान देवोभव की मनोवृत्ति के कारण अंधानुकरण पूजन अर्चना आदि। यदि धर्म का अर्थ अलौकिक सर्वशक्तिमान शक्ति मे विश्वास व भय से किया जाये तो भारतीय समाज अपने शताब्दीपूर्ण दार्शनिक व धार्मिक परम्पराओ से पोषित मान्यताओ व विचारो से पुष्ट व तुष्ट मनोवृत्ति के कारण धर्म भीरू सहिष्णु समाज है जहा मूषक से लेकर पर्वत अरुण से लेकर वरुण नर से लेकर वानर सभी देव रूप हैं नमनीय हैं वन्दनीय हैं पूजनीय हैं। इसी धार्मिक मनोवृत्ति चिन्तन व आस्था के परिप्रेक्ष्य मे सती स्त्री के प्रति जो विश्वास श्रद्धा,

आस्था उत्पन्न होती है मान्यताए पनपती हैं व पनपाई जाती हैं। जातिगत कुलदेवी व देवता के रूप मे जो कुछ स्वीकार कर लिया जाता है उसी परम्परा मे सती परम्परा भी जोड ली गई है। पार्वती सती थी उनके शकर से अगाध प्रेम के कारण वे महादेवी कहलाई पूजनीया है सती सीता है जो पति धर्म के निवाह के साक्ष्य के रूप म अग्नि परीक्षा भी द गई जगमाता है। हिन्दू धर्म म न केवल देवताओ की ही पूजा होती ह किन्तु साथ म देवियो की भी श्रद्धापूर्वक पूजा होती है। यहा तक कि देवी भक्त स्त्रिया से अधिक पुरुषा को माना गया है। स्त्री को शक्ति पुन्ज माना गया है दविक चमत्कार युक्त स्त्री देवी तुल्या है शक्तिरूपा है।

इस परम्परा क क्रम म ही सती महिमा परम्परा व आस्था को अब तक समझा गया है, जिसके परिप्रेक्ष्य मे ही सती क साथ जो जनअन्तर्चेतना जुडी है, उसके प्रभाव म सती जसे सामाजिक हिंसा के दृश्य को दैवी कृपा से सत चढने या आने के विश्वास से उस स्त्री को स्त्री न मानकर उस क्षण से देवी मान लिया जाता है और वह पूजनीया, वन्दनीया तथा अर्चनीया बना दी जाती है। तत्क्षण व आने वाले समय के लिये वे अपन साहस व भक्ति की प्रतिरूपा मानी जाती ह और अमर हो जाती हैं। वे याद दिलाती हैं कि विवाह एक ही जीवन को बाधने का सस्कार नही अपितु यह दो आत्माओ को निरन्तर चिरबन्धन मे बाधता है इस कारण सती घटना को सामूहिक निदयता न मानकर व महिला के प्रति अन्याय न मानकर कदाचित महिला को पुरुष समाज मे प्रतिष्ठित होन का अवसर माना जाता है जो यह बताता है कि नारी कसे देवी मे बदल सकती है। भारतीय समाज न केवल धमप्राण समाज है अपितु जातिगत मान्यता प्रेरक समाज भी है। यहा पर जातिगत परम्पराओ को ऐतिहासिक सास्कृतिक परिप्रेक्ष्य मे देखा जाता रहा है। भारतीय समाज म व्यक्ति की अपनी कोई पहिचान नही होती वह अपनी पहिचान तलाश करता है अपन धम मे अपनी सस्कृति म अपनी जाति मे, अपनी रूढियो म व अपनी परम्पराओ मे। भारतीय सामाजिक तन्त्र म व्यक्ति अपने परिवेश से अन्त क्रिया अपने व्यक्तित्व के आधार पर नही करता अपितु उसकी पारिवशिक अन्तर्क्रिया उसके समूह के सामाजिक मूल्यो पर निभर करती है इसमे भी जातिगत मूल्य व परम्पराए व्यक्ति के आचरण व चरित्र तथा व्यवहार का निर्धारित व प्रमाणित करती हैं। भारतीय समाज की क्षत्रिय जाति राजकीय व सामन्ती परम्परा म विकसित जाति है जो सामरिक गुणो को अपन सम्पूर्ण जीवन मे महत्त्व देती आई है। आन मान शान के लिये जीवन जीने की जो परम्परागत आस्था है वह अभी भी राजस्थान की राजपूत जाति म परिलक्षित है जहा पर राजपूत राजाओ के राज्य व जागीरो के लिये किये गय युद्धो का अपना इतिहास रहा है। स्वभावत शासक वग व उससे सम्बद्ध सामन्त जन अपनी जाति व सस्कार को अन्य जातिया स श्रेष्ठ मानत हैं और अब भी यही मानत हैं कि वीरता शौय व पौरुष उनकी ही बपौती है ऐतिहासिक

धरोहर है व दविक कृपा है। इसी मानसिकता से जुडी यह श्रेष्ठता की कहानियाँ कहती नही अघाती सामाजिक व्य रहन सहन व पान पान तथा रीति रिवाज के लिये अलग प्रयत्न करती है किन्तु आज वह अतीत मण्डित गरिमा निराश भी है हताश भी। समाजशास्त्रीय भाषा म रूप कु समूह द्वारा एक व्यक्ति की प्रति हिंसा कहा जा सकता है राजपूत जातीय भाषा मे शुद्ध क्षत्रिय रूप कु वर क सती पुण्य के रूप म महिमा मण्डित कर राजपूत जाति का अपनी व सांस्कृतिक परम्पराओ की पहिचान स्थात व साधन के का प्रयत्न किया है। समाचार है कि इस घटना के महिमा जग लगी तलवारो को जग उतारा गया है और सती स्थल तान्त्रिको स कलश क नाम पर नगी तलवारो का पहरा दि पूर्व शौय व राजपूत समर शौय की कहानी कहती पाई है।

इस प्रकार सती रूप कु वर प्रकरण एक ओर तो सा अन्तर्चेतना से जुड गया और दूसरा क्षत्रीय जातिगत ऐ प्रतिष्ठा का भाग बना दिया गया। इस प्रकार सती रूप कु व राजनीतिक विषमता लिये समाजशास्त्रीय व मनोवैज्ञानिक सामूहिक जन चेतना से जुडकर एक मह राष्ट्रीय समस्या क नारी के प्रति मानवीय व्यवहार क परिप्रेक्ष्य म नारी वग क जीवन जीने के स्वतन्त्र अधिकार के अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण दान को चुनौती देता प्रतीत हुआ। वग विशेष द्वारा जिसका नारी महात्म्य की प्रतीक समझी गई है किन्तु साथ म अन्य के प्रति नारा पशानुविक अत्याचार का प्रतीक भी मानी जा र जन चेतना के साथ म रूप कवर आई है।

रूप कु वर राजपूत जाति की 19 वर्षीय जीवन भी कुछ ही दिनो का रहा। [illegible] हुई। वह स्कूल गयी हुई था किन्तु [illegible] दिया गया अत: कि मृत्यु के कारण [illegible] हेतु [illegible] की [illegible] उसके [illegible] [illegible] [illegible] जीवन के प्रारम्भ म ही [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] निराशा की [illegible] [illegible]

सिमट कर अन्तमन म जीवन लीला समाप्त करने के लिये व्यक्ति को उद्वेलित कर देता है। ऐसे कुछ अनुत्तरित प्रश्न हैं। मनोवैज्ञानिक डॉ सिन्हा के अनुसार कोई भी व्यक्ति जो कि गम्भीर निराशा से पीडित है वह आत्म हत्या प्रवति का पुज बन जाता है और जब वह आत्महत्या करता है तो उसका किसी प्रकार का दद महसूस नही होता है। पेनीसिलवेनिया विश्वविद्यालय के प्रोफेसर मनोचिकित्सक एरोन बेक न निराशा की परिभाषा करते हुए कहा है कि घोर निराशा की स्थिति घोर हताशा व निराशा की मिली-जुली स्थिति है।

मनोवैज्ञानिको के अनुसार पुरुषो की अपेक्षा महिलायें अधिक धार्मिक प्रवृत्ति वाली होती हैं। इसका कारण यह है कि वाह्य जगत से उनका सम्पर्क बहुत ही सीमित होता है जिससे उनका वचारिक एव तार्किक विकास समुचित रूप से नही हो पाता है। इसके साथ साथ महिलाओ मे हिस्ट्रीया शब्द की व्युत्पत्ति हिस्टीरन शब्द से होती है जिसका अर्थ है गर्भाशय यूटरस"। डॉ० सिन्हा के अनुसार कुछ ग्रन्थिगत स्राव के कारण महिलाओ मे हिस्ट्रिया के लक्षण अधिक रहते हैं और हिस्ट्रिया का सीधा सम्बन्ध सुझाव सम्बन्धी प्रवृत्ति है जिसके अनुसार जो कुछ भी सुझाया जाये वह मान लेती है। इसी के कारण दुःख मे महिलाओ मे विलाप करने की प्रवृत्ति है। अत हिस्ट्रीक स्थिति के उत्पन्न होन पर रूप कुवर को सती होने का सुझाव दिया गया हो और विलापमय वातावरण मे इस सुझाव का गहरा प्रभाव उस पर पडा हो और मानसिकता बन गई हो जिसके वशीभूत सती कृत्य किया गया हो किन्तु अब तक जो स्थिति उभर कर आयी है उसम विवशता व अनिच्छा ही प्रकट हुई है।

ये सभी प्रश्न हैं—ये सभी उत्तर हैं—सभी सम्भावित हैं जो सम्भावनाओ के आधार पर हैं। विधिक स्थिति क्या उभर कर आती है। सत्ता और भ्रमित आस्था किस प्रकार कानूनी बन्धन मे बधी अपनी स्थितियाँ स्पष्ट करती है यह तो भविष्य बतायेगा किन्तु भारत की जनता को याद दिलाना होगा कि नारी पूजनीया है, वन्दनीया है, दहनीया नहीं, रक्षिता है, असुरक्षिता नहीं। सती के नाम पर विधवा दहन निन्दनीय है। यह अपराध है। सती प्रथा म सन् 1829 मे समाप्ति सम्बन्धी कानून लागू होने पर राजा राममोहन राय ने भारत के तात्कालिक गवनर जनरल को सवप्रथम पत्र लिखकर आभार प्रकट करत हुए लिखा था कि सती प्रथा निरोधक कानून बनाकर भारतीय हिन्दू समुदाय पर एक (सवकालिक) चिरकालीन उपकार किया है। क्या इस उपकार का भाव सती महिमा मण्डन म प्रकट हो? कदापि नहीं। क्या ही अच्छा होता यदि ब्रिटिश कालीन न्यायाधीशो के उद्गारो का आदर स्वतन्त्र भारत मे होता जो कि 1928 म सम्मति के सामने फसला सुनाते हुए चीफ जस्टिस टेरेल और जस्टिस एडमी ने कहा था— यह हमारा फसला है कि एक तो हम

धरोहर है व दविक कृपा है। इसी मानसिकता से जुडी यह जाति आज भी अपनी श्रेष्ठता की कहानियां कहती नही अघाती सामाजिक व्यवस्था म अपने विशिष्ट रहन सहन व खान पान तथा रीति रिवाज के लिये अलग स्थान बनाये रखने का प्रयत्न करती है किन्तु आज वह अतीत मण्डित गरिमा न निभने से यह जाति निराश भी है हताश भी। समाजशास्त्रीय भाषा मे रूप कु वर सती काण्ड को चाहे समूह द्वारा एक व्यक्ति की प्रति हिंसा कहा जा सकता है जो सही भी है किन्तु राजपूत जातीय भाषा मे कुछ क्षत्रिय रूप कु वर के सती कृत्य को एक साहसिक कृत्य के रूप मे महिमा मण्डित कर राजपूत जाति का अपनी अतीत की एतिहासिक व सास्कृतिक परम्पराओ की पहिचान स्त्रोत व साधन के रूप म उभार कर लाने का प्रयत्न किया है। समाचार है कि इस घटना के महिमा मण्डन से जबरन पुरानी जग लगी तलवारो का जग उतारा गया है और सती स्थल की राख अस्थि रक्षा तान्त्रिको मे करने के नाम पर नगी तलवारो का पहरा दिया गया—तलवार जो पूव शौय व राजपूत समर शौय की कहानी कहती आई हे।

इस प्रकार सती रूप कु वर प्रकरण एक ओर तो सामा य श्रद्धालु हिन्दू जन अन्तर्चेतना से जुड गया और दूसरा क्षत्रीय जातिगत ऐतिहासिक व सास्कृतिक प्रतिष्ठा का भाग बना दिया गया। इस प्रकार सती रूप कु वर प्रकरण एक नया राजनीतिक विषमता लिये समाजशास्त्रीय व मनोवैज्ञानिक प्रश्न न रह कर एक सामूहिक जन चेतना से जुडकर एक अह राष्ट्रीय समस्या केन्द्र हो गया जो पुरुष के नारी के प्रति मानवीय व्यवहार के परिप्रेक्ष्य मे नारी वग की समानता समता व जीवन जीने के स्वत त्र अधिकार के अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण व आधुनिक चिन्तन व दशन को चुनौती देना प्रतीत हुआ। वग विशेष द्वारा दिवराला की सती रूप कुवर नारी महातम्य की प्रतीक समझी गई है कि तु साथ मे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर नारी के प्रति नृशस अमानुषिक अत्याचार का प्रतीक भी मानी जा रही है। जो ऐतिहासिक जन चेतना के आप मे रूप कर आई है।

रूप कु वर राजपूत जाति की 18 वर्षीय महिला था। उसका दाम्पत्य जीवन भी कुछ ही दिनो का रहा। क्षत्रीय पारम्परिक परिवश म ज म लेकर शिक्षित हुई। वह स्वय सती हुई या फिर अफीम खिलाकर उसको मानसिक तौर पर तयार किया गया जसा कि मृत्यु के कारण शोकाकुल परिवार को सतप्तता कम कराने हेतु अफीम खिलाने की परम्परा राजस्थान के मारवाड प्रदेश मे बताई जाती है उसके अनुरूप अफीम खिलाई गई या फिर रूप कु वर की कम आयु ही दाम्पत्य जीवन के प्रारम्भ से ही पति विछोह वज्र दु खघात् होने से वह हतप्रभ होकर सती होने का निणय ले बठी क्योकि मनोवज्ञानिको के अनुसार घोर असहायता व निराशा की स्थिति व्यक्ति को जीवन के प्रति निर्मोही बना दती है और सारा शू य

सिमट कर अन्तमन मे जीवन लीला समाप्त करने के लिये व्यक्ति को उद्वेलित कर देता है। ऐसे कुछ अनुत्तरित प्रश्न हैं। मनोवज्ञानिक डा सिन्हा के अनुसार कोई भी व्यक्ति जो कि गम्भीर निराशा से पीडित है वह आत्म हत्या प्रवति का पुज बन जाता है और जब वह आत्महत्या करता है तो उसको किसी प्रकार का दद महसूस नही होता है। पेनीसिलवनिया विश्वविद्यालय के प्रोफेसर मनोचिकित्सक एरोन बेक न निराशा की परिभाषा करते हुए कहा है कि घोर निराशा की स्थिति घोर हताशा व निराशा की मिली-जुली स्थिति है।

मनोवज्ञानिको के अनुसार पुरुषो की अपेक्षा महिलायें अधिक धार्मिक प्रवृत्ति वाली होती हैं। इसका कारण यह है कि वाह्य जगत मे उनका सम्पक बहुत ही सीमित होता है जिससे उनका वचारिक एव तार्किक विकास समुचित रूप से नही हो पाता है। इसके साथ साथ महिलाओ म हिस्ट्रीया शब्द की व्युत्पत्ति हिस्टीरन शब्द से होती है जिसका अथ है गर्भाशय यूटरस। डा० सिन्हा के अनुसार कुछ ग्रथिगत स्राव के कारण महिलाओ म हिस्ट्रिया के लक्षण अधिक रहते हैं और हिस्ट्रिया का सीधा सम्बन्ध सुझाव सम्बन्धी प्रवृत्ति है जिसके अनुसार जो कुछ भी सुझाया जाय वह मान लेती है। इसी के कारण दुख म महिलाओ के विलाप करने की प्रवृत्ति है। अत हिस्ट्रीक स्थिति के उत्पन्न होने पर रूप कुवर को सती होने का सुझाव दिया गया हो और विलापमय वातावरण मे इस सुझाव का गहरा प्रभाव उस पर पडा हो और मानसिकता बन गई हो जिसके वशीभूत सती कृत्य किया गया हो किन्तु अब तक जो स्थिति उभर कर आयी है उसम विवशता व अनिच्छा ही प्रकट हुई है।

ये सभी प्रश्न हैं—ये सभी उत्तर हैं—सभी सम्भावित हैं जो सम्भावनाओ के आधार पर हैं। विधिक स्थिति क्या उभर कर आती है। सत्ता और भ्रमित आस्था किस प्रकार कानूनी बन्धन मे बधी अपनी स्थितियाँ स्पष्ट करती है यह तो भविष्य बतायेगा किन्तु भारत की जनता को याद दिलाना होगा कि नारी पूजनीया है, बन्दनीया है, वधनीया नहीं, रक्षिता है, असुरक्षिता नहीं। सती के नाम पर विधवा-दहन निन्दनीय है। यह अपराध है। सती प्रथा के सन् 1829 मे समाप्ति सम्बन्धी कानून लागू होने पर राजा राममोहन राय ने भारत के तात्कालिक गवनर जनरल को सवप्रथम पत्र लिखकर आभार प्रकट करते हुए लिखा था कि सती प्रथा निरोधक कानून बनाकर भारतीय हिन्दू समुदाय पर एक (सवकालिक) चिरकालीन उपकार किया है।" क्या इस उपकार का भाव सती महिमा मण्डन मे प्रकट हो ? कदापि नही। क्या ही अच्छा होता यदि ब्रिटिश कालीन न्यायाधीशो के उद्गारो का आदर स्वतन्त्र भारत मे होता जो कि 1928 मे सम्पत्ति के मामले फैसला सुनाते हुए चीफ जस्टिस टेरेल और जस्टिस एडमी ने कहा था– यह हमारा फैसला है कि एक तो इस

तरह का दुष्कृत्य करने वालों को सजा मिलनी चाहिए दूसरे एक निर्दोष युवती की मौत का बदला हम अपने सामर्थ्य के अनुसार लेना चाहिए और तीसरे जो लोग तर्क से न समझें उन्हें भय से सिखाना चाहिए हम केवल शरीर को दण्ड दे सकते हैं। मैं यह नहीं जानता कि इस जीवन के समाप्त होने के बाद आगे कोई जीवन है या नहीं लेकिन अगर ऐसा है और अगर ईश्वर न्यायप्रिय व दयालु है उसी रूप में जिसमें हम अपराधी ढंग से न्याय और दया को समझते हैं तो इनमें से वे लोग जो पृथ्वी पर दण्ड भोगने के बाद जीवित रहेंगे सम्पत्ति की पुण्य मण्डित समाधि की तीर्थ यात्रा करें और अपना भूत मरी पर राम राम कर उसकी पुण्य आत्मा से प्रार्थना करें कि वह ईश्वर से कहकर उनकी दोषी आत्माओं को चिरंतर अभिशाप से बचा लें।

रूप कुंवर—एक मर्मांतक त्रासदी

स्वराज कौशल (धर्मयुग नवम्बर 87 पृष्ठ 7) से साभार

किसी भी भारतीय नारी के सती होने के पीछे न कोई धार्मिक अनिवार्यता है और न उसकी ऐसी कोई विवशता है और न उसको ऐसी कोई आवश्यकता है। नारी को परोपकार के लिए जीना है–पतिविहीन भी वह लोकमाता है लोक कल्याणकारी है। उसको सती होने के लिए प्रेरित करने वाले पथ भ्रमित हैं रूढ़िवादी हैं और पापोन्मुख हैं अपराधी हैं। नारी को जीने का अधिकार है ससम्मान जीने का अधिकार उसके प्रति अन्याय करने अत्याचार करने, अमानुषिक व्यवहार करने का किसी को कोई अधिकार नहीं है। हिंसा किसी भी रूप में हो निन्दनीय अधमतम अपराध है। धर्म विश्वास जाति या परम्परा के नाम पर जो भी हिंसा की जाती है वह घोर महा पाप है क्योंकि कोई धर्म हिंसा का पक्षधर नहीं है। धर्म मानव कल्याण के लिए है मानव संहार के लिए नहीं।

रूप कुंवर सती काण्ड से जो जन चेतना का तूफान आया और सती के नाम पर अबला नारी के अग्नि दहन पर जो व्यापक प्रतिक्रिया प्रबुद्ध भारतीय समाज में हुई उसका विवरण करना भी समीचीन है ताकि इस त्रासदीपूर्ण अपराध विधा की स्थिति और स्पष्ट हो सके और इसी संदर्भ में सती निरोधक उपायों का विवेचन भी प्रस्तुत किया जा सके।

रूप कुंवर सती काण्ड व्यापक प्रतिक्रिया

रूप कुंवर सती काण्ड की घटना विशेष पर विभिन्न प्रकार के मतमतान्तर व विचार प्रचारित हुए। पुरी के जगद्गुरु शंकराचार्य ने इच्छा से सती होने को हिन्दू धर्म की विशेषता बताया, किन्तु अनिच्छा से विवश कर जलाने की क्रिया की

वकालत नही की। राजस्थान मे भी वग विशेष के प्रतिनिधियो ने इस घटना को एक अद्वितीय दिव्य घटना माना और सती स्थल की तलवारो से परिक्रमा कर सती गरिमा मण्डन के प्रयास किये। राजस्थान की श्रद्धालु जनता सती दर्शन के लिए सती स्थल पर हजारो की सख्या मे जाने लगी ऐसा वातावरण बन गया मानो कोई बहुत ही बडा दैविक चमत्कार हुआ है।

प्रबुद्ध राजनीतिक महिला वग व राजस्थान व भारत सरकार ने सती की घटना व इसको महिमामय बनाने के कृत्य की भर्त्सना की। प्रबुद्ध महिला सगठनो ने दिल्ली मे एकत्रित होकर प्रदशन किया और रूप कवर के सती होने के कृत्य को रूप कवर की हत्या माना और इसको नारी अत्याचार व उत्पीडन का सबसे घिनौना आपराधिक कृत्य माना।

दिनाक 30 सितम्बर 1987 को प्रबुद्ध महिला वग जिनमे केन्द्रीय मन्त्री श्रीमती मारगेरेट अल्वा राजेन्द्र कुमारी वाजपेयी व स्वतन्त्रता सेनानी श्रीमती अरुणा आसफ अली भी सम्मिलित थी ने सती प्रथा के विरुद्ध एक प्रस्ताव पारित किया जिसके अन्तगत रूप कवर की सती होने को नारी जाति के प्रति जघन्य निन्दनीय अपराध की सज्ञा दी। जिस एकल कृत्य ने भारतीय नारी को सदियो से समानता स्वतन्त्रता एव प्रतिष्ठा का सघष चल रहा था उसकी जड़ें हिलाकर रख दी जिससे 2 शताब्दियो म स्वर्गीय राजा राममोहन राय काका कालेकर व गाधीजी के नारी उत्थान प्रयत्नो से प्राप्त नारी स्वतन्त्रता व समानता के सवधानिक अधिकार प्राप्ति पर प्रश्नचिह्न अकित हो गया। सती के नाम पर एक विधवा को जिन्दा जलाने जैसा कृत्य मानवीय सभ्यता पर एक खूनी दाग है नारी के जीवन जीने के अधिकार पर खुला खूनी प्रहार है। इस कृत्य पर लज्जा आने के स्थान पर सती महिमा मण्डन के प्रयत्न और भी दुर्भाग्यपूण हैं।

राजस्थान के मुख्य मन्त्री ने सती की घटना को एक घृणित आपराधिक कृत्य माना। यहा तक कि इस घटना की प्रतिक्रिया देश की राजधानी दिल्ली मे भी इतनी तीव्र हुई कि प्रधानमन्त्री श्री राजीव गाधी ने भी इस घटना का महिमामय न बनाने के लिए आवश्यक आदेश दिये। यहा तक कि केन्द्र सरकार द्वारा एसी घटना की पुनरावृत्ति रोकने के लिए प्रभावी अध्यादेश पारित करने के आदेश सरकार को दिये जिसके फलस्वरूप राजस्थान सरकार द्वारा एक सती विरोधी अध्यादेश दिनाक 1–10–87 को पारित किया जिसके अन्तर्गत किसी विधवा को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सती होने के लिए उकसाने वालो को फासी अथवा आजीवन कारावास की सजा देने ऐसे मामलो की महिमा वधन करने वालो को सात साल की सजा व भारी जुर्माना की सजा देने की व्यवस्था है। साथ म इस अध्यादेश मे विशेष

अदालतो के गठन के अधिकार भी सरकार को दिए गये हैं और जिलाधीशो को सती स्थल व मदिर निर्माण को हटाने के अधिकार भी दिये हैं ।

दिवराला मे रूप कवर सती हुई या सती कराई गई—अभी इस विषय पर गहन चिन्ता व्याप्त है । प्रकरण न्यायालय मे विचाराधीन है । साथ मे विवाद का विषय भी जिसका निष्कर्ष चल रहे अन्वेषण के पश्चात् ही ज्ञात हो सकेगा किन्तु अवश्य चिन्तनीय विषय रहा कि सती काण्ड के मामले को लेकर एक धार्मिक अभियान सा चलाया जाने लगा था इसको महिमा मण्डित किया जाने लगा था, सती स्थल पर मदिर निर्माण के लिए धन एकत्रित किया जाने लगा था नगी तलवारो के पहरे ने सती स्थल को और रोमाचक बना दिया था प्रचार माध्यमो से प्रभावित होकर श्रद्धालु दर्शनार्थियो का लगातार ताता लगा हुआ था ।

इस प्रकार सती रूप कवर काण्ड एक दैविक चमत्कार का रूप ले चुका था । इस सती काण्ड की सभी प्रबुद्ध वर्ग भर्त्सना कर रहे थे । राजस्थान सरकार भी आलोचना का शिकार हो गई थी । पहले तो रूपकवर को सती होने से न रोक पाना फिर दिनाक 16 सितम्बर को चूनरी महोत्सव को न रोक पाने के कारण राजस्थान सरकार की गहरी आलोचना हो रही थी । इसके पश्चात् सती स्थल पर सती रूपकवर महिमा मण्डन के लिए विशाल मदिर की योजना बनाई गई थी जिसकी क्रियान्वयन की तैयारी को रोकना सरकार के लिए आवश्यक था । भविष्य मे सती प्रथा जैसी घटना कानून के माध्यम से रोकी जा सके । राजस्थान सती निवारक अध्यादेश 1 अक्टूबर 1987 के माध्यम से सती प्रथा पर पाबन्दी लगाने का कानूनी प्रयत्न है । जहा तक कानून का प्रश्न है—भारतीय दण्ड सहिता की धारा 309 व 306 मे भी कानूनी प्रावधान पूर्व से ही उपलब्ध हैं जिसके अन्तर्गत किसी भी आत्महत्या करने के प्रयास करने वाले अथवा आत्महत्या के लिए प्रेरित करने वाले व्यक्ति को सजा व जुर्माने से दण्डित करने का प्रावधान है । दिवराला रूपकवर सती काण्ड घटित हो गया और कानूनी प्रावधान की क्रियान्वित यथा समय नही हो पाई जिससे एक बात अवश्य उभर कर आती है कि केवल मात्र कानून बनाने अध्यादेश पारित करने से सामाजिक बुराइया जो कि आपराधिक कृत्यो को जन्म देती हैं समाप्त नही की जा सकती । इनकी समाप्ति के लिए अन्य और भी उपाय किये जाने होंगे ।

सती काण्ड पुनरावृत्ति निरोधक उपाय

(1) कानून की सरचना

भारतीय सविधान की धारा 51 (अ) म प्रत्येक भारतीय नागरिक का यह एक मूल कर्त्तव्य माना गया है कि वह समृद्ध भारतीय सास्कृतिक धरोहर की रक्षा

करे एव उन सभी ऐसी निम्नस्तरीय परम्पराओ को तिजाजली दे जिनसे भारतीय नारी की प्रतिष्ठा गिरती है। इस सवधानिक उत्तरदायित्व के परिप्रेक्ष्य मे यह असहनीय है कि शीत रक्तीय रूप मे नारी की हत्या की जाये उसको आत्महत्या के लिए प्रेरित किया जाये और जिन्दा आग मे जला कर सती होने का नाम दे दिया जाये इसको क्रियाशील धम का अग माना जाये।

किसी भी देश की सभ्यता के इतिहास की महिमा की पहिचान इससे की जाती है कि वह निबल असहाय व आश्रितो के प्रति कितनी भावुक है। वस्तुत करुणामय सभ्यता सही मानवीय सवेदनशीलता के मूल्य को समझ कर विकसित हुई सभ्यता है। नारी जसी प्रकृति की सुन्दरतम सौगात जो पुरुष परिश्रम मे पली हो उसकी निरीहता का लाभ उठा कर क्रियाशील धम के नाम पर जलती आग की लपटो मे घी डाल कर विकराल प्रचण्ड अग्निकुण्ड मे नारी को डाल कर भस्म कर दिया जाये तो क्या यह भारतीय सामाजिक सभ्यता की पुन अधे युग या प्रस्तरयुग मे प्रवेश की तैयार नही है? क्या मध्ययुगीन इतिहास मे दी जाने वाली नर बलि से अधिक घातक सती प्रथा नही है? यह वह आपराधिक कृत्य है जो भारतीय सास्कृतिक सदाशयता क्षमाशीलता व सागरवत गम्भीर होने की गुणवत्ता का एक जोरदार मजाक है।

यही नहीं, देवराला सती काण्ड पूणतया अवैधानिक है जो कि भारतीय सविधान के अनुच्छेद 21 के प्रावधान के विपरीत है जा कि भारत के प्रत्येक नागरिक को जीवित रहने का अधिकार देता है। प्रत्येक राज्य का प्रथम कतव्य है कि प्रत्येक भारतीय नागरिक को सविधान मे दिए गये जीवित रहने के अधिकार की रक्षा करे यदि धम के नाम पर भी बबर हत्या की जा रही हो तो भी।

भूतपूव न्यायमूर्ति श्री वी० आर० कृष्णाअय्यर के अनुसार कानून और जीवन दोनो साथ साथ चलने चाहिए और आपराधिक कानून की व्याख्या सभ्यता के विकास के साथ होनी चाहिए न कि सास्कृतिक विवशता के साथ। इस ग्रथ म प्रत्येक न्यायविद इस व्याख्या से सहमत होगा कि सती होना आत्महत्या का अपराध है और सती कराने मे सहायता करना हत्या के अपराध म सहयोग। यदि भारतीय दण्ड सहिता की धारा 306, 307 304 पर एक साथ गूढ विचार किया जाये तो सती काण्ड का महिमा मण्डन करने वाले भी हत्या प्रयास सहयोगी के रूप मे कानूनी सजा से नही बच सकते।

यदि हम सती प्रथा के इतिहास पर दृष्टिपात करें तो हमारे समाज सुधारक जिन पर हम गर्व है ने अपने अथक प्रयासो से उस बबरता को समाप्त करने के प्रयत्न किये जिसने हमारे धम को कलकित कर रखा था। यदि मानव वध किया

जाता है तो फिर हमारी सास्कृतिक विम्ब का परिष्कृत और हमारे धम का सामाजिक परिष्कृत रूप शताब्दियो से चले आ रहे न्यायप्रिय धार्मिक सिद्धात जो कि हमारे ऋषियो व मुनियो की हमको देन है सब निरथक हैं। सती प्रथा का पुनजन्म या पुन अभ्युदय एक पशाचिक लज्जा का प्रतीक है।

(न्यायमूर्ति कृष्णाअय्यर 'व्हाट ए शेम', दी हिन्दुस्तान टाईम्स सण्डे मैगजीन 4 अक्टूबर)

कानूनी आधार के साथ-साथ सती जसी ववरतापूण प्रथा का नैतिक समथन भी नही है। यदि नैतिक दृष्टि से आपराधिक कृत्य को देखें तो हम प्रत्येक भारतवासी अपराध के भागी हैं। हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गाधी के अनुसार सारी मानवता एक अविभक्त व अविभाज्य परिवार है और हम मे से प्रत्येक दूसरे के आचरण के प्रति उत्तरदायी है। मैं अपने आपको दुष्टतम आत्मा से अलग नही कर सकता।' उक्त कथन हम सबको अपराध का भागी बनाता है। यदि हमको इस अपराध बोध व बोझ से बचना है तो हमारा कतव्य है कि सती प्रथा को न्यायोचित ठहराने वाली प्रत्येक ज्योति तक को बुझा दें उस धारा को समाप्त कर दें।

हमारी स्वतन्त्रता के 40 वर्षों मे 28 सती काण्ड घटित हो गये। क्या यह हमारे देश के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सदर्भों मे शोचनीय विषय नही है? राजनतिक घटना चक्र के क्रम मे ऐसी घटनाओ पर किसी ने भी ध्यान नही दिया और ये काड होते रहे। भारत जो ससार मे सास्कृतिक व आध्यमिक गुरु और गाम्भीय देश है उसकी महिला को धम की आड मे जिन्दा जलाने की प्रथा चली आ रही है बहुत शोचपूण विचारणीय प्रश्न बन जाता है।

कानून बना कर सती प्रथा को रोकने के प्रयत्न किये जाते हैं उनमे न्यायविद यह भी तक उपस्थित करते है कि क्या किसी भारतीय नागरिक को मरने का अधिकार नही है? यदि उसको जीवन निस्सार व शून्य दिखाई देता है तो क्या वह स्वेच्छा से मर भी नही सकता। बोम्बे उच्च न्यायालय द्वारा इस पर विचार किया गया और इस सबध मे निषेधात्मक रूप मे जीने के अधिकार के विपरीत मरने के अधिकार को सवधानिक मूलभूत अधिकार नही माना यद्यपि मरने का अधिकार जीने के अधिकार से जुडा हुआ प्रश्न है जो अनिर्णित ही रहा। आचाय विनोबा भावे ने अपनी रुग्णावस्था को देखकर अन्न जल त्याग कर स्वेच्छा से मृत्यु का वरण कर लिया कितने ही साधु जीवित समाधि ले लेते है। इस तार्किक परिप्रेक्ष्य म सती होने के अधिकार की चर्चा करनी आवश्यक है जिसमे तक रूप से कहा जा सकता है कि क्या सती होने का स्वच्छिक अधिकार किसी महिला को नही है जो कि अपनी धार्मिक आस्था क अधीन मोक्ष प्राप्ति हेतु अपने पति के शव को गोद मे रख कर

अग्नि रथ पर सवार होकर महाप्रयाण कर जाना चाहती है ? दिवराला सती काड को महिमा मण्डन करने वाली बनाई गई । धम रक्षा समिति का भी यही तक हो सकता है कि भारत मे अपनी आस्था व विश्वास के अनुरूप धार्मिक कृत्य करना व धर्म की पालना करना प्रत्येक भारतीय का मौलिक अधिकार है । रूपकु वर का धार्मिक विश्वासा तगत सती होना उसका मौलिक अधिकार था, जिसमे हस्तक्षेप करने का किसी सरकार को अधिकार नही है ।

19वीं शताब्दी मे जब सती प्रथा को बद किया जा रहा था तब भी स्वेच्छा-पूवक सती होने की अनुमति देने पर विचारविमश हुआ मानी के अनुसार उस समय वालसएवर जो कि लोवर प्रोवि सेज का पुलिस अधीक्षक था के विचार थे कि भारत मे कोई महिला स्वेच्छा से सती नही होना चाहती उस पर अत्याचार किया जाकर स्वार्थी व कपटी सबधियो द्वारा अथ प्राप्ति के लिए विधवा को सती होने के लिए विवश किया जाता था ताकि वे उसके कानूनी उत्तराधिकार मे मिलने वाली धन सम्पत्ति से उसको वचित कर सके और इस कृत्य से उनको अच्छी आय हो जाये । ब्राह्मण भी अपने स्वाथवश सती महिमा व इससे मिलने वाले आध्यात्मिक सुख की दुहाई देकर विधवा को सती होने के लिए तयार करें ताकि उसके सती होने पर ब्राह्मण की भी आय हो । इस तक के आधार पर स्वेच्छापूर्वक सती होने के प्रावधान को नकारते हुए सती प्रयास पर 1829 मे पूण प्रतिब घ ब्रिटिश राज मे लगाया गया ।

वतमान दिवराला रूपकवर सती काण्ड के सदभ मे आज से 150 वप पूव कहे गये शब्द साथक होते हैं जिसकी पुष्टि सती स्थल पर चढावे के रूप मे प्राप्त नारियल के पहाड व रूपकवर के कमरे मे फेंकी जा रही धनराशि के समाचारो से होती है । इस सती काड से कितनी भारी आय रूपकवर के ससुराल पक्ष को हुई है इसकी कल्पना की जा सकती है ।

जहा तक धार्मिक विश्वास की पालना धम परायणता के मूलभूत अधिकार का प्रश्न है यह भारतीय सविधान के अनुच्छेद मे प्रदत्त जीने के अधिकार से जुडा हुआ है किसी भी व्यक्ति का धार्मिक विश्वास का मूल अधिकार उसका जीवन लेने का मूल अधिकार उससे नही छीना जा सकता । उसको जीवित रहने का भी मूल अधिकार है यदि उसे स्वेच्छा पूव अपने धम की पालना का अधिकार है । अत भारतीय सविधान की मूलभूत अधिकारिक क्षेत्र मे प्रत्येक राज्य का कतव्य है कि वह प्रत्येक भारतीय नागरिक की जीवन रक्षा करे उसको अप्राकृतिक ढग से मरने से बचाये, जीवित रह कर व अपनी आस्था व विश्वासानुरूप धार्मिक जीवन व्यतीत कर सकता है किंतु धम की मा यता की स्वतत्रता उसके जीने के अधिकार

पर वरीयता नही पा सकती। धार्मिक विश्वास भी यदि किसी अस्वाभाविक मृत्यु वरण से मोक्षादि या आध्यात्मिक आनन्द प्राप्ति का आश्वासन देता है तो ऐसे काल्पनिक विश्वास जिसे धार्मिक विश्वास का आधार मिला है उसके जीवन की रक्षा का भार भी राज्य का ही है। इस मौलिक अधिकार की पालना के लिए कठोर से कठोर कानून भी बनाना पड़े तो सरकार अपने कर्तव्य क्षेत्र मे ही इसको करेगी। क्योंकि सर्वोपरि मूलभूत अधिकार ही जीवित रहने का अधिकार है यदि जीवन ही नही रहा तो अन्य सभी अधिकार निष्फल हैं। अत वर्तमान कानून सती प्रथा जसी घटना को नही रोक सकते तो अन्य व्यवहारिक देशव्यापी कानून बनाने की आवश्यकता है ऐसा कानून जो भारतीय आध्यात्मिक जीवन का प्राण हो भारतीय सामाजिक नतिक मूल्यो की अन्तरात्मा हो जिसमे मानव संवेदनशील प्रत्येक मे बोलती हो भारतीय मानवीय सभ्यता की करुणा टपकती हो।

1 जनचेतना समर्थित कानून

आवश्यकता है ऐसे कानून बनाने की जो जन चेतना बदले जन मान्यता बदले, लोक परम्परा बदले। ऐसे कानून बनाने के पूर्व आवश्यक है ऐसी बदली हुई निष्ठ आवरणहीन दृष्टि की जो सारी मान्यताओ को मानव मूल्यो की कसौटी पर कसे और ऐसे कानून का निर्माण करे जिससे नारी का शोषण रुक सके, उस पर होने वाले अत्याचार रुक सके उसको समानाधार मिले जीवन जीने का समानाधिकार मिले। जब तक जन भावना नारी उत्थान के लिए प्रयत्नशील नही होगी नारी के साथ अत्याचार होते रहगे उसको जलकर मरने को विवश होना होगा, उसके सतीत्व/पतिव्रता धर्म की अग्नि परीक्षा ली जाती रहेगी और ऐसी घटनाएँ सामाजिक व्यवस्था, आधुनिक सुखद समाज की कल्पना के ऊपर प्रश्न चिन्ह अंकित करती रहगी।

हम सामाजिक परिवर्तन की बात करते हैं परिवर्तन का अर्थ है निश्चित दिशा मे बदलाव। हमारी दिशा निश्चित है। हम बापू के स्वप्नो के अनुरूप राम राज्य की कल्पना करते हैं हमारा संविधान भारत के प्रत्येक नागरिक को सामाजिक आर्थिक व राजनीतिक न्याय देने का वादा करता है ऐसे समाज की कल्पना करता है जिसमे व्यक्ति स्वतन्त्रतापूर्वक रह सके अपने विचार व्यक्त कर सके कानून की दृष्टि मे बराबरी का अधिकार रख सके जिस समाज मे रंग जाति धर्म व लिंग के आधार पर कोई भेदभाव न हो। पीडित शोषित, असहाय पिछड़े वर्ग को आर्थिक उत्थान के साथ साथ समता मिले न्याय मिले और उनकी व्यक्तिगत प्रतिष्ठा की रक्षा हो सबको समान रूप से जीने का अधिकार हो। ऐसा ही भारतीय समाज जिसकी लोकतान्त्रिक सरकार लोक कल्याण के लिए ही कार्य करे।

उक्त सामाजिक व्यवस्था की कल्पना हमको हमारे उद्देश्य व आदर्शों की क्रियान्विति की ओर अग्रसर करती है। धर्मगत-जातिगत रूढिवादिता अंधविश्वास छुआछूत जन्मजात भेदभाव व शोषण की सामंती परम्पराओ से हट कर हमारे समाज को परिवर्तन की नई दिशा देनी होगी जिसके लिए सही अर्थो मे हमारी सरकार को सामाजिक व राष्ट्रीय मानसिकता मे परिवर्तन लाना होगा, लोक कल्याणकारी सरकार को लोक कल्याणकारी समाज का निर्माण करना होगा। ऐसे कल्याण के लिए मार्ग प्रशस्त करता है हमारा संविधान, जिसके प्रावधानो के अनुसार सामाजिक मानसिक चेतना मे परिवर्तन लाने के प्रयत्न करने होगे। वर्तमान संदर्भ मे नारी के प्रति न्याय करना होगा उसकी व्यक्तिगत प्रतिष्ठा की रक्षा करनी होगी। नारी के प्रति शताब्दियों से प्रचलित विचार रूढिगत परम्पराओ की बेडिया तोडनी होगी।

प्रश्न है कि क्या सामाजिक परिवर्तन मानसिकता के परिवर्तन के बिना सम्भव है? हमे पुरुष के मन को परिवर्तन कर नारी का सच्चा जीवन साथी समझने की मन स्थिति में लाना होगा उसको समानता व समता का अधिकार का मूल्य समझाना होगा एव एतद् संबंधी कानूनो को दिशा निर्देश देने होगे किन्तु मात्र कानूनी निर्देश विवशता सिखाता है। मन को जीतने पर मन से किसी चीज को स्वीकार करने पर ही उसकी पालना सम्भव होती है। कानून तो व्यवहारिक क्रियान्विति का पक्षकार है जो मानवीय समाज की व्यवस्था के संदर्भ मे आवश्यक है किंतु सच्चा परिवर्तन तो मानसिकता बदलने पर जन चेतना द्वारा परिवर्तन स्वीकार करने पर रूढिगत परम्पराओ की बेडिया तोडने का संकल्प करने पर ही सम्भव होता है। कानून जन भावना निर्देश का अमूर्त रूप है, उसका मूर्तरूप तो वास्तविक पालना है जिससे किसी भी सामाजिक परिवर्तन को यथा निर्देश दिशा मिल सकती है।

इसी संदर्भ मे हमको सामाजिक चेतना जागृत करनी होगी नारी के प्रति सहज सम्मान प्रदाय दिशा मे सच्चे मन से नारी की गरिमा महत्व व अपरिहार्यता का सामाजिक जीवन मे स्वीकार करना होगा तभी नारी के प्रति होने वाले अत्याचार व हत्याओ को प्रतिबंधित किया जा सकता है नारी उत्पीडन व दहन की विभीषिका से नारी को त्राण दिलाया जा सकता है।

महात्मा गाधी ने कहा है कि समाज सुधार करना है तो अपने से करो। यह बहुत सारगर्भित दिशा निर्देश है। (राजस्थान दैनिक राष्ट्रदूत, जयपुर 3 अक्टूबर 87) लेख सती निषेध" मे प्रकट विचार उल्लेखनीय हैं—

सती के नाम पर अब नारी का अपमान नही होगा।

सती की पूजा उपासना गुणगान मेलो समारोहो मे भाग लेना धन जमा करना व मंदिर बनवाना सती (निवारण) कानून के तहत अपराध है।

'वैसे सती निषेध के लिए केवल कानून ही बना कर अपने कर्तव्य की इतिश्री नही समझ ली जानी चाहिए। सामाजिक स्वीकृति के अभाव मे अनुपालना करवाने मे प्रशासनिक ढील के कारण सुधार का क्या हश्र होता है इसका उदाहरण बाल विवाह निषेध और दहेज उन्मूलन कानून है। समाज पर इनका प्रभाव इसलिए नही पडा है क्योकि इनका उल्लघन रोकने के लिए न सामाजिक भावभूमि तैयार हुई है न रोकथाम और कानून तोडे जाने पर दण्डात्मक कार्यवाही के प्रति शासन प्रशासन गम्भीर है। राज्य सरकार यदि कोई कानून बनाती है तो उसको लागू करने का दायित्व भी उसका ही होता है जिसको निभाने के सकल्प और सक्रियता के बिना कानून बनाना सार्थक नही हो सकता। कानून को प्रभावी बनाने के लिए यदि जन स्वीकृति जरूरी है तो उसके लिए भी सत्ता पक्ष को जन जागृति अभियान चलाना चाहिए।'

जन जागृति के लिए जन सम्पर्क आवश्यक है, जिसके साथ साथ जन चेतना हेतु प्रचार माध्यम का सहारा लेना भी आवश्यक है। बार बार स्मरण कराने से कोई चीज हृदयगम होती है, ऐसा मनोवैज्ञानिक सिद्धात है। सीखी वस्तु व्यवहार परिवर्तन का कारक बने, इसके लिए सतत् प्रचार जनसम्पर्क जन सभाएं आयोजित करना आवश्यक है। सती प्रथा के सदर्भ में मानवीय मूल्यो के सास्कृतिक गुणों के परिवेश मे नारी की महत्ता व गुरुता को उभारा जाये और नारी उत्पीडन व दहन के विरुद्ध जन चेतना उत्पन्न की जाये। वस्तुत भारतीय समाज मे सती प्रथा जैसी कोई प्रथा नही है। समाजशास्त्रीय अर्थ मे प्रथा या परम्परागत चलन होता है जिसकी पालना किसी समूह विशेष के लोग मूलभूत प्रवृत्ति रूप मे स्वचालित यत्र के समान अधानुकरण करते हैं। यदि सती प्रथा एक परम्परागत अधानुकरण चलन होता तो आज एक भारतीय हिंदू विधवा जीवित नही होती। आजादी के बाद स्वतत्र भारत मे केवल मात्र 28 महिलाओ का सती होना किसी सती प्रथा या पारम्परिक चलन की सज्ञा मे नही आता। भारतीय समाज मे सती कोई प्रथा रूप मे प्रचलित नही है। यह तो कुछ सवेगात्मक मानसिक स्थिति वाले व्यक्तियो का कार्य है जो धार्मिक अध विश्वास के अतर्गत सती काड करते हैं या करवाते हैं। अत सती काड' जसी घटनाएं अपवाद रूप मे हैं जिनकी रोकथाम करना कोई कठिन कार्य नही है यदि निष्ठापूर्वक इसके निवारण के लिए कानूनी प्रावधानों के प्रभावी क्रियान्वयन व जन चेतना को आधार बनाया जाये। सती होने के समय जो दर्शक आते हैं उन सब को अपराधी घोषित किया जाना चाहिए ताकि कानून के रूप से कोई इसे मनोरजक, अदभुत जयकार करते हैं शखनाद करते हैं फोटोग्राफ बेचते हैं

दृश्य धार्मिक अन्धविश्वासमय दर्शन लाभ या व्यक्तिगत लाभ के रूप मे न ले सके। इसके साथ-साथ यह भी जन चेतना होनी चाहिए कि विधवा दहन करना व सहयोग देना पाप है और स्वेच्छा से सती होने वाली महिला को रोकना पुण्य है। भारत सरकार द्वारा सती निरोधक अधिनियम, 1976 मे पारित किया है जिसमे सती के नाम पर पूजा अर्चना करना, सती को गौरवान्वित करना व सती के लिये प्रोत्साहित करने को भी अपराध माना है।

अब समाचार पत्रों मे इस प्रकार विज्ञापन आते हैं, सती के नाम पर अब नारी का अपमान नही होगा।" सती की पूजा, उपासना, गुण-गान मेलों-समारोहों मे भाग लेना धन जमा करना व मन्दिर बनवाना सती (निवारण) कानून के तहत अपराध है।

2 विधवा विवाह को प्रोत्साहन

विधवाए समाज मे शोषण का सामान न बनें वे नारकीय दासी का जीवन न जियें इसके लिये आवश्यक है कि जिन जातियो मे कुलीनता की रक्षा के नाम पर विधवा विवाह विचार ही घोर पाप है उन जातियो मे रूढिगत विचारधारा को बदलने के लिये प्रयत्न किये जाने होंगे। आधुनिक सामाजिक परिवेश मे विधवा विवाह की आवश्यकता और महत्ता को समझना होगा। नारी को भी सुखमय जीवन जीने का अधिकार है विधवा की आत्मा को कष्ट पहुचाना उसकी भावना को दबाना भी महापाप है यह बात धार्मिक दृष्टि से समझना होगा। यह आवश्यक नही कि प्रत्येक विधवा ही पुनर्विवाह कर नवजीवन प्रारम्भ करे किन्तु जो विधवा अपनी इच्छा से पुनर्विवाह करना चाहे उसे ऐसा करने की स्वीकृति दी जानी चाहिये और इस प्रकार के पुनर्विवाह को समाजिक पुनर्वास के सन्दर्भ मे प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये ताकि पति की मृत्यु के पश्चात शेष जीवन पहाड सा प्रतीत नही हो। रूढियो की बेडी की आवाज पायल की झकार को सुनने ही नही देती। सामाजिक परम्परा समाज के सदस्यो के जीवन को सुखमय बनाने के लिये होनी चाहिये न कि जीवन मे दुख पहुचाने के लिये हो। सामाजिक व्यवस्था सुखमय जीवन की आधारशिला पर टिकी होनी चाहिये, न कि काल्पनिक कुव्यवस्था के भय से प्रेरित होनी चाहिये। विधवा विवाह को प्रोत्साहन सामाजिक व्यवस्था के लिये उपयोगी सिद्ध हो सकता है जिसके चलन से नारी का आर्थिक सामाजिक व शारीरिक शोषण रुक सके इधर उधर भटकने से सही दिशा म विधवा जीवन व्यतीत कर सके चारित्रिक विचलन से व अन्य सामाजिक कलक व कटाक्ष से बच सके।

3 बाल विवाह निषेध

बाल विवाह भी भारतीय नारी के जीवन को अभिशप्त करने का सामाजिक प्रयत्न है। जो बालक व बालिकाए जीवन का अर्थ ही नही समझते व [illegible]

जीवन क्या है, उसकी आवश्यकता व महत्ता से अनभिज्ञ हैं, ऐसे बालक व बालाओं को शैशवकाल में ववाहिक सूत्र में बाधने वाले क्या प्राप्त करने चाहते हैं, सिवाय इसके कि वे अपनी सन्तान के विवाह करने वाले सामाजिक दायित्व से मुक्त हो जायें। जो माता पिता बाल विवाह प्रथा की देन हैं वे नही समझ पाते कि वयस्क आयु मे विवाह करने की क्या महत्ता है। जीवन गणित मे ववाहिक सूत्रो की कितनी महता आवश्यकता है। शारीरिक रूप से जुडे ये माता पिता अपनी रूढिगत विचार-धारा परम्परा से बधे कितनी बाल विधवाओ को जन्म देते आये हैं, फिर विधवा विवाह को निषिद्ध करते आये हैं और इस प्रकार अबोध दम्पत्तियो के साथ कसा क्रूर खिलवाड करते आये हैं। सामाजिक परम्पराओ के नाम अबोधता को उत्तर-दायित्व के बोझ से दबा कर क्या सुखद उन्मुक्त जीवन की कल्पना की जा सकती है? नारी अधिकार प्राप्ति के सन्दर्भ मे यह आवश्यक है कि नारी की अबोधता की भी रक्षा की जाये जिसके सन्दर्भ मे 16/18/21 वष जो भी आयु तय की जाये तब तक वयस्क न होने पर विवाह न करने का कानूनी प्रावधान है उसकी पालना की जाये।

4 आर्थिक स्वावलम्बन

आज भारतीय नारी को जो पारिवारिक शिक्षा दी जाती है उसका एक मात्र उद्देश्य होता है उसको एक अच्छी बहू/गृहिणी बनने की शिक्षा देना। बेटी को पराया धन माना जाता है, जिसके वयस्क होने पर उसको दूसरे घर जाना है। जहा पर वह एक अच्छी बहू बनकर रहे और गृहस्थी के सारे कामो जैसे खाना पकाना, घर की सम्भाल करना बच्चो का पोषण आदि करना है। यदि उसके पास शक्षणिक योग्यता की बडी-बडी उपाधिया व उपलब्धिया हैं तो भी वे गौण हैं यदि उसके मुख्य कत्तव्यो की पालना मे सहायक न हो।

आज यदि भारतीय नारी का आत्मसम्मान व आत्मबल बढाना है तो उसको आत्मनिभरता बढानी होगी उसको व्यावसायिक प्रशिक्षण दिया जाकर आर्थिक रूप से स्वावलम्बी बनाया जाना होगा जिससे सामाजिक व्यवस्था के अन्तगत महिला अपने आप को पराश्रयी समझकर उपेक्षित व असुरक्षित न समझे। सामाजिक सुरक्षा के सन्दभ मे आर्थिक सुरक्षा ही नारी को मानसिक सुरक्षा दे सकती है। यदि वह स्वावलम्बी है तो पति विछोह या विच्छेद के पश्चात उसके जीवन मे घोर निराशा व्याप्त नही होगी। पति के प्रति अनुराग से उसके जीवन में कमी आना तो स्वाभाविक है किन्तु जीवन जो पाना उसके लिये कठिन नही होगा कोई उसका शोषण नही कर पायेगा क्योकि न वह पराधीन ही होगी और न पराश्रयी ही समझी जायेगी, फिर वह न जलकर मरने की ही सोचेगी और न पति

के बिना गहन अधकार मे सोन की आशका से आत्महत्या कर मृत्यु का वरण करने के बारे मे ही सोचेगी ।

हिन्दुस्तान टाइम्स के 27 सितम्बर 87 के अक मे प्रमिला कलहन द्वारा लिखा गया लेख हाउ टू एण्ड सती फोर एवर ' प्रकाशित हुआ, जिसके अतगत लेखिका ने केन्द्रीय गृह राज्य मन्त्री श्री चिदवरम् के साक्षात्कार का हवाला देते दए उनके विचार प्रस्तुत किये । श्री चिदवरम् के अनुसार जब हम महिला व पुरुष समानता की बात करते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि हम अज्ञान युगो से महिलाओ को उभारने के लिय पर्याप्त प्रयत्न नही कर रहे हैं । विश्व की लगभग आधी जनसख्या महिलाओ की है फिर भी एक प्रतिशत ही महिलाए होगी जिनका सम्पत्ति पर अधिकार होगा, जबकि सामाजिक सम्बन्धो का निर्णायक बिन्दु आर्थिक आधार पर टिका होना है । महिलाओ का अभ्युदय तभी सम्भव है जबकि उनको शिक्षा के समान अवसर उपलब्ध कराये जायें । सभी प्रकार के पाठ्यक्रम महिलाओ के लिय उपलब्ध कराये जाने चाहिये । अलग विद्यालय व महाविद्यालयो के स्थान पर सह शिक्षा को ही प्रोत्साहन दिया जाना होगा ताकि महिलाओ को सभी प्रकार की सेवाओ म प्रविष्ट होने के लिये समान अवसर प्राप्त हो । यहा तक कि सामाजिक व राजनीतिक क्रिया कलाप भी अविभक्त होना चाहिये जहा पर महिलाओ को समान अवसर दिये जायें ताकि समानता सम्बन्धी नीतिया भी समान रूप से तय की जा सकें ।

श्री चिदवरम् के अनुसार केवल मात्र सती प्रथा की निन्दा करने से ही समस्या का समाधन नही होगा अपितु इस समस्या के समाधान के लिए दो बिन्दुओं पर भी विचार करना होगा जिनमे प्रथमत महिलाओ का जीवन की विभिन्न अवस्थाओ मे पिता पति व पुत्र पर पराश्रयी बनाने के स्थान पर उनको स्वावलम्बी बनाया जाना होगा उनको अपने परो पर खडा किया जाना होगा । उनके अनुसार क्या कोई ऐसी महिला सती हुई है जो किसी उद्योगशाला मे काय करती हो । द्वितीय प्रताडित व दु खी तथा असहाय महिलाओ के लिये थोडे समय के आवास हेतु होस्टल व्यवस्था की भी आवश्यकता है जहा पर वे महिलाए अपने ससुराल पक्ष के प्रभाव से दूर रह सकें और उनको स्टोव या चिता म धक्का देन से बचाया जा सके । ऐसी महिलाए फिर किसी के प्रोत्साहन से आत्महत्या करने का विचार नही कर पायेंगी । इस प्रकार आर्थिक सुरक्षा व नारी चेतना दो प्रमुख माध्यमो से सती कुरीति को रोका जा सकता है ।

इस क्रम म यह कहा जा सकता है कि जिन भारतीय जातियो मे विधवा विवाह स्वीकाय है, उन जातियो म सती प्रथा का प्रचलन नही है । जिन जा

को पिछड़ी जातियो के नाम से जाना जाता है उनको न केवल सामाजिक व सास्कृतिक दृष्टिकोण से ही पिछड़ी कहा जाता है अपितु मुख्यत आर्थिक दृष्टि से पिछड़ी होने के कारण भी पिछड़ी जातिया कही जाती हैं। हमारी दृष्टि मे सभी प्रकार के उत्थान का आधार आर्थिक सम्पन्नता है। गरीबी की चक्की मे पिसता कोई समाज या जाति या परिवार केवल मात्र मूलभूत आवश्यकताओ की पूर्ति के बारे म ही सोचता है न कि सामाजिक परिष्कृत जीवन जीने के बारे म। उसके जीवन के तीन मूल्य—सत्य शिव व सुन्दरम् के स्थान पर रोटी कपडा और मकान तक सीमित रहता है। इस प्रकार के गरीब वग व मध्य वग मे आने वाली जातियो म गृहस्थ भार वहन करने के लिये स्त्रिया भी पुरुषो के साथ खेत व खलिहानो मे काम करती हैं वे पालतू दुधारू पशुओ की देखभाल करती हैं जगल मे जाकर लकडी लाती है घर म बठकर कुटीर उद्योग चलाती हैं। इस प्रकार पति की आय म योगदान देती हैं। ऐसी जातियो व समुदाय मे विधवा विवाह का प्रचलन है जहा पर सती होने की घटनाए सुनने मे नही आती है। उदाहरणार्थ भारतीय जन जातियो म विशेषकर भीलो मे बालिका जन्म उल्लास का क्षण होता हैं क्योकि बालिका वयस्क होने पर दापा (वधूधन) दिलाकर पराई होगी इन जातियो मे महिलाओ को सम्पत्ति समझा जाता है जहा पर विधवा से विवाह करना अधिक अच्छा माना जाता है। यह इस कारण मे कि अपने से अधिक आयु की स्त्री स्वय श्रम कर आय का स्रोत होगी और गृहस्थी चलाने मे निपुण होगी। यदि वह बच्चे भी साथ लाती है तो और भी अच्छा होगा क्योकि उसके बच्चे भी कमाकर घर मे लायेंगे ही। इस प्रकार जिन जातियो मे स्त्री पराश्रयी नही है आर्थिक रूप से स्वावलम्बी है श्रमशीला है उन जातियो मे विधवा एक बोझ नहीं मानी जाती। इन जातियो मे वह आर्थिक सम्बल समझी जाकर पुन अपना ली जाती है जो इस जाति की नतिकता पर बोझ नही होती।

महिलाओ को पराश्रिता की भूमिका से उभारना होगा उसको आर्थिक सुरक्षा दी जानी होगी शिक्षा के माध्यम से उसम समता व समानता सम्बन्धी नव चेतना लानी होगी।

5 परिवर्तित मानसिकता

यह कहा गया है कि लज्जा स्त्री का आभूषण है उसका सौन्दयवधक है। जब स्त्री लजाती है तो बडी सुन्दर दिखाई देती है। पुरुष समाज ने ऐसी कल्पनाएं कर स्त्री को मोह लिया है वह पुरुष के पुरुषाथ सम्मोहन से अपने को मुक्त नहीं कर पाती है। वह पुरुष के बलिष्ठ बाहुपाश मे स्वर्गिक अनुभूति का रसपान करती है। वह पुरुष के प्रेम को पाकर कृतकृत्य हो उठती है। वह तत्क्षण नारीत्व जीवन को

धन्य समझ बठती है। पुरुष के प्रेममय दृश्यों से आहत वह अपने सुनहरे स्वप्निल ससार मे खो जाती है। पुरुष का निश्छल सम्पूर्ण प्रेम मिल जाये तो फिर नारी जीवन सफल है वह धन्य है ससार मे सबसे सुन्दर व सुखी जीव है।

नारी की इस निबलता से जुडी हुई है उसकी दूसरी निबलता सौन्दय चेतना। नारी ससार म सृष्टा की सुन्दरतम रचना है। नारी अपन नारियोचित सौन्दय के प्रति सदा सजग है। नारी का एक मात्र गुण है सुन्दर होना। यदि वह सुन्दर है, तो वह सवगुण सम्पन्न है। पुरुष जब नारी की ओर आकर्षित होता है तो केवल मात्र उसकी सुन्दरता को देखता है। सुन्दर पत्नी के चयन के लिये कितनी खोज-बीन होती है। वधू के चयन व वरण की पहली शर्त है सुन्दर होना। पुरुष सुन्दर स्त्री को पत्नी के रूप मे पाकर गौर्वान्वित हो उठता है वह अपने परिवार व समाज मे सुन्दर पत्नी का पति हाने पर अलग ही मानस ग्रह की मानसिकता लिये चलता है। वह ऐसा महसूस करता है कि सुन्दर पत्नी उसकी धरोहर है और वह सुन्दर पत्नी का स्वामी है।

नारी अपने को सुन्दर दिखाने का भी प्रयत्न करती है। इस भावना के वशीभूत वह शृगार करती है सजती है और पुरुष को रिझाती है। नारी ऐसा क्यो करती है ? यह तो उसकी मूल प्रवृत्ति है। वह अपने को सृष्टि की सबसे सुन्दर कृति मानती है और प्रत्येक स्त्री यही सोच कर जीती है तभी वह शृगार करती है। जो कमी सृष्टा ने छोडी है उसकी कमी पूरी करने की कला है—शृगार (मेक अप)। नारी के सौन्दयकी प्रशसा कर नारी के मन को जीता जा सकता है वह सहजता से इस प्रशसा अनुभूति के प्रभाव मे आ सकती है वह छली जा सकती है उसको भ्रमित किया जा सकता है। पुरुष के मुह से सौन्दय का बखान सुनकर वह पुलकित हो उठती है अपने जीवन को धन्य समझ बठती है और वह आकाश मे मुस्कराते चन्द्रमा से अपने शशिमुख की उपमा सुनकर खो जाती है—यथाथता से कही दूर स्वप्नलोक मे।

वह पुरुष से जुडी हुई है उसकी प्रशसा की याचक है उसके सौन्दय बोधात्मक मूल्यांकन के लिय जीती है वह पुरुष मे अल्हडपन ढूढती है उसके सौन्दय की परख ढूढती है उसके सौन्दय को पौरुष कसे कृताथ करेगा यह ढूढती है। इस प्रकार उक्त मानसिक दौबल्य के साथ वह जीती है अपने को पुरुष के अधीन कर उस पर पराश्रयी होकर आश्रिता बन कर वह अपने को हीन समझकर पुरुष के अह को सन्तुष्ट करने के लिए हर सम्भव प्रयत्न करती है प्रेयसी बन कर, अकशायनी बन कर प्रसूता बन कर व नायिका बन कर—दासी बन कर भी। वह पुरुष के साथ विवाह बन्धन मे बधकर वन्दिनी हो जाती है, वा फिर सामाजिक,

सांस्कृतिक व आध्यात्मिक सभी दृष्टि से बंधनों की स्वामिनी भी हो जाती है। पति परमेश्वर और वह चरणों की दासी भी फिर बाहुपाश में पलाश खिलें तो चरण रज किंजल्क बनें। ऐसे समर्पित जीवन को जीने की मानसिकता लिए वह वैवाहिक जीवन प्रारम्भ करती है।

संस्कार-जन्मजात या परिवेशगत? ये प्रश्न उत्तर चाहते हैं। व्यक्तिगत वंशानुगत क्रमाधीन गुण लेकर जन्म लेता है और प्राप्त परिवेश मे प्रतिक्रिया स्वरूप उसके व्यक्तित्व का विकास होता है। व्यक्ति की मानसिकता का विकास उस समाज की सामाजिक अन्तर्चेतना पर निर्भर करता है जो कि उस परिवेश की देन है। भारतीय समाज की संस्कारगत सामाजिक मानसिकता नारी को मुख्यत गृहिणी पति परिचारिका के रूप मे देखती आई है। इसी कारण बाल्यकाल से ही बालिका के मस्तिष्क को धोया जाता है उसमे य संस्कार पैदा किये जाते हैं अर्थात् मानसिक रूप से उसको तैयार किया जाता है कि वह पराया धन है धरोहर है उसका कोई पति होगा मोक्षागार होगा कर्णाधार होगा उस पति के लिए उसे जीना है उसके लिए सजना है मरना है वही सत्य है वही सच्चिदानन्द है। इस भावना को और सुदृढ करने के लिए और कितने ही अनुष्ठान विधान परम्पराएँ व प्रथायें प्रचलित हैं। व्रत उपवास विशेष पूजा मूर्ति दर्शन धार्मिक यात्राएँ याचनाएँ मंगल कामनाएं मनौतियां पति परमेश्वर की भावनाओ को संस्कारगत शक्ति प्रदान करती हैं जो जीवन के अन्य मूल्यों पर सर्वाधिक प्रभावोत्पादक होते हैं। कुछ जातियों में यह संस्कारगत भावना अधिक प्रबल होती है जिनमे एक पति-एक परमेश्वर का जीवन उद्देश्य लेकर नारी को जीवन जीने के लिए बाल्यकाल से ही मानसिक रूप से तैयार किया जाता है। उदाहरणार्थ राजपूत समाज मे पतिव्रता के गुण को संस्कार के रूप में आरोपित किया जाता है और इसी के अनुरूप बालिकाओ को मानसिक रूप से तैयार किया जाता है। राजपूत महिलाएँ सती पूजा करती हैं वे ऐसे प्रवचन सुनती हैं ऐसी कहानियां पढती हैं जिनमे राजपूत महिलाओ ने पति धर्म निर्वाह के लिए प्राणोत्सर्ग कर दिये वे पति के साथ वैभव की स्वर लहरी में तरती हैं तो पति विहीन होने पर पति की चिता में ही अपने प्राणेश्वर के साथ चिरताप मे चिरलीन हो जाती हैं या कर दी जाती हैं। इस भावना को सदा याद दिलाये रखने के लिए ऐसे गीत रचे जाते हैं गाये जाते हैं नाटक लिखे जाते हैं खेले जाते हैं लोक कथाओ में चर्चाएँ की जाती हैं और चौपालो व चौराहों में इनका बखान होता है महिमा मण्डन होता है। इस समाज मे नारी को पति के लिए सर्वस्व बलिदान करने व प्राणोत्सर्ग करने तक के लिए भी मानसिक रूप से तैयार किया जाता है। इस प्रकार पति परमेश्वर के अस्तित्व स्थान व उत्सर्ग को रोमांचकारी बनाया जाता है और उसके साथ प्राण न्यौछावर करने के परम बलिदान को चिर आनन्दमय पारलौकिक स्वर्गिक जीवन पाने का एक मात्र साधन माना जाता है।

इसके विपरीत विधवा का समाज मे कोई अस्तित्व नही वह नारी नारकीय स्थिति को प्राप्त करती है। ऐसे उदाहरण भी सामने होते हैं, जबकि विधवा का शोषण होते देखा जाता है उसको पशुवत जीवन जीते देखा जाता है।

इस प्रकार उज्ज्वल व कालिमामय दोनो पक्ष से नारी को पति सहचरी पति सेविका के रूप म ही समाज स्वीकार करता है यही उसके जीवन की परिणिति है, यही शुभ है यही सत्य है।

ऐसी सस्कारगत सामाजिक चेतना के साथ पोषित मानसिकता मे साथ जीने वाली महिला पति विहीना अबला के अतिरिक्त और क्या हो सक्ती है। वह पति आश्रिता पति चेरी, सहधर्मिणी ह। उसका धम पति परायणता है जिसकी पालना सस्कारगत करनी ह। पति के साथ जीना ह पति क साथ ही मरना ह। यही मानसिकता निराश्रयता की स्थिति म सती होने जसी घटनाओ के प्रेरक तत्व रूप मे उभर कर सामने आत हैं।

अत आवश्यकता है इस पराश्रयी मानसिकता के बदलने की हीनता के सस्कार का तिलाजलि देने की आवश्यकता है अपने व्यक्तित्व को उभारने की वयक्तिक गुणो की पहिचान कराने की सौदयशीलमय दासता की बडियो को त्यागन की बौद्धिक व मानसिक गुणो की पहिचान कराने की कपडो के रग व चेहरे के भाव से व्यक्तित्व का बडा मानने के स्थान पर बुद्धि चातुय व मानसिक विलासिता से लोहा मनवाने की आर्थिक दासता व मानसिक हीनता से ऊपर उठने पर ही नारी अपने सही नारी सुलभ गुणा को पहिचान पायगी और पति के साथ जिस शान आन व मान के साथ जीवन जीती है पति विहीन भी वह अपनी वयक्तिक गरिमा को बनाये रखते हुए ससम्मान जीवन यापन करेगी। इसी मानसिकता के साथ कोई भी नारी सतीभाव से प्रेरित हो आत्मदाह करने की कल्पना तक नही कर पायेगी।

3 महिला अपहरण

अपहरण का अथ है बलपूवक किसी व्यक्ति को उसकी इच्छा के विरुद्ध एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना या धोखा देना। महिलाओ का अपहरण एक गम्भीर सामाजिक अपराध है। महिला को बलपूवक उसकी इच्छा के विरुद्ध एक स्थान से दूसरे स्थान पर क्यो ले जाया जाता है?

स्वाभाविक है ऐसे आपराधिक कृत्य के पीछे कोई न कोई मन्तव्य अवश्य होना चहिये। इस अपराध का कोई आपराधिक इरादा होना चाहिये। यह अपराध

बिना किसी कारण के नही हो सकता। कुछ परिस्थितिया भी हो सकती हैं जिनके कारण महिला अपहरण समव होता है। प्रथम दृष्टया महिला अपहरण जसे कृत्य के पीछे जो कारण होते हैं वे हैं या तो काम वासना की पूर्ति के लिये बेचने के लिये जबरन विवाह करने के लिये वश्यावृत्ति हेतु बेचने के लिये अपना आधिपत्य स्थापित करन के लिये अपने उच्चता के अह भाव को प्रदर्शित करन के लिये किसी परिवार से वदला लेने के लिये। महिला अपराध के पीछे वहुधा व्यक्तिगत प्रेरक तत्व ही होते हैं।

सारियकी दर्पण

पुलिस रिपोट के अनुसार भारत मे प्रति वप एक लाख महिलाओ म से 2 अपहरण की शिकार होती हैं किन्तु ये आकडे सही नही प्रतीत होते हैं क्योकि महिला ससार के ऐसे प्रकरण सामाजिक दृष्टि से प्रतिष्ठा के विपरीत होने के कारण सभ्रान्त व प्रतिष्ठित परिवार ऐसी घटनाओ के घटित होने पर भी पुलिस मे रिपोट दज नही करा पाते। अत अनुमान से सरकारी आकडो से 2 गुने से 10 गुने तक अधिक पलायन प्रकरण घटित होते हैं किन्तु सामाजिक प्रतिष्ठा गिरने के सदर्भ मे रिपोट नही किये जाते है।

भारत मे 1971 मे पलायन के 9647 प्रकरण पजीकृत किये गये (क्राइम इन इण्डिया 1971–पृष्ठ 16) 1973 मे 8 7 प्रतिशत प्रकरणो की वृद्धि हुई (क्राइम इन इण्डिया 1973 पृष्ठ 20) 1976 मे 10 प्रतिशत की वृद्धि हुई (क्राइम इन इण्डिया-1976 पृष्ठ 2) 1978 मे यह वृद्धि 11 2 प्रतिशत हो गई (क्राइम इन इण्डिया–1978 पृष्ठ 4)। जनसख्या मे एक लाख महिलाओ की सख्या को आधार मानने पर अपहरण के अपराध की सख्या 2 0 प्रतिशत आकी गई है। राज्यो मे अपहरण के पजीकृत प्रकरणो की सख्या की जानकारी प्राप्त करने पर राज्य म अपहरण के प्रकरण सबसे अधिक पजीकृत हैं। –1979 मे उत्तर प्रदेश म उत्तर प्रदेश पलायन के 2974 प्रकरण पजीकृत हुए जो सारे देश म पजीकृत प्रकरणो का 20 या 22 प्रतिशत है। मेटरोपोलिटन नगरो मे देश की राजधानी दिल्ली का स्थान सर्वोपरि है। 1979 मे दिल्ली म 743 प्रकरण पजीकृत किये गय। (क्राइम इन इण्डिया–1979 पृष्ठ 10)

पलायन व रूढिगत विचार

पलायन के सम्बन्ध मे कुछ विचार प्रचलित हैं उनमे सवप्रथम यह विचार है कि नारी कोमलागी होती ह और पुरुष कठोर यथाय नारी एक कोमल कल्पना है पुरुष एक खुला सत्य नारी पुरुष की सहचरी है और भोग्या भी। पुरुष नारी

का सखा भी है स्वामी भी है। इस स्वामित्व के अधिकार के स्वरूप पुरुष नारी को अपनी धरोहर समझता है और जायदाद समझता है। उसका विचार है कि वह ससार कुज मे कही पर भी विचरण करे, किन्तु नारी कुसुम के मधुर मधु परतो पर उसका ही अधिकार है। इस कठोर शारीरिक मनोवैज्ञानिक सत्य की चट्टान पर अडिग समझकर उसके साथ खेलता है। वह नारी को अपनी धरोहर समझता है। नारी भी पुरुष के इस स्व, स्वय स्वत्वरूपी सर्वाधिक सुरक्षित सत्य के समक्ष नत मस्तक हुई है। पुरुष द्वारा विवाहित होने पर ऐसा कोई चिन्ह धारण नही किया जाता जिससे ज्ञात हो सके कि वह एक पत्नी की ही धरोहर है जबकि नारी सप्तपदी के साथ ही एक पुरुष की धरोहर के रूप मे सिन्दूर चूडिया बिछुए पायल मगलसूत्र आदि सुहाग चिन्ह धारण करती है।

इस प्रकार पुरुष अपने अधिशासी पौरुष प्रवृत्ति से प्रेरित होकर और दूसरी ओर नारी के पुरुष के प्रति समर्पण से उत्प्रेरित होकर नारी को पूर्ण भोग्या इच्छानुरूप सहचरी समझता है। नारी द्वारा पुरुष की इच्छाओ के अनुरूप समर्पण न करने पर वह महिला के साथ हिंसक व्यवहार करता है और अपनी इच्छानुसार आचरण करने के लिए बाध्य करता है और न मानने पर बलपूर्वक या दम्भावेश मे धोखे से बहलाकर फुसलाकर नारी को पलायन कर उसको एक जगह से अपन इच्छित स्थान पर ले जाने जैसा दुष्कर्म करता है।

अन्य धारणाए भी इस मना शारीरिक सत्य से जुडी हुई हैं उनमे यह भी है कि चरित्रवान महिला को भगाकर ले जाने का कोई साहस भी नही कर सकता केवल मात्र कमजोर महिलाए ही भगाकर ले जाई जाती हैं। चरित्रवान महिला अपनी जान पर खेल जायेगी किन्तु भगा कर ले जाने वाले पुरुष का मन्तव्य पूरा नही होने देगी। इस धारणा के प्रत्युत्तर मे यह कहा जा सकता है कि वस्तुत नारी के विरुद्ध पलायन के अपराध परिस्थितिजनक अधिक हैं और चारित्रिक कम। दुश्चरित्रा को भगाने की कोई आवश्यक्ता ही नही होती वह तो स्वय ही भाग कर चली जाती है। पुरुष के सबल शिकजे मे फसने के पश्चात् चरित्रवान नारी भी क्या प्रतिरोध व प्रतिक्रिया व्यक्त कर सकती है? यहा तक कि यदि उसे आत्महत्या करने का अवसर व साधन भी उपलब्ध न होने दे तो फिर मृत्यु का वरण तब कैसे करेगी।

साथ म ही यह भी धारणा है कि अपहृता और अपहरणकर्ता महिला और पुरुष अजाने प्राणी नही होते। वस्तुत इच्छा से भागने की योजना बनाई जाती है और इसक पश्चात् पकडे जाने पर या माता पिता पति या ससुराल पक्ष के दबाव मे आकर बलपूर्वक भगाय जाने की कहानी बना ली जाती है। हमारे विचार मे हम

उ ही प्रकरणो की बात करें जिनम वस्तुत अपहरण अनिच्छा से धोखा देकर या बलपूवक किया गया है। ऐसे प्रकरणा मे डकती या फिरौती के रूप म योजना वद्ध रूप से अजान महिलाओ का अपहरण किया जा सकता है किन्तु कामेच्छा पूरी करने जीवन साथी बनाने, काम क्रीडा वेश्यावृत्ति के लिए बचने के उद्देश्य से किया गया अपहरण जानकार महिलाओ का ही सम्भव है जो योजनावद्ध भी हो सकता है और आकस्मिक भी। किन्तु प्राप्त जानकारी के आधार पर ऐसे अपहरण काण्ड योजनाबद्ध ही अधिक होत हैं।

अपहर्ता महिलाएँ

यह आवश्यक नही कि केवल कुमारिया ही अपहृत की जाती हो। अपहरण की शिकार कोई भी नारी हो सकती है चाहे वह अविवाहित है विवाहित है परित्यक्ता है तलाक शुदा है या विधवा है। अपहरण व्यक्तिगत स्थितियो व परिस्थितियो पर निभर करता है। जहा तक अपहृता महिला की आयु का प्रश्न है यह महिला बालिका के रूप म तो फिरौती या बडी होने पर वेश्यावृत्ति हेतु तैयार करने के उद्देश्य से की जा सकती है जिनकी सख्या तुलनात्मक दृष्टि से कम ही होती है अधिकतर सख्या 16 से 21 आयु की महिलाओ की ही हो सकती है जा कि अपनी कौमाय स्थिति को पार करत करत यौवन की दहलीज पर पाव रखते परिस्थितिया के वशीभूत अपहरण की शिकार हो जाती है। इनम भी अविवाहित महिलाओं की सख्या ही अधिक हाती ह। विवाहित महिलाओ का अपहरण जातिगत परम्पराओ के आधार पर भी होता है। कुछ जातियो म पति की मृत्यु के पश्चात् नाता करने क पूव झगडा राशि' न चुकाने पर नाते के लिए अनिच्छा दिखान पर महिलाओ का अपहरण कर लिया जाता ह। कुछ जातियो म अपहरण कर विवाह करने का वैध माना है जिसको आसुरी विवाह की श्रेणी मे आवश्यक माना जाता है। ऐसी मान्यताओ के आधार पर किया गया अपहरण भारतीय दण्ड सहिता के अन्तगत यह दण्डनीय अपराध है चाहे जातिगत मूल्य पारिवारिक परम्पराए कुछ भी रहे हा। अपहरणकर्त्ताओ की आयु के बारे म विचार करने पर युवा वग ही अपहरण जसे आपराधिक कृत्यो मे मुख्य भूमिका अभिनीत करते हैं चाहे योजना बनाने साथ दने उकसाने मे वयस्क साथी सहयोगी के रूप मे हो सकते है। युवा आयु वग 18 से 21 वष तक का ही माना गया है। अध्ययनो से यह तो स्पष्ट है कि अधिकाशत अपहरण प्रकरणो मे अपहरणकर्त्ताओ की आयु अपहृता महिलाओं से अधिक हाती है।

सावन मे मरुस्थल भी चहकते हैं म द हवा मे बादल भी महकते हैं तो युवा अवस्था वह आयु है जब तक जीवन शर शक्ति व सामथ्य से लबालब भरा रहता है और किनारो को तोडता सा लगता है। इस आयु मे बहकना स्वाभाविक है भटकाव स्वाभाविक है और अविवेकपूण कृत्य स्वाभाविक है।

शिक्षा

शिक्षा का अपहरण के अपराध से क्या सम्बन्ध हो सकता है ? इस बारे मे हमारे विचार मे अशिक्षित व्यक्ति ही अपहरण के कुकाण्ड अधिक कर सकते हैं। शिक्षित व्यक्ति कानून के परिणाम जानता है और शिक्षा व्यक्ति को तार्किक दृष्टिकोण प्रदान करती है जिसके कारण शिक्षित व्यक्ति तर्क का सहारा लेता है और तर्क शिक्षित व्यक्ति को भीरू बना देता है जिससे शिक्षित व्यक्ति कम ही सख्या मे यह अपराध करते हैं।

धर्म व अपहरण

अपहरण का सम्बन्ध धर्म से क्या है ? इस प्रश्न के उत्तर के रूप मे धर्म के सदर्भ मे यह कहा जा सकता है कि अपहरणकर्त्ता केवल एक ही धर्म को मानते हैं—नारी और पुरुष धर्म उसके लिए नारी न हिन्दू है न मुस्लिम है न ईसाई न पारसी और न यहूदी। उनके लिए तो नारी केवल मात्र नारी है और पुरुष का धर्म है येन केन प्रकारेण उसको भोगना एव शोषण करना। उनके लिए नारी पीयूष स्रोत सी जीवन के अन्दर समतल मे बहने वाली अलौकिक वस्तु नहीं है अपितु दो देहों के बीच विशुद्ध व्यापार मूलक वस्तु है। धर्म जाति रग किसी की भी न सीमा है न बधन। केवल प्यार करने वाला मन देखता है। अपहरण करने वाला तन और मन दोनो ही नही देखता। वह नारी को अपहृत कर शोषित करना चाहता है। ऐसा कर पुरुष पशु हो जाता है।

आर्थिक स्थिति एव अपहरण

जैसा कि हमारा विचार है कि अपहरण जैसा अपराध परिस्थिति जन्य है व स्थिति मूलक है। अपहरणकर्त्ता की आर्थिक स्थिति का अपहरण के अपराध से क्या सम्बन्ध है ? का जानकारी करने की आवश्यकता इस कारण भी है कि अपहरण कर्त्ता अपहरण के साधन कैसे जुटाता है ? पुलिस व न्यायालय से बचने के लिए क्या उपाय करता है ? अपहरण काल मे अपहरण की शिकार महिला की आवास व भोजन व्यवस्था पर व्यय किस प्रकार करता है ? यद्यपि अपहरण एक पारिस्थितिक अपराध है तथापि अपहरण मे काफी राशि व्यय होती है और बाद मे पकडे जाने पर न्यायालय मे मुकदमा होने पर अपने बचाव मे भी व्यय करना होता है। इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि साधन सम्पन्न व्यक्ति ही अपहरण जैसा अपराध करते हैं गरीब व्यक्ति ऐसा नही कर सकता।

इस विषय पर जो अध्ययन हुए हैं उनके निष्कर्ष से यह तथ्य प्रकट होता है कि अधिकाश व्यक्ति मध्यम वर्ग के ही होते हैं जो अपहरण जैसा अपराध करते हैं। अपराध की शिकार महिलाए भी अधिकाश सख्या मे निम्न मध्यम आय वर्ग की होती है।

वस्तुत अपहरण मे दो ही बिन्दु सामने आते हैं—या तो वे व्यक्ति अपहरण करते हैं जिनको न सुबह की चिन्ता है और न ही साय की जिनका न कोई अपना है और न कोई पराया उनका एक पैर रेल मे है तो दूसरा पैर जेल मे चला जाये तो भी उनको कोई चिन्ता नही है। दूसरे प्रकार के व्यक्ति वे होते हैं जिनके पास इतने साधन हो कि वे अपहरण का व्यय वहन कर सकें वे इतने साधन सम्पन्न भी नहीं होते है कि विधिवत विवाह का व्यय उठा सकें एव महिला को जीवन साथी के रूप मे आर्थिक व सामाजिक सुरक्षा प्रदान कर महिला के माता पिता को सतुष्ट कर विवाह कर सके। ऐसे व्यक्ति निम्न आय वर्ग या निम्न मध्य वर्ग के ही होते हैं। साधन सम्पन्न सभ्रात व्यक्ति अपहरण जैसा कार्य सामान्यतया नही करते दिखाई देते, क्योकि इनकी कचनबाला किसी भी बाला को क्रय करने का सामर्थ्य व शक्ति रखती है।

अपहरण की शिकार महिलाओ की आर्थिक स्थिति के बारे मे भी कहा जा सकता है कि दैव भी दुर्बल के घातक होते हैं। एक नारी अबला और दूसरे निर्धन व साधनहीन परिवार की सदस्या। इस प्रकार निर्धन निम्न आय वाले व निस्सहाय तथा दुर्बल परिवार की महिलाए ही अपहरण की शिकार होती हैं क्योकि अपहरण कर्त्ता यह जानता है कि निर्धन व नि सहाय व्यक्ति की सुनवाई कही पर भी नही होती है और वह रो धोकर चुपचाप बैठ जायेगी। समय निकलने पर सब ठीक हो जायेगा। अपहृत महिला के बच्चे होने पर समय के साथ-साथ सभी घाव भर जाते हैं और सभी सामान्य होकर कडवी सच्चाई को स्वीकार कर लेते हैं। निर्धन या निम्न आय के परिवार की ओर से अधिक प्रतिरोध की आशका न होने पर ही इस वर्ग की महिलाओ की सख्या अपहरण की शिकार महिलाओ मे अधिक होना सामान्यतया बुद्धितर्क की कसौटी पर सही माना जा सकता है।

अपहरण क्यो ?

महिला अपहरण क्यो किया जाता है ? महिला अपहरण के प्रेरक तत्व क्या हैं ?

मुख्य रूप से निम्नाकित कारण परिलक्षित होते हैं—

(1) काम क्रीडा हेतु

जो महिलाए चरित्रवान होती हैं किन्तु परिस्थितिवश पर पुरुष उस पर गन्दी दृष्टि रखना प्रारम्भ कर देता है। वह पर पुरुष को इच्छा की पूर्ति नही करने देती है तो बलात् उस महिला का अपहरण काम तुष्टि के लिए किया जाता है।

(2) विवाह के लिए

कोई व्यक्ति किसी महिला से विवाह करना चाहता है किन्तु आर्थिक स्थिति, जाति व धर्म के बन्धन बीच मे आ जाते हैं। वह अपनी इच्छित महिला से विवाह

नहीं कर पाता है तो वह उसको अपनी अर्धांगिनी बनाने के लिए आतुर हो जाता है। जब वह देखता है कि उस महिला का विवाह अन्यत्र हो रहा है या होने वाला है तो वह विवेकहीन होकर उस महिला का अपहरण कर ले जाता है ताकि वह स्वयं उसके साथ विवाह कर उसको अपना सके।

(3) विक्रय करने हेतु

ऐसे गिरोह भी हैं जो महिलाओं को बेचते है। सुन्दर महिलाओं का अपहरण कर दूसरे व्यक्तियों का बेचते हैं जो इनसे मजदूरी कराकर घरेलू नौकरानियां रखकर या फिल्मो मे एक्स्ट्रा की भूमिका म सप्लाई कर काफी मुनाफा कमाते हैं। यह भी देखने म आया है कि जिस किसी की स्त्री की मृत्यु हो जाती है या जिस किसी के खराब कुल का होने के कारण या गन्दी आदतें होने के कारण या वृद्धावस्था प्राप्त कर लेने के कारण विवाह नहीं हो पाता ऐसे व्यक्तियों को अपहृत महिलाए बेच दी जाती हैं।

(4) वेश्यावृत्ति हेतु

कुछ गिरोह होते हैं जो कि देह व्यापार म सलग्न है। वे भोली-भाली, महत्वाकांक्षी बालाओं परेशान विवाहित महिलाओं को वैभव के स्वप्न दिखाकर प्रेमजाल मे फसाकर धोखा देकर या बलपूर्वक अपहृत करके ले जाते हैं और फिर उनको वेश्यावृत्ति कराने वाले गिरोह को मूल्य लेकर बेच देते हैं।

(5) भिक्षावृत्ति के लिए

यह बहुत ही कडवा सत्य है जो कि भारतीय समाज के लिए बहुत ही चिन्तनीय विषय है कि कुरूप महिलाओं का अपहरण इसलिए भी किया जाता है कि उनको भिक्षा मगवाने वाले व्यापारी गिरोह को बेच दिया जाये। ऐसी अपहृत महिलाओं के साथ बहुत ही निन्दनीय हिंसात्मक व्यवहार किया जाता है। ऐसी अपहृत महिलाओ का और अधिक विकृत व कुरूप बनाया जाता है उनके अगो को काट दिया जाता है उनके बालो की हजामत बना दी जाती है उनकी आकृति ऐसी बना दी जाती है जिससे कि उनको देखते ही दया का भाव पैदा हो करुणा जाग उठे जिससे उनको अविलम्ब भिक्षा दे दी जावे। इस दिन भर की भिक्षा की राशि मे से केवल जीने मात्र के लिए ही राशि उस महिला भिक्षिका के पास छोड दी जाती है और शेष राशि उस गिरोह का सरदार ले लेता है। यदि वह देने म आना-कानी करती है तो फिर इस भिक्षुणी महिला की पिटाई भी क्रूरतापूर्वक की जाती है। नशा करने की आदत भी इन महिलाओ मे डलवा दी जाती है।

(6) प्रतिशोध के रूप मे

प्राय ऐसा देखने में आया है कि ग्रामीण क्षेत्रो मे अधिक सामाजिक अतर्क्रिया होने से व्यक्तियो मे पारस्परिक सहयोग सहअस्तित्व व सहकारिता व

प्रेम की भावना अधिक विकसित हो ती है किन्तु साथ-साथ अति परिचय अवज्ञा का कारण भी बन जाना है। समीपस्थ प्राथमिक सम्बन्धों वाले समूह के बीच सामाजिक अन्तर्क्रिया के फलस्वरूप आपस म वमनस्य भी हो जाता है जो समय के साथ साथ या तो समाप्त हो जाता है या फिर विकराल रूप धारण कर लता है। यह वैमनस्य पीढी दर पीढी चलता है जो व्यक्तिगत पारिवारिक या जातिगत तथा धार्मिक सभी क्षेत्र व स्तर पर हो सकता है। इस वैमनस्य के वशीभूत अन्य शत्रु परिवार जाति या धर्म की महिलाओं का अपहरण कर लिया जाता है। चाहे इससे प्रतिशोध व वमनस्य को और बढावा मिलता है और शत्रुता और बढ जाती है किन्तु फिर भी प्रतिशोध, प्रतिरोध प्रतिकार का यह खेल अबलाओं के साथ खेला जाता है।

(7) जातिगत परम्पराओं के कारण

आज भी भारत म एसी जातिया एव जन जातिया हैं जिनम महिलाओं का अपहरण कर विवाह किये जाते ह पुनर्विवाह भी किय जाते है। परिवार म जाति गत विवाद मे झगडे की राशि क्षतिपूर्ति के रूप मे न दने पर महिलाओ का अपहरण कर लिया जाता है जहा पर उनको दासी के रूप तक म रक्खा जाता है दूसरी औरत के रूप मे रखा जाता है जहा पर उसके श्रम व शरीर दाना का शोषण होता है।

महिला अपहरण कैसे

महिलाओं का अपहरण तीन प्रकार से सम्भव हो सकता है—(1) छल से (2) कपट से व (3) बल स। भाई बन कर झूठे पत्र लिखाकर अनिष्ट की जसे दुघटना बीमारी मृत्यु का बहाना बनाकर, नशे की चीज मिठाई आदि मे मिलाकर खिलाने भिखारी या वेष बदलकर दूर का रिश्तेदार बनकर धार्मिक गुरु बनकर आदि ढग काम मे लेकर महिलाओ को बहकाकर फुसलाकर अपहृत कर ले जाया जाता है। अकेला मिलने पर या अकेले म बहाना बनाकर बुलवाने पर अनिच्छा दिखाकर बलपूवक महिलाओं को अपहृत किया जाता है। यद्यपि अधिकाश अपहरण प्रकरण जानकार महिला व पुरुषो म बीच हा होते हैं और अनजान महिला व पुरुषो के बीच अपहरण की घटनाए कम ही घटित होती हैं तथापि बलपूवक अपहरण मे हिंसा का प्रयोग पुरुष द्वारा महिला के विरुद्ध तभी किया जाता है जबकि वह प्रति रोध भयकर रूप से असहनीय स्तर पर करती हो। महिलाओं को भविष्य के सुनहरे स्वप्न दिखाकर अपहरण करने वाले विवाह करने का वादा कर अपहरण करने वाले अवसर मिलने पर अपहरण करने वाले प्रेम रोग मे ग्रसित व धोखा देकर अपहरण करन वाले अपहरणकर्त्ता कितने ही रूप मे सामने आते हैं।

हमारी दृष्टि म अधिकाश अपहरण काण्ड सुनियोजित होत हैं। एक व्यक्ति बलात्कार तो कर सकता है किन्तु एक व्यक्ति अपहरण नही कर सकता। अपहरण

मे अपहरणकर्त्ता को अन्य का सहयोग अवश्य लेना पडता है। चाहे यह सहयोग मित्रो द्वारा हो किराय के साथियो द्वारा हो परिवार के सदस्यो द्वारा हो।

अपहरणकर्त्ता मुख्य रूप से दो प्रकार के होते है—(1) आकस्मिक (2) आदतन।

आकस्मिक अपहरणकर्त्ता अपने व्यक्तिगत कारणो से महिला अपहरण अपराध करते हैं जबकि आदतन अपहरणकर्त्ता किसी दल विशेष के सदस्य क रूप मे या अपहरण कृत्य को व्यापार समझकर महिलाओ का अपहरण करते हैं। आदतन अपराधी न केवल समाज विरोधी हैं समाज की व्यवस्था विरोधी है अपितु मानवता के नाम पर कलक हैं वे नारी जाति के शत्रु हैं वे नारकीय जीव हैं जो पुरुष की सबलता का दुरुपयोग कर नतिकता के निम्नतम गत मे गिरे हुए हैं।

महिला अपहरण प्रकरणों की रिपोर्ट क्यो नहीं ?

वस्तुत महिला अपहरण प्रकरणो की रिपोट उतनी नही की जाती जितनी सख्या मे वे अपहरण घटित होते हैं। इसके अनेक कारण हैं जिनमे मुख्य रूप से निम्नाकित कारण हैं—

(1) लोकलाज का भय

अपहृता महिला के परिवार के सदस्य यह निणय नही ले पाते कि वस्तुत महिला स्वेच्छा से पलायन कर गयी है या उसको बलात भगा कर ले जाया गया है। इसके साथ साथ यह भावना भी रहती है कि रिपोट करते ही उल्टी प्रक्रिया प्रारम्भ होगी। सारे गाव म सम्बन्धियों मे मित्रो, मे बदनामी होगी और वे सहानुभूति जताने के नाम पर भाति भाँति की बातें बनायेंगे मिलने आयेंगे और प्रत्येक बात जानना चाहेगे जिससे और अधिक परेशानिया व कष्टकारी स्थितिया उत्पन्न होगी। यदि महिला लौट कर आ भी गई या उसको तलाश कर ले आया भी गया तो फिर एक बार रिपोट करने पर वे लाजलाज से बचने लिए कोई तक नही दे पायेंगे और घटना को छिपा नही पायेंगे। इस कारण भी रिपोट नही की जाती है। इस घटना का परिवार की अन्य कुवारी कयाओ के विवाह आदि पर भी विपरीत प्रभाव पडता है। परिवार म जो कुवारे युवक है उनको भी वाछित वधू नही मिल पायेगी। उनका परिवार कलकित परिवार कहलायेगा। इस कारण भी रिपोट नही करवाई जाती है। इसके अतिरिक्त भारत म आपदा भाग्य की देन मानी जाती है और इस प्रकार ईश्वरीय याय के सदभ मे सब्र कर बैठ जाना भी व अपहृता को मरा मान लेना भी रिपोट न कराने के पर्याप्त कारण है।

(2) पुलिस की भूमिका

पुलिस की भूमिका नारी अपहरण जैसे संवेदनशील प्रकरणों में भी पुलिस कर्मियों की व्यक्तिगत मान्यताओं पर ही आधारित है, अन्यथा सामान्यतया पुलिस की भूमिका प्रश्नचिन्हात्मक ही होती है। रिपोर्ट दर्ज कराते ही पुलिस कर्मी हरकत में आते हैं और अपहृत महिला के घर के सदस्यों से इस प्रकार पूछ ताछ करते हैं मानो वे सदस्य ही अपहरण के दोषी हो तलाश कर वापस लाने के नाम पर ये विस्तृत जानकारी लेते हैं न्यायिक व्यवस्था के एक हिस्से के रूप में कार्यवाही न कर वे नीति के उपदेशक बन कर नतिकता के उपदेश झाड़ने लग जाते हैं जिससे शर्म से गड़ा परिवार और भी लज्जा महसूस करता है। पुलिस के साधारणतया नकारात्मक दृष्टिकोण व व्यवहार के कारण अपहरण प्रकरण की रिपोर्ट नहीं करायी जाती है। वैसे भी भारत में मान्यता है कि जिस किसी के घर में पुलिस वर्दीधारी दिखाई दे यह मान लिया जाता है कि इस घर के बुरे दिन आ गये और आस पास के पड़ौसी बिना डर के दूर से बातें बनाने लगेंगे, अपितु पास नहीं आयेंगे क्योंकि उनको डर है कि पुलिस अनावश्यक रूप से किसी को भी परेशान कर सकती है। यह सभी घटनाओं से अधिक बड़ी दुघटना मानी जाती है। पुलिस अन्वेषण सहयोग के नाम पर जीप आदि की व्यवस्था करानी है बरामदगी के नाम पर काफी व्यय करना होता है। इस पर भी अपहरण की शिकार महिला के सदस्य अपनी ओर से वकील भी करते हैं। इस प्रकार भारी व्यय करना होता है। अतः सामान्यतया पुलिस भय व व्यय भार भय से पुलिस में रिपोर्ट नहीं कराई जाती है।

(3) न्यायालय की भूमिका

खुली अदालत मे बहस के नाम पर इस प्रकार के खुले आरोप व अन्वेषणात्मक प्रश्न पूछे जाते हैं कि लज्जा का आवरण तार तार कर दिया जाता है। इन प्रश्नों का उत्तर न दिया जाये तो अभियुक्त निर्दोष सिद्ध होता है और उत्तर दिया जाये तो पूर्णतया निलज्ज होना पड़ता है। इस प्रकार न्याय बहुत ही महंगा पड़ता है जो परिवार की सामाजिक प्रतिष्ठा के ह्रास की तुलना मे और भी महंगा होता है। इस कारण भी रिपोर्ट नहीं करायी जाती। न्याय कहाँ सस्ता है? कितना न्यायशील है? कितना त्वरित है? विलम्बित क्यों है? भारतीय न्याय व्यवस्था के संदर्भ में ये प्रश्न निरुत्तरित हैं। न्याय की दुरूह प्रक्रिया अकारण व समय नष्ट करने वाले न्याय तन्त्र के भय से भी रिपोर्ट नहीं कराते। न्याय के चक्कर मे पड़ने पर रेस्क्यू होम (सम्प्रेषण गृहों) के भी चक्कर खाना पड़ता है।

कभी कभी महिला परिवार पक्ष यह निर्णय नहीं ले पाता कि वास्तव में पुलिस रिपोर्ट कराना उचित होगा या नहीं। वे आस-पास के ठिकानों पर संदेश

वाहक भेज कर एक-दो दिन तो जानकारी कराते हैं और फिर न मिलने पर विचार होता है कि अपहरण की घटना की तो तत्काल रिपोट होनी चाहिए। देर का लाभ अभियुक्त को मिलेगा यह भी पुलिस मे रिपोट न करने का कारण होता है।

(4) अपहरणकर्त्ता का भय

कभी कभी यह जानकारी मे आ जाता है कि अमुक-अमुक व्यक्तियो द्वारा अपहरण किया गया है किन्तु उस व्यक्ति या गिरोह के शक्तिशाली होने खूखार, प्रतिरोधी होने के डर से भी पुलिस म रिपोट नही करायी जाती। यह भी डर लगता है कि वही अपहरणकर्त्ता परिवार के अन्य सदस्यो का भी अपहरण न कर ले।

(5) अपहर्ता को मार देने का भय

कभी-कभी यह भी डर होता है जो स्वाभाविक भी है कि झूठी साक्षी नष्ट करने के चक्कर म पुलिस से बचने के लिए अपहर्ता को ही मार दें। इस डर से भी पुलिस मे रिपोट नही करायी जाती।

4 महिला उत्पीडन

धमप्राण भारत देश मे कौशल्या व देवकी के देश मे सीता व सावित्री के देश मे मैत्रेयी व गार्गी के देश म जीजा व अहिल्या के देश मे शास्त्रोक्ति है कि जहा नारियो की पूजा होती है वहा पर ही देवता निवास करते हैं। फिर भी व्यवहारिक रूप मे विडम्बना है कि देवी देवताओ की मूर्तियो व चित्रो की साक्षी मे नारी के साथ दुर्व्यवहार किया जाता है जूतो से लातो से घूसा से डण्डों से पीटा जाता है। नारी के सुहाग के सिन्दूर मे सर से बहता रक्त जब कपोलो पर टप टप कर आसुओ की बूदो से मिल कर बहता है तो क्या यह भारतीय नारी एक पूजनीय देवी रूपा प्रतीत होती है या फिर बली का बकरा की तरह निस्सहाय पीडा की पुतली।

जिस स्त्री को सात फेरों के साथ अग्नि की पवित्र साक्षी मे मन्त्रोच्चारण के बन्धन में समपण के रूप मे सुरक्षा देने हेतु पाया जाता है जिसको पाक कलमे पढकर ताजिन्दगी सुख व दुःख मे साथ रहने की कसमे खाकर जिसके नफ्स का पूरा अख्तियार किया जाता है जिसको गिर्जा मे पवित्र बाईबल की कसम खाकर आजीवन साथ निभाने के लिए स्वीकार किया जाता है उस पत्नी के साथ जिसने अजान पुरुष के साथ केवल मात्र विश्वास के धागे से अपने सवस्व व सम्पूण

जीवन की शवास बाघ भी हो और जिसने उस अजान पुरुष को जीवन रूपी नाव का एकमात्र विश्वसनीय केवट समझ लिया हो जिस जीवन का सारा सुख भविष्य के स्वप्न की कल्पना एव कामनायें एकाधिकार देकर समझ ली हो जो जन्म जात माता पिता के घर को एकमात्र सामाजिक परम्पराओ के विश्वास अनुशासन मर्यादा व बन्धन मे बध कर छोडकर अजान दिशा म बढ गयी हो, ऐसी नारी के साथ जब वह पत्नी रूप म स्वयं अपरण कर चुकी है के साथ पशुवत व्यवहार गाली देने पीटने कूटने घर से बाहर निकालने की धमकी देने जसा घृणित व्यवहार अवश्य ही चिन्तनीय व्यवहार है जो चोट लगने पर अपराध की परिभाषा म आता है।

पुरुष अपने पौरुष के मद मे नारी को अपने से निबल व तुच्छ समझता आया है और नारी की समपणमयी आदिम मूल प्रवृत्ति जिसके वशीभूत नारी ने पुरुष को भाग्य विधाता सुखान-दाधिष्ठाता सकटमोचन सुरक्षा सबल मान लिया है उससे पुरुष के पशुवत अहम् को और भी बल मिलता है और इसी पाशविक प्रवृत्ति से प्रेरित होकर पुरुष नारी पर नानाविध अत्याचार करता है अनाचार करता है दुराचार करता है।

पत्नी को क्यो पीटा जाता है ?

इस प्रश्न का उत्तर समाजशास्त्री अपराधशास्त्री व मनोशास्त्री विभिन्न प्रकार से देते हैं। जबकि मनोशास्त्री इस प्रश्न का उत्तर व्यक्ति के स्रोतिक व्यवहार मे ढूढते हैं तो समाजशास्त्री सामाजिक व पारिवारिक असयोजित परिस्थितियो मे उत्तर तलाश करते हैं। किन्तु अपराधशास्त्री तो इस व्यवहार का उत्तर दण्ड सहिता की धाराओ के उल्लघन मे पाते हैं और हथकडिया बेडियो सीखचो व दीवारो म इसका हल ढूढ निकालते हैं।

पत्नियो के साथ हिंसात्मक दुर्व्यवहार के प्रश्न का उत्तर द्विपक्षीय होगा। इस पर विचार पति और पत्नी दोनो ही पक्षो को दृष्टिगत रखते हुए देना होगा। साधारणतया तो पति और पत्नी सदा से एक साथ एक ही छत मे युवावस्था से जीवन पर्यन्त साथ रहने वाले प्राणी हैं। पित्राधिशासी पारिवारिक सामाजिक व्यवस्था म पिता पुरुष ही प्रधान होता है। जसे पुरुष की इच्छा के विरुद्ध काय करने पर उसके विचारो से सहमत न होने पर उसके स्वेच्छिक काय म बाधा डालने पर उसकी आदतों मेल मिलाप की आलोचना करने पर उसके परिवार के सदस्यो से सामजस्य स्थापित न करने पर, पति की बुरी आदतो जसे शराब जुआ परस्त्री गमन चोरी डकती व अनतिक काय करने से रोकने पर पति को क्रोध आने पर भी तक वितक करते रहने गाली का जवाब गाली से देने पर फिजूल खर्ची करने पर घर के सामान

को सम्भाल कर न रखने पर बच्चो की देखभाल ठीक से न करने पर बच्चो पर नियन्त्रण न रखने पर हर समय मुह चढा कर अलग-अलग बठे रहने पर परपुरुष के साथ मेल मिलाप बढाने पर हास परिहास मे मना करने पर भी अधिक रुचि लेने पर, अपने पीहर के सदस्यो की अनावश्यक प्रशसा करने पर किसी बिन्दु पर अनावश्यक रूप से बहस करने पर अनावश्यक रूप से आलसी होने पर, असामान्य रूप से भावुक व सवेदनशील होने पर घर की गुप्त बात या गोपनीय प्रकरणो का पडौस या बाहर के व्यक्तियो को कहने पर घर की कमियो का भण्डाफोड करने पर कमजोर आर्थिक स्थिति से सामजस्य स्थापित न करने पर अधिक फशन परस्त या फिर बहुत ही आलसी होकर गन्दा रहने की आदत होने पर पत्निया पति के हिंसात्मक दुव्यवहार की शिकार होती आयी हैं। अशिक्षित महिला भी पिटती है शिक्षित भी पिटती है गरीब की बेटिया भी पिटती हैं तो धनवानो की सुपुत्रिया वे भी। यहा तक कि राजाओ की रानिया भी पति के हिंसात्मक व्यवहार की शिकार होती आई हैं। वमनस्य या प्रतिद्वन्द्वात्मक सघषमय वचारिक स्थितिया आने पर जब पुरुष तक से नही समझा पाता तो विवेकहीन स्थिति मे पत्नी पर पुरुषाथमद मे हाथ उठा लेता है। पत्नी द्वारा अपनी जिह्वा रूपी हथियार चलाये जाने पर प्रतिरोध के उत्तर मे पुरुष और अधिक क्रोधी हो उठता है। वह और भी अधिक हिंसात्मक दुव्यवहार करता है। यदि चोट लग जाती है ता पुरुष का कृत्य आपराधिक व्यवहार की सज्ञा मे (भारतीय दण्ड सहिता की धारा 323 324 325 आदि) आ जाता है।

पति के सदभ मे पत्नी के विरुद्ध हिंसात्मक दुव्यवहार पक्ष पर विचार करने पर कितने ही मनोवैज्ञानिक या सामाजिक कारक सामने आते हैं जिनका विवरण निम्नाकित है—

(1) बाल्यकाल के हिंसक अनुभव

पति की बाल्यावस्था मे पिटाई का अनुभव मनोवज्ञानिक दृष्टि से एक कारण है। **अपने प्रारम्भिक जीवन** मे यदि किसी पति की बालक रूप मे अधिक पिटाई हो तो उस अनुभव से प्रताडित व पीडित पति हिंसात्मक दुव्यवहार को ही समस्या के समाधान का एकमात्र साधन समझ कर अपनी पत्नी पर हाथ उठा लेता है और उसकी दृष्टि मे यह स्वाभाविक व्यवहार ही होता है जो कि आक्रोशात्मक स्थिति की प्रतिक्रिया मात्र है। जब बाल्यकाल की निराश व हताशपूर्ण भावनात्मक स्थितियो का उत्तर हिंसात्मक व्यवहार मे सीखा गया, तो फिर युवास्था मे भी ऐसे सवेगात्मक व्यवहार की पुनरावृत्ति कोई नई बात नही होती। इस धारणा को पीढीगत या सवेगात्मक वैचारिक सिद्धान्त से भी सम्बल मिलता है जिसके अनुसार हिंसात्मक परिवेश मे पला हुआ व्यक्ति हिंसात्मक व्यवहार मे ही अपनी

समस्याओं का समाधान तलाश करेगा और वह वयस्कावस्था में भी उसके बच्चों होने व पत्नी के प्रति हिंसक होने की सम्भावनायें बनी रहती हैं। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से सामाजिक सीख का। सिद्धान्त भी इस धारणा का समर्थन करता है, जिसके अनुसार हिंसात्मक वातावरण में जिस बालक का समाजीकरण हुआ है उस बालक ने हिंसात्मक विधि से सामाजिक मूल्यात्मक व्यवस्था के प्रति समायोजन सीखा है जो फलदायी रहा है तो उसका हिंसात्मक व्यवहार के माध्यम से समस्याओं के समाधान के प्रति विश्वास दृढ हो जाता है जिसकी पुनरावृत्ति वह अपनी पत्नी और बच्चों के प्रति व्यवहार कर करता है। ऐसा व्यक्ति केवल मात्र अपने परिवार जनों के प्रति ही हिंसात्मक नहीं होता अपितु परिवार से बाहर के व्यक्तियों के प्रति भी हिंसक हो उठता है यदि वैयक्तिक व सामाजिक परिस्थितियों का दबाव उस पर पडता है।

(2) विपरीत आर्थिक परिस्थितिया

विपरीत आर्थिक परिस्थितिया भी गृह कलह का कारण रहती हैं। सही कहा है कि प्रेम सम्पन्नता में बढता है और विपमता म कम हो जाता है। आर्थिक कठिनाइयों से त्रस्त परिवार में अभावों की त्रासदी अपना खुला रूप दिखाती है जो आधे पेट खानें, आधे नगे रहने व उधार क दबाव से दबी जिन्दगी के अधीन छिपे सत्य म स्पष्ट परिलक्षित होता है। पति की बेराजगारी सास ससुर व ननदों तथा देवरों के ताने पारस्परिक व्यवहारिक भेदभाव बच्चों के प्रति दुर्व्यवहार आवश्यकताओं की पूर्ति मे खीच तान, बीमार होने पर इलाज का भी कुप्रबध ये ऐसी विपम स्थितिय जो सुख की सेज पर काटों की चादर बिछा देती हैं और फिर ऐसे परिवार मे होता है—गृह कलह मार पीट इत्यादि। ऐसे परिवारों यदि सयुक्त परिवार होते हैं तो पति की निराशा पत्नी को ही हिंसात्मक दुर्व्यवहार के रूप मे झेलनी पडती है व सहनी पडती है। सयुक्त परिवार म जब सत्ता पिता के हाथ मे होती है और वह अपने परिवार के मुखिया के रूप मे कमाई की दृष्टि से अधिक आमदनी करने वाले पुत्रों व कम आमदनी वाले पुत्रों मे भेदभाव करता है तो स्वाभाविक है मतभेदों का उभरना निराशा का आक्रमकता मे बदलना और उसका शिकार होती है—निरीह पत्नियाँ।

(3) दुर्व्यसनी पति

पति म जब कोई दुर्व्यसन होता है जैसे नशा करने का जुआ खेलने का, परस्त्री गमन का तो ऐसी स्थिति म परिवार म कलह बना रहता है। पत्नी अपने नशेडी पति के साथ उस सीमा तक तो निर्वाह लेती है जब तक नशा उसके सुखी पारिवारिक जीवन म बाधक न बने किन्तु जब नशा जीवन मे दुःख के बीज बोता

है पति की सारी कमाई शराब देवता या अफीम देवी या भग भवानी को या लेडी स्मेक या बदनाम ब्राउनशुगर या मेन्ड्रेक्स को समर्पित हो जाती है तो यह नशीली चिंगारी पत्नी के स्वप्निल संसार में आग लगा देती है जिससे जो धुआं निकलता है उसमें उसका सारा पारिवारिक सुख कालिमामय हो उठता है और शनैः शनैः जलकर स्वाह हो जाता है।

एक स्थिति तो वह है जब व्यक्ति शराब को पीता है, किन्तु धीरे-धीरे एक स्थिति वह भी आती है जबकि शराब फिर व्यक्ति को पीने लग जाती है और इस स्थिति का भान जब होता है तब कि व्यक्ति बिना समय ही चिन्ता किये, जब चाहे सवेरे से ही पीना प्रारम्भ कर देता है। शराबी कहलाने वाले व्यक्ति के रक्त में शक्तिह्रासी तत्वों की मात्रा अधिक हो जाती है जिसके कारण रक्त में व्यक्ति को स्नायु तंत्र को नियंत्रित करने की शक्ति नहीं रह पाती। अतः शराबी व्यक्ति का व्यवहार असन्तुलित हो जाता है विवेकहीन होने पर वह हिंसक हो उठता है। आम धारणा यह है कि शराब पीने से व्यक्ति में स्फूर्ति आती है शक्ति आती है एवं उसमें साहस का संचार होता है, किन्तु मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में यह धारणा गलत सिद्ध हुई है जिसके अनुसार शराब पीने से व्यक्ति का मस्तिष्क शून्य होता है जिसके कारण स्नायु संस्थान पर मस्तिष्क का नियन्त्रण ढीला पड़ जाता है जिससे शराबी व्यक्ति का व्यवहार संवेगात्मक हो उठता है वह विवेकहीन हो जाता है। इसके कारण वह अनर्गल बकवास प्रारम्भ कर देता है और उसको कोई बात अच्छी न लगने या इच्छा के विरुद्ध आचरण होने पर या चेतन मस्तिष्क के अनियन्त्रित होने से वह मुखर होकर हिंसक हो उठता है। जब पत्नी प्रतिरोध करती है व समझाने का प्रयत्न करती है तो वह उसको पीटना प्रारम्भ कर देता है।

शराब अपने में एक बुराई तो है ही इसके साथ साथ अन्य बुराइयों को भी है जन्म देती है। शराबी अकेला नहीं पीता साथियों के साथ पीने में उसे मजा आता इस प्रकार अन्य व्यक्तियों के पीने का भी उसको प्रबन्ध करना होता है, इस लत में यदि शराबी साधन सम्पन्न हुए तो वे हो धीरे धीरे मध्यवर्गीय आय जाते हैं और फिर वह दरिद्रता के वरण की ओर बढते है। वे यदि मध्य आयवर्गी परिवार हुआ तो परिवार अच्छे भोजन के लिए तरसता है शिक्षा व्यवस्था ठीक नहीं हो पाती, बोतल को गले लगाकर घूमने वाले पिता को यह होश ही नहीं रहता कि उसका भी परिवार है जिसकी उसको आवश्यकता है। शराब से नैतिक मूल्यों का ह्रास होता है। शराबी को केवल मात्र एक ही वस्तु चाहिए केवल मात्र शराब जिसको पाने के लिए वह किसी भी प्रिय वस्तु को गिरवी रख सकता है चोरी कर सकता है और झूठ बोल कर किसी को ठग भी सकता है। शराबी जुआं भी खेलने का शौक पालते हैं इस आशा में कि वे जीत कर धन कमा सकते हैं

अप्रत्याशित की आशा मे वे अपना स्वधन भीगो बठते हैं। मटके पर नम्बर व घोडो की दौड पर दाव लगाते हैं।

यही नही शराबी व्यक्ति मानवीय मूल्यो जसे व्यवस्यात्मक जीवन से दूर चला जाता है। उसका नैतिक पतन इतना हो जाता है कि सुरा के मद में वह सुन्दरी की तलाश मे भटकता है वेश्यावृत्ति परस्त्री गमन जसे अपराध भी करने लगता है। बोतल का सम्बन्ध ग्रोथल से जुडा हाने के कारण सस्ती औरतो के जाल मे फस कर वह अपना सभी कुछ खो बठता है। जीवन को नशे के सुपुद कर वह सारी अनिश्चितताये बटोरता ह। इस सबसे जन्म लेती ह पारिवारिक कलह जिसमें पत्नी ही मारपीट की शिकार होती है।

(4) पत्नी पर अत्यधिक निर्भरता

कुछ पति ऐसे होने हैं जो बचपन मे अपनी माताग्रा पर आश्रित रहते हैं। उनकी प्रत्येक आवश्यकता की पूर्ति उनकी मातायें करती हैं। उनके भोजन से लेकर पाठशाला का अध्ययन काय तथा कपडे धोने व स्कूल जाने के लिए तयार करने सम्बन्धी सारे काय मातायें करती हैं। ऐसे व्यक्ति विवाहित होने पर अपनी पत्नियो पर आश्रित हो जाते हैं। प्रत्येक आवश्यकता की पूर्ति हेतु अपनी पत्नियो पर निभर रहने हैं किन्तु जब पत्निया आशानुरूप सेवा नही कर पाती वे अपनी आलसी प्रकृति या दम्भी स्वभाव के कारण पति की निभरतानुरूप सेवा सुश्रुषा नही कर पाती तो फिर पारस्परिक भावनात्मक टूटन आरम्भ होती है और मानसिक अलगाव की स्थिति बनने लगती है जो कुसमायोजन को जन्म देता है। इस स्थिति मे पति पत्नी मे लगाव भी कम हो जाता है पारस्परिक आकपण का ह्रास होता है तो ऐसी मानसिक स्थिति मे पति को पत्नी मे बुराइया ही दिखायी देने लगती है और पत्नी के व्यवहार से क्षुब्ध होकर अपनी निराशा को हिंसात्मक आक्रामकता के माध्यम से पत्नी को मारपीट कर प्रकट करता है।

(5) चिर जीवन साथी होने की भावना का अभाव

नारी प्रेम करती है। सवस्व समर्पित करती है पति पुरुष को देवता मानकर पूजती है किन्तु वह यह सब जब करती है तब कि उसका मन होता ह। वह यह सब मन से करती है। नारी की एक भूख है कि पति उसको शरीर से नही मन से चाहे उसके प्रेम का प्रत्युत्तर दे उसकी भावना को समझे। जब ऐसा हो कि वह प्रेम तो करती है किसी ओर से और उसका विवाह हो जाता है किसी और पुरुष से तो वह फिर मन से नहीं बध पाती है। शरीर अर्पित करती है किन्तु मन समर्पित नही कर पाती। ऐसी स्थिति मे पति-पत्नी मे आपसी दाम्पत्य प्रेम की कमी रहती है। पत्नी

पुरुष की जीवन संगिनी बन कर भी जीवन साथी की भूमिका नहीं निभा पाती। पति तिरस्कृत रहता है और तिरस्कार उपेक्षा निराशा व कुण्ठा फिर जन्म देती है, जिससे पति पत्नी के बीच मानसिक अलगाव की एक लक्ष्मण रेखा खिंच जाती है, जिसके छूने पर आग की लपटें नागिन की जिह्वा सी निकलती हैं। अन्ततोगत्वा विवश पति पत्नी के प्रति हिंसक दुर्व्यवहार कर बैठता है और फिर करता ही रहता है।

ऐसा भी होता है कि पत्नी समृद्ध परिवार की होती है और पति मध्यवर्गीय। ऐसी स्थिति मे पत्नी पति के घर मे अपने आपको समायोजित नही कर पाती है और पति और उसके परिवार के प्रति उपेक्षित रहती है। बड़े घर की बेटी जब छोटे घर की बहू बन जाती है तो यह आर्थिक स्तरीय अन्तर मानसिक अन्तर को जन्म देता है। बात और बिगड़ जाती है जबकि बड़े घर की बेटी अपने पीहर के वैभव का बखान खुले आम करने लगती है और ससुराल पक्ष की आलोचना। इससे आर्थिक समता तो प्राप्त होती नहीं किन्तु पत्नी का मुंह बन्द करने का एक रास्ता पति के पास होता है वह है पुरुषार्थ का प्रयोग और पत्नी को पीट कर उसको छोटा करना व दुर्व्यवहार कर दबाना।

(6) सामजिक मूल्य और परम्परायें

पत्नी पति की धरोहर है ? पूंजी है ? जायदाद है ? क्या यही भारतीय समाज की मान्यता है ? पति परमेश्वर है पत्नी उसकी दासी है ? यह पारम्परिक धार्मिक अपेक्षा है। अत पत्नी पति व उसके परिवार के सदस्यो की बराबरी नही कर सकती है। पति का हाथ प्यार मे उठ सकता है दुलार मे उठ सकता है किन्तु कभी पति का यही हाथ पीटने मे भी उठ जाता है, जिसे सहन करना पत्नी की नियति मानी जाती है जो विडम्बना है।

6 एकपक्षीय सामाजिक आदर्श

पत्नी को पति की इच्छानुकूल समायोजित करना है, उसके परिवार के परिवेश से मेल बिठाना है पति तो परमेश्वर है वह पत्नी की इच्छानुसार अपने को भला क्यो बदलने लगा ? पति की माता जगत् जननी है क्योकि वह पति परमेश्वर की माता है उसके भाई परमेश्वर के भ्राता जो लक्ष्मण शत्रुघ्न भरत से कम नही मानते बहिनें वे भी चण्डी का अवतार होती हैं। ऐसी सामाजिक व्यवस्था मे जहा पति पक्ष इतना उच्च स्थान लिए हुए है वहाँ कुसमायोजन की स्थिति मे पत्नी ही पिटती है क्योंकि वही निरीह है कुल्टा है दासी है। जहा पर बहू का व्यक्तित्व भारी होता है तो सास व ननद उससे ईर्ष्या करने लगती है। यदि बहू कमाऊ औरत है कामकाजी महिला है तो फिर वह और भी ईर्ष्या की पात्र

सयुक्त परिवार मे बन जाती है, क्योकि उसके बच्चो का उतरदायित्व बहू की अनुपस्थिति मे सास या कुवारी ननद को उठाना पडता है जिससे बहू के प्रति और भी ईर्ष्या हो जाती है। वे समझती है कि बेगार तो वे कराती हैं और अतिरिक्त आय से बहू मजे करती है। सास व ननद बहू के विरुद्ध अभियान चलाती हैं। पति के कान भरती है और पति पत्नी के मन मे एक दूसरे के प्रति घृणा उत्पन्न कराती हैं। इस वातावरण मे पति असमजसय की स्थिति मे आता है कि वास्तव मे वह किसका पक्ष ले। लोक लाज से डर कर या पारिवारिक परम्परा के अ तगत वह पत्नी को ही दबाता है और पत्नी द्वारा प्रतिकार करने पर या स्वय को निर्दोष सिद्ध करने हेतु वाक युद्ध करने पर पत्नी की ही पिटाई होती है और वह परिवार मे उपेक्षित हो जाती है। पत्नी पति की दासी है। तो क्या पुरुष को पीटने का अधिकार है और पिटना पत्नी का कर्त्तव्य ? यह ऐसी त्रासदी है जिससे नारी का रक्षण आवश्यक है।

महिला उत्पीडन (पत्नी के रूप मे)

सैद्धान्तिक व्याख्या

महिलाओ को उत्पीडित परिताडित क्यो किया जाता है ? इसके सद्धान्तिक विवेचन की आवश्यक है। मार्टिन (1979) मूर (1979) पेजली (1981) वाकर (1979) गेफोड (1978) जेलस (1972) बाल एव वेमन (1977-78) वालर (1977-78) वोकर (1981) गुडे (1974) वोवरीन (1971) रोनरोविन आदि विद्वानो ने सिद्धानो ने सैद्धान्तिक व्याख्या प्रस्तुत की है जो निम्नाकित रूप से है—

(1) पारम्परिक सामाजीकरण व्याख्या

डी मार्टिन वाट कीप्स ए वोमन केप्टिव इन ए वाइलेन्ट रिलेशनशिप व डी एम मूर" वेटड वीमेन (1979) एम डी पेजलो (वीमेन एण्ड क्राइम इन अमेरिका–1981) द्वारा पारस्परिक सामाजीकरण सिद्धान्त प्रतिपादित किया। पारम्परिक दृष्टि से नारी को सामाज म प्राथमिक भूमिका नही निभानी होती है। नारी गृह लक्ष्मी है जबकि पुरुष गृह स्वामी है जिसका प्रत्येक वाक्य मान्य होना है और उल्लघन का अर्थ है तनाव ताने व प्रताडना चाहे परिवार का अन्य कोई सदस्य निरीह नारी जो कि पूर्णतया पुरुषाधीन होती है जो कि पुरुष की काम पिपासशाता है सन्तान उत्पादिका है प्रसूति प्रिया है वह नारी पुरुष का विरोध नही कर सकती क्योकि वह पुरुषाश्रिता है। इसी परम्परान्तगत विचारधारा के अन्तगत जन्मी पाली नारी पुरुष को अधिनासो पति (स्वार) मानती है और उसके द्वारा किय गये हर अत्याचार दिये गये हर उत्पीडन को विधि समझकर स्वीकार करती है और नियति समझकर सहन करती है। यह कि पति परमेश्वर है उसको नारी पर शासन करने का अधिकार है शासक को बल प्रयाग का अधिकार

है और नारी द्वारा कोई वैचारिक या व्यावहारिक त्रुटि करने पर यह पुरुष का अधिकार है कि वह बल पूर्वक नारी को विचलन को रोके, उसको अनुशासित रखे तथा उसके हर इशारे पर नारी को नचाये नारी का पारम्परिक विचार भी यही है कि उसे पुरुष के बाहुपाश म सुख मिलता है उसकी यह भूमिका म तुष्टि मिलती है। वह पुरुष ही क्या हुआ? यदि उसने नारी के स्वत्व व अस्मिता पर अधिकार जमाकर उसको आस्वासित नही किया? वह नारी ही क्या, जो पुरुष के बारे मे यह मानकर न चले कि तेरे फूलो से भी प्यार तेरे काटो से भी प्यार और वह भी इस सीमा तक कि उन्ह गम भी उनका अजीज है यह उन्ही की दी हुई चीज है।'

(2) पत्नी को उकसाने वाली भूमिका तक सिद्धान्त

पाश्चात्य विद्वान गेफाड (1978) इन बेटड वाइव्ज जे पी मार्टिन (एड) वाइलेन्स एण्ड दी फेमिली (लन्दन जोहन विले 1978) व आर जे गेल्स (दी वाइलेन्ट होम्स–1972) द्वारा पति उकसाऊ पत्नी सिद्धान्त प्रस्तुत किया गया जिसके अन्तगत महिला अपनी पिटाई के लिए स्वय उत्तरदायी होती है वह पति को पीटने का परोक्ष निमन्त्रण देती है और स्वय उसमे योगदान देती है। अपने उकसाने वाले व्यवहार से वस्तुत अपराध के शिकार स्वय के प्रति प्रतिक्रिया आमन्त्रित करते हैं जो है—पति का उत्पीडन व्यवहार। कुछ महिलाए इतनी तुनक मिजाज गम मिजाज तार्किक व अहकारी तथा असामन्जस्यकारी होती है कि वे छोटी छोटी बातो पर पति से लडने, झगडने के लिए तयार रहती है। वे पति की एक भी तार्किक बात को सुनने समझने व उसको हृदयगम करन को तयार नही होतीं। वे तो पति की एकमात्र भाषा समझती हैं जिसका पति को विवशता मे अन्तिम उपाय के रूप मे प्रयोग करना होता है—वह भाषा है गाली गलौच की लात व घूसो की डण्ड से पिटाई की, सावजनिक अपमान की। ऐसी महिलाओ का असामन्जस्यकारी व्यवहार पति को निराशा के गत म पहुचाता है, उसकी सहनशक्ति की परीक्षा लेता है और निराश पति प्रतिक्रिया व्यक्त करता है—हिंसात्मक उत्पीडन व्यहार करके।

(3) सीखी गई विवशता का सिद्धान्त

पी जी बाल (बेटड वाइव्ज एण्ड हल्पलेस वीमेन इन विक्टिमोलोजी) 1977–78 पृष्ठ 325–534 व एली ई वाकर 'बेटड वाइव्ज व लर्नेड द्वारा हल्पलेसनेस इन विक्टिमोलोजी (1977–78) पृष्ठ (325–534) 'सीखी गई विवशता का सिद्धान्त' प्रतिपादित किया गया। इसके अनुसार ऐसी महिलाए जिन्होने बचपन म अपने परिवार म अपनी माताओ बहनो बुआओ व अन्य निकट सम्बन्धी महिलाओ को उत्पीडित होते देखा हो, वे भी अवचेतन मे उत्पीडन की भावनाओ को सीखते हुए आत्मसात

किये होती है। बचपन मे घटित घटनाओं से उत्पीडन की भावना जो उनके अन्तमन के साथ चलकर आई है उनके आधार पर यदि उनके साथ उत्पीडनदायी व्यवहार होता है तो वे इस व्यवहार को जीवन की महज आवश्यकता व सहज अनुभव मानकर चलती हैं और समझती है कि यह तो घटित होना ही है इससे कोई बचाव नही है तथा इसको स्वीकार कर चलना तो ववाहिक जीवन की एक महती आवश्यकता है जो बचपन म उनके द्वारा घटित होता देखा गया है। कसी है विवशता कसा है विरोधाभास नारी जो कोमलता की पर्यायवाची है क्रूरता को विवशता समझकर स्वीकार करती है—नियति का एक स्वाभाविक मेल समझकर सन्तोष करती है। यह विवशता बचपन की सीखी हुई है जो पारिवारिक जीवन के सामजस्य के लिए नारी को भाग्य समझकर स्वीकाय है।

(4) व्यक्तिगत स्त्रोत विवेचन

एल एच बोकर वाइफ बीटिंग" इन वीमेन एण्ड क्राइम इन अमेरिका (1981) डब्ल्यू जे गुडे कोस एण्ड वाइलेन्स इन काइवस प्रोन फेमिलीज–इनजनरल आफ मेरिज एण्ड दी फेमिली 1971 पृष्ठ (692–698) रोनसाविल—थ्योरीज इन मेरिटल वाइलेन्स—इन विक्टोमोलाजी (1978) पृष्ठ (11–31) आदि पाश्चात्य विद्वानो द्वारा व्यक्तिगत स्त्रोत विवेचन प्रस्तुत किया। उनके अनुसार पत्नी उत्पीडन ऐसे पति द्वारा किया जाता है जो कि हीनता की भावना से ग्रसित हैं जिसका व्यक्तित्व इतना कमजोर है कि वह अपने को हीन समझता है और इस हीनता की कमी को छिपाने, इसकी क्षति पूर्ति के रूप मे वह अपने पौरुष के अनाधिकृत दिखावे के रूप मे पत्नी उत्पीडन कर अपने को महान समझता है बडा समझता है और सन्तुष्ट होता है।

इन चार सिद्धान्तो के अतिरिक्त पाश्चात्य विद्वानों द्वारा पत्नी उत्पीडन' व्यवहार व्याख्या के रूप मे तीन और सिद्धात प्रस्तुत किये हैं जिनकी विवेचना निम्नाकित है—

(5) त्रसित सिद्धान्त

गुडे के अनुसार हिंसात्मक या त्रासदी व्यवहार का प्रयोग पारिवारिक जीवन जीने के लिए आवश्यक होने के कारण पति आवश्यकता के रूप म इस व्यवहार को पत्नियो के साथ करते हैं। यह परिवार नियन्त्रण का एक मात्र साधन है व पारिवारिक जीवन व्यवस्था का आवश्यक अग है।

गुडे यह भूल जाते हैं कि क्या हिंसा से ही परिवार नियन्त्रण सम्भव है? क्या परिवार की सत्ता सुख व समृद्धि के लिए व व्यवस्थित परिवार के लिए प्रेम

की आवश्यकता नहीं ? क्या डर का हेतु सदा ही प्रभावीकारक रहेगा या फिर इसका अभ्यस्त होने पर इसका प्रभाव पूर्णतया गौण व शून्य हो जायेगा ? क्या भय विघटन को जन्म देगा या पारिवारिक सगठित जीवन की भावना को बल देगा ? इन प्रश्नो का उत्तर सामाजिक जीवन के उद्गम के मूल के विरुद्ध होने के कारण मान्य नही। वस्तुत सामाजिक कर्त्तव्य व पारिवारिक नैतिक उत्तरदायित्व भी पति के पत्नी और परिवार के प्रति होते हैं जिनका मौलिक आधार हिंसात्मक त्रासदीपूर्ण व्यवहार कदापि नही हो सकता।

(6) व्यावहारिकी चक्रमय हिंसात्मक सिद्धान्त

एल वाकर (दी वेटड वोमन–1979) द्वारा व्यवहारिकी चक्रात्मक सिद्धान्त प्रतिपादित किया गया है जिसके अनुसार पति व पत्नी के बीच जो अन्तर्क्रियात्मक व्यवहार होता है, उसमे प्रेम व वमनस्यता चक्र की तरह परिवर्तित होते रहते हैं। इस अन्तर्क्रियात्मक जीवन पद्धति मे तीन अवस्थाए उभरकर परिवर्तित होकर आती रहती है—प्रथम अवस्था मे चिन्ताए उभर कर सामने आती हैं दूसरी अवस्था म प्रेमपूर्ण स्थिति सामने आती है जिसमे चिन्ता वमनस्य या हिंसा का कोई स्थान नही होता। इन दोनो अवस्थाओ के बीच म दूसरी अवस्था उभर कर आती है वह यह है कि जब प्रथम अवस्था दृढ होकर उभर कर आती है और ततीय अवस्था कमजोर होकर तिरोहित हो जाती है—इस दूसरी अवस्था मे चिंता के आवश म व प्रेम के अभाव म उत्पीडनदायी व्यवहार पति पत्नी के प्रति कर बठता है।

(7) स्तरहीन भावनाजनक सिद्धान्त

इस सिद्धात के अनुसार जब कि पत्नी उच्च पद पर आसीन होती है और पति का पद नीचा होता है तो इसका प्रभाव यह होता है कि पति मे हीन भावना व्याप्त हो जाती है। वह मन ही मन पत्नी से ईर्ष्या करने लगता है और इसकी पूर्ति स्वरूप व पत्नी को उन्पीडित करता है ताकि उसकी पुरुष सत्ता बनी रहे। सामाजिक आर्थिक क्षेत्र म उच्च पद पायी पत्नी अपने परिवार म तो अपने पति से नीची है और पति सत्ता के अधीन है जिसको स्थापित करन हतु अपने साम्राज्य के अधिपाता के रूप मे वह पत्नी पर अत्याचार करता है।

यह सिद्धात 'व्यक्तिगत स्त्रोत सिद्धात से ही मिलता–जुलता है।

उक्त सात सिद्धातो के आधार पर पाश्चात्य विद्वानो द्वारा पत्नी उत्पीडन की विवेचना प्रस्तुत की है। भारतीय परिवेश मे व्यावहारिक पारिवारिक स्थिति अस्तित्व सत्ता की दृष्टि से विचार कर उक्त सिद्धातो मे आशिक सत्यता अवश्य है किन्तु कोई एक सिद्धात सारी स्थिति को विवेचित नही कर सकता।

हमारे विचार मे मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह ऐसा इस रूप म भी है है कि वह उस समाज की उपज है, दन है धराहर है जिस समाज म ज म लकर युवा हुआ है और गृहस्थ जीवन व्यतीत कर रहा है। भारतीय समाज मे परिवार एक सशक्त इकाई है जहाँ पर पारम्परिक विवाह बधन म बधे प्राणी पति व पत्नी के रूप मे शारीरिक बधनमय जीवन एक ही छत के नीचे पारिवारिक उत्तरदायित्व के साथ निभाते हैं। भारतीय परिवार मे एकल परिवार के रूप म जीवन यापन करते हुए भी सयुक्त परिवार की विभिन्न इकाइयो से पति व पत्नी जुडे होते हैं इस जीवन पद्धति मे पारिवारिक सदस्य का प्रत्यक्ष या परोक्ष हस्तक्षेप अवश्य होता है। इसके साथ-साथ सामुदायिक जीवन की मा यता एव मर्यादाओं का भी ध्यान रखना होता है। सबसे ऊपर भारतीय समाज की धम मूलक धमपोषक धमपरक धारणाएँ विश्वास व परम्पराएँ भी हैं जिनकी अनुशासित परिधि मे जीवन जीना होता है। पारिवारिक भार सामाजिक जीवन के कत्तव्य के साथ व्यक्तिगत भावनाओ विचारो का सामजस्य आवश्यक है—व्यक्तिगत इच्छाओ की अभि यक्ति या तोषण सामाजिक सुख व परम्पराओ के अधीन करना होता है। पति पत्नी को इन सब युगा तर भारो के बीच जीवन जीना होता है सामजस्य करना पडता है कभी विपरीत मा यताओ व व्यक्तिगत इच्छाओ व भावनाओ के बीच समझौता करना पडता है व्यक्तित्व को दबाना होता है—कि तु जब यह सब नही निभ पाता और इस गुरुतर जीवन चक्र मे मीठे व खट्टे अनुभवो के हिण्डोले पर झूलता जीवन कभी उमगो मे कभी वितृष्णा से विपरीत दिशाओ मे डोलायमान रहता है तो फिर जीवन में कडवे क्षण भी आते हैं और पति परमेश्वर कभी अपने सुदश न चक्री वाणी या कभी हाथो रूपी तीरो का प्रयोग कर अपनी दिव्या स्वरूपा पत्नी को तुच्छ दासी समझ कर शासित कर देता है। फिर समय सब घाव भर देता है और पुन अकशायनी वाहुपाश म बध जाती है और फिर कभी परिस्थितिवश स्थितिगत क्षणो मे वे हाथ फिर निरीह पत्नी पर उठते रहते हैं—प्रेम व उत्पीडन का खेल चलता रहता है। पति से कोई छुटकारा नही पत्नी को कही ठिकाना नही। जीवन डोरी से बधे हैं मृत्यु ही अलग करेगी। यह भारतीय मानसिकता है पुरुष को पत्नी का पीटने का अधिकार है पत्नी को पिटने की मा यता है—इन मा यताओं सम्ब धी मानसिकता को बदलना होगा।

पुरुष का नारी के विरुद्ध हिंसात्मक व्यवहार—सामा य सैद्धान्तिक विवेचन

विविध सौ दय स्वरूपा नारी सृष्टा की अनुपम रचना है। इसका तिरस्कार क्यो? इसके प्रति दुर्भावना क्यो? इसके विरुद्ध हिंसात्मक आपराधिक व्यवहार यो? क्या नारी के प्रति हिंसा का प्रयोग किसी उद्देश्य या पारितोषिक की पूर्ति या

प्राप्ति हेतु किया जाता है ? क्या दबी हुई मनोगत भावनाओ की अभिव्यक्ति के माध्यम रूप म हिसा का प्रयोग किया जाता है ? क्या हिंसा रचनागत उत्तेजना प्रकटीकरण का एकमात्र साधन ह ?

ये ऐसे प्रश्न हैं जो उत्तर की अपेक्षा रखते हैं। उक्त प्रश्नो का उत्तर देने का प्रयत्न मनोवैज्ञानिक, मनोचिकित्सको विधिवेत्ताओ अपराधशास्त्रियो व समाजशास्त्रियो द्वारा विभिन्न सिद्धात प्रतिपादित कर दिया गया है जिसकी सूक्ष्म विवेचना निम्नाकित रूप से प्रस्तुत है—

(1) मनोवैज्ञानिक व मनोचिकित्सक सिद्धान्त

इस सिद्धात के अनुसार अपराधी व अपराध के शिकार दोनो व्यक्ति थोडे-बहुत मानसिक विचलन के रोगी होते हैं जो असयत व्यवहार करते हैं। अपराधी की मानसिक रुग्णता भी इसके लिए उत्तरदायी हो सकती है और इसी परिप्रेक्ष्य मे अपराध की शिकार नारी का असयत व्यवहार पुरुष को हिंसात्मक हो उठने के लिए उत्तेजना स्वरूप हो सकता है।

उक्त विवेचना को बल देने हेतु वैज्ञानिक आकडे उपलब्ध न होने से उक्त विचार पूर्णतया मान्य नही। यदि कोई महिला असयत व्यवहार करती है तो इसका कारण उसके साथ दुर्व्यवहार मारपीट बलात्कार अपहरण आदि होता है ये सब अपराध परिणामस्वरूप हैं न कि असयत व्यवहार के कारण स्वरूप। इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति असयत मानसिक स्थिति के कारण हिंसक होता है तो वह केवल मात्र नारी के प्रति ही हिंसक क्यो होता है ? ऐसी कौनसी मानसिक रुग्णता है जो केवल मात्र नारी के प्रति ही हिंसक बनाती है, और अन्य के प्रति नही ? क्या सामान्य व्यक्ति हिंसक हो ही नही सकते या फिर सभी नारी के प्रति हिंसक व्यवहार करने वाले मानसिक रोगी हैं तो फिर वह रोग क्या है ? उक्त प्रश्नो का उत्तर सम्बधित विवेचन नही दे पाता है।

(2) मनो सामाजिक विकृति (रुग्णता) सिद्धान्त

फ्राइडियन सिद्धात को आधार मानकर डोराल्ड द्वारा सवप्रथम सन् 1939 मे निराशा को आक्रामकता से जोडकर हिंसात्मक व्यवहार की व्याख्या प्रस्तुत की गई। आक्रामकता एक अन्त उत्तेजना है जो कि पारिवारिक परिवेश से पोषित होती है। जब व्यक्ति किसी उद्देश्य की प्राप्ति करना चाहता है और उसे निराशा हाथ लगती है तो वह हिंसक या आक्रामक हो उठता है। हो सकता है कि उसके सामाजीकरण व अन्त सामाजीकरण के कारक व शक्तिया निराश व्यक्ति के व्यवहार को नियन्त्रित करें और उसको आक्रामक होने से रोकें। फिर भी यह सब व्यक्ति

के स्वभाव व व्यक्तित्व सरचना पर निभर करता है कि वह निराश व्यक्ति अपने नैराश्य भाव की अभिव्यक्ति किस प्रकार किस सीमा तक करता है। अनियंत्रित क्रोधी स्वभाव वाला व्यक्ति निराशा के भाव से विचलित उद्देश्य प्राप्ति के लिए हिंसक व आक्रामक हो सकता है और विधि निषिद्ध साधना से वह आक्रामक व्यवहार कर हिंसा के माध्यम से अपने उद्देश्य की प्राप्ति करना चाहता है। यह सब व्यक्ति की इच्छा शक्ति एकत्रित नैराश्य भाव स्वच्छद व एक पक्षीय निर्णय लेन की शक्ति उपलब्ध या सभावित साधन अविवेकता व अन्य पारिवेशिक परिस्थितियो पर निभर करता है। यदि पूव म हिंसात्मक विधि से किसी अन्य व्यक्ति को उद्देश्य पूर्ति म सफलता मिलन के उदाहरण हो तो ऐसा व्यक्ति उन उदाहरणो से प्रेरणा पाकर हिंसक व्यवहार सीख सकता है।

असफल प्रेम से उत्पन्न स्थितियो मे हताश प्रेमी द्वारा प्रेमिका की हत्या के सन्दभ मे तो उक्त विवेचन किसी सीमा तक मान्य हो सकता है किंतु सम्पत्ति व आर्थिक कारणो से महिला हत्या या अन्य प्रकार के हिंसक व्यवहार सबधी अपराधो की व्याख्या निराशा व आक्रामकता के सिद्धान्त से सम्भव नही, क्योंकि अपराध का शिकार व्यक्ति नैराश्य भाव की हिंसात्मक प्रक्रिया के माध्यम से तुष्टि का माध्यम हो सकता है कारण नही क्योंकि कारण तो अतृप्ति व अप्राप्ति ही है। इसके साथ साथ यह भी आवश्यक नही कि हर निराश व्यक्ति आवश्यक रूप से आक्रामक या हिंसक हो ही, क्योंकि यह नैराश्य व आक्रामकता के सार्वभौमिक सम्बन्ध का कोई आधार किसी भी वैज्ञानिक शोध का प्रयोग सिद्ध नही करता कि जब जब व्यक्ति निराश होगा वह आक्रामक होगा ही। इसके विपरीत सामान्य मान्यता यह है कि निराश व्यक्ति मानसिक रूप से रुग्ण हो जाता है और निराशा के अन्ततम मे उसका मन इतना खो जाता है कि वह निराशा व हताश व्यक्ति निष्क्रिय जीवन व्यतीत करता है वह हुकार के स्थान पर आहें भरता है। प्रत्येक व्यक्ति के पास हिंसक विधि से उद्देश्य प्राप्ति का साहस नही होता, व्यक्ति डटे रहने के स्थान पर पलायन करना भी सीखता है। निराश व्यक्ति दार्शनिक अधिक होता है। क्रियाशील तो अपवाद रूप मे ही मिलते हैं। जो भी व्यक्ति हिंसक या आक्रामक स्वभाव का होता है उसको हम निश्चित पारिभाषिक शब्दावली मे निराश या हताश नही कह सकते उसको विधिक रूप से उद्देश्य प्राप्ति मे असफल व्यक्ति अवश्य कह सकते हैं।

(3) विचलन या विकृत व्यवहार सिद्धान्त या लक्षण सरचना सिद्धान्त

फ्राइड के 1949 मे प्रतिपादित प्रथम सिद्धान्त के अनुसार विकृत व्यवहार शैशवकाल के व्यवहार की वयस्कावस्था म पुनरावृत्ति है। शैशवकाल की असमायोजित

प्रवृत्तियाँ वयस्क होने पर भी पूर्ण समायोजित प्रक्रिया मे समाविष्ट नही होती उस व्यक्ति का व्यवहार विकृत व्यवहार कहलाता है। इसी कुसमायोजित प्रक्रिया की देन हिंसक व्यवहार हो सकता है जिसका मुख्य आधार शैशवकाल की अतृप्त सुखवादी प्रवृत्तियाँ रही हो जो वयस्कावस्था में भी कुसमायोजन की समस्या उत्पन्न कर व्यक्ति के व्यवहार को विकृत करती है। जिसके कारण निश्चित उद्देश्य की पूर्ति के सन्दर्भ मे सही प्रयत्न किये जाते। मनोचिकित्सक फेनिशेल (दा साइकोएनलिटिकल थ्योरी आफ न्योरोसिस 1955) के अनुसार हिंसा की व्युत्पत्ति अपने प्रजनन लिंग को काटने के डर से होती है जिसकी व्युत्पत्ति प्रारम्भ मे बचपन मे मुँह के द्वारा दुःख पहुचा कर जसे दूध पीते समय दांतो मे माँ का स्तन काटने से प्राप्त सुख मे होती है। इस मनोविकृति प्रवृत्ति से ही निबल के प्रति हिंसक व्यवहार की व्युत्पत्ति होती है। अन्वेषणात्मक आकडो से भी यह सिद्ध हुआ कि स्त्रियो की अपेक्षा पुरुष अधिक हिंसक होता है।

उक्त सिद्धान्त के आधार पर पुरुष के द्वारा महिलाओ के प्रति हिंसक व्यवहार किये जाने के सम्बन्ध म स्वीकाय व्याख्या उपलब्ध नही होती क्योकि यह सिद्धान्त केवल मात्र वैयक्तिक विकृत मनोवृत्तियो को ही हिंसात्मक व्यवहार का कारण रूप स्वीकार करता है जबकि परिवेशगत कारक की भूमिका को नकारता है क्योकि किसी भी व्यक्ति के हिंसात्मक प्रतिक्रियात्मक व्यवहार मे परिवेशगत उत्तेजना का प्रमुख योगदान होता है। यद्यपि प्रेम के समान हिंसा भी मानव व्यक्तित्व की सरचना का विशेष भाग है तथापि दो विभिन्न लिंगो म सामाजिक अन्तक्रियात्मक हिंसात्मक व्यवहार को मात्र विकृत वयक्तिक मूल प्रवृत्तियो के आधार पर ही नही समझाया जा सकता।

(4) स्वदृष्टिकोण सिद्धान्त

इस सिद्धान्त के अनुसार जो समाज समूह या व्यक्ति अपने सम्बन्धो मे हिंसा को महत्व देता है वहाँ पर निम्न स्तर व प्रतिष्ठा वाला व्यक्ति अपने पद व प्रतिष्ठा को और व्यक्तियो की दृष्टि मे ऊँचा दिखाने के लिए हिंसा का प्रयोग कर सकता है। इस प्रकार हिंसात्मक व्यवहार आत्म सम्मान प्रदर्शित करने का साधन या माध्यम मात्र हो जाता है किन्तु उक्त सिद्धान्त इस आधार पर मान्य नही है कि सभी पुरुष जो महिलाओ के विरुद्ध हिंसा का प्रयोग करते हैं यह आवश्यक नही कि वे सभी पुरुष आत्मसम्मान की हीन भावना से ग्रसित हो।

(5) प्रेरक आरोपण सिद्धान्त

अपने दोष पूर्ण उद्देश्य की पूर्ति हेतु हिंसक प्रेरक तत्वो का हाना आवश्यक होता है। कर्ता द्वारा अपने अनुचित उद्देश्य की पूर्ति हेतु हिंसक प्रेरको का सहारा

लिया जाता है। यह सिद्धान्त इसलिए मान्य नहीं है कि सभी दुष्ट उद्देश्य की पूर्ति हेतु हिंसात्मक व्यवहार का प्रयोग करते हों, यह आवश्यक नहीं है।

(5) सामाजिक सांस्कृतिक सिद्धान्त—यह सिद्धान्त निम्नांकित रूप से हिंसात्मक व्यवहार की व्याख्या करता है—

(अ) संरचनात्मक सिद्धान्त

इस सिद्धान्त के अनुसार वे व्यक्ति जो कि चिन्ताओं के दबाव में रहते हैं और उनके पास चिन्ता निवारण स्रोत नहीं होते, उनके अधिक हिंसक होने की सम्भावना रहती है। यह सिद्धान्त परिवेशगत दबाव पर अधिक विश्वास करता है, व्यक्ति के व्यक्तित्व व मानसिक द्वन्द्वात्मक स्थिति भावना के दबाव अपराध भाव आदि मनोभावनाओं को अधिक उत्तरदायी न मानने के कारण यह सिद्धान्त पूर्णतया स्वीकार्य नहीं है।

(ब) घोर चिन्ता व तत्सम्बन्धी प्रभाव सिद्धान्त

1973 में स्ट्रास ने अन्तर परिवार हिंसा की व्याख्या हेतु घोर चिन्ता व पुनर्प्रभाव सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इस सिद्धान्त के अनुसार पारिवारिक उद्देश्यों की पूर्ति न होने पर व्यक्ति पारिवारिक सदस्य के रूप में घोर चिन्तामय स्थिति के प्रभाव में रहता है जिसका निषेधात्मक प्रभाव व्यक्ति पर इतना होता है कि घोर चिन्तात्मक स्थिति में सामाजिक समायोजन की रूपरेखा व भूमिका भूल जाता है और चिन्तामय निषेधात्मक प्रभाव के दबाव में वह हिंसात्मक हो उठता है। इस सन्दर्भ में हरबर्ट फर्लेज (1956) (ग्लेन वेक्स एंड कंटम्परेरी सोशियोलोजिकल थ्योरीज) ने बहुत ही सुन्दर ढंग से विचार व्यक्त किये हैं। उनके अनुसार मानव जीवन की यह आवश्यकता भी है और मानव स्वभाव की दुर्बलता भी है कि व्यक्ति अपने साधनों से अधिक प्राप्त करना चाहता है उसकी आशा व महत्वाकांक्षा का कोई अन्त नहीं। वह बहुत अधिक पाना चाहता है और आशा के सहारे जीवन बिताता है। आशामय जीवन सदा आकांक्षा व चिन्ताओं के दबाव में ऐसे मनुष्य के लिए जीवन चिन्ताओं के दबाव से उत्पन्न अन्तर्क्रियाओं की एक शृंखला मात्र बन कर रह जाता है। ऐसे मनुष्य का जीवन में ऐसी सामाजिक व मनोवैज्ञानिक स्थितियों से सामना होता है जिन पर पार पाना उसके लिए कठिन होता है। चिन्तायुक्त स्थिति में सारे शक्ति स्रोतों का एकत्रीकरण केवल मात्र चिन्ता निवारण व मुक्ति विचार में ही होता है। चिन्तायुक्त मनःस्थिति जब कुछ नहीं कर पाती तो फिर हिंसात्मक व्यवहार में ही चिन्ता निवारण उपाय खोजने का प्रयत्न होता है। आशा-निराशाओं के बीच झेले जाने वाले विषादपूर्ण चिन्तामय जीवन में हिंसात्मक उपायों

से चिन्ता निवारण की मन स्थिति बनाई जाने पर और अधिक नैराश्य ही मिल पाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार सामाजिक व्यवस्था परम्परा चिन्तामूलक है, जो व्यक्ति को उपलब्ध साधनो से अधिक प्राप्त करने के लिये विवश करती है जिससे घोर मानसिक सन्ताप की स्थिति मे व्यक्ति हिंसक हो उठता है। इस प्रकार यह सिद्धान्त वैयक्तिक गुणो के स्थान पर सामाजिक व्यवस्था पर आवश्यकता से अधिक जोर देता है जो मान्य नही है।

(स) अव्यवस्था सिद्धान्त

1938 मे मटन ने एनोमी सिद्धान्त विकसित किया जिसके अनुसार आर्थिक मूल्य पोषक समाज अपने सदस्य से केवल मात्र एक ही अपेक्षा करता है वह है सफलता—सफलता जो किसी भी प्रकार से कसे भी प्राप्त हो। समाज मे सफलता प्राप्त करने के लिय अवसर कम है और साथ मे स्त्रोत व साधन भी कम ही होते हैं। सफलता मूलक उद्देश्य को प्राप्त करने के लिये व्यक्ति को प्रतिद्वन्द्वात्मक स्थिति मे उतरना पडता है। कितने व्यक्ति हैं जो विधिक साधनो से प्रतिद्वन्द्वात्मक माध्यम से उद्देश्य को प्राप्त कर सकते हैं? ऐसी पूंजीवादी सामाजिक व्यवस्था मे जहाँ साधन व साध्य म इतना गहन अन्तर हो वहा व्यक्ति सफलता पाने के लिये अवध साधनों का प्रयोग करता है। वह सफल व्यक्ति श्रद्धा व प्रतिष्ठा का स्वामी है चाहे उसने अवध साधनों से ही सफलता पाई हो।

मटन के इस सिद्धान्त के आधार पर हिंसात्मक व्यवहार की आवश्यकता तो समझी जा सकती है किन्तु महिलाओ के प्रति हिंसक व्यवहार की व्याख्या नही बन सकती। व्यभिचार हत्या भगाकर ले जाना सम्बन्धी महिला के प्रति किये गये व्यवहार मटन के आर्थिक सफलता का उद्देश्य व अवध साधन मान्यता के आधार पर नही समझाया जा सकता।

(द) हिंसात्मक उप सस्कृति सिद्धान्त

इस सिद्धान्त के अनुसार कुछ समूह व समुदाय हिंसात्मक मूल्यो के पोषक हैं व सफलता साधन के रूप म हिंसात्मक मूल्यो के रूप म स्वीकार करते हैं। पारम्परिक रूप से हिंसात्मक साधनों के आधार पर जीवन जीने वाले ऐसे समुदायो के सदस्य एक ऐसी उपसस्कृति के मानने वाले होते हैं जो हिंसा के माध्यम से ही जीवन की आवश्यकताओ की पूर्ति मे विश्वास रखते हैं और समस्याओ का समाधान भी हिंसात्मक साधनो के माध्यम से ही खोजते हैं। अलबट कोहिन वाल्टर मिलर, रिचड क्लावड, लॉयड ओहलिन के निम्न के अनुसार निम्न वग व झुग्गी झोपडी मे रहने वाले व्यक्ति हिंसात्मक उपसस्कृति के मानने वाले है।

आदिमानव विकास शास्त्री ऑस्कर लेविस (1959 1961 1966) ने हिंसा की व्याख्या करते हुए इसको सास्कृतिक दरिद्रता की देन माना है। दारिद्रय

के मुख्य विश्वासपूर्ण स्रोत हैं—भाग्यवाद शक्ति की भूख व हिंसा। अपने अस्तित्व से त्रसित निम्न आय वर्ग के सदस्य हिंसात्मक साधनो से गरीबी की त्रासदी पर विजय पाना चाहते हैं किन्तु वस्तुत देखा यह जाता है कि धनवान व्यक्ति कानून अधिक तोडता है क्योंकि वह जानता है कि वह कानून के शिकजे से बच जायेगा अपने पैसे व प्रभाव के बल पर। गरीब कानून की पालना अधिक करता है क्योंकि वह जानता है कि वह कानून की पकड से बच नही सकता है। गरीब हिंसक जब होता है जबकि उसका जो कुछ भी है वह उससे छिन रहा हो। वह सामान्यतया अधिक पाने के लिए हिंसक नहीं हो उठता। साथ मे गरीब की महिला उसका जीवन साथी है वह उसके साथ हिंसक होकर अन्य पत्नी पाने की कल्पना भी नहीं कर सकता। अत इस सिद्धान्त के आधार पर पुरुष की महिला के प्रति की जा रही हिंसात्मक व्यवहार की व्याख्या सम्भव प्रतीत नही होती है।

(6) स्रोत सिद्धान्त

1971 मे गुडे (फोर्स एण्ड वाइलेंस इन दा फेमिली—जनरल आफ मेरिज एण्ड फेमिली (नवम्बर, 1971) ने स्रोत सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जिसके अनुसार कोई भी सामाजिक व्यवस्था है वह सभी शक्ति व धमकी पर टिकी हुई है। जिस किसी भी व्यक्ति के पास जितने सम्पन्न आय स्रोत हैं वह उतना ही शक्तिशाली हो जाता है। इस शक्ति मद म वह अपने उद्देश्य की पूर्ति मे हिंसक भी हो उठता है चाहे हिंसा का प्रयोग उनका अन्तिम प्रयास के रूप मे ही क्यों न हो? शक्ति मद वहा और भी हिंसात्मक होता है जहा युवावस्था व अविवेकता होती है। परिवार के सन्दर्भ मे सम्पन्न साधन वाला शक्ति व श्रीयुक्त पति अपनी शक्ति का प्रदर्शन अपनी पत्नी पर ही कर सकता है क्योंकि परिवार के अन्य सदस्य तो उसको परिवार मे सर्वेसर्वा मानने से रहे। यह भी हो सकता है कि कम शिक्षित हीन भावना व प्रतिष्ठा मे कम परिवार का सदस्य अपनी हीनता के दबाव मे शक्ति अर्जन हेतु क्षतिपूर्ति रूप मे हिंसात्मक व्यवहार कर सकता है और इस क्रम मे परिवार मे महिलाए सबसे कमजोर रहती हैं उन पर ही उसका वश चलता है। महिलाओ के प्रति हिंसक कृत्य स्रोत शक्ति के आधार पर ही होते हैं। व्यभिचार व महिला पलायन व हत्या सम्बन्धी अपराध कृत्य की व्याख्या इस सिद्धात के आधार पर सही नही बठ पाती। यह सम्भव नहीं कि सभी शक्ति स्रोत मदाध महिला के प्रति हिंसक हो।

(7) पैतृक सिद्धान्त

1979 मे दोबाश और दोबाश ने इस सिद्धात का प्रतिपादन किया जिसके अनुसार पितृ प्रधान सामाजिक पारिवारिक व्यवस्था मे महिलाओं का हीन स्थान

होता है जो सामाजिक व आर्थिक दोनों दृष्टि से पुरुषाधीन होता है जिससे विवेक-हीन पुरुष महिलाओं के प्रति हिंसक व्यवहार करता है। यह सिद्धांत केवल पितृ कारक को ही प्रधानता देने के कारण पूर्णतया स्वीकार्य नहीं है।

(8) सामाजिक सीखने का सिद्धान्त

इस सिद्धान्त के अनुसार मानवीय आक्रामकता व हिंसा सीखे हुए व्यवहार हैं। अलबर्ट बदुरा (एग्रेशन असाशल लर्निंग एनेलिसिस 1973) के मत में हिंसात्मक व्यवहार नकल से सीखा जाता है। अनुभव के आधार पर यह सीखने की पद्धति बड़े व प्रतिष्ठित व्यक्तियों द्वारा किये गये व्यवहार व श्रव्य व दृश्य साधनों के माध्यम से प्रवृद्ध की जाती है। इस सीखे व्यवहार में पारितोषिक व दण्ड का भी महत्व है। यदि हिंसात्मक व्यवहार से उद्देश्य की पूर्ति होती है और दण्ड नहीं मिलता तो सीखा गया व्यवहार और सुदृढ होता है व मान्य होता है जिसकी पुनरावृत्ति भी सम्भव होती है। यह सिद्धान्त सीखने की प्रक्रिया में वैयक्तिक गुण व सामाजिक परिस्थितियां—दोनों पर ही समान जोर देता है। जब किसी भी परिवार में बालक पुरुषों को गाली बकते व महिलाओं के प्रति दुर्व्यवहार व हिंसक व्यवहार करता देखता है तो उस परिवार का बालक हिंसात्मक प्रवृत्तियां सीखता है। उस सामाजिक परिवेश में जिनमें हिंसात्मक स्थितियां उत्पन्न होती हैं। चिन्तामय स्थितियों में त्रसित अवस्था में अपनी निराशा को परिवार की अबला सदस्या नारी के प्रति रोष प्रकट कर हिंसात्मक व्यवहार प्रकट करना भी प्राय देखा जाता है। इस परिवेश में पले बालक व सदस्य हिंसात्मक व्यवहार के विभिन्न प्रकार स्वत सीखते हैं जो अवचेतन के भण्डार में निहित होते हैं और परिस्थिति उत्पन्न होने पर स्वत ही अवचेतन स्मृतियां चेतन क्रियाओं में बदल जाती हैं। जिन बालकों की भावनाओं की अभिव्यक्ति का बर्बरतापूर्वक दमन किया गया हो हिंसात्मक व्यवहार से उनको कुंठित किया गया हो वे परिवार सदस्य हिंसा से त्रसित व पीड़ित मनोवैज्ञानिक दृष्टि से हिंसा की निषेधात्मक भूमिका का अर्थ समझते हैं और बचपन की ये स्मृतियां जो व्यक्ति के अवचेतन मस्तिष्क का भाग होती हैं स्थितिगत चेतय होकर व्यक्ति को हिंसक होने के लिये प्रेरित करती हैं।

वस्तुत परिवेशगत अनुभव व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित अवश्य करते हैं किन्तु ऐसा भी देखा गया है कि हिंसात्मक परिवेश में पला व्यक्ति इस व्यवहार को स्वीकारात्मक रूप से ही स्वीकार करे यह विचारणीय है। अधिक सम्भावनाएं तो ऐसी हैं कि ऐसे हिंसात्मक व्यवहारिक घटनाओं का प्रभाव तो अधिकतर निषेधात्मक होता है और व्यक्ति हिंसात्मक व्यवहार की विभीषिका व बर्बरता से सद्व्यवहार का महत्व भी तो सीख सकता है।

इसके अतिरिक्त सीखने के सिद्धान्त में यह विशेष कारण है कि सीखना एक परिवर्तित व्यवहार है और एक ही स्थिति में विभिन्न व्यक्ति अपनी व्यक्तिगत गुणों के आधार पर विभिन्न प्रतिक्रियाएं करता है और अपने मानसिक स्तर के आधार पर विभिन्न प्रकार में सीखता है। अतः उक्त व्याख्या के आधार पर यह मान्य नहीं कि सामाजिक सीखन का सिद्धान्त महिला के प्रति पुरुष हिंसात्मक व्यवहार की सम्पूर्ण व सवकालीन व्याख्या प्रस्तुत करता हो।

(9) प्रतीकात्मक अन्तर्क्रिया सिद्धान्त

इस सिद्धान्त के अनुसार सामाजिक अन्तर्क्रियात्मक प्रक्रिया में व्यक्ति की पहचान एक हिंसक व्यक्ति के रूप में होती है। कुछ व्यक्ति अपने विवेक से काम नहीं लेते और अपने सभी सामाजिक अन्तर्क्रियात्मक व्यवहार में हिंसा के साधन व माध्यम में विश्वास व्यक्त करते हैं। उनके विश्वास में उद्देश्य की पूर्ति हिंसात्मक साधनों से सभी परिस्थितियों में उचित है व न्यायोचित है। वे इस प्रकार हिंसा में ही प्रेरणा खोजते हैं, हिंसा उनका प्रेरक है और प्रतीकात्मक रूप से हिंसा से ही प्रतिक्रिया मानसिक रूप से करते रहते हैं और अन्त में अपनी सही पहचान हिंसात्मक व्यक्ति के रूप में करते हैं। हर्बट ब्लूमर (सिम्बोलिक इन्टरेक्शनिजम परस्पेक्टिव एण्ड मेथड 1969) ने भी इस सिद्धान्त की व्याख्या इसी प्रकार की है उनके अनुसार हिंसा के शिकार के द्वारा की गई उत्तेजना का परिणाम नहीं है। अपराधी हिंसा को उद्देश्य की प्राप्ति के अन्तिम साधन के रूप में अपनाता है। अर्थात् हिंसा मात्र प्रतिक्रिया नहीं है अपितु उद्देश्य प्राप्ति के साधन स्वरूप पूर्वनियोजित साधन होता है।

यह सिद्धान्त पूर्ण स्वीकार्य नहीं है, क्योंकि यह प्रश्न को निरूत्तरित ही रखता है कि व्यक्ति हिंसक व्यवहार में एकरूपता कैसे रख सकता है? क्या यह नहीं कि वह विभिन्न परिस्थितियों में विभिन्न प्रकार का व्यवहार कर सकता हो? जबकि व्यक्ति के व्यवहार में सामाजिक विपरीत परिस्थितियों का महती योगदान होता है।

(10) विनिमय सिद्धान्त

सामाजिक अन्तर्क्रियात्मक व्यवहार का मार्ग प्रदर्शन पारितोषिक प्राप्ति व दण्ड को दूर रखने पर निर्भर है। व्यक्ति अपने सदव्यवहार के बदले कुछ चाहता है मूर्त रूप में ही नहीं अपितु अमूर्त रूप में भी जैसे प्रतिष्ठा, प्रशंसा अनुमोदन व सहायता आदि (जाजहोमन्स सोशल बिहेवियर इट्स एलिमेन्टरी फोर्म्स 1961) व पीटर एम ब्लो (एक्सचेन्ज एण्ड पावर इन सोशल लाइफ 1964) के अनुसार

जिस व्यक्ति के लिये कल्याणकारी या सेवाभावी कृतज्ञतापूर्ण कार्य किया जाता है उससे यह तो अपेक्षा वह व्यक्ति करेगा कि वह बदले में उसका उपकार स्वीकार करे या उसके लिये भी कुछ न कुछ करे। यह तो समानभाव सम भाव, न्याय वितरण सिद्धात है कि प्रत्येक व्यक्ति उपकार का बदला तो चाहेगा ही, किंतु जब उसको बदले मे यह व्यवहार नही मिलता तो फिर जन्म लेती है—द्वेषता क्रोध प्रतिशोध व हिंसा की भावनाए।

उक्त सिद्धात के आधार पर परिवार के बाहर हिंसात्मक व्यवहार की व्याख्या कुछ सीमा तक तो सम्भव है कि उपकार के बदले मिली कृतघ्नता प्रतिशोध का कारण हो सकती है किन्तु परिवार मे जहा पारस्परिक सम्बन्ध काफी गहन व सवेदनशील होते हैं वहा आवश्यक नही कि कर्तव्यान्तगत किये गये प्रत्येक काय को उपकार के रूप म स्वीकार किया ही जाये और ऐसा न करने पर प्रतिशोधात्मक हिंसक व्यवहार किया जाये। भारतीय समाज के परिवार मे प्रत्येक सदस्य का व्यवहार कर्त्त व्य के रूप मे होता है उपकार स्वरूप नही, जिसके आधार पर विनिमय सिद्धात हिंसात्मक व्यवहार की व्याख्या प्रस्तुत नही कर सकता। यदि प्रत्येक उपकार की प्रतिक्रिया स्वरूप अस्वीकाय स्थिति मे हिंसात्मक व्यवहार का सहारा बदले मे लिया जाये तो क्या यह प्रतिक्रिया व्यक्ति के प्रति घृणा उत्पन्न करायेगी या उपकार का बोध करायेगी? इस प्रकार हिंसात्मक प्रतिक्रिया तो मनोवज्ञानिक दृष्टि से उलटी प्रभाव उत्पादक होगी न कि स्वीकारात्मक व्यवहार पोषक।

हमारी व्याख्या

उक्त सभी सद्धान्तिक विवेचनो से स्पष्ट है कि कोई अकेला ऐसा सिद्धात नही है जा महिला के प्रति हिंसक व्यवहार की पूण व्याख्या प्रस्तुत करता हो। कुछ सिद्धात तो व्यक्तित्व सरचना मे इस प्रश्न का उत्तर ढूढते हैं जबकि कुछ सामाजिक परिवेश मे ही समस्या का समाधान खोजते हैं।

हमारे विचार से हम नया सिद्धात तो प्रतिपादित नही करते किन्तु उक्त सद्धान्तिक विचारो के आधार पर पुरुष के नारी के प्रति हिंसात्मक व्यवहार की व्याख्या प्रस्तुत करने की चेष्टा करते हैं।

प्रथमत हिंसात्मक व्यवहार क्या है? व्यवहार एक व्यक्ति द्वारा उत्तेजना के प्रति प्रतिक्रिया मात्र है और हिंसात्मक व्यवहार व प्रतिक्रिया है जिसम किसी व्यक्ति को शारीरिक चोट या मानसिक आघात पहुचता हो। ऐसे व्यवहार को हम अपराध की सज्ञा देते हैं क्योकि सामाजिक पारम्परिक मूल्यो के विपरीत होने के कारण समाज की सरकार ने ऐसे कृत्यो को विधि निषिद्ध मानकर दण्डनीय माना

है। हमारी दृष्टि में अपराध एक वैयक्तिक व्यवहार है, जो विधि निषिद्ध होने से दण्डनीय कृत्य है। हिंसक व्यवहार क्यों होता है? इसका उत्तर देना एक विषम व दुरूह कार्य है जिसको संक्षेप में हम महिला के प्रति हिंसक व्यवहार कर पुरुष आपराधिक कृत्य क्यों करता है, के संदर्भ में अपने को सीमित कर उत्तर प्रस्तुत करना सम्यक होगा।

*किसी भी व्यक्ति के प्रति दूसरे व्यक्ति द्वारा किया गया हिंसक व्यवहार अप*राध है, क्योंकि समाज की किसी मान्यता के आधार पर बना कानून ऐसा व्यवहार करने की स्वीकृति नहीं देता।

नारी के प्रति हिंसक व्यवहार करने की प्रवृत्ति को हमें व्यक्ति और उसके परिवेश दोनों ही खोजना होगा। जसा कहा गया है कि आहार निद्रा भय और मैथुन व्यक्ति की मूल प्रवृत्तियाँ हैं, वे मनुष्य और पशुओं में समान हैं। इसी प्रकार प्रसिद्ध मनोचिकित्सक फ्राइड के अनुसार मनुष्य में दो मूल इथोस व इरोज होती है *अर्थात् व्यक्ति में रचनात्मक प्रवृत्ति भी होती है और संहारक प्रवृत्ति भी होती है।* संहारक प्रवृत्ति ही उसकी मृत्यु का कारण होती है जबकि रचनात्मक प्रवृत्ति जीवन दायिनी होती है। विध्वंसकारी मृत्युपरक प्रवृत्ति हिंसामूलक होती है और इस प्रकार हिंसक होना मानव प्रकृति का मूल कारक है। इस प्रकार मूल में पुरुष व महिला दोनों ही स्वभावत हिंसक प्रवृत्ति के होते हैं किन्तु सभ्यता के विकास के साथ साथ सांस्कृतिक आवरण में मनुष्य ने अपनी हिंसात्मक प्रवृत्ति को अवगुणित कर लिया और सामाजीकरण व अन्तपरिष्करण की प्रक्रिया के माध्यम से मानव ने शताब्दियों के कालान्तर में अपने आप को सुसभ्य व सुसंस्कृत कहलाने का अधिकार प्राप्त कर लिया है। किन्तु कभी-कभी मानव संवेगात्मक स्थिति में जब परिवेश के साथ समायोजन नहीं कर पाता है तो अपनी आदि मूल प्रवृत्ति की हिंसक अभिव्यक्ति कर बठता है जिसे व्यवहार को अपराध की संज्ञा में माना जाता है। *इस प्रकार स्त्री हो या पुरुष दोनों ही हिंसक व्यवहार जसा कृत्य कर बठते हैं।* यह आपराधिक कृत्य पुरुष द्वारा पुरुष के प्रति पुरुष द्वारा स्त्री के प्रति महिला द्वारा पुरुष के प्रति व महिला के प्रति जसी भी स्थिति हो वैसी मानसिक व पारिवेशिक स्थिति में हिंसक रूप से कर दिया जाता है जो अपराध की संज्ञा में आता है किन्तु फिर भी यह सांख्यिकी आधार पर यह सिद्ध है कि पुरुषों की तुलना में महिलाओं की अपराध संख्या प्रतिशत से अधिक नहीं है। इस प्रकार पुरुष ही नारी की तुलना में अधिक अपराध करता है। पुरुष पुरुष के विरुद्ध तो अपराध करता है ही वह कभी कभी नारी के प्रति भी अपराध करता है। यहा प्रश्न नारी के प्रति हिंसात्मक आपराधिक व्यवहार का है जो पुरुष नारी के विरुद्ध करता है। हमारे मतानुसार इसके दो मुख्य कारक हैं—

(1) सामाजिक परिवेश (2) वयक्तिक गुण।

(1) सामाजिक परिवेश—व्यक्ति सामाजिक प्राणी है। समाज ही उसका प्राण है समाज ही उसकी जन्मस्थली है क्रीडा प्रागण है और मृत्यु द्वार है। व्यक्ति की समाज के बिना कल्पना भी सम्भव नही। व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास व उसकी मानसिकता के निर्धारण मे सामाजिक परिवेश का बहुत योगदान होता है। हम सामाजिक परिवेश को विशद रूप मे स्वीकार करते हैं जो न केवल पारिवारिक वातावरण व पर्यावरण तक ही सीमित है अपितु इसमे सभी सामाजिक परम्पराए व शताब्दियो से पोषित सास्कृतिक मान्यताए मूल्य धार्मिक विश्वास आध्यात्मिक व दार्शनिक विचार भौगोलिक कारक आर्थिक व्यवस्था आदि सभी सम्मिलित है। भौतिक आर्थिक व भौगोलिक व सास्कृतिक सभी कारक व्यक्ति के सामाजिक परिवेश का निर्माण करते हैं। व्यक्ति जसे ही सामाजिक परिवेश म जन्म लेकर पलता है युवा होता है व वृद्ध होकर मृत्यु प्राप्त करता है उस समाज की मान्यताए व मूल्य उस व्यक्ति की जीवन शली व वचारिक क्षितिज को प्रभावित करते है उसमे कोई दो मत नही हैं। व्यक्ति की मानसिकता उसके सस्कारो की देन है और सस्कार व्यक्ति के सावकालिक व सनातन वचारिक्ता एव क्रियात्मक्ता की उपज है जो कि वह किसी विशेष परिवेश मे सीखता है और हृदयगम करता है वह जो कुछ है जो वह चेतन/अधचेतन/अचेतन मे धारण करता है और प्रत्यक्ष व परोक्ष मे चेतन व व अवचेतन मे, चाहे या अनचाहे उसके विचार भाव व क्रियाओ को प्रभावित करता है वह उसी सीमा मे सोचता है और क्रियाए करता है। सस्कार व्यक्ति के व्यवहार की सीमाए निर्धारित करता है और उसकी वैचारिक व व्यवहारिक जीवन शैली को प्रभावित करता है।

भारतीय समाज म नारी स्वतन्त्र जीव नही बाल्यकाल मे पिता आश्रिता युवाकाल मे पति सुरक्षिता व वृद्धावस्था मे पुत्र पालिता होती है। भारतीय समाज म नारी को सदा ही पराया धन माना गया है। विवाह पूव वह पिता पर ऋण स्वरूप है वह एक सामाजिक दायित्व है जिसकी पूर्ति कर पिता विवाह म उसको पर पुरुष जो उसका पति कहलाता है धार्मिक अनुष्ठान कर दान स्वरूप दे देना है। जो व्यक्ति उसको पवित्र अग्नि की साक्षी मे उसका पाणिग्रहण करता है वह उस बाला के तन मन व धन का स्वामी हो जाता है भोक्ता होता है व सरक्षक होता है और प्रत्युत्तर स्वरूप वह उस स्त्री को पूर्ण सुरक्षा उसकी सम्पूर्ण आवश्यकताओ की पूर्ति सतान व भरण पोषण। पिता के घर से डोली उठने पर वह स्त्री पराई है पिता की ओर से और सब अधिकार दे दिये जाते हैं पति रूपी नये अजान पुरुष को ग्रहो के योग से बिठाया सयोग भाग्य के भरोसे छोड दिया जाता है। वह वह नारी अपने भाग्य विधाता पति के साथ जीवन नौका मे बठकर इस सासारिक सागर यात्रा को पूरी करने हतु उसके साथ बैठ जाती है जो चाहे उसकी नाव को पार

लगाये या डुबाये, उसको सुख दे या दुःख दे। इस पति को परमेश्वर मानकर उसकी इसकी सेवा करना है साथ देना है और अन्त मे विलीन हो जाना है। ऐसी सामा सामाजिक परम्परा है मान्यता है धार्मिक आदेश है जिसे भारतीय नारी को निभाना है।

भारतीय नारी के प्रति पुरुष हिंसक उत्पीडन के सदर्भ म भारतीय सामाजिक परिवेश पर विचार करने पर यह तथ्य स्पष्ट है कि भारतीय समाज एक परम्परा बद्ध रूढिगत समाज है जो कि धार्मिक आदेश/निर्देश व्यवस्था व व्याख्याओं की प्राणवायु लेकर अपने को जीवित रखता चला आया है। भारतीय समाज म नारी का जो स्थान है वह चाहे कसी ही उच्च व्यवस्था की बात करे पुरुषाधीन है। भारतीय समाज अपने आर्थिक सामाजिक व सास्कृतिक क्षेत्र म पुरुष को प्रधानता प्रदान कहता है और समाज की सारी व्यवस्थाए पुरुष द्वारा ही तय की जाती हैं सचालित की जाती हैं और जीवित रखी जाती हैं। जो व्यवस्था पुरुष वचस्व की पोषक है वह व्यवस्था जीवित रहती है और आगे चलती है। भारतीयसमाज मे मूलत पितृ सत्ताधारी पारिवारिक व्यवस्था है। परिवार पिता के नाम पर चलता है माता के नाम पर नही। पिता परिवार का कर्णधार है, अधिशासी है और सारी सत्ता का केन्द्र है। वह परिवार का पोषक है आजीविका उपाजन उसका कम है। वह खुले वक्ष घूम सकता है किन्तु महिला खुलेमुँह खेत /खलियान/घर मे काम नही कर सकती। वह अवगुठनवती ललना है जो पलने मे पलने से लेकर पल्लवित व पुष्पित हाने तथा आवरण युक्त रहती है। इस प्रकार पुरुष अधिशासी समाज म स्त्री का स्थान समता का समानता का न होकर एक सहचरी व दारा के रूप म ही है। अत पुरुष अपने अह व महानता तथा श्रेष्ठता के मद मे स्त्री के प्रति हिंसक व्यवहार करने म नही चूकता क्योंकि वह जानता है कि उसके बिना स्त्री अबला है परित्यक्ता कुलटा के रूप मे मानी जाती है पराधीन है जिसको स्वप्न म भी सुख बिना पुरुष के प्राप्त नही हो सकता है। पुरुष विहीन वह अपनी आजीविका नही कमा सकती वह अपने अस्तित्व व स्मिता को असुरक्षित समझती है। उसकी सतान आश्रयहीन होती है। तेरे बिना हम कुछ नही जैसी सामाजिक व्यवस्था पुरुष को नारी के वरद् हस्त देती है। आर्थिक रूप से आश्रिता सामाजिक रूप से पुरुष सुरक्षाधीन व धार्मिक रूप से एक पुरुष निष्ठा से स्वर्ग आकाक्षी नारी पुरुष के अह की त्रासदी भोगती है तो पुरुषाथ मद के घनघोर विपदा बादल भी उस पर बरसते हैं वह आहत होती है। पुरुष के साथ हसना खेलना पुलकित होना उसका अधिकार है तो कभी पुरुष प्रत्याचार से रोना बिलखना व क्रन्दन करना भी उसकी नियति है।

उक्त सामाजिक परिवेशगत मान्यताए परम्पराए, विचार व मूल्य को जन्म देते हैं एव ऐसी सस्कारगत मानसिकता को जो पुरुष के सदर्भ मे अह पोषित अधि

शामी प्रवृत्तिमूला है और स्त्री के सदम मे शासित प्रवृत्ति मूला है। पुरुष अपने को स्त्री से वरीयता मानता है नारी पर शासन करना अपना अधिकार मानता है और नारी पुरुष की वरीयता को अपनी अह तुष्टि का माध्यम। यही सस्कारागत मानसिक्ता है जा पुरुष को नारी पर अधिकार रखने दवाने व असम्भवात्मक परिस्थितियो मे अभद्र अशोमनीय व कभी-कभी हिंसक आपराधिक व्यवहार करने के लिए प्रेरित करता है और नारी की अबला रूपा सस्कारगत मानसिकता है जो पुरुष के अत्याचार को सहने को विवश करती हैं। पुरुष हिंसा का शिकार होने के लिये नारी को विवश करती है।

व्यक्तित्व (वयक्तिक गुण)—पुरुष का महिलाओं के प्रति हिंसक व्यवहार सामा य व्यवहार या स्वमावगत व्यवहार नही है अपितु हिंसात्मक व्यवहार किया सीखा हुआ व्यवहार है जो कि व्यक्ति का असामा य व्यवहार है जा वह विशेष परिस्थितियो मे अपने व्यक्तिगत गुणो के अ तर्क्रियात्मक स्वरूप करता है। सामा यत समाज स्नेह सम्ब धो के ताने-बाने से बुना एक सामाजिक जाल है और सामा यत समाज के सदस्या का व्यवहार स्वमावगत प्रेम सम वय व पारस्परिक सहयोगमय होता है, कि तु परिस्थिति वशात् व्यक्ति हिंसात्मक व्यवहार भी करना सीख लेता है उसकी परिस्थतिया उत्तेजना प्रदान करती हैं और व्यक्ति अपने व्यक्तित्व सरचनात्मक गुण व सामाजिक मानसिक्ता के आधार पर व्यक्तिगत प्रतिक्रिया करता है और इस प्रकार हिंसा मक व्यवहार असामा य अन्तप्रतिक्रिया की देन स्वरूप है। व्यक्ति सामाजिक परिवेश मे पलता है व रहता है फिर भी समाज का सदस्य होने के साथ साथ उसका अपना स्वत त्र व्यक्तित्व होता है जीवन शैली है अपनी भावना विचार व दशन है। उसके सुख के क्षण अपने हैं और दु ख के दिन भी अपने हैं। वह जो कुछ महसूस करता है उसका अपना है, जो कुछ सहता है वह भी उसका अपना है। उसकी मानसिक वेदना को वह स्वय ही सहन करता है उसकी सवेदनात्मक स्थितियो मे कोई उसका सलाहकार हो सकता है कि तु उसका सहमागी या सहयागी होकर दु खद परिणामो का सहभोगी नही हो सकता।

जीवन सुख की सेज नही, कटककीर्ण पथ से चलकर सुखशाति का अभिष्ट पाना होता है। भाग्यशाली हैं वे जिसका जीवन उनकी आकाक्षा व कामना के अनुरूप होता है कि तु ऐसे व्यक्ति अपवादस्वरूप हैं। सामा यत उन व्यक्तियों की सख्या सर्वाधिक है जो जीवन से जूझते हैं और जो जीते हैं किन्तु कठिनाइयो के बीच कुछ शारीरिक रूप से भौतिक साधना से सम्पन्न हैं तो मानसिक रूप से असतुष्ट व अशात/ऊपर से शांत दिखने वाले सागर की गहराइयो मे कितनी बडवानल छिपी है इसको तो सागर ही जानता है। सामाजिक बधनो के साथ सामाजिक सबधा के साथ निर्वाह कर रहना कितना विषमय व कठिन है इसका अहसास तो सभी सामाजिक सदस्या को अपने वैयक्तिक जीवन म हाता है। सभी को कम या अधिक मीठे

घट्ट अनुभव तो होते हैं, किन्तु जब किसी के जीवन मे अनुपात दुःखद व असामान्यता की ओर अधिक झुकता है तो जीवन म विषमता असामान्यता को जन्म देती है और परिणामस्वरूप असामान्य हिंसक गतिविधिया सामने आती हैं जो सामाजिक अव्यवस्था का परिचायक तो हैं ही साथ म व्यक्तिगत जीवन मे विष भी घोलती हैं।

व्यक्ति जीता है एक सामाजिक व्यवस्था मे एक सास्कृतिक मूल्यात्मक परिवेश मे अपने व्यक्तित्व के सरचनात्मक गुणो के साथ। मुख्यत व्यक्ति एक परिवार के सदस्य के रूप मे सस्थागत सामुदायिक जीवन अपने व्यक्तिगत जीवन शली मे जीता है। व्यक्ति के सामाजिक जीवन म तीन मुख्य कारक होते हैं जो उसके अन्तर्क्रियात्मक सामाजिक जीवन को सफल बना सकते हैं—

(1) सामाजिक व सास्कृतिक सरचना व व्यवस्था मे विश्वास।

(2) अपने ससग मे आने वाले व विशिष्ट सम्बन्धो से जुडे व्यक्तियो के प्रति स्नेहशील लगाव।

(3) अपने व्यक्तिगत कत्तव्य सामाजिक उत्तरदायित्व व उद्देश्यों की पालना के प्रति आस्था।

समाज मे व्यक्ति अपनी इच्छाओ की पूर्ति करना चाहता है जिसके दो माध्यम हैं—आत्मतुष्टि व आत्म प्रदशन। आत्मतुष्टि की भावना से प्रेरित व्यक्ति अपनी उद्देश्यात्मक इच्छाओ की पूर्ति सामाजिक मान्यता व सामाजिक कल्याण की भावना के अनुरूप पूर्ति करना चाहता है, जब आत्म प्रदशन की भावना से प्रेरित व्यक्ति अपनी उद्देश्यात्मक इच्छाओ की पूर्ति अह की तुष्टि के रूप मे करना चाहता है साधनो के औचित्य की किंचित मात्र भी चिन्ता न कर येन केन प्रकारेण उचित अनुचित सीधे या बलपूवक जसे भी हो सामाजिक मान्यताओ व सामाजिक व्यवस्थात्मक जन कल्याण की परवाह न कर आत्मशुद्धि करना चाहता है। ऐसा व्यक्ति सामाजिक कल्याण भावना व सामाजिक व्यवस्थात्मक मूल्यो व सास्कृतिक सस्कारो को आत्मसात नही कर पाता उसका व्यक्तित्व कुसयोजित हो जाता है और इस प्रकार वह सामाजिक व्यवस्था के विपरीत असामान्य व्यवहार कर बठता है जो हिंसात्मक होने पर विधिक सीमाओं से परे होने पर आपराधिक क्षेत्र मे अपराध रूप मे परिभाषित होता है।

व्यक्ति के जीवन मे ऐसे विषाद के क्षण आते हैं ऐसी मानसिक क्षुब्धता की स्थितिया आती हैं ऐसी सवेगात्मक निराशापूण परिस्थितिया आती हैं कि वह अपना विवेक खो बठता है उसका अह उस पर हावी हो जाता है कुप्रेरक तत्व उसको

विचलित कर देते हैं और कभी निराशापूर्ण संवेगात्मक स्थिति मे असामान्य रूप से हिंसक व्यवहार कर बठना है। हो सकता है कि पुरुष महिला के प्रति हिंसक व्यवहार के सन्दभ म सामाजिक व्यवस्थात्मक मूल्यो मे स्त्री के प्रति जो उत्तरदायित्व व कत्तव्य है उनके प्रति आस्था की कमी सामाजिक रूप से ग्राह्य स्त्री के प्रति स्नेहशीलता का अभाव असामन्जस्यपूर्ण स्थितियो म संवेगात्मक प्रेरको के अधीन किये गये निणय सामाजिक व सास्कृतिक मान्यताओ के विपरीत व्यवहार करने की विवशता या मानसिकता सशयात्मक परिस्थितियो मे अधीरता पौरुषपूर्ण शक्ति से स्त्री को अधीन कर सामाजीकृत करने की पुरुषोचित अहवादी प्रवृत्ति विपरित मनोवृत्तियाँ व वैचारिक मतभेद व इच्छानुरूप आकाक्षाओ की पूर्ति न होने की स्थिति मे ये ऐसे विचलन कारक है जो व्यक्ति के व्यक्तित्व सम्बन्धी सरचनात्मक गुणो के सन्दम मे सामाजिक परिवेश पोषित सामाजिक आर्थिक व सस्कृ तिपोषक सस्कारात्मक मूल्यो से अन्तर्क्रियास्वरूप पुरुष द्वारा नारी के प्रति किये जाने वाले हिंसक व्यवहार की व्याख्या प्रस्तुत करते हैं।

(II) नारी द्वारा नारी के विरुद्ध हिंसात्मक अपराध

यही नही कि अपराध की त्रासदी महिलाओ को केवल मात्र पुरुष के हाथो ही भुगतनी पडती हो। नारी भी नारी के विरुद्ध अपराध करती है, नारी दूसरी नारी से ईर्ष्या करती है वमनस्य रखती है असहिष्णु होती है और कभी कभी तो कट्टर प्रतिद्वन्द्वी भी होती है नारी दूसरी नारी से प्रतिशोध लेती है नारी नारी का समाप्त कर तुष्टि व तृप्ति महसूस करती है। नारी का बदला प्रसिद्ध है वह जब बदला देने पर उतारू होती है तो उसकी तुलना नागिन से की जाती है, जो कि प्रतिशोध की जलती हुई सपर्णी के समान विषली चचल चपल व छुप कर प्रहार करने वाली होती है। पौराणिक प्रसगो के अनुसार शूपर्णखा द्वारा अपने अपमान का बदला सीता का अपहरण करवा कर लिया गया। इतिहास मे ऐसे प्रसग हैं कि नारी ने नारी से बदले की आग मे जलत हुए कितने ही साम्राज्यो को आग लगादी। नारी का विद्रोहिणी रूप मे भी नारी के विरुद्ध अकल्पनीय रूप से भयावह होता है। नारी जब प्रतिशोधिनी होती है तो रणचण्डी हो उठती है सिंहिनी की तरह गजन करती है सपर्णी के समान प्रतिशोध लेती है। नारी की नारी के प्रति असहिष्णुता तादात्मय व एकात्मक भावनात्मक सम्ब ध के विपरीत विध्वंसात्मक अलगाव व दुष्कृतिपूर्ण आपराधिक भावना न केवल शोचनीय है अपितु चिन्तनीय भी। महिला दूसरी महिला की हत्या मे सहयोग देती है अपहरण मे सहयोग देती है बलात्कार की भूमिका बनते म सहयोग देती है। कभी कभी महिला दूसरी महिला की स्वय हत्या कर देती है हत्या का प्रयास करती है गम्भीर मारपीट कर देती है अग भग कर देती है। हत्याओ के प्री कितने माध्यम अपनाये जाते हैं विमत्स्च रूप से

हथियार से गला काट कर, आग मग करके, जहर देकर जला कर कुए या नदी मे डुबाकर आदि माध्यम से ।

महिला द्वारा महिलाओं के किये गये अपराधो के सदभ म राजस्थान म सजा भुगत रही सिद्धदोष महिला बदियो का सर्वेक्षण किया गया है । सर्वेक्षण मे पाया गया कि राजस्थान की महिला बदीगृह मे सजा भुगत रही 31 महिला बदियो म से 11 महिला बदी ऐसी हैं जो कि महिलाओ के ही विरुद्ध किये गये अपराधो म कारावासीय दण्ड भुगत रही हैं । इस प्रकार 35% महिला बदी एसी हैं जो महिलाओ के विरुद्ध किये गये अपराधो मे दोषी हैं । ये सभी 11 महिलाए हत्या के अपराध मे दण्ड भुगत रही हैं । ये सभी महिलाए हिंदू जाति की हैं जिनमे 3 अनुसूचित जन जाति व 2 अनुसूचित जाति की हैं शेष 6 महिलाए सामान्य जाति की हैं जिनमे तीन माली जाति, 1 राजपूत, 1 दरोगा व 1 महाजन जाति की महिलायें हैं । इन सभी 11 महिलाओ मे अपराध की शिकार महिला म 4 महिलाओं को अपनी बहुओं की हत्या का दोषी पाया गया, एक महिला को अपनी सौत की हत्या 2 महिलाओ को अपनी भाभियो की हत्या एक महिला को अपनी सहेली की हत्या एक महिला को स्वय की पुत्री व अन्य एक महिला को पडौसिन की पोती की हत्या व 1 महिला को सास की हत्या का दोषी पाया जाकर दण्डित किया गया ।

उक्त सभी 11 महिलाओ मे केवल एक महिला विधवा है और अन्य 10 विवाहित हैं । शक्षणिक दृष्टि से तीन महिलाए प्राइमरी कक्षा तक शिक्षा प्राप्त हैं और शेष 8 निरक्षर हैं । पाच प्रकरण मे हत्याए तेल डालकर व आग लगाकर की गई हैं जबकि तीन प्रकरण मे कुए मे धक्का देकर हत्या की गई और शेष तीन प्रकरणो मे हथियारो के प्रयोग से हत्या की गई है जिसम एक प्रकरण मे तलवार से एक प्रकरण मे कुल्हाडी व एक मे छुरी का प्रयोग हत्या करने म किया गया है ।

जिन दो प्रकरणो मे भाभी की हत्या हुई उसमे से एक प्रकरण म भाभी की चरित्रहीनता हत्या का कारण बनी जबकि दूसरे प्रकरण मे पारिवारिक कलह । सहेली की हत्या आपसी झगडा व विपत्नी की हत्या म पति पत्नी का पारस्परिक कलह हत्या का कारण रही । पडोसी की पोती की हत्या का कारण केवल मात्र भ्रम बताया गया जिसमे पडोसी की पोती खेलते खेलते कुए मे गिर गई और नाम वमनस्य से लगाया गया । इसी क्रम म स्वय की पुत्री का कुए म गिरकर मरने का दोष स्वय माता पर लगाया गया । पत्नी का दोष था कि वह पुत्र को जन्म नही देती जिससे दुःखी होकर वह कुए म बच्ची को लेकर कूद गई । बच्ची की मृत्यु हत्या का अपराध हुआ । शेष प्रकरणों म आग लगाकर जो हत्याए वधुओ की हुई उनका मुख्य कारण पारिवारिक कलह ही बताया गया ।

आयु की दृष्टि से देखा गया तो ये अपराधी महिलाए 20 वष से 60 वष की आयु वग की हैं जिसम 20 से 25 वष की आयु सीमा मे 3 25 से 30 की आयुसीमा म 2, 31 मे 35 आयु वग मे 2, 36 से 45 आयु वग म 3 व 60 से ऊपर आयु की एक महिला बन्दी है।

इस प्रकार देखा गया कि किशोरावस्था की कोई महिला बन्दी नही है अपितु जितनी भी अपराधी महिलाएँ हैं वे 20 वष से अधिक आयु सीमा की हैं। युवा व वयस्क तथा वृद्धा तीन अवस्था मे महिलाओ द्वारा अपराध किया है। परिणामत महिला जब अपराध करती है तो कोई आयुबन्धन नही है। किशोरावस्था के अपराध तो उदार दृष्टि से लिए जाते हैं किन्तु युवा व वयस्कावस्था म किये गये अपराध व्यक्ति की वैचारिक व भावनात्मक परिपक्वता के सन्दभ मे गम्भीरता से लिये जाते हैं।

नारी द्वारा नारी के विरुद्ध की गई हिंसा–व्याख्या

कभी कभी स्त्री भी स्त्री के प्रति हिंसक व्यवहार करती है ऐसा क्यों? जब नारी ही नारी के रक्त की प्यासी हो जाये, उसके तिरस्कार मे सहयोगी हो जाये यह वास्तविकता भी है यह सत्य भी, किन्तु साथ मे कितना विचित्र भी। नारी स्वभावगत सौम्यता व सहनशीलता की प्रतिमूर्ति होती है व सरचनात्मक मूल्यो म विश्वास करती है सगठनात्मक प्रवृत्तिशीला है विगठन से दूर रहती है। वह शाति व व्यवस्था मे विश्वास करती है, परिवार के शुभ व लाभ के लिए आचरण करती है किन्तु कभी कभी बहुत बडा प्रश्न चिन्ह भी नारी स्वय के चारित्रिक गुण व आचरण के लिए खडा कर देती है।

जब नारी विपरीत परिस्थितियो मे विचलित होती है तो उसका विचलन शालीनता की सारी सीमाए पार कर जाता है जब वह प्रतिशोध की आग मे जलती है तो अपना सवस्व स्वाह करके ही वह अपने शत्रु का सवनाश करने पर दृढ सकल्प हो उठती है जब उसकी इच्छा शक्ति जाग्रत होती है तो वह किसी न किसी रूप मे अपनी अभीष्ट की पूर्ति करना चाहती है जिसको चाहती है उसको हर मूल्य पर पाना चाहती है वह समर्पित हो जाती है तन मन, धन से। जब कभी उसके अभीष्ट की पूर्ति मे उसके मनमीत को पाने की राह म उसकी अभिलाषा की पूर्ति की राह मे उसकी इच्छा की तृप्ति के सन्दभ मे अवरोध बनकर आता है तो वह उसको सहन नहीं करेगी और येन केन प्रकारेण मनसा वाचा कमणा उस अवरोध को हटा कर रहेगी जिसके लिए चाहे उसे अपना अस्तित्व ही दाव पर लगाना पडे।

नारी जब सवेगात्मक स्थिति मे विवेकहीन होती है, तो वह बिना कूल की तूफानी नदी के समान बहती है वह मर्यादाओ की सीमा को लाघती है तो साक्षात

हथियार से गला काट कर, अंग भंग करके, जहर देकर, जला कर, कुए या नदी में डुबाकर आदि माध्यम से।

महिला द्वारा महिलाओं के किये गये अपराधों के संदर्भ में राजस्थान में सजा भुगत रही सिद्धदोष महिला बंदियों का सर्वेक्षण किया गया है। सर्वेक्षण में पाया गया कि राजस्थान की महिला बन्दीगृह मे सजा भुगत रही 31 महिला बंदियों में से 11 महिला बन्दी ऐसी है जो कि महिलाओं के ही विरुद्ध किये गये अपराधों में कारावासीय दण्ड भुगत रही हैं। इस प्रकार 35% महिला बन्दी ऐसी हैं, जो महिलाओं के विरुद्ध किये गये अपराधो मे दोषी हैं। ये सभी 11 महिलाए हत्या के अपराध मे दण्ड भुगत रही है। ये सभी महिलाए हिन्दू जाति की हैं जिनमे 3 अनुसूचित जन जाति व 2 अनुसूचित जाति की हैं शेष 6 महिलाए सामान्य जाति की हैं जिनमे तीन माली जाति 1 राजपूत, 1 दरोगा व 1 महाजन जाति की महिलायें हैं। इन सभी 11 महिलाओ मे अपराध की शिकार महिला म 4 महिलाओं को अपनी बहुओ की हत्या का दोषी पाया गया एक महिला को अपनी सौत की हत्या 2 महिलाओ को अपनी भाभियो की हत्या एक महिला को अपनी सहेली की हत्या एक महिला को स्वय की पुत्री व अन्य एक महिला को पडौसिन की पोती की हत्या व 1 महिला को सास की हत्या का दोषी पाया जाकर दण्डित किया गया।

उक्त सभी 11 महिलाओ मे केवल एक महिला विधवा है और अन्य 10 विवाहित हैं। शैक्षणिक दृष्टि से तीन महिलाए प्राइमरी कक्षा तक शिक्षा प्राप्त हैं और शेष 8 निरक्षर हैं। पाच प्रकरण म हत्याए तेल डालकर व आग लगाकर की गई हैं जबकि तीन प्रकरण मे कुए मे धक्का देकर हत्या की गई और शेष तीन प्रकरणो म हथियारो के प्रयोग से हत्या की गई है जिसम एक प्रकरण मे तलवार से एक प्रकरण में कुल्हाडी व एक म छुरी का प्रयोग हत्या करने म किया गया है।

जिन दो प्रकरणों म भाभी की हत्या हुई उसमे से एक प्रकरण म भाभी की चरित्रहीनता हत्या का कारण बनी जबकि दूसरे प्रकरण म पारिवारिक कलह। सहेली की हत्या आपसी झगडा व विपत्नी की हत्या मे पति पत्नी का पारस्परिक कलह हत्या का कारण रही। पडोसी की पोती की हत्या का कारण केवल मात्र भ्रम बताया गया जिसम पडोसी की पोती खेलते खेलते कुए म गिर गई और नाम षडयन्त्र से लगाया गया। इसी क्रम म स्वय की पुत्री का कुए म गिरकर मरने का दोष स्वय माता पर लगाया गया। पत्नी का दोष था कि वह पुत्र को जन्म नहीं देती, जिससे दुःखी होकर वह कुए मे बच्ची को लेकर कूद गई। बच्ची की मृत्यु हत्या का अपराध हुआ। शेष प्रकरणों म आग लगाकर जो हत्याए बहुओं की हुई उनका मुख्य कारण पारिवारिक कलह ही बताया गया।

आयु की दृष्टि से देखा गया तो ये अपराधी महिलाए 20 वर्ष से 60 वर्ष की आयु वर्ग की हैं जिसमे 20 से 25 वर्ष की आयु सीमा मे 3 25 से 30 की आयुसीमा मे 2 31 से 35 आयु वर्ग मे 2, 36 से 45 आयु वर्ग मे 3 व 60 से ऊपर आयु की एक महिला बन्दी है।

इस प्रकार देखा गया कि किशोरावस्था की कोई महिला बन्दी नही है अपितु जितनी भी अपराधी महिलाएँ हैं वे 20 वर्ष से अधिक आयु सीमा की हैं। युवा व वयस्क तथा वृद्धा तीन अवस्था मे महिलाओ द्वारा अपराध किया है। परिणामत महिला जब अपराध करती है, तो कोई आयुबन्धन नही है। किशोरावस्था के अपराध तो उदार दृष्टि से लिए जाते हैं किन्तु युवा व वयस्कावस्था मे किये गये अपराध व्यक्ति की वैचारिक व भावनात्मक परिपक्वता के सन्दर्भ मे गम्भीरता से लिये जाते हैं।

नारी द्वारा नारी के विरुद्ध की गई हिंसा–व्याख्या

कभी-कभी स्त्री भी स्त्री के प्रति हिंसक व्यवहार करती है ऐसा क्यो ? जब नारी ही नारी के रक्त की प्यासी हो जाये उसके तिरस्कार म सहयोगी हो जाये यह वास्तविकता भी है यह सत्य भी, किन्तु साथ मे कितना विचित्र भी। नारी स्वभावगत सौम्यता व सहनशीलता की प्रतिमूर्ति होती है व सरचनात्मक मूल्यो मे विश्वास करती है सगठनात्मक प्रवृत्तिशीला है विगठन से दूर रहती है। वह शाति व व्यवस्था मे विश्वास करती है परिवार के शुभ व लाभ के लिए आचरण करती है किन्तु कभी कभी बहुत बडा प्रश्न चिन्ह भी नारी स्वय के चारित्रिक गुण व आचरण के लिए खडा कर देती है।

जब नारी विपरीत परिस्थितियो मे विचलित होती है तो उसका विचलन शालीनता की सारी सीमाए पार कर जाता है जब वह प्रतिशोध की आग मे जलती है तो अपना सवस्व स्वाहा करके ही वह अपने शत्रु का सवनाश करने पर दृढ सकल्प हो उठती है जब उसकी इच्छा शक्ति जागृत होती है तो वह किसी न किसी रूप मे अपनी अभीष्ट की पूर्ति करना चाहती है जिसको चाहती है उसको हर मूल्य पर पाना चाहती है वह समर्पित हो जाती है तन मन, धन से। जब कभी उसके अभीष्ट की पूर्ति मे उसके मनमीत को पाने की राह मे उसकी अभिलाषा की पूर्ति की राह मे उसकी इच्छा की तृप्ति के सन्दर्भ म अवरोध बनकर आता है तो वह उसको सहन नहीं करेगी और येन केन प्रकारेण मनसा वाचा कर्मणा उस अवरोध को हटाकर रहेगी जिसके लिए चाहे उसे अपना अस्तित्व ही दाव पर लगाना पडे।

नारी जब सवेगात्मक स्थिति मे विवेकहीन होती है, तो वह बिना कूल की तूफानी नदी के समान बहती है वह मर्यादाओ की सीमा को लाघती है तो साक्षात

कालरूपा हो उठती है। वह कभी सिंहनी होती है तो कभी सर्पणी होती है। यहा तक कि कामलागी, तवागी की कलाइयो म इतना साहस कहा से आता है और इतना इच्छा शक्ति कहा से जागृत हो जाती है कि मेंहदी वाले हाथ अपने को रक्त रंजित कर लेते हैं खून की होली तक खेलने म नही थकते। प्रतिघाती नारी जब हिंसक होकर प्रतिशोधिनी होती है तो फिर वह चाहे छद्म वेश मे या खुले म जसे भी साधन उपयु क हो उनके सहारे प्रतिशोध लेती है, अभीष्ट को प्राप्त करना चाहती है।

पुरुष के समान नारी भी एक व्यक्ति है चाहे वह पुरुष की तुलना मे शारीरिक रूप से कम सशक्त है, किन्तु जहा तक सकल्प की शक्ति का प्रश्न है नारी पुरुष से कही अधिक शक्तिशाली होती है और एक बार जब वह मन म धारणा बना लेती है तो वह उस सकल्प के अनुसार अभीष्ट की प्राप्ति के लिए तन मन धन अपण कर देती है। वह प्रत्येक वस्तु का बलिदान देने को तयार हो जाती है चाहे उसकी सर्वाधिक प्रियतम वस्तु ही क्यो नही ? वह अपने सारे सुख-चन अस्तित्व सत्व की चिन्ता किये बिना अभीष्ट की प्राप्ति व अभिलाषा की तुष्टि मे लग जाती है। वह तत्काल या सुदूरकाल जैसी भी परिस्थितियाँ हों, अपने मन्तव्य की पूर्ति के लिए बुद्धि कौशल व चातुय तथा कभी कभी धय से भी काम लेती है।

आपराधिक व्यवहार व्याख्या के सदभ मे स्त्री भी पुरुष के समान ही अपराध करना सीखती है जिसमे उसके परिवेश व वैयक्तिक गुणो का विशेष अन्तर्क्रियात्मक योगदान होता है। अत पुरुष हिंसक व्यवहार की जो व्याख्या सैद्धान्तिक रूप से प्रस्तुत की है वही व्याख्या स्त्री अपराधिनी पर भी लागू होती है किन्तु विशेष रूप से नारी नारी के प्रति हिंसक व्यवहार क्यो करती है, उसके उत्तर स्वरूप हमको इस पर विचार करना होगा।

प्रथमत हम यह कह सकते हैं कि जिस प्रकार पुरुष दूसरे पुरुष के प्रति हिंसक आपराधिक व्यवहार करता है उसी प्रकार नारी भी नारी के प्रति हिंसक व्यवहार कर बठती है। प्रश्न है कि जब कोई व्यक्ति हिंसक व्यवहार करने पर उतारू हो जाता है तो वह यह नही देखता कि अपराध का शिकार स्त्री है या पुरुष। जिन प्रेरकों की प्रेरक शक्ति के सवेगात्मक प्रभाव मे जब व्यक्ति अपराध करता है तो उसके सामने केवल मात्र उद्देश्य प्राप्ति का ही ध्येय रहता है और उस क्षण वह व्यक्ति न तो स्त्री होती है और न पुरुष उस क्षण तो वह व्यक्ति एक ही लिंगधारी है वह विशेषणधारी है और वह है अपराधी। जब स्त्री अपराध कृत्य करती है तो उसकी जो परिस्थितिजन्य आपराधिक मन स्थिति बनती है वह मन स्थिति ही मुख्य है जिसम अपराध भाव वशीभूत हो नारी हिंसक हो उठती है। हो सकता है कि हिंसात्मक व्यवहार नारी का उद्देश्यात्मक पूर्ति हेतु अन्तिम सहारा हो और इसको वह अन्तिम हथियार के रूप मे लेती है। हो सकता है कि जिस नारी ने हिंसात्मक

उप सस्कृति म ज म लेकर हिंसात्मक साधनो से अभिलाषा पूर्ति व उद्देश्य पूर्ण तो होती देखी है हो सकता है कि उसे बाल्यकाल मे माता के वात्सल्य से वंचित रहने के कारण उसमे नार्योचित कोमल भावनाए अकुरित न हुई हो हो सकता है कि अयाय के विरुद्ध लडने का एकमात्र साधन ही हिंसा मान ली जाती है जबकि सभी विधि मूलक उपायो मे आस्था नहीं रह पाती हो सकता है बाल्य काल म अ य नारी मे विमाता या अ य सम्ब ध मे तिरस्कृत व्यवहार भोगा हो, हो सकता है कि वह अ य नारी की सताई हो टूटे परिवार मे घृणित काम विलासिता या वासना की शिकार किसी नारी के कारण हुई हो हो सकता है कि किसी नारी के कारण ही वह सुख शाति व अभीष्ट की प्राप्ति से दूर रही है हो सकता है कि उसका जीवन बनाने म व उसके जीवन म निराशा लाने म किसी नारी का विशेष योगदान हो हो सकता है कि किसी मानसिक विकृति के कारण सवेगात्मक व्यवहारिक स्थितियाँ बनती हों, हो सकता है कि सामाजिक अ र्तक्रियात्मक व्यवहार मे किसी नारी की भूमिका उसके प्रति काफी कष्टमय रही हो हो सकता है कहीं ऐसी शशवकाल की कटु स्मृतियाँ अवचेतन मस्तिष्क मे हो समय समय पर परिस्थितिवश चैत य होकर उस महिला के व्यवहार को प्रभावित करती हों हो सकता है उसको इतनी प्रति ताडना मिली हो कि उसने हिंसात्मक निषेधात्मक प्रभाव को महसूस किया हो। इस प्रकार हमारी दृष्टि म उक्त सभी स्थितिया नारी की वैयक्तिक वचारिकता व क्रियाशीलता सम्ब धी वयक्तिक गुणो के स दभ मे नारी के विरुद्ध नारी द्वारा किये गये हिंसक व्यवहार की व्याख्या हैं। इसी कारण विपरीत परिस्थितियो मे सभी महिलाए हिंसक नहीं होती हैं और न ही सभी पुरुष स्त्रियो के प्रति हिंसक होते हैं। विशेष परिस्थितियो म व्यक्ति के विशेष वयक्तिक भावात्मक वचारिक व क्रियाशीलात्मक गुण ही हिंसात्मक आपराधिक व्यवहार के योगदान कारक हैं।

नारी के प्रति हिंसक व्यवहार करने वाली आपराधिक नारी के सदभ मे य विशेष परिस्थितिगत वयक्तिक कारक क्या हो सकते है ? इसकी व्याख्या की आवश्यकता है। मनोवज्ञानिक दृष्टि से अपराध की व्याख्या करते समय यह सम्यक कथन है कि अपराध पाशविक उदात्त भावनाओ की पाश्विक तुष्टि तक पहुचने का एक लघु भाग है जिससे सामा य एव विधिक मा यताओ को तिरस्कृत कर सुगमता से त्वरित गति से अभीष्ट की प्राप्ति के लिये जाया जा सकता है। दूसरे श दो मे आपराधिक व्यवहार व्यक्ति के मानसिक तनाव की अभिव्यक्ति का माध्यम है जो तनाव उस व्यक्ति के मस्तिष्क मे सही अर्थो मे निबल मस्तिष्क के कारण उत्पन्न गहन असतोष म ज म लेता है जिसमे इसी निबल मस्तिष्क से उत्पन्न असतुलित मनोवेगो व भावनाओ तथा इच्छाओ का भी योग होता है। इस सदभ मे दुबल मन (मस्तिष्क) से अथ उस मस्तिष्क से है जिसमे सतुलन व आनुपातिक समभाव की कमी होती है।

जब दुर्बल मन स्थिति के कारण निराशात्मक व विषादात्मक मनोस्थिति बनती है तो यह अवसाद विषाद व आक्रोश के भावों को जन्म देती है। अवसाद व विषाद की स्थिति तो स्वयं व्यक्ति की स्वस्थ मानसिकता के लिए ही कष्टदायी है जिससे अवसाद भावना से ग्रस्त व्यक्ति स्वयं के जीवन से खिलवाड करता है किंतु जब आक्रोश भाव उमडता है तो उस समय एक संवेगात्मक स्थिति उत्पन्न होती है। इस संवेगात्मक झंझावातीय स्थिति में बुद्धि के तार्किक क्षीण स्वर सुनाई नहीं देते। दूषित मनावेगों से पोषित पाशविक इच्छाओं की पूर्ति के उद्देश्य से व्यक्ति संवेगात्मक स्थिति मे पशु बन जाता है और साधनो के गुणावगुण पर विचार किये बिना परिणामों की परवाह किये बिना हिंसात्मक दुष्कृत्य कर बठता है जो विधि द्वारा निषिद्ध होने के कारण अपराध के रूप मे माना जाता है।

हिंसक नारी के द्वारा दूसरी नारी के प्रति किये जाने वाले हिंसक व्यवहार मे विशिष्ट कारको की भूमिका के बारे मे सामान्यतया नारी के सदम मे ईर्ष्या व प्रतिशोध दो ऐसी मूलभूत प्रवृत्तियां हैं या दूषित मनोवृत्तियां हैं, जो नारी को संवेगात्मक स्थिति तक विचलित कर सकती हैं और उसके व्यवहार को किसी भी सीमा तक हिंसक बना सकती हैं। ये प्रतिशोध नारी के नारीत्व पर ठेस लगने पर उसके प्रेमी या पति को छीन लेने वाली स्थितियो मे नारी के सरल व सहज रूप को किसी भी सीमा तक आक्रोशपूर्ण मनोदशा मे वीभत्स्व रूप दे सकता है। प्रतिशोध की प्रतिमूर्ति रूप मे रणचण्डी का रूप धारण कर लेती है और नारी द्वारा ही नारी से छीने जाने वाले व छीने गये अधिकार की स्थिति उसको मानसिक रूप से और भी उत्तेजित व उद्वेलित कर देती हैं। इस स्थिति म प्रतिशोध की ज्वाला मे जलती नारी दूसरी नारी के प्रति क्रूर हो उठती है और उसके अस्तित्व को मिटाने के लिए अपना स्व व सवस्व सभी दाव पर लगा बठती है अपनी प्रतिद्वंद्वी नारी को समाप्त करने की इच्छा से उद्वेलित नारी अपने हिंसक आपराधिक व्यवहार के कारण आने वाले पीडामय त्रासदी को भूलने के लिये तैयार रहती है उसे अपनी कोई चिन्ता नही रहती। नारी म ईर्ष्या की दूसरी कुत्सित भावना भी ऐसी बलवती पाशविक भावना है कि वह अपनी प्रतिद्वंद्वी नारी को समाप्त करने पर हिंसक आपराधिक कृत्य करने के लिए न केवल प्रेरित करती है अपितु सफलतापूवक अपनी मानसिक व क्षणिक आत्मिक सतोष व सुख के लिए पशुवत हिंसक व्यवहार करने के लिये आतुर कर देती है। नारी दूसरी नारी के प्रति तादात्म्य का सम्बन्ध शीघ्र ही स्थापित कर लेती है एक नारी दूसरी नारी की मनोदशा को शीघ्र ही पहचान लेती है इस तादात्म्यता मे एक नारी दूसरी नारी म मित्र शीघ्र पा लेती है और शत्रु भी। नारी का शकालु स्वभाव शत्रुभाव की स्थिति मे दूसरी प्रतिद्वंद्वी नारी को कट्टर शत्रु मानकर उसके प्रति हिंसक व्यवहार करने तक मे आत्मिक सुख पाती है। नारी मे स्वत्व की भावना बडी प्रबल है व अपनी इच्छा का मनवाने की भावना उसकी सबसे बडी दुबलता हैं। भावनात्मक क्षेत्र मे नारी दूसरी प्रतिद्वंद्वी को सहन करने की शक्ति कम ही रखती है। यदि ऐसी नारी की वैयक्तिक कारक के रूप मे दुर्बल मानसिकता है तो वह आक्रोशपूर्ण संवेगात्मक स्थिति म दूसरी नारी के प्रति हिंसक व्यवहार कर ही सकती हैं।

अध्याय 3

नारी के प्रति हिंसाहीन अपराध

नारी के प्रति हिंसोत्तर अपराध (हिंसाहीन)

नारी के विरुद्ध जो हिंसात्मक अपराध किये जाते है जिनका विवेचन किया जा चुका है किन्तु इन अपराधों के अतिरिक्त नारी के विरुद्ध ऐसे भी अपराध किये जाते हैं जो अपराध तो होते हैं, किन्तु वे प्रत्यक्ष रूप से हिंसात्मक नहीं होते, ऐसे अपराधों को हमारे द्वारा अहिंसक अपराध की श्रेणी मे न रखकर हिंसोत्तर या हिंसा-विहीन अपराध की सज्ञा दी है जिससे हमारा आशय उन अपराधो से है जिनमे प्रत्यक्ष रूप से नारी के प्रति हिंसात्मक व्यवहार नही किया गया हो, जिससे नारी का व्यक्तित्व प्रभावित तो होता है किन्तु सीधी शारीरिक चोट नही पहुचाई जाती।

अपराध की परिभाषा करते समय विधिक दृष्टि से विधिभजक व्यवहार अपराध कहलाता है जिसमे विधि निषिद्ध कृत्य का करना व विधिप्रेत कार्य को न करना आपराधिक कृत्य कहलाता है। समाजशास्त्रीय दृष्टि से सर्वकालिक लोक-मान्य मूल्य व मानदण्डो के उल्लघन स्वरूप किये गये विचलन व्यवहार को अपराध की श्रेणी में माना जाता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अपराध व्यक्ति की मानसिक रुग्णता वश किया गया असामान्य व्यवहार है जो कुछ भी है अपराध वह कृत्य है, जिसको समाज की सरकार निषिद्ध व दण्डनीय कृत्य मानती है और सामाजिक दृष्टि से भी सामाजिक मूल्य व मापदण्डो के विपरीत किये जाने से निन्दनीय कृत्य माना जाता है। आपराधिक व्यवहार के मुख्य कारकों की व्याख्या करते हुए प्रसिद्ध न्यायविद हाल ने बताया है कि अपराध वह कृत्य है, जो जानबूझकर अपराध किये जाने के उद्देश्य से किया गया हो और इस कृत्य से समाज के किसी भी व्यक्ति को चोट पहुचनी हो। चोट शब्द को यदि वृहत अर्थ मे लिया जाये तो आपराधिक कृत्य से व्यक्ति को होने वाली समस्त हानिया इसमे सामाविष्ट हो जाती हैं चाहे यह हानिया मानसिक हैं या फिर शारीरिक चाहे हिंसा का प्रयोग प्रत्यक्ष मे हुआ है या परोक्ष मे या हिंसा का प्रयोग नही हुआ है। किसी महिला को सार्वजनिक रूप से बदचलन कहने से उसके शरीर पर कोई चोट नही लगती है न कोई उससे उसके शरीर से कोई रक्त बहता है, किन्तु इस प्रकार के व्यवहार से उस व्यवहार से उस महिला की

जो स माजिक प्रति ठा गिरती है उससे मानसिक आघात लगता है और इसके परिवार म उसके विरुद्ध जो प्रतिक्रिया हो सकती है और जिसम उसका व्यक्तित्व प्रभावित हो जाता है वह कितना असहाय व दर्दीना है। उक्त सभी कारणो के कारण गाली देने वाले या कुलटा कहने वाले व्यक्ति का व्यवहार आपराधिक कृत्य है क्योकि उसके व्यवहार से नारी के व्यक्तित्व को भयकर आघात पहुचा है उस नारी की सामाजिक प्रतिष्ठा गिरने से उसके व्यक्तित्व को कितनी गहरी चोट लगी है हो सकता ह इससे परिवार उसको त्याग दे, यदि अविवाहित ह तो विवाह न हो। अत किसी भी कृत्य को दण्डनीय घोषित करने के लिए यह आवश्यक है कि किया हुआ कृत्य जानबूझकर व्यक्ति को क्षति पहुचाने या चोट पहुचाने के उद्देश्य किया गया हो।

उक्त आपराधिक व्यवहार की व्याख्या को दृष्टिगत रखते हुए हम नारी के विरुद्ध पुरुष द्वारा किये जाने वाले उन अपराधो की व्याख्या प्रस्तुत करेंगे जो चाहे हिंसक प्रकृति के नही हैं किन्तु जिनके कारण नारी का समस्त व्यक्तित्व हताहत हो जाता है उसका ससार अन्धकारमय हो उठता है, उसका सुख व शान्ति उससे छिन जाती है उसका जीवन नारकीय हो उठता है, वह ऊपर से चाहे मुस्कराने का प्रय न करे किन्तु उसका अतमन सदा सिसकता रहता है वह पल पल मरती है और प्रतिपल मरते हुए जीवन जीती है जो ऐसा अभिशप्त हो जाता है कि जिसकी कल्पना मात्र से ही सिहरन हो उठती है। विवश अभिशप्त नारी नारकीय जीवन व्यतीत करती है।

पुरुष द्वारा नारी के प्रति किये जा रहे मुख्य आपराधिक कृत्य निम्नाकित हैं —

1 अनैतिक देह व्यापार—भारतीय समाज भी नारी के प्रति अपनी मान्यता एव व्यवस्थाओ मे विचित्र समाज है। एक ओर तो भारतीय समाज नारी को देवी रूप म प्रतिष्ठित कर यह व्यवस्था देता है कि जहा नारियो की पूजा होती है वही पर देवताओ का निवास होता है और दूसरी ओर नारी का वीरागना रूपी चित्र भी प्रस्तुत किया जाता है और वीर भोग्या वसुन्धरा के रूप में नारी को भी भोग्या माना जाता है। परिस्थितिया जब नारी के विपरीत होती है तो नारी कही पर भी पर नही रख पाती उसका पग-पग पर शोषण होता है। जब वह कामुकता की प्रतिमूर्ति वासना तोषण का साधन बन जाती है तो नारी एक सवदनशील जीव न होकर, काम वासना यन्त्र बन कर रह जाती है। अनतिक व्यापार म महिलाओ को लगाया जाता है। महिलाओ को दिवा स्वप्न दिखाय जाते हैं प्रलोभन देकर आकर्षित किया जाता है, उनको पशुवत बचा जाता है। उनकी कामुकता की प्रति

मूर्ति के रूप मे प्रस्तुत किया जाता है वासना के भूखे भेडिये व चन्द सिक्के देकर अपनी काम पिपासा सन्तुष्ट करते हैं—माध्यम है साधन है एक असहाय विवश अबला नारी।

क्या किसी महिला को वेश्या बनाना उसका शारीरिक शोपण करना उसको अनतिक देह व्यापार मे लगाना उससे पाप की कमाई एकत्रित कर अपने व्यसनो की पूर्ति करना नारी के प्रति घोर अपराध नही है ? नारी को बेच कर उससे अनतिक देह व्यापार मे लगाना उसका शोपण करना उसके जीवन पुरुष की सुगन्ध को चौराहे पर नीलाम करना भयकर अपराध है जो पुरुष द्वारा नारी के प्रति किया जाता है। समस्या और भी शोचनीय व दयनीय हो उठती है जब नारी पुरुप का साथ इस निन्दनीय कृत्य मे देती है और नायिका बनकर स्वय मारपीट कर अनिच्छित नारी को वेश्यावृत्ति करने के लिये विवश करती है रोते हुए मन से मुस्कराने को विवश करती ह तन को सजाने को बुझे दिल को परायो को बहलाने को विवश करती है। गुडिया सी सजी विवश नारी कामुकता की प्रतिमूर्ति काम के बाजार मे बिकने को उपलब्ध कराई जाती है। जहा उसको क्या मिलता है, सजने को सस्ते शृगार प्रसाधन उदार पूर्ति के लिये रोटी रहने को छत। बदले म कुछ सिक्के व भयकर रोग। पूणत अभिशप्त साथ मे पूणतया शोषित व उपेक्षित वेश्या कहलाने वाली नारी, इहलोक के नरक मे जीवन व्यतीत करती हुई। अनतिक देह व्यापार म इन महिलाओ को मिलता है भयकर काम सक्रामक रोग, घुटा-घुटा अधेरा वातावरण व कुपोषण के कारण। इस प्रकार शारीरिक शोपण के साथ साथ सक्रामक रोगो के कष्ट भी इनको भोगने पडते हैं। चमकीला ससार कितना नकली है कितना सतप्त व सतापपूण यह बताते हैं कि पवत दूर से ही रम्य लगते है और हर चमकने वाली वस्तु सोना नहीं होती।

2 धार्मिक रीतियां व नारी शरीर शोषण—विचित्र विडम्बना है कि वेश्या-वृत्ति के पोषिक तत्व कुछ धार्मिक मान्यताओ मे भी मिलते हैं। दक्षिण मे देवदासी प्रथा वेश्यावृत्ति परम्परा की पोषक मानी जाती है। देवी व देवता के नाम पर आजीवन ब्रह्मचय व्रत का पालन करने के लिए माता पिता द्वारा अपनी सतान को देवालयो को समर्पित की जाने वाली भावना कितनी पुण्य मयी है किन्तु जब इन देव दासिया का शारीरिक शोपण पण्डे पुजारियो द्वारा किया जाता है तो कितना घणित दिखाई देता है पुरुप का स्वाथ जो भगवान के प्रसाद को भी काम देवता का आहार बना देता है। वे नारी की देव दासी की गरिमा को अधोगति मे ले जाकर पापमय जीवन भार से ढक देते हैं। इस प्रकार कितना अपवित्र हो उठता है वह पावन उद्देश्य जिसके वशीभूत देवी कृपा पाने के लिये माता पिता अपनी सन्तान

का मोह त्याग देते हैं सन्तान बिछोह आजीवन सहते हैं किन्तु जब इन पावन भावनाओं के प्रसाद की दुर्गति होती है तो क्या मानव मन चीत्कार नहीं कर उठता ? धार्मिक प्रसाद के रूप में अर्पित नारी का शरीर शोषण होता है तो क्या आपराधिक ऊंचाइयां घृणा के क्षितिज को छूती दिखाई नहीं देती ?

इस दारुण स्थिति से जुड़ा है एक सुलगता प्रश्न वह है अवैध सन्तान का प्रश्न। जब ये महिलाएँ गर्भवती होती हैं तो पहले तो गर्भपात के प्रयत्न किये जाते हैं, ताकि वेश्या व्यापार मेले में सन्तानहीन होने से कुमारी के रूप में प्रस्तुत कर उसका आकर्षण बनाया जाता रहे कितना दारुण कष्ट उठाना पड़ता होगा इन महिलाओं को गर्भपात की पीड़ा सहते। जैसी भी हो यही नियति है इन विवश महिलाओं की। फिर भी जब अवैध सन्तान हो ही जाती है तो मां का ममत्व पितृत्व की कमी को पूरा नहीं कर सकता। मां की आंखें शून्य में तरती रहती हैं वह क्या जवाब देगी अपनी सन्तान को जब यह प्रश्न उठेगा कि उसका पिता कौन है ? कौन होगी ऐसी माता जो अपनी सन्तान की दृष्टि में गिरना चाहेगी ? जो स्वयं किसी को न दे सकी वह प्यार वह कैसे छीनेगी अपनी सन्तान से जिसको कोख में उसने रखा है और खून पिलाकर पाला है। क्या कल्पना की जा सकती है नारी के प्रति किये गये अत्याचार की ? समुद्र मंथन हुआ था तो सभी दैविक व पाशविक वस्तुएँ निकली थीं। अब ऐसी नारी के जीवन मंथन में क्या निकलेगा ? विष जो उसको स्वयं को पीना पड़ता है और उसको नीलकंठी बना देता है।

3 धोखा व भटकाव—प्रेम अन्धा है और प्रेमी यह नहीं देख पाते कि वे क्या त्रुटियां करते हैं। प्रेम व्यक्ति को मदांध कर देता है और प्रेमी युगल के वे सर पर चढ़कर बोलता है। प्रेमी के नाम पर महिलाओं को लुभाया जाता है नारी की संवेदनशीलता का लाभ उठाकर प्रेम के नाम पर भोली भाली नारियों को लुभाया जाता है उनको भगाकर ले जाया जाता है उसकी अस्मिता को लूटकर उसको निराश्रित कर असुरक्षित कर छोड़ दिया जाता है। इस प्रकार प्यार में धोखा खाई नारी अपने परिवार से दूर हो जाती है कलंकिनी व कुलटा के विशेषणों से युक्त होकर वह कहीं की नहीं रहती। कामुक भूखी आँखें उसकी ओर ताकती रहती हैं नंगी बाँहें उसकी ओर बढ़ती हैं उसके नारीत्व के कोमल पुष्प को मसल देने के लिये। ऐसी भटकी नारी का जीवन पूर्णतया बर्बाद हो जाता है। इस भंवर जाल में फंसी नारी के नारीत्व की हत्या हो जाती है। वह तिल तिल कर मरती है शरीर जीवित रहता है आत्मा आहत हो जाती है मन मर जाता है—जीवित शव है बोझ है अपने पर व समाज पर जो जीवन दो के स्थान पर उसको विष देता है। उस नारी का जीवन प्रश्नों का विरोमिड बनकर रह जाता है।

क्या प्रवचना से त्रस्त ऐसी नारी के लिए मृत्यु के अतिरिक्त अन्य और कोई विकल्प है ? ऐसी अभागी नारी के लिए अन्य मगलमय माग नही है ? क्या स्निग्धता सहानुभूति व सवेदना का सम्बल उनको कभी प्राप्त न होगा ? किसी की पाश्विक वासना की शिकार अभागिन नारी सृष्टि के अन्धे न्याय को जहा पुरुष ही शोषण करता है और वही व्यवस्था का अधिष्ठाता है नारी कब तक मूक हिरणी की तरह सहती चली आयेगी ? उसके मृगशावक जसे कोमलागो पर अन्याय व अत्याचार के अगारे कब तक बरसते रहेगे ? अबोध जीवन कब तक भुगतेंगे दूसरे के पाप का दण्ड ? जो समाज केवल मात्र अपनी व्यवस्था को ही सुरक्षा प्रदान करता है और अपने सदस्य को मात्र व्यवस्था के लिए ही जीने को विवश करता है, उसको समाज की व्यवस्था कब तक असुरक्षित करती रहेगी ? जहा पर व्यक्ति की व्यक्तिगत सुरक्षा का कोई प्रावधान नही है जबकि व्यक्ति अपनी भावनावश सुखद भविष्य के लिए व्यवस्थापरक काय कर बठता है समाज का एकपक्षीय दण्ड विधान नारी को किस निदयता से कुचलता है ? प्रश्न ? प्रश्न ? प्रश्न ही प्रश्न ? केवल मात्र प्रश्न ? कब तक करता रहेगा समाज नारी के साथ अत्याचार ? हर प्रश्न बारूदी है और मन की सुरग पर जोरदार धमाका करता है धाय धाय करता है और तोडना चाहता है समाज की तन्द्रा—जो अधजगे समाज को क्या पूणतया जगा पायेगा ? फिर प्रश्न ।

4 तस्कर माध्यम—कवि की कोमलतम कल्पना है नारी जो जीवन के सुन्दर समतल मे पीयूष स्रोत से बहा करे । कलकल करते झरने के प्रवाह सी उमग भरी नारी जब पाप के दलदल मे फसती है तो कितना दारुणिक व निदयी प्रतीत होता है वह दृश्य । सृष्टा का न्याय । समान रूप से एक साथ सृजित ऐश्वरीय सृजन शीलात्मक कलाकृतिया पुरुष व नारी जब एक दूसरे से टकराती हैं तो पुरुष की कठोरता नारी की कोमलता को चकनाचूर कर उठती है । पुरुष भोग्या है नारी किन्तु नारी का जब पशुवत क्रय विक्रय किया जाता है उसको अपराध के ससार मे विधिवत प्रतिष्ठित किया जाता है तो कितना घिनौना लगता है पुरुष का यह व्यवहार । नारी को तस्करी का माध्यम बनाया जाता है । नारी की विवशता का लाभ उठाकर उससे हीरे जवाहरात, सोना शराब व अन्य मादक द्रव्यो की तस्करी कराई जाती है । नारी को आम धारणा मे कमजोर व्यक्ति भी समझा जाता है कानून से डरने वाले प्राणी के रूप मे समझा जाता है । नारी के बारे मे एकाएक यह विश्वास नही हो पाता कि वह आपराधिक कृत्य मे लिप्त हो सकती है । तस्कर सुन्दर लगने वाली महिलाओ को अपने चुगल मे फसाते हैं उनको डराते हैं धमकाते हैं और फिर प्यार से या डराकर उनसे तस्करी करवाते हैं । कभी कभी तो इन महिलाओं को अधिकारियो को प्रसन्न कराने के लिए भेजा जाता है जहा पर ये महिलायें झूठे प्यार का नाटक रचाकर उनको अपने जाल मे फसाती हैं और तस्करी

का सामान इधर-उधर करवाती है। कभी-कभी स्वय भी सामान छिपाकर लाती हैं और गन्तव्य स्थान पर पहुचाती है। पकडी जाने पर जेल की यातनायें झेलनी पडती हैं और लाभ होने पर केवल मात्र थोडी सी ही मजदूरी इनको मिलती है। ये महिलायें तस्कर सम्राट के जाल से मुक्त न हो सकें और मुक्त होने की सोच भी न सकें उसके लिए तस्कर इन महिलाओ को अन्य अपराध जसे चोरी मारपीट, हत्या के प्रयास व हत्याओ म सम्मिलित कर लेते हैं और फिर इनके चित्र भी साथ मे उतार लेते है जिनको बाद मे पुलिस द्वारा पकडे जाने का भय दिखाकर इन महिलाओ की विवशता का लाभ उठाकर उनसे तस्करी का काय लेते हैं कभी माध्यम बनाते हैं तो कभी प्रेमिकाओ की तो कभी वश्याओ की भूमिका कराते हैं। विवश नारियो को तस्करा की उगली के इशारों पर कठपुतली के समान नाचना होता है। व किंकतव्यविमूढ की स्थिति मे घुट-घुट कर जीवन जीती हैं। पकडे जाने पर पुलिस का भय और छोडकर जाने पर भी पुलिस का भय जो उनके लिए यमदूत का सदेश है क्योंकि तस्कर दल से थोडी भी गद्दारी की आशका फासी के फदे की याद दिलाती रहती है। कभी भी तस्कर सम्राट महिलाओ को मौत के घाट उतरवा सकता है।

यही नही तस्करी मे लिप्त की जाने वाली महिलाओ की न केवल स्मिता ही लूटी जाती है अपितु उनकी मानसिकता को भी बिगाडा जाता है। तस्कर दल के दलदल मे फसी नारियो को नशा करने की आदत डलवाई जाती है उनको सुरापान करना व मादक द्रव्या का सेवन करना सिखाया जाता है। शराब के अड्डो पर वे साकी के रूप म विराजमान रहती हैं ग्राहको को आकर्षित करती हैं। स्वय भी पीती हैं और पिलाती हैं। हेराइन चरस स्मक जसे घातक मादक द्रव्या के सेवन से वे चाहे नशे की स्थिति म अपनी विवशता की विषमता को भूल जायें किन्तु वे अपनी दयनीयता से उभर नहीं पाती। जवानी मे भवरे उसके यौवन रस का पान करते हैं उसकी नारीत्व का आपराधिक माध्यम बनाया जाता है और इस प्रकार वह न तो कानून की व्यवस्था वाले समाज मे ही रह सकती है और न ही वह तस्कर समाज म ही सुरक्षित रह पाती है।

तस्कर समाज म नारी का अपना कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं होता। वहां पर नारी उपयोगिता का दूसरा नाम है। जहां तक नारी की उपयोगिता है तब तक ही वह अपना स्थान तस्कर सम्राट की दृष्टि में बनाये रख सकती है और उपयोगिता भी। उसका काय है कि वह अपने बुद्धि कौशल से किस चतुराई से तस्करी का माल इधर उधर कराती है या करती है किन्तु जब कभी भी वह अपनी उपयोगिता सिद्ध नहीं कर पाती वह भार बन जाती है और उसको दराकर

समझकर रास्ते से हटा दिया जाता है उसको विवश कर सडक पर छोड दिया जाता है।

तस्कर दल म रहने के कारण वह विलासिता की आदी हो जाती है। वह सुरापान व मासाहारी हो जाती है महगे भडकीले कपडे पहिनने की आदी होती है कार आदि वाहन मे बैठना उसकी आवश्यकता म आता है किन्तु जब उसकी चमकीली छत का आसमान ही उस पर वज्र के समान गिरता है तो वह पर कटे पक्षी की तरह आहत होकर भूमि पर पडी पडी सिसकियाँ लेने के अतिरिक्त अन्य कुछ नही कर सकती। पेट पालन के लिए या तो वेश्यावृत्ति करती है या फिर भीख माग कर पेट भरने के लिए विवश होती है। ऐसी महिलायें आत्महत्या भी नही कर पाती हैं क्योकि उनका दृष्टिकोण पूर्णतया भौतिकवादी होता है और उनम जीवन के प्रति एक प्रकार का मोह होता है जीवन जीने की ललक होती है वे जीवन को शराब के भरे प्याले के समान समझती हैं और यह सोचकर जीवन रूपी शराब के प्याले को नही फेंकती कि कभी कभी तो यह प्याला रहेगा तो इसमे शराब फिर भरी जायेगी और जाम पर जाम पीने का सुख कभी तो प्राप्त होगा। आशा और निराशा के उद्वेलित मानसिकता के लिए नशे की दासी ये महिलायें कितना अभिशप्त जीवन जीती हैं। क्या नही है नारी के प्रति यह घोर अपराध कि उसको नारकीय जीवन जीने को विवश कर दिया पुरुष शासित समाज ने ?

5 विवाह विच्छेद—कितनी भावनाओ से नेह निमन्त्रण भेजकर प्रियजनो की उपस्थिति मे कन्यादान कर पिता अपनी पुत्री को पर पुरुष जामाता देवता को केवल मात्र पवित्र अग्नि की सौगन्ध पर विश्वास कर अश्रुपूरित आखो से सौप देता है और साथ म देता है यथा शक्ति जीवन भर की कमाई से बचाया गया धन दहेज के रूप मे। एक विश्वास व उमग के साथ नारी नया जीवन जीने की ललक लिये अपने बाबुल का घर प्रीतम की अजान देहली पर पग रखने के लिए छोडती है। बाबुल जो केवल मात्र बगिया माली ही तो था जहा पर उसकी चिडिया बेटी का नीहड था जहाँ से वे आसुओ की लडियो जसी टूट कर वे जाती हैं और फिर पिया का घर ही उसके जीवन की अन्तिम दिशा व अभीष्ट होता है।

पर यह क्या ? इस विश्वास को कसा झटका ? छोटी छोटी बातों पर तकरार टकराव असामजस्यता विद्रोह नापसन्द अविश्वास घृणाये सब भावनायें जीवन्त हो उठती हैं। अन्त मे एक ही उपाय होता है—अलगाव बिखराव। इस टकराव से विवाह विच्छेद होता है। सब कुछ छीन लिया जाता है उसका शील सवस्व सन्तान दहज आदि आदि। भारतीय सामाजिक कानून म सन्तान पिता की होती है मा का उस पर अधिकार नही होता। नि सतान नारी तो अपने भाग्य से समझौता कर लेती है किन्तु सतान के होते हुए भी सतान से अलग होना नारी

जीवन की सबसे भयंकर त्रासदी है। मां को वंचित होना पड़ता है न केवल अपने घर से पति से पति की सम्पत्ति से और साथ में अपनी सम्पत्ति से। यह सही है कि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दहेज पत्नी की सम्पत्ति मानी जाने की व्यवस्था दी है पति व उसके परिवारजनों का इस सम्पत्ति पर कोई अधिकार नहीं माना गया है फिर भी जब अलगाव की स्थिति आती है, तो जीवन व मरण का प्रश्न ही एकमात्र रह जाता है। जबकि जीवन साथी साथ न देकर शत्रुवत व्यवहार करता है तो फिर एकमात्र ही विचार रहता है जितना जल्दी हो, अलग होकर जीवन जीना ताकि अविश्वास व टकराव की नारकीय यन्त्रणा से छुटकारा मिल सके। सहारा विहीना वह कैसे पल पल मरकर जीती रहती है? कितना असहाय व निरसहाय हो जाती है इस प्रकार छोड़ी गई तलाक शुदा नारी? कितना बड़ा अपराध है नारी के प्रति पुरुष शासित समाज का? कोई नहीं सोचता कैसे जीवन जीयेगी वह इस निर्दयी संसार में? कौन खिलायेगा उसको आजीवन रोटी? पिता के घर में भी भाभियां उसको यदि सहारा देती हैं तो अभागी समझकर तरस खाकर रोटी देती हैं और बदले में लेती हैं दासी रूप में काम। कितनी हैं जो न्याय ले पाती हैं। भारतीय दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अन्तर्गत कितनी शाहबानो हैं जो द्वार खटखटाती हैं अपने भरण पोषण के लिए माननीय उच्चतम न्यायालय के? एकमात्र असहाय प्रतिपल तिल तिल मरने के लिए विवश होती हैं—परित्यक्ता नारियां कितना घोर अपराध है इनके प्रति? जो केवल मात्र वीभत्स कल्पना का ही विषय है। भारतीय हिन्दू कानून की एक विडम्बना और भी है कि मरने भी नहीं देते जीने भी नहीं देते ये कैसे कानूनी प्रावधान हैं कि तलाक के लिए वर्षों तरसना पड़ता है, पहले तो न्यायिक अलगाव की प्रार्थना करनी होती है और फिर तीन चार वर्ष इस प्रक्रिया में लग जाते हैं। न्यायालय इस आशा में कि पुनः सामंजस्य स्थापित हो जायेगा अपने निर्णय में विलम्ब करते हैं। इस अवधि में पति व पत्नी कहलाने वाले दो प्राणी विक्षोभ व प्रतिशोध की ज्वाला में जलते हुए अलग अलग जीवन व्यतीत करते हैं। पुरुष तो कहीं भी अपने जिस्म की प्यास बुझा सकता है और उसके भटकते हुए मन को कहीं भी मंजिल मिल सकती है, किन्तु महिला का जीवन तो न खुदा ही मिला न विसाले सनम न इधर के रहे न उधर के रहे—इतस्भ्रष्टो ततो भ्रष्टो जैसा हो जाता है। क्या ऐसी नारी की व्यथा की गहराई का एहसास किया जा सकता है? यह तो केवल भुक्तभोगी महिला ही जान सकती है? कितना आहत रहता होगा उसका वेदनामय मन? क्या सोचती रहती होगी वह अहर्निश? संतापमय संवेदनशीलता का बोझ ढोते ढोते उसका मन कितना भावशून्य हो जाता होगा? क्या कोई कर सकता है इस बीते भोगे अतीत की क्षतिपूर्ति? नहीं कदापि नहीं।

तलाक। तलाक। तलाक—कितने भयावह हैं ये शब्द जैसे शीशे पर गिरा हथोड़ा और चूर-चूर होती भावनाएं। शहनाई की गूंज के साथ पवित्र मन्त्रोच्चारण या कुरान की आयतों के साथ या फिर गुरु ग्रन्थ साहब या बाइबल की पवित्रता की साक्ष्य से बंधा प्रणय जीवन। बढ़ती दूरियां व कटुता के कारण अब अलगाव के लिये पति पत्नी न्यायालय के द्वार खटखटाते हैं तो उनका प्रणय प्रेम न्यायालय की चौखट पर नीलाम होता सा लगता है, दम तोड़ता सा लगता है। तलाक की स्थिति क्यों आती है? आज के भौतिक संस्कृति के पोषक विदेशी समाज के समान ही भारत में भी तलाकों की संख्या में वृद्धि हो रही है। कारण अनेक हैं जिनमें मुख्य कारण—(1) दहेज (2) स्त्रियों का अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होना (3) पति का अलग दूर नगर में कार्य करना (4) पति का व्यसनी होना (5) मादक द्रव्य व अन्य बीमारी से पति का नपुंसक होना (6) स्त्रियों का नशे की आदी होना (7) परस्त्री गमन (8) पत्नी का परपुरुष से अनैतिक सम्बन्ध विवाहोत्तर भी बनाये रखना (9) माता-पिता ननद भावज व अन्य रिश्तेदारों द्वारा अनुचित हस्तक्षेप (10) पति पत्नी के जीवन में आपस में संशय उत्पन्न कराना (11) पति पत्नी का एक दूसरे के प्रति क्रूर व्यवहार। हिन्दू विवाह कानून 1955 के अन्तर्गत अन्य कारणों के अतिरिक्त पति या पत्नी की ओर से क्रूरता को भी तलाक का पर्याप्त कारण माना है। शोभारानी मधुकर रेड्डी के फैसले में माननीय उच्चतम न्यायालय की खण्डपीठ वी सी राय और के जे शेट्टी ने फैसला दिया है कि दहेज की मांग करना भी क्रूरता की परिधि में माना गया है जिसके आधार पर विवाह विच्छेद की प्रार्थना स्वीकार की जा सकती है।

6 **नियोजन वचन**—नारी का सुखद संसार उसका घर आंगन है जहां पर वह नन्हे मुन्नों की किलकारियों के बीच अपने पति के साथ आनन्दमय जीवन व्यतीत करने के सपने संजोये रहती है। उसका पति परिवार की आजीविका अर्जन करने में सक्षम है। वह बाहरी संसार में विचरण करता है और नारी चार-दीवारी की व्यवस्थापिका है। कोई भी नारी बिना किसी कारण नौकरी नहीं करना चाहती चाहे एकान्त से ऊब कर या आर्थिक बोझ से दब कर। चाहे स्वभावगत आत्मसम्मान की भावना से प्रेरित होकर स्वावलम्बी बनने की इच्छा से चाहे गृह कलह से बचने के लिये—जो कोई भी कारण हो महिला कारणवश ही नौकरी करती है, किन्तु कभी कभी पुरुष दम्भ के वशीभूत नारी को नौकरी से निकाल दिया जाता है तो आर्थिक त्रासदी से ग्रसित नारी कहीं की नहीं रहती। कभी कभी यह भी होता है जब कि वह लोलुप वासना की आग अपने मालिक/अधिकारी की नहीं बुझाती है तो उसका अपने चारित्रिक गुण का मूल्य चुकाना पड़ता है अपनी नौकरी छोड़कर। इस प्रकार कितना बड़ा अपराध किया जाता है उस कामकाजी नारी

को आजीविका विहीन कर जिसकी नौकरी ही एकमात्र आर्थिक सम्बल व आय स्रोत हो कितना कष्टकारी हो उठता होगा उसका जीवन जिसकी अकारण ही सेवाएँ समाप्त कर दी जाती हैं। यह नारी के विरुद्ध आपराधिक कृत्य नही तो और क्या है ?

7 आर्थिक शोषण—भारतीय सविधान म नारी व पुरुष को कानूनन, राजनीतिक समानता दिये जाने के पश्चात् भी आर्थिक दृष्टि से नारी को पुरष के बराबर नही समझा जाता ह। कुछ पद व प्रतिष्ठान तथा स्थान ऐसे होते हैं जिन पर महिलाओ को इस कारण से ही नियुक्त नही किया जाता है कि वे महिलाएँ है पुरुष नही। कुछ क्षेत्र ऐसे भी हैं जहा पर महिलाए व पुरुष एक साथ एक ही काम करते हैं किन्तु महिलाओ को पुरुषो के समान वेतन/पारिश्रमिक नही दिया जाता ह। इस प्रकार नारी श्रम का शोषण होता ह। भारत सरकार द्वारा माह नवम्बर 1987 मे महिला व पुरुष वग मे आर्थिक समानता लाने के लिए समान काम समान वेतन विषयक विधेयक आर्थिक शोषण को समाप्त करने की दृष्टि से पारित किया ह जिसके परिणाम व्यवहारिक दृष्टि से क्या होते हैं की अपेक्षा करनी होगी।

8 फैशन शो महिला गौरव गिरावट—पुरुष मे छिपा पशु महिला की नग्नता मे सौदय तलाशता ह और महिला की नग्नता मे अपनी काम लोलुप वासना की तृप्ति करने हतु लालायित रहता है। किसी भी वस्तु के विज्ञापन के लिए महिला सौदय का सहारा लिया जाता है और महिला के अमर्यादित शीलहीन भगिमा वाले चित्र प्रदर्शित किये जाते हैं जो कि नारी वग की गरिमा को गिराने वाला व्यवहार है । पुरुष समाज की यह एक चाल ही समझो कि नारी का नग्न प्रदशन कर वह अपनी वासना की सतुष्टि चाहता है कामोत्तेजना का माध्यम बनाता है और नारी के सम्मान को खिलौना बना डालता ह। कितना बडा अपराध करता है पुरुष वग नारी की गरिमा गिराकर उसको वासना की तस्वीर बनाकर।

महिलाओ के अश्लील चित्रो का प्रदशन निषेध अधिनियम दिसम्बर 1986 मे पारित किया गया है जिसके अन्तगत महिलाओ के चित्रो का पोस्टर या पत्रिकाओ के माध्यम से अश्लील प्रदशन जिसमे महिलाओ का अपमान होता हो या नतिकता का हनन होता है कानून न अपराध है और ऐसा करने वाले को दो वष का कारावासीय दण्ड एव दो हजार रुपये तक के अथ दण्ड का प्रावधान है। इसके बावजूद भी विडम्बना यह है कि नारी स्वेच्छा से पुरुष कामुकता की साधन पूर्ति रूप मे विविध अश्लील भाव भगिमाओ म मॉडलिंग करती हैं अपने नारीत्व को नगा करने मे भी नही सकुचाती। सौदय क्या है ? यह एक बहुत गूढ़ प्रश्न है

सौंदय चमडी के नीचे है यह केवल चाम म सीमित नही। यह देखने वाले की आखो मे निवास करता है सौंदय मूल्याकन व्यक्तिगत अनुभूति ह। सृष्टि का समग्र सौंदय पुरुष को नारी म दिखायी देता है क्योकि नारी एक रम्यमादम प्राणी है किन्तु नारी की नग्नता म सौंदय दशन नही वासना की उत्तेजना निहित है। पत्र व पत्रिकाओ म अमयादित चित्र छपते हैं और विभिन्न विज्ञापनो मे अश्लीलता प्रदर्शित कर पुरुष कामुकता का उत्तेजना प्रदान करत हैं। इस प्रदशन का प्रोत्साहन देता है पुरुष वग जो कि ऐसा साहित्य पत्र व पत्रिका के पठन म विशेष रुचि दिखाता ह एव ऐसी चीजे क्रय कर अपनी वासना को और भडकाता ह। इससे जुडा है फिल्म प्रदशन जो नारी की नग्नता के आधार पर लाखों का वारा न्यारा करता ह। ब्ल्यू फिल्म्स व एडल्ट फिल्म दिखाकर लाखो कमाये जाते हैं और लाखो पुरुषो की मानसिकता को भी बिगाडा जाता है।

क्या अश्लील व अमर्यादित नग्न प्रदशन करने वाली नारी अपने आप म सन्तुष्ट व सुखी है? कदापि नही। कोई नारी व्यापार का माध्यम नही बनना चाहती उसकी नारीत्व की शीलता को भग होते हुय प्रसन्न नही होती? नारी की सच्ची प्रसन्नता उसके हृदय से एक पुरुष के समपण म ह वह भटकाव नही चाहती। हो सकता ह कि कामुकता के वशीभूत वह वासना की आग मे जलकर कुछ क्षण सन्तुष्टि पाले किन्तु इन क्षणो के पश्चात् शेष समय मे वह अपने से घणा करने लग जाती है आजीविका के साधन म शरीर के अग प्रदशन करने वाली नारी एकान्त समय म पश्चाताप की प्रतिमूर्ति ही रहती है जो शराब व कबाब की जिन्दगी जीते हुए भी सतत् भूखी रहती ह समाज म प्रतिष्ठित होने की सतत् अभिलाषा उसको सदा सताती रहती है। कितना बडा अपराध करता है पुरुष वग नारी को प्रचार माध्यम बनाकर व उसको कामाग्नि को भडकाने का साधन समझकर।

9 **विवण व विदीण नारी एव भिक्षावृत्ति**—कितना घणात्मक है यह कृत्य जो कि सत्य भी है कि पुरुष अपने स्वाथ के लिये नारी का दुरुपयोग कहा कहा व कसे कसे नही करता? छोटी छोटी बालिकाओ का अपहरण कर लिया जाता है जो सुन्दर होती हैं उनको कॉल गल्स व वेश्याओ का प्रशिक्षण दिया जाता है और जो कुरूप होती है उनके चेहरो को विवण कर दिया जाता है उनके मुँह हाथो व परो पर तजाब डाल दिया जाता है और इस प्रकार उनका शरीर विवण कर दिया जाता है आख फोड दी जाती है बाल काट दिये जाते हैं परो व हाथो पर कालिमा पोत दी जाती है और इनको ऐसा विवण व विदीण कर दिया जाता है कि उनको देखते ही श्रद्धालु व सवेदनशील जना के हृदय मे दया की भावना उत्पन्न हो। इसके साथ साथ इन बालाओ को ऐसा प्रशिक्षण दिया जाता है एसे हावभाव व बोलिया सिखाई जाती हैं जिनसे वे श्रद्धालु जनो को

अपनी ओर आकर्षित करने म सक्षम होती हैं और इस प्रकार दया भावना जगाकर दान स्वरूप भिक्षा प्राप्त करती हैं। इन बालाओ को बडा होने पर और भी गहन प्रशिक्षण दिया जाता है किसी अन्य कोढी विकलाग भिखारियो से इनका नाता जोड दिया जाता है ये जो कुछ भी कमाते हैं उनमे से अधिकाश भाग उस गिरोह के सरदार को चला जाता है जिसके ये नौकर है। इन भिखारिनो को विकार युक्त यौन सम्बन्धो का अभ्यस्थ करा दिया जाता है साथ म सिखा दिया जाता है उनको धूम्रपान करना, सुरापान करना व मद्य पदार्थों का नियत सेवन करना ताकि ये विवश भिक्षुणिया इन मालिको के चक्कर से कभी निकलकर अन्यत्र नही चली जायें जिनकी भिक्षावृत्ति से प्राप्त कमाई को तीन चौथाई भाग से अधिक इन सरदारो को जाता है जो कभी-कभी अपनी सम्पत्ति के समान एक दूसरे सरदार को बेच देते हैं। यहा तक कि भिक्षावृत्ति के क्षेत्र की भी बोली लगती है और जो सरदार ज्यादा बोली लगात है उसके भिक्षुक व भिक्षुणिया वहा पर अधिकृत रूप से भिक्षा माग सकते हैं।

कितना बडा अपराध करता है पुरुष वग नारी के विरुद्ध जबकि वह भोली भाली बालाओ का अपहरण कर उनके चेहरो को विदीर्ण कर उनके शरीर को विवर्ण कर उनसे भिक्षावृत्ति जसा घिनौना काय करवाते हैं और उनकी कमाई खाते हैं उनको सदा के लिये अपाहिज अशक्त व पराश्रयी बना देते हैं उनके यौन विकार व व्यसन की आदतें डालते हैं और इस प्रकार कितना घिनौना अपराध करते हैं कुछ पुरुष वर्ग असहाय, निरीह व विवश नारी के साथ।

10 महिला छेडछाड—मेले व भीड भाड मे बस मे जब कभी अवसर मिलता है कुछ मनचले महिलाओ की छेडछाड करन मे नही चूकते। कोई महिलाओ के वक्ष को निशाना बनाकर गुब्बारे जसी चीजें फेंकते हैं तो कोई अन्य प्रकार से महिलाओ को लिभाते हैं। चलती महिला से भीड म टकरा जाना और स्वय ही गिर जाना तथा महिला को खीच कर अपने ऊपर गिरा लेना कुछ मनचले युवको का व्यसन है। स्कूल व कॉलेज व कार्यालयो की छुट्टी होने के समय दरवाजे पर खडे होकर फब्तियां कसना चिकोटी भरना व अश्लील भाव भगिमा का प्रदशन करना कुछ विकृत मानसिकता वाले व्यक्तियो का एव आमोद प्रमोद का साधन है। भरी बस मे अश्लील गाने गाना व भौण्डा अश्लील नत्य करना भी प्राय देखा गया है। जब-जब भी ये युवक जानते हैं कि महिला विवश है और बचकर नहीं जा सकती और कोई प्रतिरोध करने की स्थिति में नहीं है तो उन्हीं स्थितियों व परिस्थितियों का लाभ उठाकर मनचले युवक अश्लील हरकतें करते हैं यहां तक कि छेडखानी पर भी उतर आते हैं, व दुपट्टे तक छीन लेते हैं और बाद म अनुनय विनय करने पर वापिस करते हैं।

उक्त सभी कृत्य नारी के प्रति घोर अपराध हैं क्योंकि इन हरकतों से नारी की मानसिकता पर गहरा आघात लगता है। वह अपने को निरीह समझती है ? क्या नारी उच्छृंखल पुरुष का खिलौना व मनोरंजन तथा आमोद प्रमोद का साधन मात्र ही है ? ऐसा वह सोचने पर विवश होती है और उसकी कोमलतम भावनाओं पर इसका बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है ? जिस पुरुष मे वह भावी जीवन साथी की छवि देखती है जिसके सम्बल व आलिंगन की वह प्रतीक्षा मे है उस पुरुष का जो घिनौना रूप वह देखती है तो वह मर्माहत हो उठती है और पुरुष वर्ग के प्रति घृणा सी उत्पन्न हो जाती है जो उसके भावी गृहस्थ जीवन के सामंजस्य मे भी समस्या उत्पन्न करता है। नारी की कोमलतम भावनाओं को पुरुष वर्ग की कुत्सित काम भावनाओं व भाव भंगिमाओं से आघात पहुचने पर क्या नारी पुरुष वर्ग के इस आपराधिक व्यवहार को सहने के पश्चात् भी पुरुष से नैसर्गिक व स्वाभाविक रूप से जुड सकेगी यह और बडा अपराध है जो पुरुष के घिनौने व्यवहार के कारण हो जाता है।

11 बहु पत्नी व नारी व्यथा—नारी सब कुछ सहन कर सकती है, किन्तु अपने पति का बटवारा सहन नही कर सकती। वह अपने पति के जीवन मे अन्य महिला के अस्तित्व का तो प्रश्न ही क्या नाम तक भी सहन नही कर सकती। हर पत्नी के लिये उसका पति पूर्ण अधिकार सुरक्षित जीवन बीमा है जिसको वह योग व क्षेम के लिए धारण करती है। नारी हठ तो इतिहास प्रसिद्ध सत्य है। इस भावना के वशीभूत नारी अपनी सौत व उसकी सतान को एक क्षण के लिए भी सहन नही करती चाहे दूसरी पत्नी आगन की तुलसी ही क्यो न हो। नारी अपने को पति प्रेम की एकछत्र अधिकारिणी समझती है और एतद्नुसार ही पति प्रेम की अभिलाषा भी सजोये रखती है किन्तु जब उसका विश्वास खण्डित होता है तो वह हरे पेड से कटी शाख के समान अपने को अलग थलग समझती है और फिर सूखी शाख के समान ही सुलगती हुई जीवन जीती है। वह हर चीज मे हिस्सेदारी सहन करती है किन्तु पति के प्यार मे नही जो उसका एकाधिकार है और सर्वाधिकार है। इस बिन्दु पर तो नारी केवल मात्र नारी है चाहे वह शिक्षित है या अर्द्ध शिक्षित है या अशिक्षित है। जब एक नारी का अधिकार छीनने के लिये दूसरी नारी उसके जीवन म प्रतिद्वन्द्वी के रूप मे आ जाती है तो उसकी सारी न्यायोचित भावनाए शमशान के समान हो जाती है। वह प्रतिपल सौतिया डाह की वेदना से पीडित रहती है वह प्रतिपल जलती रहती है उसे न खाना अच्छा लगता है और न पहिनाना न उसे मनोरजन भाता है और न कोई आमोद-प्रमोद। उसका जीवन दो धाराओ म बट जाता है उसका सुख व चैन छिन जाता है। वस्तुत पर नारी का आगमन दूसरी नारी के मन मे हीनता का भाव उत्पन्न करता

है वह यह महसूस करने लगती है कि उसमे ऐसी कौन सी कमी है जिसके कारण पति अन्य स्त्री को चाहने लगा है उसम क्या विरूपण है जिसके कारण वह परस्त्री की ओर आकर्षित होता है। वह चाहे विश्व की अनिंद्य सुन्दरी न हो किन्तु वह अपने प्रियतम की समग्र रूप से हृदयेश्वरी है वह उसके प्रेम ससार की साम्राज्ञी है। पति का अक्षुण्ण अनाघ्रघात पुष्प समान प्रेम उसकी एकमात्र सवमूल्यवान धरोहर है जिसको छिनने का अथ है मानो उसका ताज छिन गया माना उसका सब कुछ लुट गया। पर स्त्रीगामी पति या बहु पत्नी सुख भोगी पति कितना अत्याचार करता है अपनी पत्नी के साथ। कितना बडा अपराधी है वह व्यक्ति भारतीय सामाजिक व्यवस्था के सदभ मे जो कि एक पत्नी को नारकीय बना देता है। कितना घोर अपराध करता है वह व्यक्ति नारी की सुकोमलता के प्रति और विडम्बना यह है कि उसका साथ देती है नारी नारी के जीवन को नारकीय बनाने म। कितना बडा आघात है नारीत्व का।

एक और भी पक्ष है नारी की विवशता का। किसी समाज मे यह प्रथा है कि बडे भाई की मृत्यु के पश्चात् उसकी विधवा पत्नी का विवाह उसके देवर के साथ करवा दिया जाता ह और चू कि वह विवाहित ह तो उसके साथ नाता कर दिया जाता है। सामाजिक परम्परा के अनुसार देवर बेटे के समान होता ह और उसी बेटे के साथ बाद मे शारीरिक सम्बन्ध स्थापित कर जीवन व्यतीत करने की विवशता हो जाती ह। कुछ एसे भी समाज है कि जो छोटे भाई की मृत्यु के पश्चात् बडे भाई को उसकी विधवा का वरण करना होता ह जो बडे भाई के लिए इसके पूव बेटी के समान मानी जाती ह। पति मृत्यु के पश्चात् ऐसे वरण के साथ नारी के लिए रिश्ते कसे उलटे अथ वाले बन जाते हैं कितना क्रूर सामाजिक विधान ह--विवश नारी के प्रति। केवल मात्र भुक्तभोगी नारी ही समझ सकती है इस व्यथा को जिससे पीडित कसे परिष्कृत भावनाओ को व सस्कारो को भूल पाती होगी और कसे स्वीकार कर पाती होगी वह बदली स्थिति को। एक तो पति खोने का दु ख और दूसरा पाप का बोझ।

12 बाझपन का बोझ--नारीत्व की पूणता ममत्व ह। जिस प्रकार नारी होना उसके वश की बात नही उसी प्रकार मा बनना भी उसके हाथ की बात नहीं। पहले तो नारी होना ही मुखद अस्तित्व नही उस पर निस्सतान नारी होना साक्षात अभिशाप ह। नारी बाझ चाहे अपने पति मे शारीरिक कमी के कारण रही हो या चाहे उसके स्वय के प्रजनन अगो म विकार के कारण किन्तु नि सन्तान होने का दोष तो समाज नारी पर ही मढता है। नि सन्तान स्त्री का मुह सवेरे सवेरे देखना भी अपशकुन माना जाता ह। मगल कार्यों मे बाझ स्त्री को

दूर ही रखा जाता है। यहा तक कि पण्डित पुरोहित भी बाझ स्त्री के सामने मिलने पर रास्ता काटकर निकल जाते हैं जाती हुई बाझ स्त्री की छाया भी न पडे न सामना हो इसलिये नवेली दुलहनें मुह मोडकर खडी हो जाती हैं। स्त्री का बाझ होना एक बडा अभिशाप है। प्रत्येक नारी का एक स्वप्न होता है एक अभिलाषा होती है कि वह मा बने उसके आचल मे भी ममत्व हिचकोले ले किन्तु जब वह इस सुख से वचित होती है तो नि सन्तान स्त्री को जीवन मे मिले सभी सुख व विलास तथा भोग निरथक हो जाते हैं। वह मन ही मन नारीत्व की इस अपूणता को नीरव क्षणो मे स्मरण कर वेदनापूण जीवन बिताती है। इसका दु ख और भी बढ जाता है उसकी कोमल भावनाए आहत हो उठती है जबकि समाज उसका तिरस्कार करता है अपशकुनी मानता है। कितना क्रूर दण्ड है प्रकृति का उस स्त्री के प्रति और साथ म यह दण्ड कितना क्रूरतम हो उठता है जबकि बिना किसी अपराध के समाज भी उसको तिरस्कार रूपी दण्ड से दण्डित करता है जबकि अपराधी वह विवश स्त्री नही नियति है नियति रचित मानव समाज है।

13 आत्म हत्या लिगन—विवश नारी अबला नारी निराश नारी कब तक समाज के अन्याय के विरुद्ध युद्ध करे। अन्ततोगत्वा वह हार मान लेती है और सवेगात्मक नराश्य के गत म गिरी स्वेच्छा से मृत्यु का वरण कर लेती है चाहे गले मे फदा डाल कर विषपान कर या आत्मदाह कर या कुए या नदी म डूबकर या किसी वाहन से टकराकर या कटकर जैसा भी अवसर मिलता है उसी साधन या माध्यम से मृत्यु का वरण कर लेती है।

जीवन के अन्त करने का निणय भयकरतम निणय होता है जो कि निराशा की पराकाष्ठा मे आशा के अततम की स्थिति मे ही कोई व्यक्ति लेता है चाहे वह स्त्री हो या पुरुष। परिवार से समाज से अपने आप से भावनात्मक रूप से जुडी नारी जब आत्महत्या का अपराध करती है तो इसके पीछे समाज प्रदत्त विषमतम परिस्थितिया होती हैं जिनके सामने वह हार मान लेती है और अपना अन्त कर उनसे छुटकारा पाती है। ऐसी विषम परिस्थितिया नारी के लिये कौन उत्पन्न करता है। यह है पुरुष शासित समाज व उसकी कठोर नैतिक व्यवस्था जो कि नारी के ऊपर ही लागू होती है। चरित्रहीनता के सारे नतिक मानदण्ड नारी के लिये ही बने हैं पुरुष के लिये नही। प्रणय पवित्रता नारी धम ही है पुरुष धम नही। नारी की विवशता उसका परावलम्बन पुरुष सत्ताधीनता सभी नारी के प्रति अत्याचार की कहानी कहते हैं। जब नारी सब से नाता तोडकर मृत्यु का वरण करती है तो कितनी बडी अपराधी है वह सामाजिक नतिक व्यवस्था जो नारी को जीने के लिये सम्बल नही देती अपितु मृत्यु वरण के लिये विवश करती है। कौन दण्ड देता है इस कठोर हृदयहीन अपराधी सामाजिक मूल्यात्मक व्यवस्था को जो

पुरुष ने नारी शोषण के लिये अपने स्वार्थवश बनाई है ? जिसके शिकजे मे फसने पर नारी को अपने जीवन का अन्त तक करने को विवश होना पडता है।

14 बहुपति नारी वेदना—किसी समाज मे यह भी प्रथा है कि एक चादर खरीदकर ले आई जाये और परिवार के सभी भाई उस चादर को बारी बारी से ओढ लेते हैं। यह चादर चाहे कितनी मैली हो किन्तु सभी उसको ओढते हैं। इस मैली चादर की उपमा उस महिला से दी जाती है जो कि द्रोपदीवत एक परिवार के सभी भाइयो की पत्नी होती है। वह एक होती है और उसके पति अनेक होते हैं। वह यह नही जानती कि कौन उसको कितना चाहता है किन्तु वह यह जानती है कि उसको सभी को चाहना होता है जो उसकी विवशता है। वेश्या और इस नारी मे क्या अन्तर रह जाता है। भला ही केवल मात्र उन्मुक्तता का। वेश्या एक बहती धारा है जिसका कोई ठहराव नही कोई किनारा नही किन्तु बहुपतियो की नारी एक लहर है जो किनारो के बीच बल खाती टकराती रहती है इधर से उधर जाती रहती है इसका भी अपना कोई कूल नही। इसके साहिल अनेक हैं लहर एक है इस किनारे से टकराती है तो वही समाप्त हो जाती है और फिर दौड पडती है दूसरे किनारे की ओर जहा पर भी उस टकराकर वापस लौटना पडता है जो कि उसकी नियति है। विवश होकर उसे झेलनी पडती है दूसरी व्यथा अपनी सतान के बारे मे जो नही जानती कि पिता कौन है ? पर जो सबसे बडा हो चाहे वह सबसे छोटे भाई की सन्तान हो—यही रीति है। सभी को या फिर केवल मा को ही याद करेगी। कौन समझेगा नारी की इस वेदना को ? कितना बडा भटकाव है उसका जो सबकी होकर किसी एक की नही रह सकी। नारी जीवन का सच्चा सुख नारीत्व की सफलता किसी एक पुरुष की प्रेयसी/पत्नी बनकर होती है यही अभीष्ट होता है उसकी स्वाभाविक इच्छाओ का जिसकी परिणति वह पूर्ण प्राप्ति पूर्ण सत्व व पूर्ण एक पुरुषाधिकार म पाती है कितना कठोर वज्रतम हृदय है उस नारी का बहुपति त्रासदी भोगती है पीडामय होकर अपना तनमन जलाकर दीपक के समान मधुर मधुर मुस्कराती है चाहे अन्दर घोर तिमिर है किन्तु परिवार के पुरुषो के लिये तो प्रकाश की अजस्र लौ है जिससे सभी के हृदय आलोकित करने के लिये जलना होता है—सिर्फ जलना। कितना घोर अपराध है पुरुष वर्ग का इस नारी के विरुद्ध ?

हिंसाहीन अपराध त्रासदी निवारण मे नारी की भूमिका

अपराध की परिभाषा यदि सामाजिक व्यक्ति या व्यवस्था को आघात पहुचाने वाला कृत्य है तो उक्त सभी कृत्य नारी के प्रति किये जा रहे अपराधों की दशा में

आते हैं। कब तक भोगेगी नारी शारीरिक व मानसिक कष्ट पुरुष अपराध प्रवृति व मनोवृति के कारण ? क्या हैं इसके उपाय जिनसे नारी का पूर्णतया अपराध त्रासदी से छुटकारा मिले ? ये विचारणीय प्रश्न है। नारी को अपनी शक्ति को पहिचानना होगा। नारी एक ज्वालामुखी है। जब तक शात है तब तक करुणा की अजस्रा है किन्तु जब विस्फोटक होती है तो सहार की साक्षात चण्डी है। नारी की सृजनात्मक आन्तरिक शक्ति प्रबलतम है ? क्या है यह आन्तरिक शक्ति ? इस शक्ति का प्रदशन नारी कसे करे ? मानवीय विकास से इस शक्ति को कसे जोडा जाये ? प्रत्येक नारी को अपने आत्मिक बल को पहिचानना होगा उसको शारीरिकता से ऊपर उठकर मानसिक क्षितिज पर पुरुष का सामना करना होगा व समानता का पाठ पढाना होगा। उसको मानवीयता व मानवता की विकासशीलता के सन्दभ मे समझाना होगा। और पुरुष को मानवीय गुणो के सन्दम मे विकासशील बनाने के लिये प्रेरणा शक्ति के रूप मे क्रियाशील होना होगा। शारीरिक सौन्दय मे ही अपने जीवन की इतिश्री खोजने वाली नारी को सजने सवरने की स्वभावगत मूल प्रवृत्ति से ऊपर उठना होगा और पुरुष को रिझाने मात्र काय को छोडकर नयी सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करना होगा जिसमे व्यक्तित्व का व्यक्तित्व अपने पूर्ण मानसिक गुण व शक्तियो के आधार पर ही प्रतिष्ठा का विषय बने। निडरता स्पष्टवादिता व बुद्धि कौशल दिखाकर पुरुष वग को अपनी सदियो से चली आ रही मानसिकता मे बदलाव लाने के विवश करना होगा। नारी जीवन के मूल मन्त्र होने चाहिये— आत्म विश्वास आत्म सम्मान व आत्म अनुशासन व आत्म निभरता।

इसके अतिरिक्त नारी को अपने सामाजिक उत्तरदायित्वो को निभाना होगा। मा बच्चे की प्रथम शिक्षक है उसको बच्चा को शिक्षित करना होगा मानवीय मूल्य व चारित्रिक गुणो के बीज बचपन से ही बच्चो के जीवन मे बोना होगा। गृहलक्ष्मी को गृह अध्यापिका भी बनना होगा। सामाजिक चेतना आवश्यक है सामाजिक परिवेश के सन्दम मे। आज के व्यक्ति का सामाजिक विकास उसकी वशानुगत गुण व परिवेश की सुखद अन्तर्क्रिया पर निभर करता है। नारी को ऐसे सामाजिक परिवेश के निर्माण म पूर्ण सहयोगी होना होगा जिसमे पुरुष के साथ-साथ नारी को भी मानवीय विकास के सन्दम म समान रूप से साथ देने के लिये शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक रूप से तयार किया जाये। पारिवारिक परिवेश को सामाजिक चतन्यमय समाज से जोडने का काम नारी का ही होगा। वह इस भूमिका को निबाहने के कारण गृहलक्ष्मी ही नही समाजलक्ष्मी भी कहलायेगी। नारी की सामाजिक परिवेश सम्बन्धी जो दृष्टि है वह बहुत ही व्यापक होनी चाहिये नारी को अपने आप मे जगत जननी की प्रतिमूर्ति के दशन करना होगा और उसके अनुरूप वसुधैव कुटुम्बकुम् की भावना का विस्तार कर जय जगत का नारा ध्वनित करना होगा। विश्व शाति व एकता के रूप मे विचारक तत्वों के

पोषक व प्रेरणा स्रोत के रूप म नारी को अपने कर्तव्यों का निर्वाह अपने सीमित क्षेत्र में करना होगा। नारी को अब वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करना होगा और प्रत्येक व्यक्तिगत व सामाजिक समस्या को अपनी समस्या समझकर उसका हल वज्ञानिक शली से ढूढने का प्रयत्न करना होगा। अस्वस्थ वालकों की चिकित्सा ओझा के पास न कराकर चिकित्सक के पास ले जाने सम्बन्धी भावनाए विकसित करनी होगी। दहेज की लोलुपता की शाति श्रम से करने की मानसिकता विकसित करनी होगी। अन्धविश्वास व सीमित विचार परिधि से नारी को बाहर आना होगा और जगत जननी के रूप म अपने को प्रतिष्ठित करना होगा। प्रबुद्ध नारी को वज्ञानिकता और आध्यात्मिकता के बीच सेतु निमाण करन का उत्तरदायित्व निभाना हागा। धार्मिक शास्त्रो की सही व्याख्या करने म नारी का आगे आना होगा। पुरुष समाज द्वारा जो व्यवस्था धार्मिक आस्था के नाम पर चर्चित व प्रचारित की जाती है उसको सही अथ समझाना होगा। यदि शकराचाय भी सती के नाम पर विधवा दहन को धार्मिक दृष्टि से उचित ठहराते हैं तो नारी को उनका भी धम का सही अथ समझाने व धर्मशास्त्रो की वज्ञानिक व्याख्या करने के लिये प्रेरित करना होगा। नारी वग मे शिक्षा प्रसार आवश्यक है। ग्रामीण स्तर से नगरीय स्तर तक सभी क्षेत्रो मे शिक्षा प्रसार आवश्यक है। वैज्ञानिक शैली पर चिन्ताधारा प्रवाहित हो उसके लिये शिक्षा आवश्यक है। जिससे नारी अपनी अन्तर्आत्मा के सुदूर अन्यक्त क्षेत्र की यात्रा कर सके। महिलाओ मे जीवन के प्रति ललक, चेतना एव चिन्तन शीलता का विकास करना होगा चतन्य की चिगारी से विकास का प्रकाश आलोकित करना होगा। नारी को जीवन के प्रति व्यापक दृष्टिकोण अपनाने के लिये प्रशिक्षित करना होगा जीवन के प्रति जिज्ञासुशील बनना होगा महत्वाकाक्षा किस प्रकार व्यवहारिक साधनो से पूरी की जा सकती है यह आधुनिक नारी को सिखाना होगा। शारीरिक रूप से अबला के आभूषणात्मक विशेषण से नारी की मन स्थिति बिगाड़ने वालो को चुनौती देनी होगी और महिलाओ को साहस दिखाकर उन क्षेत्रो मे भी काम करने के लिये आगे आना होगा जहा पर पुरुष अपना अधिकार समझता है। सीता सावित्री अनुसूया नारी की प्रेरणा शक्ति पुज हो सकती है तो साथ मे जीजा झासी की रानी धन्या स्वरूपा रानी कस्तूरबा भी उनकी आदश बन सकती हैं। जीवन को आदश बनाने के लिये नारी को सामाजिक परिवतन के लिये शखनाद करना होगा मानसिक व शारीरिक शोषण करने वालो को सही पाठ पढाना होगा, और शपथ लेनी होगी कि नारी का शोषण उत्पीड़न नारी के माध्यम से नही होगा। एक नारी दूसरी नारी के उत्पीड़न व शोषण मे कदापि सहयोगी व प्रतिद्वन्द्वी नहीं होगी।

□

द्वितीय भाग

नारी अपराध हेतु

नारी के लिए होने वाले अपराध

पुरुष के सन्दर्भ में नारी रस माधुरी है वह वसन्ततिलका है। पुरुष जीवन मे महिला सुखदायिनी है किन्तु कभी कभी नारी का साथ पुरुष के लिये कष्टकारी बन जाता है। नारी को पाना पुरुष की एक सहज इच्छा है सुन्दर नारी को पाने की उसकी महत्वाकाक्षा हर युग मे प्रबलवती बनी रहती है। नारी बिना सारे सुख निरर्थक हैं। नारी पुरुष के लिये जीती है और पुरुष नारी के लिये—यही सुखी घर समार है जिसमे जिसके लिये व जिसकी कल्पना मे दोनो ही जीते हैं।

नारी दैविक सृजन कला का सर्वोत्तम नमूना है। पुरुष नारी के मन मोहक रूप पर मोहित है। पुरुष के जीवन म नारी अनेक रूपो म आती है—तृष्णा के रूप में ममता के रूप म व विश्वात्मा के रूप मे। वह पुरुष का जीवनाधार पुरुष साधना का एकमात्र लक्ष्य है प्रजनन का एकमात्र शक्ति स्वरूप समाज को सवारने हेतु सामाजीकरण का सशक्त सतुलन है। नारी सौंदयश्री है वह चारुलता है। *नारी सदा ही पुरुष के लिये सुख का सन्देश लेकर आती है पुरुष के जीवन मे पवन* मे खिलने वाला सुन्दरतम सुरभिमय गुलाब है किन्तु कभी कभी यह गुलाब काटा वाली डाली पर खिला होने के कारण पुरुष के जीवन मे चुभन पदा कर देता है नारी पुरुष के जीवन को कभी कभी प्रात कालीन सुवासित पवन के समान आल्हादित करने के स्थान पर पुरुष के जीवन में भूचाल ला देती है झझावात के तीव्र झोको से पुरुष के अस्तित्व को हिला के रख देती है। कभी कभी नारी सुख योग व समृद्धि का सदेश न होकर मृत्यु का सदेश बन जाती है। कभी-कभी नारी के कारण पुरुष जीवन अशात हो उठता है सवेगात्मक स्थिति म पुरुष नारी के लिये न जाने कितने अनतिक आपराधिक कृत्य कर बठता है। इतिहास साक्षी है कि महिलाओ के लिये कितने घमासान युद्ध लडे गये ? महिलाओ के कारण कितनी सस्कृतिया विध्वस के गत मे चली गई। सीता के कारण राक्षसी सस्कृति का अन्त हो गया द्रापदी के कारण भारत मे महाभारत हो गया, हेलन के लिए टोई का नाश हो गया यहा तक कि हव्वा के कारण आदम से इतना बडा पाप हो गया कि स्वग को छोडकर उनको पृथ्वी पर आना पडा। अपराध के मुख्य कारण तीन ही

बताये जाते हैं। सम्पत्ति, भूमि व नारी। नारी रंगशाला की नायिका भी हो सकती है तो रणस्थली की सूत्रधार भी। नारी के कारण पुरुष कई प्रकार के अपराध कर बैठता है इन अपराधों में नारी की चाहे कोई सीधी भूमिका न हो किन्तु वह परोक्ष में अपराध का कारण बन जाती है, कभी प्रत्यक्ष में, तो कभी उत्प्रेरक के रूप में पुरुष के लिए अपराध शक्ति अपराध प्रेरणा स्त्रोत या अपराध साध्य स्वरूपा के रूप में हो जाती है। नारी व पुरुष के प्रकृति मूलक जो आपसी सम्बन्ध हैं जो स्वभावगत आपसी उत्तेजनात्मक अनिर्वचनीय आकर्षण/विकर्षण शक्ति है, जो भावनात्मक अपरिहार्यता है उसके संदर्भ में नारी जो पुरुष के लिए अपराध हेतु बनती है का विवेचन करना होगा।

1 प्रेयसी पाने का मूल्य

नारी मनुष्य की एक बहुत बड़ी कमजोरी है और सुन्दर स्त्री तो और भी बड़ी कमजोरी। शेक्सपीयर ने अपने नाटक हेमलेट में बहुत सामयिक बात कही है कमजोरी तेरा ही नाम औरत है। नारी का पुरुष के प्रति प्रेम और पुरुष का नारी के प्रति प्रेम मानव जीवन की बहुत ही सशक्त भावना है जो प्रेमी युगल की जीवन धारा को एकाएक मोड़ देती है। प्रेम की चाह प्रेम की फिसलन व प्रेम के लिये बलिदान—ये सब कवियों की कल्पना की अभिव्यक्ति के केवल मात्र काल्पनिक विषय नहीं हैं किन्तु जब वास्तविक प्रेमियों के सन्दर्भ में इन पर विचार किया जाता है तो फिर प्रेमी युगल को या तो अलौकिक जन या फिर असामान्य जन के रूप में ही जाना जाता रहा है चित्रित किया जाता रहा है व माना जाता रहा है। जब प्रेमी जनों के हृदयों में प्रेम की ज्वाला मधुर मधुर जलती है प्रेम के रंग की आभा लिये प्रेमी आजीवन साथ रहने के सपने संजोये जीवन पर्यन्त साथ रहने जीने व मरने के वायदे करते हैं व सौगन्ध खाते हैं वे अदृश्य चुम्बकीय शक्ति से अपने आपको जुड़ा पाते हैं किन्तु जैसा कि कहा गया है कि सच्चे प्रेम के रास्ते टेढ़े-मेढ़े होते हैं और प्रेमी संसार में सुख क्षणिक होता है और दुःख अपार, तो फिर सच्चे प्यार की फिसलन व उलझन को तो भुक्तभोगी ही समझ सकता है। यह समाज और इसकी परम्पराएं प्रेमी जनों का मोह भंग करने के लिये पर्याप्त होती हैं। एकाएक प्रेमी जीवन में समाज विरोधी रूपी उल्कापात होता है। यकायक प्रेमिका के माता पिता व सम्बन्धी उनके जीवन में कड़कड़ाती बिजली व वज्रपात के समान प्रवेश करते हैं। प्रेमी को प्रेमिका से अलग करने का प्रयत्न करते हैं। प्रेमी निर्बल है व निर्धन है। प्रेमिका के माता पिता धनवान हैं। वे निर्धन प्रेमी के साथ अपनी पुत्री का कैसे देख सकते हैं वे निर्धन प्रेमी के साथ अपनी पुत्री का विवाह कैसे कर दे सकते हैं। प्रेमी के समक्ष शर्तें रखी जाती हैं और कहा जाता है कि यदि वह अमुक समय तक साधन सम्पन्न होकर आता है तो उसकी प्रतीक्षा की जायेगी और इसके पश्चात्

पुत्री का विवाह अन्यत्र कर दिया जायेगा। प्रेमी अपनी प्रेमिका को जीवन साथी के रूप मे पाना चाहता है उसके सामने चुनौती है। जब शीरी को पाने के लिए फरहाद को दूध की नहर खोदनी पडी थी तो क्या वह अपनी प्रेमिका को पाने के लिये धन एकत्रित नही कर सकता। सच्चाई व ईमानदारी के साथ तो वह इस प्रतिद्वन्द्वात्मक ससार मे साधन सम्पन्न नही हो सकता है। उसको धन एकत्रित करना है और अपनी प्रेयसी को पाना है। केवल मात्र इसी एक उद्देश्य को मस्तिष्क म रखकर वह प्रयत्न करता है धन चाहे चोरी से मिले धोखाधडी से मिले चाहे डकती से या देश के विरुद्ध जासूसी से या तस्करी से—उसे धन इकट्ठा करना होता है और ऐसा करने में वह प्रेमी से अपराधी हो जाता है। यदि वह पकडा जाता है तो उसकी बरात जेल म ही पहुचती है। यदि वह धन कमा लेता है और अपनी प्रेयसी के माता पिता से सम्पर्क कर प्रेयसी का पा भी लेता है तो अपराध के पत्थरो पर टिकी प्यार की नीव उसकी प्रेममय जीवन गृहस्थी को सुरक्षा प्रदान नही कर पाती। अपराध जगत से सम्बधित हो जाने पर उसकी मनोवृत्ति बदल जाती है और उसके धन उपाजन साधन अपराधोन्मुख ही रहते हैं और उसके जीवन का सुखमय आधार समाप्त हो जाता है। ऐसा भी होता है कि जब प्रेमी अपनी शत पूरी करके आता है तो माता पिता उसकी प्रेयसी को पराया कर दिये होते हैं तब उसकी निराशा और हताशा का अन्त नही होता इस स्थिति म वह मानसिक सतुलन भी खो सकता है और विक्षिप्त हो सकता है और फिर वह आक्रामक होकर जघन्य अपराध भी कर सकता है।

ऐसी भी स्थिति उत्पन्न हो सकती है कि प्रेमिका उसको भूल जाये और उससे विवाह करने से मना कर दे या उसके जीवन म अन्य कोई प्रेमी आ जाये तो उस स्थिति मे भी प्रेमी अपराधमूलक व्यवहार कर सकता है। वह प्रेमिका को भगाकर ले जाने का प्रयत्न कर सकता है किसी भी अवरोध को समाप्त कर सकने का प्रयत्न कर सकता है और इस प्रकार एक के बाद एक अपराध कर सकता है। यह भी सभव हो सकता है कि प्रेमिका अपने माता पिता की इच्छा के विपरीत प्रेमी के साथ जाने को इच्छुक हो जाये लोकलाज व परिवार की मान मर्यादा को तिलाजलि देकर प्रेमी का हाथ पकडकर साथ देने को निकल जाये। जसी कि कहावत है कि नारी जब मन मे ठान लेती है तो उसके लिय कुछ भी कर गुजरना असम्भव नही होता। पुरुष तो केवल सकल्प ही करता है, किन्तु नारी तो राह पकडकर आगे बढ जाती है। फिर होते है माता पिता या पति की ओर से प्रेमी युगल पलायन को रोकने के प्रयत्न। फरारी के केस मुख्यतया सामान लेकर फरार होने के केस दायर किये जाते हैं। मित्र व सम्बन्धियो को साथ लेकर लडाई झगडे होते हैं लोग घायल हो जाते हैं, खून बहता है यहा तक कि कुछ की हत्या तक हो जाती है।

प्रेम तो अधा होता है और प्रेमी नही देखते कि उनके द्वारा क्या त्रुटियाँ की गई हैं चाहे सारा ससार उनकी ओर निगाहें गडाये रहे किन्तु वे अपने प्रेम

रोग के रोगी आपसी सेवा सुश्रुषा मे लगे अपनी धुन मे जीवन व्यतीत करते हैं। प्रेमियों से ईर्ष्या करने वालो की कोई कमी नही। प्रेमी जनो से ईर्ष्या करने वाले तो मिल जायेंगे किन्तु उनसे सहानुभूति रखने वाले नही। प्रेम दिल को चुराने का खेल है जो प्रेमी आपस मे खेलते हैं प्रेमी जनो के बीच न धर्म का कोई विचार है न जाति का बंधन जहा पर भी वे रहते हैं उनको नीची निगाह से देखा जाता है। समाज मे व अन्य जनो की भांति आदर नही पाते उनको हेय दृष्टि से देखा जाता है। पडौस की महिलाए भागी प्रेमिका के साथ अपनी बच्चियो बहू से हेल मेल नही बढाने देती कही ऐसा न हो कि उसके ससर्ग म पडौस की बहू-बेटिया बिगड जायें और समाज के बंधन की बेडिया तोडकर कही भाग न जायें। प्रेमी युगल का जीवन सदा कष्टमय रहता है। प्रेमिका के परिवारजन या ससुराल वाले पीछा करते रहते हैं और इस प्रकार कभी न कभी ऐसी स्थिति आ जाती है कि इन सबसे निबटने के लिए अपराधो मुखी होना पड जाता है जो कि उनकी विवशता भी है और आवश्यकता भी बन जाती है।

प्रेम के भवरजाल मे फसे अभागे प्रेमी जेल का जीवन व्यतीत करते देखे गये हैं। कितने ही प्रसग आखो के आगे तरते दिखाई देते हैं।

उक्त स्थितिया काल्पनिक नही है अपितु वास्तविकता लिये हैं। ऐसे भी प्रसग हैं कि निराश प्रेम फासी के फन्दे पर भी लटका है। दिनाक 4 सितम्बर 1976 की प्रात कालीन बेला मे 5 बजे एक गुजन्ट सिंह नामक बन्दी को केन्द्रीय कारागृह जयपुर मे फासी के फन्दे पर लटका दिया गया। उसका एक बहुत बडा अपराध था कि वह मदाध प्रेमी था। वह एक बलजीत कौर नामक लडकी से प्यार करता था और वह भी गुजन्ट सिंह को हृदय से चाहती थी किन्तु बलजीत कौर के माता पिता उसका विवाह गुजन्ट सिंह से न कर किसी अन्य सिख युवक सिगारा सिंह से करना चाहते थे। काफी प्रतिरोध के पश्चात् भी बलजीत कौर का विवाह श्री सिगारा सिंह से कर दिया। गुजन्ट सिंह को बलजीत कौर से सच्चा प्यार था। वस्तुत वह बलजीतकौर के प्यार मे अधा हो गया था। एक दिन वह अपने दोस्तो के साथ हथियारो से लस होकर बलजीत कौर के ससुराल पहुच गया और वह उस घर मे जो घुसा जहा पर बलजीत कौर व उसका पति श्री सिगारा सिंह सो रहे थे। गुजन्ट सिंह ने सिगारा सिंह के गोली मारकर हत्या कर दी और बलजीत सिंह को उठाकर ले भागा। रास्ते म उसके ही साथी ने बलजीत कौर से मद्दी मजाक कर दी जिसको भी गुजन्ट सिंह ने तत्काल गाली से उडा दिया। रास्ते म और जो भी मिले जो उनको पहिचानते थे उनम से भी कुछ व्यक्तियो को मौत के घाट उतार दिया गया ताकि कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्षी न हो अन्त म उसकी प्रेमिका भी मारी गयी। इस हत्या क्रम के फलस्वरूप सत्र न्यायाधीश द्वारा श्री गुजन्ट सिंह को फासी की

सजा दी गयी। जो अन्तत यथावत रही व इसी गुजन्ट सिंह को फांसी पर लटकना पड़ा। श्री गुजन्ट सिंह ने इस सजा के विरुद्ध विशेष अपील करने से मना कर दिया था, उसने कारण बताया था कि जब उसकी प्रेमिका ही नही रही तो फिर वह फासी पर लटक कर मरना चाहता है। बहुत समझाने पर उसने अपील की किन्तु फिर भी वह फासी की कोठडी मे रहते हुए बलजीत कौर की तस्वीर को सीने से लगाये रहता था। उसको बलजीत कौर से सच्चा प्रेम था और वह भी मदाधता की सीमा तक। नारी प्रेम की अतिरेकता के फलस्वरूप उसके द्वारा हत्याए की गयी और फासी पर लटकना पड़ा।

प्रेम जीवन की पूर्णता है। उसका जीवन निरर्थक है, जिसको किसी ने जीवन मे नही चाहा हो। प्रेम करना मानव स्वभाव है और प्रेम ही मानव जीवन की सफलता है। स्त्री व पुरुष के प्रेम के सदर्भ मे कितने ऐसे स्त्री व पुरुष हैं, जिन्होंने सच्चा प्यार किया है और उनका प्यार सफल रहा हो। प्रेम की आशावादिता को तक से समझाते हुए ब्राउनिंग ने अपनी कविता दी लास्ट राइड टुगेदर मे प्रश्न किया है प्रेम तो बहुत करते हैं किन्तु सफल कितने होते हैं? वस्तुत सफल तो कुछ ही होते हैं। प्रेम तो स्त्री और पुरुष के बीच एक आकर्षण है जो नयनो की भाषा समझता है और हृदय मे कुछ कोमल भाव जाग उठते हैं। एक दीपक के समान मधुर मधुर स्नेह की लौ जल उठती हैं और अन्तमन आलोकित हो उठते हैं। प्रेम करना मानवीय नियति हैं स्त्री व पुरुष की एक सतत् आदिम चाह है जिसकी फिसलन व उलझन मे दोनो ही सुख दुख के मणियो की माला गूथते है। इसी कारण प्रेम करने व विफलता के सदर्भ मे लॉर्ड टेनीसन ने भी अपनी कविता मे यही कहा है कि प्रेम तो करना ही चाहिये। 'प्रेम करना व विफल हो जाना प्रेम न करने से अधिक अच्छा है।" प्रेम करना जीवन के अर्थ को सच्चे रूप मे समझाता है। हृदय की अन्तर्तल की गहराइयो से किसी को चाहने व सर्वस्व समर्पण करने व सब कुछ लुटाने की चाह तो जीवन के सत्य को उजागर कर देते हैं भावनात्मक ससार को वास्तविकता से जोडने पर मन की गहरी भावनाए अपने सच्चे परिष्कृत रूप म प्रकट होती हैं, जहा पर न स्वार्थ है न छल है न कपट है किन्तु एक सतत् चाह है—मिलन की, एक मन होने की दो देहो के आत्मसात हा जाने की।

फिर भी कहा जाता है कि कुछ ही भाग्यशाली होते हैं जो प्रेम तपस्या मे सफल योगी बन जाते हैं। प्रेम के टेढे मेढ़े रास्तों से गुजर कर वे अपने प्रेम के अभीष्ट को पा लेते हैं उनके पर नहीं लडखडाते वे बाधाओ की चिन्ता नहीं करते और उनकी साधना की एकाग्रता को कोई भग नही कर सकता है। अधिक सख्या तो निराश प्रेमियो की होती है जो अपने कानो से विवाह की मांगलिक शहनाइयो की धुन सुनने को लालायित रहते हुए फिर विरह की घन्टी की आवाज सुनते हैं जो

वस्तुत उनके जीवन म तो आशाओ का तुषारापात का सदेश होता है और मौत का बुलावा होता है। अपने मन के मीत के बिना जीवन एक गहन शून्य दिखाई देता है, जीवन निरथक लगता है सभी सुख व सुविधाए काटने दौडती हैं, पुष्प भी शूल हो जाते हैं अहर्निश विरह, बेवफाई विगत स्मृतियो की वेदना—सभी प्रेमी को विचलित कर देती हैं। कुछ निराश प्रेमी प्रतिशोध की आग मे जलते हुए प्रेमिका को भी सुख से न रहने देने की सौगन्ध खाते हैं और फिर उस बेवफा प्रेमिका का जीवन उजाडने मे ही वे लग जाते हैं। कुछ तो महिलाओ से इतनी घृणा करने लगते हैं कि महिलाओ पर अत्याचार कर इनकी चीखो मे सुख महसूस करते हैं। वे महिलाओ की हत्या तक करने मे आनन्दित होते है। वे नारी जाति से ही बदला लेते दिखाई देते हैं। ऐसे व्यक्ति हर स्त्री मे अपनी बेवफा प्रेमिका की तस्वीर देखते हैं और अन्य नारियो से भी बदला लेते हुए ऐसा सन्तोष महसूस करते हैं मानो वह अपनी बेवफा प्रेमिका से ही बदला ले रहे हो। वह प्रत्येक महिला को एक महिला मानकर ऐसा करते हैं। ऐसे स्त्री जाति से घृणा करने वाले निराश प्रेमियो के मनोविज्ञान को बताते हुए रेमी गोरमाउन्ट ने सही कहा है, जो महिलाओं को पीडा पहुचाते हैं वे एक ही औरत को पीडा पहुचा रहे हैं। स्त्री जाति ने उनका सुख व चन छीना है धोखा दिया है तो फिर वे भी नारी जाति को पीडा पहुचाकर एक विचलित सुख का अनुभव करते हैं जो वस्तुत असामान्य मनोवज्ञानिक स्थिति का परिचायक है। ऐसे घातक अपराधी हत्या जसे जघन्य अपराध भी करने से किंचित मात्र नही चूकते। एक ही उदाहरण पर्याप्त होगा ऐसे अपराधियो के विकृत मनो विज्ञान को समझने हेतु।

आपराधिक ससार की किंचित मात्र भी जानकारी रखने वाले भारत मे *शकरिया कनपटीमार के नाम से परिचित अवश्य हैं। शकरिया उफ शकर उफ* रतनलाल पुत्र श्री राजाराम, जाति कुम्हार निवासी करणपुर जिला श्रीगगानगर जिसको बी बी सी लदन द्वारा अपने प्रसारण मे इस शताब्दी का सबसे क्रूरतम कुख्यात हत्यारा कहा गया एक महिला के असफल प्रेम के कारण लगभग 72 व्यक्तियो की हत्याओ का दोषी था। जो भी स्त्री पुरुष बालक उसको सोते हुए मिले, पत्थर ईंट लकडी जो भी मिला उससे सोते हुए प्राणी की कनपटी पर वार कर हत्या कर देता था जिसके कारण ही वह कनपटीमार के नाम से कुख्यात हुआ। उसने श्रीगगानगर व सीमावर्ती पजाब के क्षेत्र मे ऐसा आतक पदा किया कि उस क्षेत्र के निवासियो ने गम रातो मे भी कनपटीमार के भय से बाहर खुले मे सोना बन्द कर दिया था। अन्त मे वह भटिण्डा पजाब मे *पकडा गया और दो* हत्याओ के प्रकरण मे उसका चालान हुआ और केस नम्बर 230/74 मे 27 जून 1975 को शकरिया को फांसी की सजा से दण्डित किया गया और अन्तत उच्चतम न्यायालय द्वारा इस सजा का अनुमोदन किये जाने पर व माननीय राज्यपाल,

राजस्थान व माननीय राष्ट्रपति, भारत सरकार द्वारा शकरिया की दया याचिका अस्वीकृत किये जाने पर केन्द्रीय कारागार जयपुर म 15 मई 1979 को प्रातःकाल फासी के फदे पर लटका दिया। उसके विरुद्ध अन्य हत्या व प्रकरण विचाराधीन ही रह गये और कितनी ही हत्याओ की सच्चाई सामने नही आ सकी।

शकरिया के आपराधिक जीवन परतो को प्याज के छिलके के समान बिखरने पर यह तथ्य उभर कर आता है कि शकरिया के जीवन म भी एक विद्या नामक उसकी पडौसी महिला आई और उसको निराश कर दूसरे की हो गई। शकरिया के अपराधी जीवन की तह मे प्यार का मुर्झाया पुष्प कही उसके हृदय के आस पास पडा हुआ था। फासी पर लटकने के चौबीस घटे पूर्व शकरिया ने मुझे यह बात बताई थी कि वह हत्याए करने के लिए क्योंकर प्रेरित हुआ ? उसने बताया कि लगभग 15–16 वर्ष की आयु म ही उसकी पडौसी बाला विद्या से उसका प्रेम हो गया जिसके साथ भाग कर वह एक बार गगानगर आ गया था फिर वापस करणपुर चला गया। दोनो पक्षो के माता पिता शकरिया का विवाह विद्या से करने को तैयार नही हुए और विद्या का विवाह अन्यत्र कर दिया। शकरिया घर से भाग गया और चोरी करने लगा। बुरी सगत मे फस कर उसको शराब पीने की आदत हो गई। वह चोरी के अपराध म जोधपुर जेल म आ गया। उसके पूर्व उसने एक पजाबी फिल्म तेरे नाम निराले देखी जिसम कनपटी पर मारकर हत्या करने के दृश्य बताये गये। इस विधि के बारे म जोधपुर जेल मे निरुद्ध किसी शिक्षित मित्र बन्दी ने कुछ और भी बताया जिसके बारे मे उसने किसी अग्रेजी उपन्यास मे पढा बताया। जेल से बाहर निकलकर उसने कनपटी प्रहार से हत्या का पहला शिकार तो उसकी प्रेमिका विद्या के घरवालो व सम्बन्धियो को बनाया और फिर विद्या को भी मार दिया। इसके पश्चात् वह जो भी मिला उसको भी मारता चला गया। हत्याओ की सख्या के बारे म पूछे जाने पर उसने कहा कि उसके मुनीम तो पुलिस वाले थे जो उसका हिसाब रखते थे। वह स्वय गिनती नही रखता। निराश प्रेमी ने प्रेमिका से बिछुडन के फलस्वरूप कठोरतम हुए क्रूर हृदय से कितने ही निर्दोष व्यक्तियो की हत्याए कर आतक फला दिया यह मात्र केवल एक स्त्री के प्रेम की निष्फलता का प्रमाण था। फांसी लगाने के लिए ले जाते समय भी उसको न तो कोई पश्चाताप ही था और न ही कोई विचार। उसने अपने साथी बन्दियो को सत् श्री अकाल कहा और बताया कि जसा उसने किया है, वसा ही फल उसको मिला है ऊपर वाले के यहा पुन मुलाकात होगी। पाच फुट के लगभग ऊचाई वाला यह साधारण सा युवक इतना क्रूर हत्यारा हो सकता है यह कल्पना भी नही की जा सकती थी जो वास्तव मे सामने फासी पर चढने के कारण एक वास्तविकता थी एक सच्चाई थी जिसको नकारा नही जा सकता था और यह भी कितनी क्रूर सच्चाई थी जो उसने मुझे बताई कि निष्फल नारी प्रेम पुरुष को कितना क्रूर बना देता है।

2 नारी सौन्दर्य अपराध विस्फोटक

शेक्सपियर ने अपने नाटक एज यू लाइक इट म कहा है 'सौदय स्वण से अधिक चोरों को प्रेरित करता है।" स्वण चोर तो होते हैं, सौदय को चाहने वाले व चुराने वाला की भी कमी नही है। इस ससार म सुदर स्त्रियों की कमी नही और ऐसी स्त्रियो की भी कमी नही जो अपन सौदय के प्रति सजग हैं और उनको इस बात का भी एहसास है कि वे सुदर हैं और वे सुदर दिखाई दनी चाहिये। नारी नारी के रूप पर मोहित नही होती किन्तु नारी पुरुष के पौरुष पर मुग्ध होती है तो पुरुष भी नारी सौदय पुष्प पर भवर की तरह मडराता है और सौन्दय रसपान के लिए सदा तत्पर व आतुर रहता है। सौदय का सामीप्य किस पुरुष को आल्हादित नही करता? सजना सवरना नारी स्वभाव का सहज गुण है और सुदर सजीली नारी के प्रति आकर्षित होना पुरुष की चाह भी है। युवावस्था मे सौदय पान की चाह कितना लालायित करती है युवक हृदय को? सौदय दृष्टि भोज है देखने की वस्तु है स्पर्शलीन है। हर सुदर वस्तु सुख स्रोत है और भोग्य है, यह बात युवा हृदय को भाती है। जब सौदय सजधज कर एक निमत्रण देता सा प्रतीत होता है, तो युवा मन मर्यादाओं को तोडकर आगे आता है। साहसिक मनचला युवकवग सुदर सजीली नारियो की ओर आकर्षित होता है उनको पाना चाहता है। फिर किसी प्रकार का विरोध होने पर बाधाए आने पर सीले युवक उनसे निबटते हैं। कुदृश्य सामने आते हैं। विद्यालय महाविद्यालय व विश्वविद्यालयो मे जहा युवक व युवतिया प्रतिदिन मिलते हैं वहा पर यह आकषण/विकषण/ईर्ष्या का खल खेला जाता है। युवतियो द्वारा समपण करने पर पलायन व बलात्कार जसी घटनाएँ होती हैं। सहयोगी, मित्र व सम्बधियो द्वारा युवतियो का साथ देने पर युवकों द्वारा आपराधिक कृत्य तक कर दिये जाते हैं। आपसी झगडों मे मारपीट व हत्याए तक हो जाती हैं।

3 प्रेम त्रिकोण अपराधमूलक

शेक्सपीयर ने अपने नाटक टू जेन्टल मैन आफ वेरोना मे एक सलाह दी है कि अपने मित्र का सब जगह विश्वास करो किन्तु प्रेम के क्षेत्र म नही। प्रेम मे प्रतिद्वद्विता सबसे भयकर दुखद परिणाममय त्रासदी होती है, जो सभी सबधित पक्षो का जीवन बर्बाद कर देती है। वह अपने प्रेमी को न चाहे तो कोई बात नही पर किसी गैर को चाहेगी तो मुश्किल होगी। ऐसी स्थितिया भी आती है कि कभी कभी एक कली पर कितने भवरे मँडराने लगते हैं और एक पुष्प पर कितनी तितलिया मोहित हो जाती है। प्रत्येक अपने प्रेम जाल मे फसाना चाहता है, प्रत्येक दूसरे को पाना चाहता है केवल अपना बनाना चाहता है। प्रेम के त्रिकोण बनते हैं जिसमे फसकर चाहने वाले एक दूसरे से टकराते हैं और यह टकराहट

नाम लेता है, जिसके कुप्रभाव से किसी व्यक्ति की महिला या बच्चे को बीमारी हुई है या मृत्यु हुई है या बच्चा होना बन्द हुआ है।

इस अंधविश्वास के वशीभूत जिस किसी महिला को डायन घोषित किया जाता है उसको जिन्दा जला दिया जाता है या अन्य विधि से हत्या कर दी जाती है। इस प्रकार अन्धविश्वास के प्रभाव से पीड़ित समाज निर्दोष महिलाओं की हत्या करता है।

विश्वास और अविश्वास जीवन की दो मूलभूत भावनाएं है जो सामाजिक सम्बन्धों के मूल मे होती हैं। सामाजिक जीवन जीने के लिए यह आवश्यक होता है कि कोई किसी की बात पर विश्वास करे। भारतीय समाज मे धर्म के नाम पर कुछ ऐसी बातें प्रचलित होती हैं जिन पर सहज ही विश्वास कर लिया जाता है। भारतीय मानसिकता वाले व्यक्तियो मे महिलाएं जो स्वभावगत ही असुरक्षा की भावना से ग्रसित रहती है वे धर्मभीरू होती हैं और धर्म के नाम पर उनको सहजता से किसी भी अभीष्ट सिद्धि मे विश्वास दिलाया जा सकता है चाहे यह विश्वास तार्किक न हो। फिर भी धर्म का सम्बन्ध दैविक अलौकिकता से होने के कारण अंध भक्ति के रूप मे अंधविश्वास के रूप मे ही कुछ बातें जान ली जाती है यदि ये बातें धर्म गुरु चमत्कार पुरुष या तन्त्र साधको द्वारा बताई जाती है। अभीष्ट की प्राप्ति के सन्दर्भ मे अन्धविश्वास के वशीभूत महिलायें पुरुष से अनैतिक औपचारिक व आपराधिक कार्य करा देती हैं। उदाहरणार्थ यदि महिला को कोई धन प्राप्ति पुत्री वर प्राप्ति तान्त्रिक साधना से संतान प्राप्ति करने को कहता है या किसी बाल बलि से अभीष्ट की सिद्धि के लिए भविष्यवाणी करता है तो महिलायें स्वभाव से विश्वास करने वाली प्राणी होने से सहजता से उनके कथन पर विश्वास कर पति/मित्र को तान्त्रिक सिद्ध के कथनानुसार बाल/नर बलि के लिए प्रेरित कर देती हैं। नारी द्वारा फुसलाने पर पुरुष भी आपराधिक कृत्य करने को तयार हो जाता है जो वह स्वयं कदाचित नही करता।

कितने आपराधिक व्यवहार के वशीभूत जेलो मे सजा भुगत रहे हैं। अन्ध विश्वास के जाल मे फंसी महिलाओ के द्वारा प्रेरित किये जाने पर कभी कभी तो स्त्री व पुरुष दोनो ही अन्धविश्वास के शिकार होकर जेल के सींखचो मे बन्द होकर अपने अन्धविश्वास से प्रेरित होकर किये गये आपराधिक व्यवहार के कारण पश्चाताप के आंसू बहाते दिखाई देते हैं।

इस सन्दर्भ मे एक फांसी के प्रकरण का उल्लेख समीचीन है। एक डाकोत सरदाराम ने तुलसी नामक महिला जो 10 वर्ष से निःसंतान थी को यह बताया कि इसका बांझ जीवन समाप्त हो सकता है और वह संतान प्राप्त कर सकती है,

यदि वह बच्चो की बलि देवी काली को चढाये। सतान के लोभ मे तुलसी ने डाकोत सरदाराम पुत्र श्रीमनीचन्द निवासी नोहर श्रीगगानगर की बातो पर अन्धविश्वास कर लिया और अपने पति मीखाराम को ऐसा करने के लिए तयार कर लिया। एक दिन पडौस के श्री कन्हैया लाल के पुत्र नागेश आयु 5–5½ वष व पुत्री सविता आयु 4 वष खेलते हुए दिखाई दिये, जिनको पकड कर वे डाकोत के पास ले आये। डाकोट ने छुरी से दोनो बच्चो की कदन काट कर एक परात मे खून एकत्रित कर देवी की पूजा की। सतान तो क्या प्राप्त होनी थी तुलसी का पति सरकारी गवाह बन गया और अन्त मे दो निरपराध बच्चो की हत्याओ का पट खुला। इस अपराध म माननीय सत्र न्यायाधीश श्रीगगानगर द्वारा आपराधिक प्रकरण सख्या 69/72 मे डाकोत सरदाराम को फासी के दण्ड से दण्डित किया और सहयोगी के रूप मे श्रीमती तुलसी को आजीवन कारावास के दण्ड से दण्डित किया। अन्तत डाकोत सरदाराम को 4 सितम्बर 1975 को प्रात 4 बजे केन्द्रीय कारागृह जयपुर मे फासी के फन्दे पर लटका कर मृत्यु दण्ड क्रियान्वित कर दिया गया।

6 प्रेम स्पर्धा अपराध प्रेरक के रूप मे

कभी कभी जीवन मे यह भी होता है कि एक पुरुष के जीवन मे दो महिलायें आ जाती हैं जिनमे से प्रत्येक उस पुरुष को अपनी ओर आकर्षित करना चाहती है। पूव की स्त्री अपना अधिकार समझकर पुरुष को पूण रूप से अपने प्रेमपाश मे बाधकर रखना चाहती है किन्तु दूसरी स्त्री भी पुरुष को पूरी तरह से अपनाना चाहती है। नारी की स्वभावगत कमजोरी है कि वह चाहे किसी को न चाहे किन्तु यह तो वह चाहती है कि उसे तो चाहा जाये। वह प्रेम करे या न करे, उसे प्रेम पाने का अधिकार है और जो भी उसके प्रेम मे प्रतिद्वन्द्वी हो उसे रास्ते से हटाने के लिए नारी नागिन का रूप ले लेती है। वह पुरुष को प्रेरित कर सकती है कि वह उसकी प्रतिद्वन्द्वी महिला को समाप्त कर दे उसको छोड दे और अवरोध करने पर हत्या तक कर दे। पुरुष को पूणतया पाने के सदभ म वह प्रेरक ही नहीं बनती अपितु सहयोगी भी बन जाती है। ऐसे भी व्यक्ति जेल मे सजा काटते मिलते हैं जो महिला के फुसलाने पर आपराधिक कृत्य कर बठते हैं। दिल्ली की चन्द्रेश शर्मा व डॉ जन का प्रसिद्ध आपराधिक प्रकरण सवविदित है जबकि 1974 म प्रसिद्ध नेत्र विशेषज्ञ डॉ जन की धम पत्नी विद्या की हत्या डॉ जैन की प्रेमिका चन्द्रेश शर्मा व डॉ जैन ने मिलकर भरतपुर जिले के दो भाई करतार सिंह व उजागर सिंह को मोटी रकम देकर करवादी उन हत्यारो को फांसी की सजा हुई और हत्या के षडयन्त्र के अपराध म जन व उसकी प्रेमिका चन्द्रेश शर्मा को आजीवन कारावास दण्ड भुगतना पडा। इसी क्रम मे लखनऊ म डॉ गौतम हत्या

काण्ड भी बहुचर्चित रहा जबकि प्रेम मे निराश शमीम रहमानी ने अपने विवाहित प्रेमी डॉ गौतम की हत्या कर दी।

7 महत्वाकाक्षी नारी अपराध के प्रेरक रूप मे

ऐश्वर्य कौन पसन्द नही करता ? कौन ऐसी स्त्री है जो भोग विलासमय सुखद जीवन व्यतीत नही करना चाहती। तुलनात्मक सामाजिक जीवन जीकर सुखी व दुःखी होना नारी की स्वाभाविक नियति है। महत्वाकाक्षा नारी के स्वभाव मे है। कौन नारी स्वप्न नही देखती वैभव व विलासिता के ? कौन नही चाहती महलों म रहना ? कौन नही चाहती छत्र की छाया ? ऐश्वर्य का सुख भोग ? किन्तु अधिकाशत नारी इस सारे ऐश्वर्य भोग विलास की कामना सीमाबद्ध होकर अनुशासित रहकर करती है किन्तु कुछ महिलायें आवश्यकता से अधिक महत्वाकाक्षी होती हैं और ऐश्वर्य व भोग विलास की प्राप्ति के उद्देश्य के लिए पागल हो उठती हैं। वे नैतिकता व मर्यादा के सभी व धन की किंचित मात्र की चिन्ता न कर येन केन प्रकारेण ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए अपने पति प्रेमी को प्रेरित करती हैं और उनकी कुप्रेरणा कुतर्क व कुमार्ग पुरुष को अपराधोन्मुखी बना देती है और वह विधिक साधनो की चिन्ता किये बिना आपराधिक तरीके से धनार्जन मे लग जाता है। महत्वाकाक्षी नारी पुरुष से क्या नही करा लेती ? प्रसिद्ध नाटककार शेक्सपियर के नाटक मैकबेथ की नायिका लेडी मैकबेथ एक ऐसी महत्वाकाक्षी नारी की कहानी है, जिसने अपनी महत्वाकाक्षा के कारण अपने पति स अपराध कराये और सारा दाम्पत्य जीवन दुखान्त कर दिया। मैकबेथ राजा डकन का सेनापति था जिसको जहर दिलाकर लेडी मैकबेथ ने हत्या करवा दी और फिर डकन का राज व ताज हथिया लिया। इस अपराध भाव स ग्रसित लेडी मैकबेथ की मृत्यु हो गई और अन्त म मैकबेथ भी यह महसूस करते हुए मर गया कि मनुष्य जीवन कुछ नही अपितु एक मूर्ख द्वारा कही गई एक कहानी है इसम शून्य भाव व बकवास के अतिरिक्त कुछ भी नही है। *जीवन की निरर्थकता उस आपराधिक* मानसिकता की अभिव्यक्ति थी जो कि उसकी पत्नी की महत्वाकाक्षा की पूर्ति के लिए विश्वास करने वाले राजा को अतिथि के रूप मे बुलाकर विष देकर मृत्यु की गोद मे सुला दिया।

कहानी के रूप मे ही नही वास्तविक जीवन म भी ये घटनायें घटित होती हैं और महत्वाकाक्षी महिलायें अपने पति/प्रेमी/पुत्रों को अनैतिक व आपराधिक कार्य करने तक के लिए प्रेरित करती हैं।

8 आत्म प्रदर्शन से आपराधिक प्रेरणा

नारी की यह स्वभावगत दुर्बलता है कि उसको आत्म प्रदर्शन मे सुख की अनुभूति होती है। अधिकाशत महिलाओ मे दिखावे की भावना काफी कूट कूट कर

भरी रहती है। वे हर चीज को बढा चढाकर बताती है। ऐसी महिलाए वस्तुत हीनता की भावना से पीडित रहती है और वे झूठे दिखावे के माध्यम से अपने को सामाजिक/सास्कृतिक/आर्थिक दष्टि से अन्य से ऊचा सिद्ध करना चाहती हैं। वे झूठे दिखावे के भुलावे मे अपनी आय से अधिक खच करने की आदत डाल लेती हैं। जन्म दिन त्यौहार व अन्य अवसरो पर भव्य पार्टियो व भोजो का आयोजन करती हैं। पति की आय से अधिक खर्चा कर उधार लेकर खर्चा कर पति को येन-केन प्रकारेण पैसा कमाने के लिए विवश करती हैं। जब पति अपनी आय के विधिक स्रोतो से पत्नी के दिखावे की आदतो को पूरा नही कर पाता तो वह फिर रिश्वत लेकर तस्करी का धधा कर या धोखाधडी कर धनार्जन का प्रयत्न करता है और इस प्रकार दिखावा पसन्द महिला की झूठी आन व शान के कारण आपराधिक प्रवृत्तिया का शिकार हो जाता है। ऐसी महिलाएँ अपने बच्चो को भी धनोपार्जन मे लगा देती हैं उसकी बच्चिया कसे धन कमाकर लाती है उनको चिन्ता नही उनको तो धन चाहिये और अपने को बडा दिखाने के लिये केवल मात्र धन चाहिये।

9 वेश्यावृत्ति अपराधमूलक

वेश्यावृत्ति ससार म सबसे पुरानी सामाजिक बुराई है, जो सदियो से सभी देशा के समाजो मे व्याप्त ह। कानून से इसको जितना दबाने का प्रयत्न किया उतना ही इसका कुप्रभाव और बढा। नारी जब एक बार वेश्या बन जाती ह चाहे वह स्वेच्छा से बने या फिर विवशता से किन्तु जब वह वेश्या बन ही जाती है तो कामुकता व उत्तेजना छल व कपट की प्रतिमूर्ति बन जाती है। उसको जीवन म एक बात से प्रेम या मोह रहता है वह ह पैसा जिसको वह शरीर बेच कर कमाती है। उसकी दष्टि म वेश्यावृत्ति एक व्यापार ह और उसके पास आने वाला प्रत्येक व्यक्ति उसका ग्राहक है जिससे वह अधिकतम मूल्य वसूल करना चाहती है। ऐसा भी प्राय होता है कि जब कोई भोला व्यक्ति वेश्या के प्यार के मायावी जाल मे फस जाता है तो वह न केवल नतिक रूप से ही कगाल होता है अपितु वह अपना सब कुछ खो बैठता ह। वेश्या प्रेयसी की माग पूरी करते-करते वह निधन हो जाता है यहा तक कि आपराधिक साधनो से धन एकत्रित करने भी वह अपनी वेश्या प्रेयसी के प्रेमपाश मे बधना चाहता है। वह चोरी करता है डकती करता है जेब काटता है और न जान क्या-क्या उसके भोग व विलास के प्रसाधन व साधन जुटाने म करता है और इस प्रकार वह अपराधी बन जाता है। वेश्याओं के ससग मे वेश्यागामी पुरुष और अन्य बुराइया भी सीख लेता है जैसे शराबखोरी जुआ सट्टा व अन्य नशे की लत। वेश्या जगत् मे अन्य

अपराधियों से ससर्ग व साथ हो जाता है जिसके कारण अपराध करना सीख लिया जाता है।

10 व्यभिचार अपराध के मूल मे

समाज मे सभी महिलाएँ पतिव्रता नही होती। कुछ महिलाएँ ऐसी भी होती हैं जो विवाहित होते हुए भी ववाहिक पवित्रता को महत्व नही देती और सुख की चाह् मे वे पर पुरुषगामी हो जाती हैं। वे अपने प्रेमियो के साथ काम वासना का खेल खेलती हैं। जब कभी वे पर पुरुष के साथ काम क्रीडा मे लीन अपने पति या उसके परिवार के सदस्यो द्वारा देख ली जाती हैं तो उस समय पति क्षणिक आवेश मे या तो पत्नी की हत्या कर देता है या पत्नी के प्रेमी की या फिर दोनो की ही हत्या कर देता है परिस्थितिवशात् कभी प्रेमी प्रेमिका के पति की हत्या कर देता है। कभी कभी महिला अपने प्रेमी के साथ आजीवन सम्बन्ध बनाने के लिए प्रेमी को प्रेरित करती है उसके पति को मौत के घाट उतारने के लिये ताकि उसकी मृत्यु के पश्चात् वे पूर्ण रूप से साथ रह सके। जेलो म ऐसे बन्दियों की कमी नही है जो अपनी व्यभिचारिणी पत्नियो की हत्या म सजा भुगत रहे हैं। इसके साथ साथ ऐसे प्रेमी बन्दियो की भी कम सख्या नही है जो अपनी प्रेमिकाओ की प्रेरणा से अपराध कर बठे और जेल मे अपने वियोग का दु ख भोग रहे हैं।

11 प्रतिशोध प्रतिमूर्ति नारी अपराधमूलक

कुछ महिलाएँ ऐसी होती हैं जो कि क्षमा करना नही जानती। वे सब कुछ याद रखती हैं जो उनके विरुद्ध किया गया है और समय आने पर वे बदला लेती हैं तथा प्रतिशोध लिवाती हैं।

कुछ परिवारो मे पुश्तनी शत्रुता चलती रहती है। कुछ जातिया ऐसी हाती हैं जिनमे सामूहिक निवास भी शत्रुता का कारण बन जाता है, कुछ परिवारो म सम्पत्ति का झगडा शत्रुता के बीज बो देता है जा पीढी दर पीढी चलते रहते हैं। कुछ महिलाए जिनके पतियो की हत्याएँ शत्रु द्वारा की गई हैं वे इस बात को नही भूलती। वे अपने बच्चो का पोषण इस मानसिकता के साथ करती हैं ताकि उनकी सन्तान उनके मृत पिताओ का बदला ले चाहे ऐसा करन म वे उनकी सन्तान का जीवन बर्बाद हो जाये वे इसकी चिन्ता नहीं करती हैं। प्रतिशोध की आग म जलती महिला के तप्त हृदय को तभी शान्ति मिलती है जबकि उसका प्रतिशोध पूरा हो जाये।

प्रतिशोध की भावना से ग्रसित दस्यु सुन्दरियो की कहानियां पढ़ने को मिलती हैं और ऐसी क्रूर महिलाएँ देखने को भी मिली हैं। जीवन म प्रताडित की

जाने पर वे बदले की भावना से दुष्प्रेरित होकर दस्यु सरदारो का साथ कर लेती हैं और फिर उनके ससग व सहवास मे उन सरदारो को प्रेरित करती है उन सबसे बदला लेने के लिये, जिन पुरुष व महिलाओं ने उनके साथ दुर्व्यवहार किया है उनको तिरस्कृत किया है लज्जित किया है तथा त्रसित किया है। दस्यु महिलाओं जसे जनक श्री काली मुनी मुन्नी, कपूरी कुसुम नायन आदि महिलाओं को जानने का अवसर मिला जिनकी यही कहानी रही है कि अपने ससुराल मे लज्जित किये जाने पर बीहड मे कूद गई और दस्यु सरदारो के साथ होकर बदला लिया—स्वय ने भी अपराध किये और अपराध करवाये। उत्तर प्रदेश की फूलन देवी कुख्यात डकत रही है जिसने अपने प्रतिशोध की आग वेहामी गाव मे करले आम करके बुझाई जिसम उसके साथ उसका प्रेमी डकत भी बताया गया।

12 दहेज व्यवस्था अपराधमूलक

श्री परिपूर्णानन्द के विचार है हमारे इस ससार मे दो चट्टाने हैं जिन पर आत्मा रूपी जहाज चाहे अपना लगर डाले या फिर टकराकर डूब जाये—एक चट्टान तो है ईश्वर और दसरा चट्टान है नारी। वतमान ससार नारी रूपी चट्टान से टकरा रहा है। यदि सभ्यता को बचाये रखना ह तो केवल मात्र एक ही उपाय है—विवाह एक पुण्य बधनमय जीवन जो स्वय परिवार समाज व ईश्वर के लिए आदश जीवन है।'

मानवीय सभ्यता के विकास के मूल मे ववाहिक सस्था ससार के सभी देशो मे रही है और आज भी है किन्तु पिछले दो दशको से भारतीय समाज म विवाह एक आर्थिक समझौता बन कर रह गया है, जिसम वर-वधू के गुण व दोषो की चिन्ता न की जाकर दहज के रूप म मिलन वाली राशि का विचार सवप्रथम किया जाता है। दूल्हा बिकता है और वधू का पिता दूल्हे को खरीदता है दूल्हे का बाप अपने बेटे को बेचता है जिस किसी को भी जो सबसे अधिक बोली लगाले। आज यह विडम्बना है कि लडकी के पिता को अपनी लडकी की भावी खुशियाँ खरीदने के लिये स्वय को बेचना पडता है।

पुत्री जन्म के साथ ही बढ जाती है माता पिता की दुविधा। वे पहले तो अपनी पुत्रियो को शिक्षित बनाते हैं, जिसके लिए उनको अपनी आय का अधिकाश भाग शिक्षा पर खच करना होता है। तत्पश्चात् अच्छे वर की तलाश मे अपने को स्वय को बेचना होता है। जिस किसी भी पिता के एक से अधिक पुत्रिया होती हैं वह धन कमाने की चिन्ता मे व्याकुल रहता ह। धन कमाने के लिए उसको आपराधिक साधनो का सहारा भी लेना पडे तो वह लेता है जो कि उसकी आवश्यकता है और वही उसकी विवशता। सरकारी क्षेत्र मे रिश्वत

जालसाजी धोखा-धडी करने की विवशता रहती है तो व्यापार मे तस्करी कर चोरी आदि के अपराध होने हैं। पिता को अपनी पुत्री को ब्याहना है उसके लिए दहेज जुटाना है और उसको जलने/जलाने से बचाना है तो उसको तो धनाजन करना ही होगा चाहे ईमानदारी से या फिर आपराधिक कृत्यो से। कभी कभी यह भी होता है कि धनी बाप की बेटी निधन के यहा ब्याह दी जाती है। वह अपने पति को अपने पीहर के वैभव के किस्से सुनाती है उसकी गरीबी का उपहास उडाती है व ताने देती है। पति अपनी पत्नी के व्यवहार से त्रसित होकर येन केन प्रकारेण धन कमाने मे लग जाता है चाहे उसे आपराधिक साधनो का ही सहारा लेना पडे। इस प्रकार नारी अपराध का हेतु बन जाती है।

उक्त विवेचन स्पष्ट करता है कि अपराधजनक कारक के रूप म महिलाओ की यह भूमिका प्रेरक व उत्प्रेरक के रूप मे होती है जो सामाजिक-न्यायिक *व्यवस्था के सन्दर्भ मे आपराधिक क्षेत्र मे विचारणीय स्थिति उत्पन्न करती है।* एक अपराधी नारी सामाजिक व्यवस्था के लिए एक बडा खतरा है किन्तु अपराध के उत्प्रेरक व प्रेरक रूप मे नारी भी न्यायिक व्यवस्था के लिये कम बडा खतरा नही है।

तृतीय भाग

अपराधी नारी

अध्याय 1

अपराध अवधारणा व कारण

नारी जब आहत है तो सर्पणी बन जाती होती है। जब प्रतिशोध पर उतारू होती है तो चण्डी का रूप ले लेती ह। शात सलिला सी प्रवाहित होने वाली नारी जब उपेक्षित शोषित ताडित पीडित होती है तो वह प्रतिशोध लक्ष्य, उद्देश्य अधिकार की पूर्ति आदि प्रेरको से प्रेरित होती है तो वह निष्कष-परिणाम की चिन्ता किये बिना आपराधिक कृत्य कर बैठती है। अपराधी नारी कभी सपर्णी कभी सिहनी व कभी चण्डी का रूप ले लेती है। नारी जब दृढ निश्चया होती है जब मन ही मन वह कुछ करने पर कुछ पाने पर, कुछ खोने पर तुल जाती है तो जो कुछ भी हो किसी अनिष्ट दुख कष्ट की चिन्ता किये बिना वह कर डालती है जो कुछ उसे करना हो। वह यह नही देखती है कि सामने वाले से उसका क्या सम्बन्ध है वह यह नही सोचती कि परिणाम क्या होगा ? उसे करना है कोई विकल्प नही जो कुछ होगा देखा जायेगा—इस निश्चय के साथ हत्या जसा अपराध भी वह कर वठती है।

सारियकी दृष्टि से विचार करने पर यह तथ्य प्रकट होता है कि भारत [अपराधी पुरुषा की तुलना म अपराधी महिलाओ की सख्या 1 5% से 2 प्रतिशत के लगभग ही है। फिर भी भारतीय सामाजिक सरचना सगठन व्यवस्था व मानदण्डा को दृष्टिगत करने पर महिला का अपराधी होना सामाजिक व्यवस्था की रुग्णता ही मानी जाती है। जिस समाज मे जिसने अधिक अपराध होंगे वह समाज उतना ही रुग्ण समाज कहलायेगा। यदि सामाजिक व्यवस्था की पोषक नारी ही अपराधी हो जाये तो फिर सामाजिक रुग्णता और भी भयकर हो जायेगी। सौभाग्य से भारत मे अपराधी महिलाओ की सख्या पुरुषो की तुलना म बहुत कम है किन्तु फिर भी गुणात्मक आधार पर इस समस्या का मूल्याकन न कर गुणात्मक आधार पर ही इस समस्या पर विचार करना होगा। महिला पुरुष की तुलना मे नगण्य सख्या म अपराध करती है। इसका मुख्य कारण महिला का कार्यक्षेत्र प्राय

घर/परिवार/पड़ौस तक सीमित होना है और सामाजिक स्थिति मे पुरुषो की तुलना म अ तर होने से नारी की भूमिका एक कोमलांगी, सुगृहिणी की होना है जहा इसका मुख्य काय सजना सवरना पति को रिझाना है तथा शारीरिक दृष्टि से पुरुषो की तुलना मे नारी का कमजोर होना ह। भारतीय समाज मे नारी का जो श्रद्धात्मक सृजनात्मक व विश्वासात्मक स्थान ह उसकी दृष्टि से धार्मिक आर्थिक दृष्टि से महिला की परिवार मे रीढ की हड्डी के रूप मे मा यता है उसके अपराधी होने पर सामजिक पारिवारिक व्यवस्था मूल्य व मानदण्ड भयकर रूप से प्रभावित होने हैं। यह कितनी वडी क्षति है जो कि भावात्मक, आर्थिक सामाजिक सास्कृतिक दृष्टि से गहन विचारणीय प्रश्न बन जाती है और नारी अपराध एक गम्भीर चुनौतीपूण राष्ट्रीय समस्या के रूप मे उभर कर सामन आता है।

वस्तुत भारतीय सामाजिक परिवेश मे नारी को एक उत्तरदायी सहिष्णु आज्ञाकारी अनुशासित व धयवान व्यक्ति के रूप म जीवन यापन की शिक्षा शशव काल से ही दी जाती है। भारतीय परिवेश मे नारी के चारित्रिक गुणो के विकास को सर्वाधिक महत्व दिया जाता है। ऐसे परम्परागत धममूलक नारी स्वभाव पर विचार करने पर यह सहज ही विश्वास नही हो पाता है कि नारी भी अपराधी हो सकती है क्योकि आपराधिक रूप नारी स्वभाव के विपरीत ही है किन्तु यह कटु सत्य ही है। रूढिवादिता म पोषित परम्पराओ के साथ जीवन निर्वाह करने वाली नारी किस प्रकार क्रुद्ध होकर या चालाक बन कर या मायावी होकर या छलना बन कर या आवेशमय होकर या धोखे मे आकर अपराध कर बठती है यह विधिक समाजशास्त्रीय एव मनोवज्ञानिक दृष्टि से विचारणीय प्रश्न है।

प्रश्न है नारी अपराध क्यो करती है? इस प्रश्न के उत्तर के सदभ मे यह स्पष्ट करना होगा कि वस्तुत अपराध क्या है? अपराध क्यो होते हैं? तभी उत्तर दिया जा सकता है कि नारी अपराध क्यो करती ह और विशेषत भारतीय नारी अपराध क्यो करती है?

अत उक्त प्रश्न के उत्तर मे अपराध की अवधारणा एव आपराधिकता के विविध सिद्धान्तो का विवेचन प्रस्तुत करते हैं —

अपराध की अवधारणा

अपराध की अवधारणा विधिक समाजशास्त्रीय व मनोवज्ञानिक तीनों दृष्टिकोणो से करने पर ही वस्तुत अपराध क्या है? प्रश्न का उत्तर प्राप्त हो सकता है। अत अग्रांकित विवेचन प्रस्तुत है —

अपराध की विधिक परिभाषा

भारतीय दण्ड संहिता 1860 मे अपराध शब्द की कोई परिभाषा नही दी गई है, अपितु केवल विधि द्वारा निषिद्ध मानवाचरण को ही अपराध माना गया है। जिसके अनुसार किसी व्यक्ति द्वारा विधि के अतंगत प्रतिबंधित कार्य करना और विधि के अन्तगत आदेशित कार्यों को न करना अपराध है। इस प्रकार विधिक दृष्टि से अपराध किसी समाज की सरकार द्वारा बनाये गये कानून या विधि का उल्लघन मात्र ह। आसबन न अपराध को एतद नुरूप परिभाषित करते हुए लिखा है —

> अपराध वह कृत्य या अपकृत्य है जा समाज के समुदाय के हित के विरुद्ध है और जो विधि द्वारा निपिद्ध हैं जिसको न करने पर सरकार को दण्ड देने का अधिकार है।'

टपन ने अपराध की जो परिभाषा प्रतिपादित की है वह विधिक दृष्टिकोण को विस्तृत व व्यापक रूप से प्रस्तुत करती है—

> अपराध आपराधिक विधि का सोद्देश्य कृत्य है जो बिना किसी औचित्य एव बचाव के किया जाता है और जिसको करने पर व्यक्ति को राज्य द्वारा दण्डित किया जाता है।'

टपन की उक्त परिभाषा मे जिन तत्वो के आधार पर कोई कृत्य आपराधिक माने जाते हैं वे निम्नाकित हैं—

(1) किसी भी कृत्य को अपराघ घोपित करने के लिये यह आवश्यक है कि वह कानून के विरुद्ध किया गया कृत्य होना चाहिये।

(2) आपराधिक कानून का उल्लघन करने पर ही कृत्य अपराध होता है।

(3) सभी हानिकारक कृत्य अपराध नही कहलाते किन्तु केवल मात्र वे ही कृत्य अपराध होते हैं जो विधि निपिद्ध हैं और हानिकारक घोपित किये गये हैं।

(4) वधानिक औचित्य के अ तगत किया गया कृत्य अपराध नहीं होता।

(5) बिना उद्देश्य के किया गया कृत्य अपराध नही होता।

(6) बिना क्षमता के किया गया कृत्य अपराध नही है।

(7) जिस कृत्य को करने पर दण्ड का प्रावधान हाता है वही कृत्य अपराध होता है चाहे दण्ड देने का उद्देश्य निरोधात्मक प्रतिशोधात्मक, प्रतीकात्मक, क्षतिपूर्त्यात्मक सुधारात्मक कुछ भी रहा हो।

प्रसिद्ध न्यायशास्त्री हॉल के अनुसार किसी भी कृत्य को अपराध घोषित करने के पूर्व उस कृत्य को निम्नांकित बिन्दुओं पर परीक्षित करना होगा—

1 समाज व उसके सदस्यों के सामाजिक हितों के लिये कृत्य के बाह्य परिणाम हानिकारक हैं।

2 कृत्य संवैधानिक रूप से निषिद्ध व असंवैधानिक हो।
3 सोद्देश्य कृत्य हानिकारक परिणाम वाला हो सज्ञान हो।

4 अपराध उद्देश्यात्मक कृत्य में हानि पहुँचाने के संकलित प्रयोजनापूर्ण हो।

5 दण्ड क्रिया के लिये दण्ड देने की वैधानिक व्यवस्था हो।

इस प्रकार विधि द्वारा निषिद्ध सोद्देश्यपूर्ण हानिकारक दण्डनीय कृत्य को को अपराध माना गया है किन्तु समाजशास्त्रीय दृष्टि से विचार करने पर अपराध की विधिक अवधारणा एकपक्षीय व अपूर्ण प्रतीत होती है क्योंकि परिवर्तनशील सामाजिक व्यवस्थाओं के साथ विधिक व्यवस्थाएं नहीं बदलतीं और इस प्रकार परिवर्तनशील सामाजिक मान्यताओं के अनुरूप किया गया कृत्य भी विधि विपरीत होने से अपराध मान लिया जा सकता है। इसी प्रकार सभी सामाजिक मान्यताओं के विपरीत किये गये आचरण विधि के अनुसार अपराध नहीं माने जाते।

अपराध की समाजशास्त्रीय व्याख्या

अपराध की समाजशास्त्रीय व्याख्यान्तर्गत सामाजिक मान्यताओं के विरुद्ध किये गये आचरण अपराध माने जाते हैं। प्रसिद्ध अपराधशास्त्री डरखिम के अनुसार अपराध वह कृत्य है जो प्रत्येक समाज के सदस्यों द्वारा सार्वभौमिक रूप से बुरा माना जाता है क्योंकि उनके परिष्कृत संवेगों को उद्वेलित कर आघात पहुँचाता है। जबकि काडवेल ने 'किसी निश्चित स्थान व समय पर संगठित समाज द्वारा मान्य मूल्यों की अवज्ञा को अपराध माना है तो क्लावर्ड व ओहलिन अधिकारिक व्यवस्था के शासकीय नियमों का उसके प्रतिनिधि द्वारा किये गये विचलन को अपराध मानते हैं। सदरलैण्ड की मान्यता है कि सामाजिक मूल्यों का उल्लंघन करने वाले कृत्य अपराध हैं। सामाजिक पक्ष को और अधिक स्पष्ट करते हुए एलियट व मेरिल अपराध की व्याख्या करते हैं। उनके अनुसार वस्तुतः अपराध वह कृत्य है जो कि सामाजिक सम्बन्धों में विघ्न उत्पन्न करता है और इन सम्बन्धों की सामाजिक परिभाषा में भी। इसी क्रम में डा. हक्रवाल ने भी समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से अपराध की एक उपयोगी परिभाषा प्रस्तुत की है—

'सामाजिक दृष्टिकोण से अपराध या किशोरापराध मे व्यक्ति का ऐसा व्यवहार सम्मिलित है जो कि मानव सम्बन्धो की व्यवस्था मे बाधा डालता है जिनको समाज अपने अस्तित्व की मौलिक दशा मानता है।'

समाजशास्त्रियो को आपराधिकी सम्बन्धी उक्त धारणा पूर्ण रूप से मान्य नही क्योंकि प्रत्येक असामाजिक एव विचलित व्यवहार को अपराध नही माना जा सकता है और विश्व के प्रत्येक मानव समाज की मान्यताए भी भिन्न भिन्न है जिसके आधार पर अपराध की सार्वभौमिक समाजकीय परिभाषा नही मिल सकती।

अपराध की मनोवैज्ञानिक परिभाषा

गरिफेलो ने सर्वप्रथम अपराध की मनोवैज्ञानिक परिभाषा दी। उनके अनुसार मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से अपराध दया और सत्य की प्रचलित धारणाओं के विरुद्ध किया गया कृत्य है। विलियम इसाक थोमस न अपराध को परिभाषित करते हुए लिखा है कि अपराध सामाजिक मनोवैज्ञानिक दृष्टि से वह कार्य है जो उस समूह की एकता सगठन मतक्य व समूह बन्धन के प्रतिरोधी हैं जिसका व्यक्ति अपना समझता है।

राष्ट्रपिता महात्मा गाधी ने भी अपराध को एक मनोवैज्ञानिक समस्या माना है और अपराध को मनोविकार के रूप मे लिया है। उनके अनुसार—

सभी अपराधी मानसिक रोगी हैं उनका उपचार उसी प्रकार किया जाना चाहिए जिस प्रकार मानसिक रोगियो का किया जाता है।

इस प्रकार मनोवैज्ञानिक दृष्टि मे विचार करने पर अपराध का सम्बन्ध व्यक्ति के विकृत व्यक्तित्व से होता है परिवेश से इसका कोई सम्बन्ध नही रहता। विकृत मानसिकता के विचार के आधार पर मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अपराध एक मानसिक राग जाना जाता है। वसे कुछ अपराध जसे लैंगिक अपराध चौर्योन्माद के सम्बन्ध मे तो यह व्याख्या सही हो सकती है, किन्तु अन्य सभी प्रकार के अपराधियो के सन्दर्भ मे यह विचारधारा सही नही ठहरती। क्योंकि सभी मानसिक रोगी अपराधी नही हात और सभी अपराधी मानसिक रोगी नही होते।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि अपराध की विधिक सामाजिक व मनोवैज्ञानिक परिभाषाए भिन्न हैं। कोई भी सर्वमान्य सार्वभौमिक परिभाषा/व्याख्या/अवधारणा उपलब्ध नही है, जो अपराध के सभी विधिक समाजशास्त्रीय व मनोवैज्ञानिक विचारो को समाविष्ट करती। आपराधिक अध्ययन या विवेचन करने पर अपराध की विधिक अवधारणा को ही मान्यता देनी होनी है क्योंकि विधि-भजक कृत्य ही अपराध माना जाता है और उसके लिये ही विधि विधानान्तगत

दण्ड का प्रावधान होता है। अत व्यवहारिक दृष्टि से अपराध की विधिक परिभाषा ही मान्य होती है। विधिक दृष्टि से अपराध क्या है ? हमने विवेचन प्रस्तुत किया है जिसके सन्दर्भ मे हम अपराध की विधिक दृष्टि से परिभाषा उद्धत करते हैं—

> अपराध किसी भी राज्य द्वारा पारित एव लागू किये गये उस आपराधिक विधि का उल्लघन है जिसके अ तगत समाज के सदस्यो के सामाजिक अधिकारो के उपभोग की रक्षा का उत्तरदायित्व राज्य द्वारा उसके बनाये कानूनो से किया जाता है। [1]

अपराध क्यो ?

अपराध अवधारणाओ पर विचार करने के पश्चात यह विचार करना भी आवश्यक है कि वस्तुत अपराध क्यो किये जाते हैं ? इस प्रश्न का उत्तर देना बहुत ही कठिन है क्योंकि इसका सम्बन्ध जटिल मानव प्रकृति से है। वस्तुत अपराध मानव स्वभाव के साथ जुडा हुआ है।

' विश्व का कोई भी मानव समाज ऐसा नही है जो कि अपराध से अछूता रहा हो। सृष्टि के समारम्भ से ही अपराध की विकट विकल धारा निर तर गति से अपने सामाजिक आकार व स्वरूपानुसार इस अवनितल पर प्रवाहित होती चली आ रही है। यह एक सावभौमिक सत्य है कि अपराध मानव समाज की सरचना के ताने बाने मे बुना हुआ है और मानव समाज के उद्गम से निकल उसके वतमान रूप के साथ अपने विभिन्न एव विविध रूपो मे अक्षुण्ण गति से चला आ रहा है।

वास्तव मे यह जटिल प्रश्न है कि मानव समाज के शशि मुख पर कालिमा रूप अपराध क्या है ? अपराधी कौन है ? व्यक्ति अपराध क्यो करता है ? अपराध करने की पृष्ठभूमि म क्या कारण अ तर्निहित होत हैं ? ये ऐसे प्रश्न हैं, जिनका उत्तर स्वय अपराध करने वाले अपराधियो के पास भी नही है।

विश्व के प्रत्येक मानव समाज ने अपनी धार्मिक नतिक एव सामाजिक मान्यताओ के आधार पर कतिपय मानव आचरणो को निषिद्ध किया है और समय समय पर इनके निय त्रणाथ दण्डविधान भी प्रतिपादित किये हैं कि तु इस समस्या पर वज्ञानिक दष्टिकोण से विचार दो शताब्दी पूव प्रारम्भ हुआ। सवप्रथम इस समस्या पर बकारिया ने विचार किया। इसके पूव अपराध का कारण मानव के शरीर

---

1 महिला आपराधिकता एव पुनर्स्थापन
एम ए अन्सारी पचशील प्रकाशन जयपुर

मे पिशाचात्मा का वास माना जाता था जिसको भगाने के लिए कठोर शारीरिक दण्ड दिया जाता था।'[1]

अपराध के क्यो' प्रश्न का उत्तर प्रचलित अपराधशास्त्रीय विचारधाराओ मे खोजना होगा जो कि विभिन्न अपराधशास्त्रीय सम्प्रदायो द्वारा प्रतिपादित की गई हैं जिसका विवेचनात्मक विवरण निम्न प्रकार है—

(1) अपराधशास्त्र का क्लासिकल स्कूल

19वी शताब्दी के मध्य मे आधुनिक अपराधशास्त्र के जन्मदाता इलेलियम अपराधशास्त्री बकारिया ने अपराधशास्त्र के वास्तविक क्रमबद्ध अध्ययन का सूत्रपात किया एव आपराधिकता का प्रकृतिवादी सिद्धान्त' प्रतिपादित किया जिसके अनुसार अपराध के लिए अपराध की स्वतन्त्र इच्छा ही कारणीभूत होती है। प्रत्येक व्यक्ति स्वभावत सुख का उपभोग करना चाहता है एव दुख को टालता है। इस सुख प्राप्ति के उद्देश्य से कभी कभी मनुष्य अपनी रुचि के अनुसार स्वेच्छा से अपराध कृत्य कर बठता है। अत अपराध कृत्य की सघातिक अनुपात मे व्यक्ति को दण्ड देना चाहिए।

बकारिया के अपराधशास्त्र के क्लासिकल स्कूल की विचारधारा आज के वज्ञानिक युग मे मान्य नही है जिसका कारण यह है कि स्वतन्त्र इच्छा' जसी अमूर्त कल्पना के आधार पर अपराध घटना क्रम की व्यवस्था सम्भव नही है।

(2) नियोक्लासिकल स्कूल

क्लासिकल स्कूल की प्रतिक्रियास्वरूप उदित नियोक्लासिकल स्कूल के विचारको ने यह प्रतिपादित किया कि दण्ड निर्धारित करते समय अपराधियो के मनोविकार एव अपराध कत्य का गुरुत्व घटाने वाली विशेष परिस्थितियो पर उचित ध्यान देना आवश्यक है। यह विचारधारा दोषपूर्ण मानी जाती है। कारण कि मानव व्यवहार मे तर्क को अत्यधिक महत्त्व दिया गया एव मानसिक आवेगो सवेगो और सामाजिक तत्त्वो का आकलन किया गया है। अपराधी के स्थान पर अपराध को ही केन्द्र बिन्दु माना गया है।

(3) प्रमाणवाद विचारधारा जैविकीय विचारधारा

(अ) 19वीं शताब्दी में जविकीय विचारधारा के विकास के साथ फ्रासीसी चिकित्सको ने अपराध को शारीरिक बनावट से जोडा। लोम्ब्रोसो मौरिंग हूटन

---

1 एम ए असारी महिला आपराधिकता एव पुनर्स्थापन पृष्ठ 4

आदि जीवशास्त्रियों ने सप्रमाण अपराध के जवकीय कारणो पर विचार किया। इस सम्प्रदाय को प्रमाण वादी सम्प्रदाय कहा जाता है। लोम्ब्रोसो के अनुसार व्यक्ति के शारीरिक लक्षणो एव उसके व्यवहार का पारस्परिक सम्बन्ध है। व्यक्ति शारीरिक दोष वशानुक्रम द्वारा प्राप्त करता है। इन शारीरिक दोषो के कुछ उदाहरण है जैसे लम्बे कान लम्बे हाथ असाधारण आकार का सिर अस्त-व्यस्त मुह चाल ढाल चिपकी नाक बडे मोटे होठ या छोटी तथा लगूरी जसी ठुडडी आदि। जिस व्यक्ति मे उक्त दोषो मे से पाच या इससे अधिक दोष हो तो वह व्यक्ति अवश्य रूप से अपराध करेगा। लोम्ब्रोसो ने ज मजात अपराध का सिद्धात प्रतिपादित किया और अपराधियो को तीन प्रमुख भागो मे विभक्त किया—

1 जन्मजात अपराधी 2 मानसिक अपराधी 3 क्रिमिनाइडस।

एनिरिकोफेरी और गारोफलो दोनो इटली निवासी अपराधशास्त्रियो ने भी लोम्ब्रोसो के सिद्धात का कुछ भिन्नता के साथ समथन किया। गारोफलो ने यह माना कि अपराध मनुष्य द्वारा किया गया ऐसा कृत्य है जिसके कारण सामान्य व्यक्ति मे अन्तर्निहित कारुण्य एव यायप्रियता की भावना पर प्रत्याघात होता है, जो सामाजिक सुदढ व्यवस्था के विपरीत होता है जिस कारण अपराधी को कठोरतम दण्ड देना चाहिए।

लिरी ने जविकीय तत्त्वो के अतिरिक्त भौगोलिक, सामाजिक एव आर्थिक कारको को भी अपराध के लिये उत्तरदायी माना और अपराधियो को जन्मजात अपराधी व्यवसायिक अपराधी भावावशी अपराधी एव विक्षिप्त अपराधी की चार श्रेणिया मे विभक्त किया।

टार्डे ने उक्त प्रमाण वाद विचारधारा का इस तक पर स्वीकार करने योग्य नही माना कि कोई अपराधी जन्मजात नही होता। अपराधी बनने म परिवेश का बहुत ही महत्त्वपूण योगदान होता है जिसको नकारा नही जा सकता।

(ब) नियोलोम्ब्रोसो सम्प्रदाय—लाम्ब्रोसा अपराध के जवकीय सिद्धान्त के पश्चात् शारीरिक बनावट का सम्प्रदाय विकसित हुआ जिसे नियोलोम्ब्रोसो सम्प्रदाय भी कहते हैं जिसके हूटन व शल्डन प्रमुख विचारक हैं।

(1) हूटन के अनुसार अपराध का कारण जविकहीनता है जो आनुवशिकता द्वारा प्राप्त हाती है। इम हीनता से ग्रसित व्यक्ति समाज मे समायोजन नही कर सकता जिससे वह अपराध करता है, किन्तु परिवेशात्मक विचारधारा तगत वशानुगत हीनता विचारधारा आज मान्य नही है।

(2) शल्डन के अनुसार विभिन्न रेखाकृतियों का मनुष्य के स्वभाव पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है जो उसकी आपराधिकता का प्रमुख कारण होता है। तीन प्रकार के शारीरिक गठन होते हैं जिसके स्वभाव अनुसार ही भिन्न स्वभाव होता है। एण्डोमोरफिक रेखाकृति वाले व्यक्ति शरीर से गोल मटोल एवं मोटे ताजे होते हैं। ये सहनशील प्रकृति के मृदु स्वभाव वाले होते हैं। ये व्यक्ति आपराधिक प्रवृत्ति के नहीं होते। मैसोमोफिक रेखाकृति के व्यक्ति शरीर से सुदृढ एवं हृष्ट पुष्ट होते हैं एवं उनकी हड्डियां तथा मासपेशियां सुदृढ होती हैं। ये व्यक्ति गम्भीर प्रकृति वाले एवं दृढनिश्चयी होते हैं। तीसरे एक्टोमारफिक रेखाकृति वाले व्यक्ति दुबले पतले एवं नाजुक स्वभाव के होते हैं। ये प्रकृति से चिडचिडे एवं अस्थिर स्वभाव के होते हैं। अधिकांशत मोसोमारफिक एवं एक्टोमारफिक रेखाकृतियों के व्यक्तियों मे ही आपराधिकता की प्रवृत्ति विशेष रूप से पाई जाती है। शल्डन गलूक व इलम गुलूक (1956) ने इसका समर्थन किया।

सदरलैंड ने शल्डन के इस मत से असहमति व्यक्त की और वंशानुगतता के सिद्धात के समान ही वर्तमान मे पर्यावरणीय अध्ययनों के सन्दर्भ मे महत्त्वहीन माना।

(3) **कपाल विद्या संबंधी सिद्धान्त**—जोसेफ गोगल ने खोपडी के नाप के अध्ययन के आधार पर विचार प्रतिपादित किया। उसके अनुसार मानव कपाल के विभागों के विकास को जानकर अपराधी व्यवहार को समझा जा सकता है। मस्तिष्क के विभागों मे शक्ति और दुर्बलता के आधार पर आपराधिक लक्षणों को प्रभावित करने की क्षमता होती है। उदाहरणार्थ विनाशता के लक्षण से युक्त व्यक्ति हत्या करेगा, लोभ व लिप्सा के लक्षण से युक्त चोरी और लूटपाट करेगा।

19वीं शताब्दी के अन्त मे इस सिद्धात की मान्यता इस आधार पर समाप्त हो गई कि मस्तिष्क का अलग अलग भागों मे बाट कर विभिन्न लक्षणों से सम्बन्धित नहीं किया जा सकता।

(4) अन्त स्रावी सम्प्रदाय

गिलिन एवं स्मिथ जैसे कुछ अपराधशास्त्रियों ने आपराधिकता के प्रति जवकीय दृष्टिकोण अपनाते हुए बताया कि आयु लिंग अथवा शरीर के अन्दर तयार होने वाले द्रव आदि से उत्पन्न शारीरिक असमानताओं एवं आपराधिकता मे पारस्परिक सम्बन्ध है। शरीर की अग्नाशय। निस्त्रोत ग्रन्थियों के असाधारण रूप से क्रियाशील होने के कारण स्राव की अधिकता होती है जो उनकी आपराधिकता का प्रत्यक्ष कारण होती है।

इस सम्प्रदाय के मत को इस आधार पर अमान्य किया गया है कि बहुत से अपराधियों की ग्रंथियां सामान्यत काय करती हुई मिलती हैं जबकि बहुत से विधिसम्मत आचरण करने वाले नागरिको की ग्रंथियां ठीक काय करती हुई नही मिलती हैं।

(5) आपराधिक आनुवशिक विचारधारा

जिग्रो एव लिवान (1956) कोसमेन और हेमग (1963) ने व्यक्ति के क्रोमोसोम का अध्ययन कर यह मत प्रतिपादित किया कि व्यक्ति मे अतिरिक्त क्रोमोसोम उपलब्ध होने पर उसके व्यवहार मे असमानता आती है जो अपराध कारक होती है।

मानव प्रजाति म 46 क्रोमोसोम्स होते हैं जिनमे से 44 ओटोसोम्स होते हैं जो 22 के बराबर जोडे मे होते हैं जिनमे से क्रमश एक पिता एव माता की देन होती है। इसके अतिरिक्त दो लिंग क्रोमोसोम्स के होते है। महिला म एक्स क्रोमोसोम व पुरुष मे वाई क्रोमोसोम मिलते हैं। इस प्रकार क्रोमोसोम के इन 23 जोडो मे जीवाणु होते हैं जिसके द्वारा जवकीय आनुवशिकता वशानुक्रम मे से आती है। उक्त अपराधशास्त्रियो की यह मान्यता है कि मनुष्य मे सामान्य क्रोमोसोम के साथ साथ अतिरिक्त क्रोमोसोम की उपस्थिति होती है तो वह व्यक्ति अधिक आक्रामक होता है अर्थात् एक्स वाई वाई क्रोमोसोम वाला व्यक्ति आपराधिक प्रवृत्ति का होता है।

अतिरिक्त क्रोमोसोम ढ ढने की जो पद्धति करयो टाइपिंग है उसम वयक्तिक निर्णयो की सभावना होने के कारण उक्त विचारधारा अमान्य है।

आनुवशिकता को अपराध का कारण मानने वाले अन्य अपराधशास्त्री भी हैं जिनके द्वारा अनक अध्ययनो के आधार पर इस विचारधारा को पुष्ट किया है जिनमे से मुख्य अध्ययन का विवरण निम्नांकित है—

चार्ल्स गोरिंग (1913) ने इगलड म 300 अपराधियो के शारीरिक लक्षणो का अध्ययन किया और यह मत व्यक्त किया कि अपराधी प्रवृत्ति म पर्यावरण का महत्त्व न होकर आनुवशिकता का महत्त्व होता है। इस मत की पुष्टि विनाशिप इसाब्रुक इवडल गोड्डा और कालीककस आदि आदि अपराधशास्त्रियों द्वारा प्रसिद्ध एव अपयशी परिवारो के सदस्यो के अध्ययन के आधार पर इसी क्रम मे जमन विद्वान लागे (1929) अमेरिकन विद्वान न्यूमेज फ्रीमैन हाल विगर (1937) ने समरूप और भ्रातृक व जुडवा बच्चो का अध्ययन कर पतृकता का अपराधी व्यवहार में महत्त्व का प्रतिष्ठित किया है। शुलसिगर (1924–1947) क्रो (1972), हुचिग्स

एव मैडमिक रोजेन्या (1975) ने दत्तक पुत्रों के अध्ययन के आधार पर यह पुष्टि की कि अपराधी एव अनपराधी बालकों के मूल पिताओं म आपराधिकता की दरा मे पाया गया अन्तर इस धारणा की पुष्टि करता है अपराध का कारण आनुवशिकता होती है।

माटेग व माडरेड ने आपराधिक व्यवहार के आनुवशिकता एव अन्य जवकीय कारणों का आपराधिक व्यवहार का एकमात्र कारण स्वीकार नही किया। माटग्यू के मत मे अपराध एकमात्र जवकीय तथ्य नही किन्तु एक सामाजिक सत्य है। जवकीय लक्षण जो आनुवशिकता की देन है बिना वातावरण के योगदान के किसी व्यक्ति को अपराधी नही बना सकते। इस प्रकार सारी जविकीय आपराधिक व्याख्या एकपक्षीय होने से पूर्णतया स्वीकाय नही मानी जाती है।

(6) अपराध के मनोवैज्ञानिक सिद्धात

अपराध के जवकीय सिद्धातो के आनुवशिक जवकीय तत्वों का ही मुख्यतया अपराध का मूल कारण माना है जबकि मनोवैज्ञानिक मानसिक दुबलता व मानसिक हीनता के आधार पर अपराध को समझते हैं। बिन (1905) ने व्यक्ति की मानसिक हीनता व बुद्धि को नापने के लिये साइमन की सहायता से बिन साइमन पैमाना बनाया। गोड्डा (1919) ने व्यक्ति के जिस बुद्धि मन्द व मन्द बुद्धि का उनके व्यवहार से सबधित कर आपराधिकता का समझने का प्रयास किया और प्रतिपादित किया कि मन्द बुद्धि आनुवशिक होती है किन्तु मर्चिसन, साइर गमीन, रोल्डन व गलूटक बीज (1944) मारल (1947), सिम्पसन, आर्नी (1933) आदि ने भी मानसिक हीनता और अपराध के बीच सम्बन्ध के अध्ययन कर मत व्यक्त किया कि कानून का पालन करने वाले व्यक्तियों की अपेक्षा अपराधी मानसिक रूप से हीन नही होते हैं।

(7) मनोविकार विश्लेषण आपराधिक सिद्धान्त

कारण अपनी इच्छाओं की पूर्ति हेतु अपराधी प्रतिस्थापन व्यवहार अधिक करते हैं।

(8) मनोविश्लेषणात्मक सिद्धांत

मनोविश्लेषणात्मक विधि के आधार पर फ्रायड ने मानसिक मनोविकारों के विश्लेषण के आधार पर आपराधिक कारणों की व्याख्या की। उसके अनुसार अपराधी के मस्तिष्क में तीन प्रमुख भावनाएँ सदव अन्तर्द्वन्द्व की स्थिति का निर्माण करती हैं जिसको (1) इदम् (2) अहम् (3) अन्तरात्मा के नाम से पुकारा जाता है। इदम् से तात्पर्य मनुष्य की उन नैसर्गिक इच्छाओं से है जो उसके जैविक व भौतिक अस्तित्व के कारण उत्पन्न होती है जो इदम् द्वारा प्रेरित भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति को अनुचित मार्ग से करने हेतु नियन्त्रण करने का प्रयत्न किया करता है। मनुष्य की आत्म परीक्षण एवं सचन की शक्ति को फ्राईड ने अन्तरात्मा की संज्ञा दी है। जब किसी वासना या भौतिक आवश्यकता की पूर्ति की तीव्रता किसी व्यक्ति को विचलित करती है तो इदम, अहम व अन्तरात्मा के बीच संघर्षमय स्थिति उत्पन्न हो जाती है। अहम (नियन्त्रक) के कमजोर पड़ने पर इदम् के प्रभाव से मनुष्य इच्छा पूर्ति हेतु सामाजिक मान्यता के विरुद्ध व्यवहार कर बैठता है जो कि अपराध की संज्ञा में आता है।

( ) आपराधिक आर्थिक दृष्टिकोण

यूनान के प्रसिद्ध दार्शनिक प्लेटो ने प्रलोभन को अपराधों का मुख्य कारण माना। बाद में प्लेटो के विचारों से सहमति प्रकट करते हुए वाल्टेयर रूसो बकारिया एवं बैंथम आदि विचारकों ने आर्थिक उत्पादन को अपराध का एक महत्त्वपूर्ण कारण निरूपित किया। रसत के अनुसार किसी समय खाद्य वस्तुओं के मूल्य में वृद्धि होने पर अपराध की घटनाएँ बढ जाती हैं। वेल्श का भी यही मत है कि मन्दी के समय अपराध वृद्धि पर रहते हैं। श्रीमती मेरी कारपेन्टर का तर्क है कि आर्थिक स्थिति एवं आपराधिकता सदैव सीधे समानुपात में घटते बढते रहते हैं। गोरिंग के अनुसार आपराधिकता एवं व्यक्ति के व्यवसाय में सीधा सम्बन्ध होता है। टार्डे के अनुसार औद्योगिक विकास के परिणामस्वरूप मनुष्य की रुचि ऐश्वर्य की वस्तुओं की ओर अधिक होती है जिसके कारण यह अपहृत्या से उनको पाने का प्रयत्न करता है।

प्रसिद्ध अर्थशास्त्री बागर ने आपराधिकता एवं पूंजीवादी अव्यवस्था में सामन्जस्य पाया है। उसके मत में पूंजीवादी व्यवस्था में विभिन्न वर्गों में सम्पत्ति का विवरण असमान रहता है पूंजीपति धनसंग्रह की प्रवृत्ति रखते हैं जिसके कारण मूल्यों में कृत्रिम वृद्धि होती है। मूल्य वृद्धि के साथ ही उत्पादन पर रोक

लगती है जिसके फलस्वरूप श्रमिक वर्ग मे बेकारी बढ जाती है। फलत बेरोजगार व्यक्ति मद्यपान आवारागर्दी भिक्षावृत्ति चोरी लूटपाट आदि अपराध करते हैं।

कार्ल मार्क्स ने भी आर्थिक परिस्थितियों को मानव आपराधिक व्यवहार का एक प्रमुख आधार बताया है। इसके अनुसार पूजीवादी व्यवस्था मे निर्धनता आवश्यक रूप से पाई जाती है और वह निर्धनता व्यक्तिगत विघटन को जन्म देती है। दूसरे शब्दो मे मार्क्स की विचारधारा मे अपराध पूजीवादी अर्थ व्यवस्था का एक आवश्यक परिणाम है। सिरिलबर्ट (1939) ने अपने एक सर्वेक्षण के आधार पर निर्धनता और अपराध के मध्य संबंध पाया किन्तु प्रसिद्ध अपराधशास्त्री कोहन और गरोफेलो ने इस विचारधारा का खण्डन किया है कि पूजीवादी समाज रचना मे आपराधिकता को प्रोत्साहन मिलता है। पूजीवादी अर्थव्यवस्था के कारण अपराध वृद्धि का तर्क इस आधार पर मान्य नहीं है कि समाजवादी व्यवस्था लागू करने पर भी आपराधिक स्थिति मे कमी नही है।

(10) भौगोलिक सिद्धान्त

अठारहवी उन्नीसवी और बीसवी शताब्दियो मे कुछ अपराधशास्त्रियो ने भौतिक भूगोल, जलवायु तापमान वर्षा भूमि आदि कारकों का अध्ययन किया एव मत व्यक्त किये कि कुछ अपराध किसी क्षेत्र विशेष की भौगोलिक स्थिति जनसख्या व नैतिक धारणाओं तथा अन्य जलवायु संबंधी विशिष्टता के कारण प्रचुरता से होते हैं।

1948 मे माटस्क्यू ने विचार व्यक्त किया कि जसे जसे हम पोल रेखा की ओर बढते हैं वसे वसे मदान्मत्ता भी बढती है और जसे जसे हम विषवत रेखा की ओर बढते है वसे वसे अपराधी व्यवहार भी बढता है। फ्रांस के विद्वान क्वीटलेट (1950) ने अपराध का ताप सम्बन्धी सिद्धान्त प्रतिपादित किया जिसके अनुसार व्यक्ति के विरुद्ध अपराध दक्षिण मे अधिक होते हैं जो ग्रीष्म काल मे बढ जाते हैं और सम्पत्ति के विरुद्ध अपराध उत्तर मे अधिक मिलते हैं और सर्दियो मे बढ जाते हैं। दूसरे फ्रेंच विद्वान लोकासले (1825-1880) ने मत व्यक्त किया कि सम्पत्ति से सम्बन्धित अपराध सबसे अधिक दिसम्बर माह मे और उसके उपरान्त जनवरी नवम्बर और फरवरी मे मिलते हैं। अमरीकी विद्वान डेकेस्टर (1904) ने अपराधों के अध्ययन मे वायुमण्डलीय दबाव ताप नमी आदि जसे मौसमी तत्वो का अपराध पर प्रत्यक्ष प्रभाव पाया। रूस के विद्वान पीटर कोम्पटकिन का मानना है कि पिछले मास के औसत तापमान व आर्द्रता अथवा हवा मे पानी की मिलावट के आधार पर आश्चर्यजनक यथार्थता अगले माह मे अपराध की मात्रा पूर्वानुमानित की जा सकती है।

उक्त भौगोलिक आधार पर आपराधिक विवेचन अपराध सम्बन्धी तत्वो का सरलीकरण के अतिरिक्त और कुछ न होने से मान्य नही है।

(11) अपराध के समाजशास्त्रीय सिद्धात

समाजशास्त्रीय आपराधिक प्रमाणवाद के अनुसार सामाजिक घटनाएँ उतनी ही वास्तविक होती हैं जितना कि मनुष्य का व्यवहार व भौतिक तत्व जो मनुष्य के सामाजिक अस्तित्व को प्रभावित करता है सामाजिक कुसमायोजन के लिए उत्तरदायी होते हैं जिसके परिणामस्वरूप समाज व्यवस्था व मान्यता विपरीत कृत्य मनुष्य कर बैठता है जो कि अपराध के रूप म परिभाषित होती है।

समाजशास्त्रीय आपराधिक विचारधारा की मान्यता निम्नांकित है— (अ) बीसवी शताब्दी के प्रारम्भ म सवप्रथम एमील दुर्खिम (1856–1917) न समाजशास्त्रीय प्रमाणवाद के अपराधशास्त्री के रूप म अप्रतिमानित या एनामी की अवधारणा विकसित की। उसके अनुसार एनामी की परिस्थिति लक्ष्यो पर नियत्रण टूट जान के कारण उत्पन होती है जबकि व्यक्ति की आकांक्षाएँ असीमित हो जाती हैं और पूर्ति हेतु व्यक्ति के व्यवहार पर निरन्तर दबाव डालती है। इस प्रकार ' एनोमी ' वह स्थिति होती है जिसम समाज के सामूहिक नियम व्यक्ति की क्रियाओ को नियन्त्रित करने म असफल होते है। धन प्रतिष्ठा व शक्ति सम्बन्धी लक्ष्म असीमित हो जाते हैं और महत्वाकाक्षी बेचन व्यक्ति समाज के व्यवस्था उपकरणो की चिन्ता न करके सामाजिक मानदण्डो के विपरीत व्यवहार करता है जो कि अपराध की सज्ञा मे आता है। (ब) दुर्खिम के पश्चात समाजवादी प्रमाण वाद की विचार धारा और विकसित हुई, जिसके अनुसरण म शा मैके (1929) ने व्यक्ति के अपराध के कारण सामाजिक बिखराव सामुदायिक नियन्त्रण एव शिथिलन पडौसी राज्य के कुप्रभाव व पडौस के गिरते चरित्र मे ढूढने का प्रयत्न किया।

1940 से पूव इसी समाजवादी प्रमाणीकरण के अन्तगत दो सद्धान्तिक धारणाए और उत्पन्न हुईं। एक तो रोबट के मटन द्वारा विकसित एनोमी सिद्धात और दूसरा एडविन सदरलण्ड (1939) द्वारा विकसित विभिन्न सम्पक सिद्धान्त। मटन के अपरमानता के सिद्धान्त के अनुसार अपराध सास्कृतिक रूप से निर्धारित लक्ष्य और इन लक्ष्यो की प्राप्ति हेतु समाज द्वारा अनुमोदित साधनो के बीच उत्पन्न विनियोजन का परिणाम है। समाज की सरचना म सास्कृतिक लक्ष्य मिलते हैं, एनोमी की स्थिति लक्ष्यो और उनकी प्राप्ति के लिए उपलब्ध वध साधनो के सम्बन्ध टूटने के कारण उत्पन्न होती है। आपराधिक व्यवहार सामाजिक परिस्थिति के प्रति प्रतिक्रिया मात्र है। इस प्रकार मटन विचलित व्यवहार के विवेचन मे व्यक्ति की जवकीय मूल प्रवृत्तियो को कोई महत्व न देकर अपराध की

व्याख्या म व्यक्ति को केन्द्र बिन्दु मानते हुए सामाजिक व्यवस्था को ही महत्व देता है जो एकपक्षीय है।

सदरलण्ड (1939) ने अपराध का सहचय सिद्धान्त प्रतिपादित किया जो अपराध क्यों ' का उत्तर आपराधिक व्यवहार को सीखने की प्रक्रिया मे ढूढता है। उसके अनुसार व्यक्ति आपराधिक व्यवहार इसी प्रकार सीखता है जिस प्रकार वह विधि आदेशित सम्यक् व्यवहार सीखता है। इस प्रकार अपराध की व्याख्या सामाजिक सिद्धान्तो के आधार पर की जानी चाहिए। सदरलण्ड ने 9 उप धारणाएँ सामाजिक प्रक्रिया सीखने के सिद्धान्त पर प्रस्तुत की। सदरलैण्ड के सिद्धान्त का साराश डीफलियर एव क्वनी (1966) ने सक्षेप मे प्रस्तुत किया है—

> 'प्राथमिक समूहों के प्रतीकात्मक ससग के दौरान जब व्यक्ति का सम्पक अनापराधिक व्यवहार के प्रतिमानो की अपेक्षा आपराधिकी व्यवहार के प्रतिमानो से अधिक होता है तो वह आवश्यक एव पर्याप्त आपराधिकी प्रेरणाओ दृष्टिकोण एव विधियो को परिस्थितियो की पृष्ठभूमि मे आपराधिक व्यवहार सीखता है।

व्यक्ति और समाज दोनो ही दृष्टिकोण से अपराध के कारणो की व्याख्या करते हुए सदरलैण्ड ने यह माना है कि हर समुदाय मे दो प्रकार के समूह पाये जाते हैं—(अ) अपराध करने के लिए सगठित किये गये समूह (ब) अपराध रोकने के लिए किये गय सगठित समूह। अत प्रत्येक समुदाय म अपराध की मात्रा विभिन्न सामूहिक सगठन की विभिन्न अभिव्यक्ति पर निभर है।

आपराधिक व्यवहार की व्याख्या म सवप्रथम सीखने को सामाजिक प्रक्रिया एव व्यक्तिगत व सामूहिक सामाजिक कारणो को महत्व देने के कारण अपराधशास्त्र म सदरलण्ड का विभिन्न सहचय सिद्धान्त बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रखता है किन्तु इस सिद्धान्त के अधिक सामान्य होने के कारण प्रमुख रूप से ग्लूक ग्लूक काल्डवेल हुवेट, क्लाच जॉन बोल्ड क्रोचे मेविल इलियट आदि अपराधशास्त्रियो ने इस सिद्धान्त की आलोचना अनेको कारणो से की है जिसमे मुख्य रूप से यह आरोप है कि सदरलण्ड का यह सिद्धान्त सीमित रूप मे आपराधिक व्याख्या प्रस्तुत करता है जिसमे आनुवशिकता जवकीय शारीरिक व मनोवज्ञानिक व पर्यावरणीय कारणो एव पर्यावरणीय उत्तेजनात्मक कारणो की उग्रता को महत्व नही देता जिसमे समग्र आपराधिक व्याख्या व अपराध की उत्पत्ति स्पष्ट नही हो पाती।

1960 मे क्लावड व ओहलिन ने विभिन्न अवसर का आपराधिकी सिद्धान्त प्रतिपादित किया जिसके अनुसार हर व्यक्ति को समाज के वैध और अवध अवसर

व्यवस्था' मे एक स्थिति उत्पन्न होती है जिसके आधार पर अपनी अभिलाषाओं की पूर्ति करने का प्रयास करता है और अपने को समाज मे समायोजित करता है किन्तु जब व्यक्ति अपने लक्ष्यों और अभिलाषाओं को वैध अवसरों द्वारा प्राप्त नहीं कर पाता तब वह अनेकों नीचे की ओर पुनरावृत्ति नहीं करता और जिस कारण तीव्र कुण्ठा व नैराश्य अनुभव करता है, जो उसके विचलित व्यवहार के लिए उत्तरदायी होता है।

क्लावर्ड व ओहलिन के उक्त सिद्धांत की अनेक अपराधशास्त्री यथा गाडन वलेस आदि ने आलोचना की क्योंकि यह सिद्धान्त केवल उन्हीं अपराधी क्रियाओं को समझता है, जो अपराधी उप संस्कृति द्वारा समर्थित सामाजिक भूमिकाएँ निभाने के परिणाम होते हैं और उन अपराधों को अपने उल्लेख से अलग करता है जो उन समूह के सदस्यों द्वारा किये जाते हैं जिनमे अपराधी क्रियाएँ विनिहित नहीं होती है।

जब दुर्खिम मर्टन सदरलण्ड क्लावर्ड व ओहलिन अपराध की व्याख्या सामाजिक दोषों के आधार पर करते हैं तो होनालाइटफट गास्टेन सेलिन मबेल इलियट विलियम आबग जान मार्टन आदि अपराधशास्त्री आपराधिक व्यवहार की व्याख्या सास्कृतिक व्यवस्था से संघर्ष के आधार पर करते है। टैफ्ट के मतानुसार मानव व्यवहार संस्कृति और वर्तमान स्थितियों के संयुक्त प्रभाव की उपज है। अत वह संस्कृति जो अधिक प्रतियोगी एव भौतिकवादी है तथा जिसमे उच्च स्थिति व प्रतिष्ठा प्राप्त करने पर अधिक बल दिया जाता है अधिक अपराधी उत्पन्न करती है। थार्सटन सेलिन की यह मान्यता है कि हर व्यक्ति बहुत से सामाजिक समूहों का सदस्य होता है और उन सभी समूहों के अपने अपने व्यवहारिक प्रतिमान होते हैं जो कि उस समूह की जटिल संस्कृति की देन होती है। विभिन्न समूहों के प्रतिमान एक दूसरे से संघर्षमय स्थिति उत्पन्न करते हैं जो विवादास्पद होने के कारण व्यक्ति को इनका उल्लघन करने के लिए विवश करते हैं और इस प्रकार प्रतिमान विपरीत आचरण अपराध की संज्ञा मे आता है। मैबल एलियट का कहना है कि अपराध की जड भूतकालिक संस्कृति मे उतनी ही मिलती है जितनी वर्तमान संस्कृति म। संस्कृति संघर्ष को आधार मानते हुए मार्टन यह प्रतिपादित करते हैं कि जो व्यक्ति दो संस्कृतियों के बीच होते हैं ऐसे सीमान्त संस्कृति वाले व्यक्ति किसी एक संस्कृति के सदस्य नहीं होते। यह सीमान्त स्थिति व्यक्ति मे संघर्ष निराशा की प्रवृत्ति उत्पन्न करती है जो किसी एक संस्कृति के विपरीत होने पर अपराधमूलक हो जाता है।

संस्कृति संघर्ष सिद्धांत से जुडी हुई है—अपराध की उपसंस्कृति या सास्कृतिक वैमनस्य की विचारधारा जिसके मुख्य प्रवर्तक मैज (1963) है जिनके अनुसार उस

उप संस्कृति के सदस्य जिसमें अपराध अधिक होते हैं उस समूह के सदस्य होने के कारण उस समूह के मान्य सामाजिक मानदण्डों की पालना करते हुए आपराधिक प्रवृत्ति के हो जाते हैं।

संस्कृति संबंधी उक्त सिद्धान्तों का यह दोष मुख्य रूप से है कि इनमें व्यक्तिगत लक्षणों की पूर्णतया अवहेलना की गई है। केवल सांस्कृतिक विभिन्नताओं एवं विषमताओं के आधार पर ही अपराध को समझाने का प्रयत्न किया गया है।

(12) नियन्त्रण सिद्धान्त

आपराधिक व्यवहार का सीखने की स्वीकारात्मक व सीखने की निषेधात्मक दोनों प्रवृत्तियों को आधार मानते हुए हेश (1970) ने अपराध के नियन्त्रण सिद्धांत का निरूपण किया जिसके अनुसार व्यक्ति विधि सम्यक् आचरण तभी करता है जबकि विशेष परिस्थितियां उपस्थित हों उसी प्रकार व्यक्ति आपराधिक व्यवहार भी तभी करता है जबकि उसके लिए विशेष परिस्थितियां मय विशेष सहायक परिस्थिति सम्बन्धी तत्वों के भी हों एवं व्यवहार का परिणाम पारितोषिक मूलक भी हो। नियन्त्रण सिद्धांत की यह मान्यता है कि व्यक्ति का व्यवहार क्रिया के प्रति प्रतिक्रिया मात्र है और व्यक्ति वही क्रिया ज्यादा सीखता है जिसको करने पर उसका पारितोषिक मिलता है और परिणाम उसकी रुचि के अनुसार हो अपराधी व्यवहार भी व्यक्ति की रुचिगत परिणाम प्रदायक होने पर ही वह सीखता है जिस पर नियन्त्रण तभी सम्भव है जबकि अपराध के परिणाम रोचक एवं रुचिपूर्ण न हों। इस सिद्धांत की कमी यह है कि व्यवहारिक अन्तर्क्रिया की व्याख्या करते समय व्यक्ति के वैयक्तिक लक्षणों की भूमिका की उपेक्षा की गई है।

(13) मानदण्ड धारणा सिद्धान्त

रेक्लेस (1962) के अनुसार दो नियन्त्रक मानदण्ड होते हैं—(1) बाह्य सामाजिक न्यायिक तन्त्र (2) आंतरिक समूह के मानदण्डों की धारणा। जो बाह्य एवं आंतरिक नियन्त्रकों को धारण करने में सबल होते हैं उनमें आपराधिक आचरण करने की सम्भावना कम होती है किन्तु जो व्यक्ति इस सन्दर्भ में कमजोर वर्गीकृत किये जाते हैं उनके द्वारा आपराधिक आचरण करने की सम्भावनाएं अधिक होती हैं। यह सिद्धान्त भी सम्भावनाओं के आधार पर मत व्यक्त करता है जिससे यह पूर्णतया स्वीकार्य नहीं है।

(14) आरोपण सिद्धान्त (लेबलिंग थ्योरी)

समाज के सदस्यों की प्रतिक्रिया के आधार पर अपराध का सम्भालने के नवीन प्रयत्न के रूप में आरोपण विचारधारा का प्रारम्भ फ्रैंक (1938) के अध्ययन 'बुराई के नाटकीकरण' से हुआ। इस विचारधारा के क्रम में एडविन लेमर्ट

(1959) न अपराध के आरोपण सिद्धात को विकसित किया जिसके अनुसार औप चारिकता या आपराधिकता सामाजिक प्रतिक्रिया द्वारा परिभाषित की जाती है और इस आपराधिकता का स्वभाव और दर अपराधी की भूमिका के साथ सामा जिक प्रतिक्रिया द्वारा ही स्वरूप ग्रहण करत हैं।

अपराध के प्रति नागरिका की प्रतिक्रिया परिणाम का अध्ययन के आधार पर लोनट ने दो प्रकार के प्रथम एव द्वितीय विचलन के सिद्धान्त को निरूपित किया। उसने बताया कि कुछ विधिभजक घटनाएँ कानून तोडन वाले को जनता द्वारा आरोपित (लेबल) करने के पूव घटित होती हैं उसको प्राथमिक विचलन कहते हैं। इसके पश्चात् जब उस व्यक्ति के कृत्य का पता लगता है और जन साधारण की जानकारी मे आता है तथा जन साधारण उसको अपराधी मानता है या मानने लगता है ता उस व्यक्ति को भी स्वय के अपराधी होने की नवीन भूमिका की जानकारी हो जाती है। उस सवस प्रोत्साहित होकर वह व्यक्ति पुन विधि का उल्लघन करता है तो उसके व्यवहार को द्वितीय विचलन कहते हैं जो कि बुराई के नाटकीकरण का परिणाम है।

अमेरिका मे अपराध की आरोपण विचारधारा का उदय 1954 म हुआ जो जाज हरबट मीड और अनफ्रेड शुज के सामाजिक दशन की उपज है किन्तु हावड एस लेकर (1963) ने एक विचारधारा को परिपक्वता प्रदान की। उनके अनुसार वे सभी व्यक्ति जो नियम तोडते हैं अपराधी आरोपित नही किये जाते हैं क्योकि अन्तोगत्वा नतिक नियमा की परिभाषा एव क्रियान्वित एक राजनीतिक काय है उसके अनुसार आपराधिकता का अथ सम्बद्ध व्यक्तियो के साथ साथ बदलता रहता है। बेकर की इस व्याख्या के आधार पर लेबलिंग थ्योरी का नाम इण्टरेक्शनिष्ट पमपक्तिव अत्व रविंग्टन व मार्टिक एस बेन बग (1958) द्वारा दिया गया। फीडमैन एव डूम (1968) व वेलफोड (1975) व वोक्स (1971) ने आरोपण का आधार राजनतिक माना है।

आरोपण सिद्धात की उपयोगिता विभिन्न सास्कृतिक मान्यताओ वाले समाज म सामाजिक व वैधानिक परिवतनशील मान्यताएँ निर्धारित करने मे है किन्तु इससे हानि यह है कि किन्ही सास्कृतिक मान्यताओ के प्रति नतिक निणय देने के लोभ का सवरण नही कर सकते। इसके साथ साथ अपराध की आरोपण विचारधारा आपराधिक व्यवहार की अपेक्षा आपराधिकता को परिभाषित करने म अधिक रुचि लेने के कारण सवमान्य नही है।

(15) अपराध का सघपता का सिद्धात

ववली (1961) ने कुछ वप पूव ही अपराध के सघप के दो सिद्धान्तो को विक- सित किया है और अपराध की परिभाषा परिभाषा निणय व परिभाषा क्रियान्वयन होन

सैद्धान्तिक परिकल्पनाएं प्रस्तुत कीं। इस सिद्धान्त की प्रमुख मान्यता यह है कि अपराध केवल राजनैतिक विषय है और मार्क्स की विचारधारा का अनुसरण करते हुए यह मानता है कि अपराधी कहे जाने वाले व्यक्ति समाज की राजनैतिक एवं आर्थिक परिस्थितियों के अधीन रहते हैं।

अपराध के संघर्षवादी सिद्धान्त की यही मान्यता ही इसका सबसे बड़ा दोष है क्योंकि सामाजिक मान्यताएँ राजनैतिक मान्यताओं की पर्यायवाची नहीं होतीं।

(16) अपराध का बहुकारकवादी सिद्धांत

अपराधशास्त्रियों द्वारा अपराध कारण एवं कारणों की व्याख्या हेतु अनेक प्रयत्न किये गये हैं किन्तु अभी तक सर्वमान्य व्याख्या प्रस्तुत करने में सफलता नहीं मिलने के कारण आपराधिकता के कारणों की व्याख्या हेतु [illegible] सिद्धांत प्रतिपादित किया गया। हीले, सिरिल बर्ट व [illegible] इस विचारधारा के प्रमुख प्रणेता रहे हैं। आपराधिक बहुकारक सिद्धान्त की यह मान्यता है कि [illegible] उपादानों के संयुक्त प्रभाव के कारण ही मनुष्य में आपराधिक प्रवृत्ति [illegible] है जिसे किन्हीं निश्चित प्रवर्गों के रूप में नियमबद्ध नहीं किया जा सकता। [illegible] अपराधों की घटनाएं विभिन्न परिस्थितियों के [illegible] हैं। प्रसिद्ध अमरिकन अपराधशास्त्री विलियम [illegible] बालक एक या दो कारणों से अपराध करने को बाध्य नहीं होता, [illegible] अनेक कारण होते हैं। इसी प्रकार सिरिल बर्ट का मत है कि [illegible] प्रमुख मानकर अपराध की व्याख्या नहीं की जा सकती, [illegible] कारकों के संयोग से घटित होता है। [illegible] अपराधों में अलग अलग रूप में [illegible] है। [illegible] प्रभावक भिन्न है—(1) [illegible], (2) [illegible], (3) व प्रभावक जो उपस्थित रहते हुए [illegible] इस सम्बन्ध में [illegible] का मत है कि [illegible] अध्ययन में इन बहु कारकों के [illegible], [illegible] कारकों में से एक दूसरे [illegible] कारक कभी भी [illegible] है। [illegible] वालों का कहना है कि [illegible] परिस्थितियों के [illegible] जिसका [illegible] सकता। [illegible] है कि [illegible] अनुसन्धान [illegible] है कि [illegible] अपराध [illegible] नहीं [illegible]।

अलबर्ट काहन आदि अपराधशास्त्रियों ने विविध उत्पादनों के सिद्धांत का निम्नांकित आधारों पर खण्डन किया है। उनके अनुसार विविध उत्पादनों के सिद्धांत को मान्यता देने वाले अपराधशास्त्रियों की यह सबसे बड़ी भूल है कि वे अपराध के उपादानों एवं कारणों में भेद नहीं समझ पाते हैं।

निष्कर्ष

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि अपराध सम्बन्धी विविध सिद्धान्तों के विवेचन में यह स्पष्ट है कि अपराध का कोई एक सिद्धांत पूर्णरूप से आपराधिक व्यवहार के—क्यों ? प्रश्न का उत्तर नहीं दे पाते। अतः आपराधिकता के विविध कारणों को किसी एक सिद्धान्त में न खोजकर अपराध के विभिन्न सिद्धान्तों द्वारा प्रतिपादित कारणों में ढूंढना होगा।

हमारे विचार

हमारे विचार में आपराधिक व्यवहार एक जटिल प्रक्रिया है केवल विविध कारणों का समुच्चय नहीं किन्तु यह अवश्य है कि विविध कारण इस प्रक्रिया में योगदान अवश्य देते हैं। अतः अपराध के कारणों को ढूंढने के अभियान में हमें यह बात ध्यान में रखनी होगी। अतः अपराध क्या ? या अपराध के क्या कारण ? प्रश्न के उत्तर में हमारे विचार निम्नांकित हैं—

'वास्तव में मनुष्य एक जैवकीय मनो एवं सामाजिक जीव है। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक वुडवर्थ के अनुसार व्यक्ति वंशानुक्रमता एवं वातावरण की उपज है। आनुवंशिकता में ये सभी जैविक व बौद्धिक लक्षण सम्मिलित हैं जिनको लेकर व्यक्ति इस संसार में जन्म लेता है और जिनका विकास वातावरण की अन्तर्क्रिया में व्यक्तित्व के रूप में होता है। अपराध कृत्य भी व्यक्ति के अन्य कृत्यों की तरह एक क्रिया है। व्यक्ति का व्यवहार या कृत्य उत्तेजना के विरुद्ध व्यक्ति द्वारा प्रदर्शित प्रतिक्रिया मात्र है किन्तु जो प्रतिक्रिया व्यक्त करता है, उसकी व्यक्तिगत विशिष्टताओं पर आधारित है। इस कारण एक उत्तेजना के प्रति सभी व्यक्तियों की प्रतिक्रिया समान नहीं होती। इसके साथ व्यक्ति की प्रतिक्रिया में पर्यावरणीय तत्व भी अपनी विशिष्ट भूमिका निभाते हैं। यही कारण है कि बदली परिस्थितियों में एक व्यक्ति की प्रतिक्रिया उसी उत्तेजना के प्रति विभिन्न हो सकती है। इस प्रकार व्यक्ति के व्यवहार को जो तत्व प्रभावित करते हैं वे हैं—(अ) व्यक्तित्व सम्बन्धी, बहुलक्ष्य शारीरिक मानसिक व आनुवंशिक, (ब) पर्यावरण।

आपराधिक व्यवहार की समझ में भी यही प्रक्रिया अपनाई जा सकती है। आपराधिक व्यवहार को जन्म देने वाले विभिन्न कारकों को दो भागों में बांटा जा

अध्याय-2

अपराधी नारी-व्यवहारिक अध्ययन

नारी अपराधी क्यों ?

सामान्य रूप से अपराध की अवधारणा व विविध कारणों की व्याख्या के आधार पर ही नारी अपराध क्यों करती है ? प्रश्न का उत्तर सम्भव है । इसी प्रश्न से जुड़ा है भारतीय नारी अपराधी क्यों ? प्रश्न का उत्तर ।

नारी आपराधिक व्यवहार की व्याख्या हेतु पश्चिम मे 20वी शताब्दी के प्रारम्भ से ही अध्ययन किये गये हैं और अब तक लगभग 10 अध्ययन विविध अपराधशास्त्रियों द्वारा नारी आपराधिक व्यवहार की व्याख्या हुतु किये गये है । सवप्रथम 1903 म लोम्ब्रोसो का फीमेल ऑफेण्डस नामक अध्ययन प्रकाशित हुआ, जिससे लोम्ब्रोसो ने पुरुषो के समान ही स्त्रियो मे जवकीय तत्वो को ही अपराध का कारण माना । इसी क्रम म अपनी इसी नाम की पुस्तक दी फीमेल आफेण्डस" (1920) म लोम्ब्रोसो ने दण्डित अपराधी महिलाओ व वेश्याओ के मस्तिष्क की बनावट लम्बाई मसे व वजन आदि की तुलना सामान्य महिलाओ के मस्तिष्क की बनावट लम्बाई व गहरे बाल आदि से की और जो भी विशिष्टताए सामान्य रूप से अपराधी महिलाओ मे मिली उनको आदि लक्षणा की सज्ञा दी जिनको ही उसने अपराध का कारण माना । उसके अनुसार महिलाए पुरुषो की अपेक्षा शारीरिक व मानसिक दोनो ही प्रकार से हीन हैं वे परिवार म भार्या की भूमिका निभाते निभाते आराम पसन्द हो जाती हैं किन्तु उनको पुरुष द्वारा सम्पत्ति समझे जाने पर वे सम्पत्ति सम्बन्धी अपराध करन से नहीं झिझकतीं ।

डब्ल्यू आई टोमस ने दो रचनाए---(1) सेक्स एण्ड सोसायटी (1907) और अन एडजस्टेड (1923) प्रस्तुत का जिनमे उसने महिला आपराधिकता के सम्म में लोम्ब्रोसो द्वारा दिय गये जवकीय कारणो के विवेचन के साथ साथ सामाजिक व मनोवैज्ञानिक कारणों का भी समावेश किया उसके अनुसार यद्यपि सामान्य स्त्रियो म भी नैतिक हीनता प्रतिशोध व ईर्ष्या जसी भावनाए मिलती हैं तथापि उनम उसके साथ-साथ दया मातृत्व भावुकता उपशापन अविकसित बुद्धि आदि

कमजोरी मन्दि होने के कारण उक्त उनी कनिष्ठा अनवहीन हो जाती है। इनके विपरीत अपराधी महिलाओं को अपराध क्षेत्र में पुरुषों की अपेक्षा कहीं अधिक उचित होता क्योंकि अपराधी महिलाओं की शारीरिक बनावट स्वभाव को बल दे देने वाले पुरुषों से मिलते है और निम्नांकित गुणों का अभाव व पुरुषोचित गुणों की प्रचुरता के कारण ही ये महिलाएं अपराध करती हैं। इनके अतिरिक्त स्त्रियां पुरुषों की तुलना में हीन होती हैं जिसके कारण स्त्रियों की काम स्वतंत्रता का हनन होता है और इसी कारण स्त्रियों के लिये समाज मे नैतिकता के दोहरे मापदण्ड काम मे लिये जाते हैं। पुरुष के सन्दर्भ में नैतिकता समाज को स्वस्थ बनाये रखने के लिये एक समझौता मात्र है जिसके कारण ही स्त्री को पुरुष की सम्पत्ति माना जाता है, जबकि नारी के सन्दर्भ में एकल परिवार मे एक पुरुष विशेष से समायोजन करना नैतिक आवश्यकता है।

टोमस का यह भी मानना है कि मानवीकृत होने के कारण व आदिम इच्छाओं का उदात्त कर अच्छा व्यवहार करना जानने के कारण मध्यवर्गीय स्त्रियां सामान्यतः अपराध नहीं करतीं। गरीबी के सदर्भ मे भी यह धारणा है कि कम से कम जीवन यापन के लिये कोई महिला अपराध नही करती, किन्तु नैतिकता के प्रति उदासीन महिलाए नवीन अनुभव से प्रेरित होकर उत्तेजना के वशीभूत अपनी शरीर का सौदा कर बैठती हैं।

प्रसिद्ध मनोचिकित्सक फ्राइड ने अपनी प्रसिद्ध कृति 'एनोटमी इज डेस्टिनी' में महिला आपराधिकता के सम्बन्ध मे मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक संरचनात्मक कारकों से नव्य वैचारिक आधारशिला तैयार की। उसके अनुसार जैवकीय दृष्टि से स्त्री पुरुष से हीन है। उसके अनुसार बचपन मे लड़की की यह धारणा बन जाती है कि उसका पुरुष लिंग दण्डस्वरूप खो गया है जिस अभाव की पूर्ति वह सजधज कर करती है। अपराधी स्त्री पुरुष होने का प्रयास करती है, वह आक्रामक विद्रोही भावुक व कामुक होती है। पुरुष जिस काम भाव को उदात्तीकरण के माध्यम से सामाजिक व व्यक्तिगत आवश्यकतानुरूप अपने व्यवहार को समुचित कर लेता है वहीं पर कामातुर महिला भावुकता मे सही निर्णय न लेने के कारण अपराध जैसे कृत्य कर बैठती है।

1961 मे किंगसले डेविस की वेश्याओं पर लिखी कृति महिला आपराधिकता के क्षेत्र म एक महत्वपूर्ण अध्ययन माना जाता है। उसके अनुसार समाज मनुष्य को विविध काम इच्छा की पूर्ति की स्वीकृति नहीं देता, जिससे मनुष्य अपनी स्वाभाविक काम भावना का दमन न कर वेश्यावृत्ति के माध्यम से अपनी विविध कामेच्छा की तृप्ति करता है और वेश्या जैसी महिलाएं भी काम अपराध अपनी कामुकता

की पूर्ति हेतु करती हैं जिसमे वेश्याओं के लिये आर्थिक कारक इतना महत्वपूर्ण नही होता।

आटोपोलक ने अपनी रचना 'दी क्रिमिनेलिटी आफ वीमन (1950) में छद्म महिला अपराध के सिद्धांत का प्रतिपादित किया है। उसके अनुसार महिलाएं स्वभाव से धोखेबाज होती हैं जिससे वे स्वयं अपराध न कर अपराध के प्रेरक तत्व के रूप में कार्य करती हैं। वह स्त्री स्वभाव की विवेचना के आधार पर ही अपराधों को परिभाषित करता है।

इसी परम्परा में कोनोप्का ने 'एडालसेंट गर्ल इन कान्फ्लिक्ट' (1966) में यह माना है कि बालिकाएं एकाकीपन व निर्भरता के कारण औपचारिक व्यवहार की ओर अग्रसर होती हैं जबकि वेडर और सोमर विल (1970) ने काली महिलाओं में आपराधिकता अधिक ढूंढते हुए बालिकाओं में औपचारिकता का कारण सामान्य स्त्रियोचित भूमिकाएं नियम में अन्य व्यवधान से उत्पन्न कुसमायोजन को माना है।

कोवी गार्वी और स्लेटर (1968) ने क्रोमोसोम की व्याख्या के आधार पर महिला आपराधिक व्यवहार को समझाते हुए यह माना है कि जैवकीय व मनोवैज्ञानिक दानों ही आधार पर एक अपराधी महिला सामान्य महिला से अलग होती है और उसमे पुरुषोचित गुण जसे आक्रामकता विद्रोह साहसिक कार्य करने की इच्छा आदि होते हैं जिससे वह पुरुषोचित अपराध करती है, किन्तु अन्य स्त्रियोचित अपराध प्रेम मे मिली निराशा के कारण करती है।

इस प्रकार हम देखते है कि उक्त सभी पाश्चात्य अपराधशास्त्रियों ने महिला आपराधिक व्यवहार का विवेचन करते हुए नारी के अस्तित्व व चरित्र के एक काम' पक्ष को ही महत्व दिया है और उनके अनुसार कम व अधिक नारी की काम भावना ही सभी अपराध जसे समस्यामूलक व्यवहार की जड में है। अत उक्त पाश्चातीय विवेचन सीमित सीमाओं में है। भारतीय सामाजिक व सांस्कृतिक परिवेश मे भारतीय अपराधी नारी के संदर्भ में विचार करने पर अन्य और भी जवकीय मनोवैज्ञानिक आर्थिक सामाजिक व राजनीतिक कारण हो सकते हैं जो भारतीय नारी को अपराधी बनाने में प्रत्यक्ष व परोक्ष में प्रभावी प्रेरक, अवसादायी या सहयोगी भूमिका कारक हो। आपराधिक नारी व्यवहार के संदर्भ मे विविध आपराधिक कारणों की विशद विवेचना लेखक की पुस्तक महिला आपराधिकता एवं पुनर्स्थापन' (पृष्ठ 115 से 136) मे किया गया है, जो अप्राकित रूप में उद्धृत है—

अपराधी नारी

हमारा व्यवहारिक अध्ययन

नारी अपराध क्यों करती है ? यह स्वाभाविक जिज्ञासापूर्ण प्रश्न है जिसके बारे में सभी जानना चाहते हैं। इस प्रश्न के विविध विवेचन के पश्चात व्यवहारिक रूप में जानकारी प्राप्त करने हेतु महिला बन्दी गृह, जयपुर राजस्थान में निरुद्ध महिला बन्दियों का सर्वेक्षण किया गया। 31 दिसम्बर 1987 को जितनी महिला बन्दी निरुद्ध थी उनके बारे में जानकारी एकत्रित की गई। एक प्रश्नावली के माध्यम से जानकारी ली गई। महिला बन्दियों का साक्षात्कार लिया गया एवं अन्य शोध तकनीकें भी काम में ली गई। उपलब्ध 42 महिला बन्दियों के बारे में शोधपूर्ण सामग्री एकत्रित की गई एवं अध्ययन के आधार पर जो निष्कर्ष निकले उनका विवेचन निम्नांकित है—

1 अध्ययनान्तर्गत 42 महिला बन्दी में से 37 महिलाएं हत्या व हत्या के सहयोग व षड्यन्त्र सम्बन्धी धाराओं में दण्ड भुगत रही हैं। 3 महिलाएँ बन्दी हत्या के साथ में आत्महत्या व 2 महिलाएं आत्महत्या दुष्प्रेरण के अपराध में दण्डित हैं। हत्या के अपराध के अन्तर्गत अन्य और किसी अपराध से दण्डित महिला बन्दी उपलब्ध नहीं हुई।

2 42 अपराधी महिलाओं में 4 महिलाओं द्वारा एक से अधिक व्यक्तियों की हत्या का अभियोग सिद्ध हुआ है जबकि 38 महिलाएं एक व्यक्ति की हत्या के अपराध में दण्ड भोग रही है जिनमें एक प्रकरण में सास बहू सब अभियुक्त दोषी हैं। 37 महिलाएं हत्या व हत्या के सहयोग व षडयन्त्र के अपराध में 3 महिलाएं हत्या व साथ में आत्महत्या के अपराध में व शेष 2 महिलाएं आत्महत्या के लिये दुष्प्रेरित करने के अपराध में दण्डित होने से सजा भुगत रही है। दो महिलाओं के अतिरिक्त शेष 40 आजन्म कारावास के दण्ड से दण्डित है।

3 सभी 42 बन्दियों में से केवल एक मात्र महिला बन्दी साक्षर है और शेष सभी हत्या के समय निरक्षर महिलाएं थी। इन महिला बन्दियों में से केवल दो महिला बन्दी नगरवासी हैं शेष सभी ग्रामीण क्षेत्र की महिला बन्दी हैं।

4 सभी 42 महिला बन्दियों में से केवल एकमात्र महिला बन्दी पंजाब निवासिनी है। शेष 41 महिला बन्दी राजस्थान प्रान्त के विभिन्न ग्रामीण क्षेत्रों की निवासिनी है। जिले के निवास के अनुसार कोटा जिले–1 डूंगरपुर–3 अलवर–1, पाली–3 सीकर–3 चुरू–2 भरतपुर–1 बीकानेर–3 उदयपुर–2 बांसवाडा–2 सिरोही–2 नागौर–2 जयपुर–2 भीलवाडा–1 अजमेर–3 झुंझुनु -4

गगानगर–5 जोधपुर–1 टोंक–1 की निवासिनी हैं। सबसे अधिक सख्या गगानगर (5) की है जिसके पश्चात् झुंझुनू (4) जिले की है तत्पश्चात् पाली (3), सीकर (3), बीकानेर (3) जिले से है। शेष 2 और 1 की सख्या में हैं। राजस्थान म गगानगर क्षेत्र अन्य क्षेत्रो की तुलना मे अपराध की दृष्टि से आगे है। यह बात महिला बदियो की सख्या से सिद्ध होती है। कुल 42 महिलाओ म से गगानगर (5) झुंझुनू (4), सीकर (3) चुरू (2) व बीकानेर (1) = 15 महिला बदी इस क्षेत्र स है और शेष राजस्थान के अन्य क्षेत्रो से हैं।

5 धम के सदभ म 42 महिलाओ म मे केवल एक मात्र महिला मुस्लिम है और शेष सभी हिन्दू धर्मावलम्बी हैं। जाति की दृष्टि से सभी जाति की महिलाए हैं जिनम सामान्य जाति (30) अनुसूचित जाति (6) व जनजाति (5) की महिला बदी हैं। सामान्य जाति की 30 महिला बदियो मे सर्वाधिक सख्या जाट जाति (9) की महिला बदियो की हैं किन्तु राजपूत जाति की एक भी महिला बदी नही है, जबकि ब्राह्मण जाति की 3 व वश्य जाति की 2 महिला बदी है। शेष अन्य जाति की हैं। अपराध और जाति एव धम का कोई सम्बन्ध नही होता और न अपराधी का कोई धर्म होता है और न जाति। अपराधी की एक जाति व धम है—वह है अपराधी होना अपराध करना। फिर भी धर्म व जाति की जो परम्पराएँ व रीतियां है वे अपराधमूलक परिस्थितियां उत्पन्न करती हैं जिनके वशीभूत अपराध हो जाते है।

महिलाए अपराध करती हैं या महिलाओ से अपराध हो जाते हैं—धम व जाति के सदभ मे यह एक विचारणीय परिमेय है। इस सदभ म भारतीय सामाजिक पृष्ठभूमि म विचार करने पर प्रथम दृष्टया तो यही कहा जा सकता है कि अधिकाश प्रकरणो मे सामान्यतया महिलाए अपराध नही करती। उनसे अपराध हो जाते हैं और जिन प्रकरणो में महिलाए अपराध करती हैं वह उनकी विवशता होती है। व्यक्तिगत व सामाजिक परिवेश प्रदत्त परिस्थितियो म उनसे अपराध हो जाता है या फिर अपराध करन पर विवश हो जाती है उनके सामन अपराध करने के अतिरिक्त अन्य विकल्प नही होता। विशेष जातिगत परम्पराए, रूढ़िया, धार्मिक रीति रिवाज परिस्थितियो को उत्पन्न करते हैं जिनके वशीभूत महिलाए अपराध कर बैठती हैं उनसे अपराध हो जाता है।

6 व्यक्तिगत व परिवेशगत महिला आपराधिक कारणों की व्याख्या करने की आवश्यकता है। विवेचनात्मक अध्ययन के आधार पर आपराधिक प्रकरणो के आधार पर निम्नांकित स्थिति प्रकट होती है—

42 अपराधी महिलाओ के अध्ययन पर यह स्पष्ट हुआ कि 17 महिलाए पति हत्या 10 बहू हत्या 3 स्वय के बच्चे 8 निकट सम्बन्धी व 4 अन्य असबधित

व्यक्तियो की हत्या सहयोग/प्रेरणा के अपराध मे सिद्ध दोष होने से दण्ड मुगत रही हैं। प्रत्येक महिला अपराधी के साथ हत्या के जो कारण व कारक हैं उनकी विवेचना निम्नांकित रूप से है —

6 (अ) पति हत्या

(1) अपराध कारण—वतमान अध्ययन मे 17 अपराधी महिलाए पतियो की हत्या के दोष म दण्डित हैं। 17 महिला बदियो मे से 13 महिलाओ द्वारा अपराध करना स्वीकार किया जबकि 4 महिलाओ द्वारा अपराध करना अस्वीकार किया। 4 महिलाओ मे से चारों महिलाओ द्वारा अन्य व्यक्तियो द्वारा हत्याए की गई बताई और उनके नाम अभियोग लगाना बताया गया। एक महिला द्वारा हत्या का कोई कारण भी नही बताया गया जबकि 3 मे से एक ने बताया कि उसके अन्य व्यक्ति से अवध सम्बन्ध बताये गये। पति की हत्या अ य व्यक्ति द्वारा की गई और उसको भी सह अभियोगी बनाया गया। दूसरी महिला द्वारा बताया गया कि उसका पति आयु में छोटा था। वह नाना के यहा गोद चला गया था, आपसी रजिश म मारा गया। कम आयु की होने से अपराध स्वीकार कर लिया। तीसरी महिला द्वारा बताया गया कि पति व चाचा का जमीन पर झगडा था। चाचा का लडका उसके पति को उसके ननिहाल ले गया। पति की लाश 1-1½ माह बाद मिली। फिर भी पत्नी को अपराधी को बचाने मे झूठी गवाह व अपराध करने के दोष सिद्ध होने पर दण्डित किया।

शेष जिन 13 महिलाओ ने पति हत्या अपराध स्वीकार किया उनमे से 7 महिलाओं ने पति हत्या का कारण अन्य व्यक्तियो से अवध सम्बन्ध होना बताया। अवध सम्बन्धो म 7 महिलाओ मे से 2 महिलाओ के सम्बन्ध तो अन्य असम्बद्ध व्यक्ति से थे, इनम से एक महिला के अवध सम्बन्ध स्वय के मित्र से थे जबकि एक महिला के सम्बन्ध पति के मित्र से थे। शेष 5 महिलाओ के अवध सम्बन्ध स्वय के सम्बन्धियों से थे। इन 5 महिलाओ मे से 2 महिलाओ के अवध सम्बन्ध स्वय के देवरो के साथ थे जबकि 1 महिला के सम्बन्ध उसकी पुत्री के जेठ 1 महिला के सम्बन्ध स्वय के जेठ व 1 महिला के सम्बन्ध स्वय के जीजा से थे। शेष 6 महिला बदियो ने पतियो से असन्तोष को हत्या का कारण बताया। इन 6 महिला बदियो मे से एक महिला बदी द्वारा पति हत्या का कारण पति के अवध सम्बन्ध पति की भाभी के साथ होना बताया जिसकी यातना असहनीय होने से पति की हत्या कर दी गई। शेष 5 प्रकरणो मे पतियो से असन्तुष्टि के विभिन्न कारण बताये गये जिनम स 4 महिलाओ द्वारा हत्या का मुख्य कारण पतियो का शराबी होना व उनके साथ मारपीट करना तथा घर का सामान बेचकर शराब पीना व कमाकर न लाना आदि बताये गये 1 महिला द्वारा पति से असन्तोष का कारण यह बताया गया कि उसकी

शादी उसके पति से उसकी इच्छा के विरुद्ध हो गई और उसका पति भी शिक्षित महिला से शादी करना चाहता था। यह महिला जिससे उसकी पूर्व में बात चली उस व्यक्ति को चाहती थी। एक दूसरे से असन्तुष्ट पति-पत्नी का जीवन अभिशप्त हो गया। पत्नी ने पति की हत्या कर दी।

(ii) आयु विवेचन—पति हत्या की अपराधी महिलाओं की आयु सम्बन्धी विवेचन भी आवश्यक है। पति हत्या के समय महिलाओं में सबसे कम आयु की महिला 16 वर्ष की थी और सबसे अधिक आयु वाली महिला 50 वर्ष की थी। 16 वर्षीया महिला ने पति हत्या अपराध करना अस्वीकार किया है जबकि 50 वर्षीया महिला ने अपनी पुत्री के जेठ से अवैध सम्बन्ध होने के कारण प्रेमी के सहयोग से छत से धक्का देकर पति की हत्या करना स्वीकार किया है। पति हत्या अभियोगी महिलाओं की आयु के वर्गानुसार 16 से 20 वर्ष की 6 महिलाएं 21 से 25 वर्ष के वर्ग की 4 महिलाएं 31 से 35 वर्ष आयु वर्ग की 4 महिलाएं व 50 वर्ष की एक महिला द्वारा पति हत्या का अपराध किया। उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि युवावस्था से लेकर प्रौढावस्था में भी महिलाओं द्वारा पति हत्या की 17 महिलाओं में से 11 महिलाएं 16 से 30 वर्ष तक की आयु वर्ग की हैं। शेष 5 में से 4 महिलाएं 35 वर्ष तक की आयु वर्ग व केवल एक मात्र महिला 50 वर्ष की आयु की है। विवाह के पश्चात् जो भावनात्मक अलगाव कुसमायोजन का कारक बना वह अपराध का कारण युवावस्था से लेकर प्रौढावस्था तक भी रहा और एक प्रकरण में तो वृद्धावस्था (50 वर्ष) तक भी कारण बना।

(iii) स्वयं या सहयोग से—क्या पति हत्या महिलाओं द्वारा स्वयं ही की गई या उसमें व सहयोगी थी या इनको सहयोग दिया गया? 17 पति हत्या अपराध सिद्ध दोष महिलाओं में से 13 महिलाओं ने स्वयं ही पति हत्या की जबकि शेष 4 प्रकरणों में उनको सहयोग प्राप्त हुआ। एकाकी पति हत्याकारी 13 महिलाओं में से 6 महिलाओं द्वारा यह नहीं बताया गया कि उन्होंने हत्या किस प्रकार की, जबकि 7 महिलाओं द्वारा विविध प्रकार से की गई हत्याओं की जानकारी दी। 7 महिलाओं में से एक महिला द्वारा तलवार से 2 महिलाओं द्वारा कुल्हाड़े से एक महिला द्वारा लोहे के सरिये से व एक महिला द्वारा फावड़े से वार कर पति हत्या की तो 2 महिलाओं द्वारा बड़ा पत्थर सर पर डालकर पतियों की हत्या की। 4 महिला बन्दी जिनको अपराध में सहयोगी होना व सहयोग प्राप्त करना प्रकट हुआ उनमें से दो महिलाओं द्वारा हथियार की जानकारी नहीं दी किन्तु दो अपराधी महिलाओं में से एक महिला द्वारा बताया गया कि उसने अपने प्रेमी की सहायता से अपने पति को छत पर से धक्का देकर पति हत्या की जबकि दूसरी महिला ने जानकारी दी कि उसके देवर जिससे उसके अवैध सम्बन्ध थे, की सहायता से पति का गला घोट कर

हत्या कर दी। इस प्रकार यह देखा गया कि महिलाओं ने मति... हे सामने जो भी हथियार/साधन उपलब्ध हुए उनका उपयोग कर हत्या जैसा जघन्य अपराध किया।

(iv) ऋतु—महिलाओं द्वारा पति हत्याए किस समय व किस मौसम म की गइ ? अध्ययन से स्पष्ट होता है कि महिलाओ द्वारा पति हत्याए दिन म भी की गई और रात्रि मे भी। 17 महिलाओ मे से एक महिला के अतिरिक्त 16 महिलाओ द्वारा समय व मौसम सम्बन्धी जानकारी दी। एक महिला के अतिरिक्त शेष 16 महिलाओ द्वारा हत्या के समय की जानकारी दी जिनम से 11 महिलाओ द्वारा हत्या का समय रात्रि 8 बजे से अधरात्रि 12 बजे तक का बताया और 4 महिलाओ ने रात्रि 2 बजे तक का बताया और 4 महिलाओ न रात्रि 2 बजे से प्रात 5 बजे तक का समय बताया शेष दो महिलाओ ने पति हत्या का समय क्रमश पूर्वाह्न 11 बजे दिन व अपराह्न 3 बजे बताया। रात्रि मे ही पतियो की हत्या सोते हुए या निश्चिन्त अवस्था मे की गई। जिनमे हत्या का समय बताने वाली महिला अपराधियो न हत्या करना स्वीकार नही किया। रात्रि म पतियो पर हथियार से या भारी पत्थर डालकर छत पर से फेंककर व गला घोटकर हत्याए की गईं। रात्रि म 8 बजे के समय जो हत्या हुई उस पत्नी न धन के लालच मे स्वय के पति सास व ससुर की हत्या की। रात्रि के 10 बजे पति पर भारी पत्थर से पीछे से तीन चार वार वार कर हत्या की गई। शेष हत्याए 11 बजे से अधरात्रि के बीच की गइ।

ऋतु के बारे मे जानकारी ली जाने पर 17 महिलाओ मे से 16 महिलाओ द्वारा जानकारी दी। प्राय सभी ऋतुओ मे हत्याए हुई जिससे यह निष्कर्ष नही निकल पाता कि ऋतु विशेष भौगोलिक दृष्टि से हत्या कारक है। फिर भी 16 प्रकरणो म वर्षा ऋतु मे 6 ग्रीष्म मे 8 व शीत ऋतु मे 2 पति हत्याए हुइ। ग्रीष्म ऋतु मे सर्वाधिक 8 हत्याए हुई जिनम सर्वाधिक 3 हत्याए फाल्गुन माह म, 2 चैत्र में 2 जेठ व एक बसाख मे हुई। वर्षा ऋतु म 6 हत्या प्रकरण मे 2 हत्याए सावन मे 2 आसोज एक भादवा व एक आषाढ म हुई। शरद ऋतु म दो हत्या प्रकरण माघ व पौष माह मे हुए।

कुछ अपराध शास्त्री अपराध के भौगोलिक कारण पर बल देते हैं और उनके अनुसार वर्षा की रंगीनियां व गर्मी मे आक्रोश व नराश्य भाव हत्याओ के कारक बन जाते हैं। इस अध्ययन से सम्बन्धित अपराध के भौगोलिक कारण विश्लेषण की पुष्टि नही होती। पति हत्या मे पत्नी का चरम नैराश्य व दृढ निश्चय परिस्थितिगत होता है जो कि उपयुक्त समय उपलब्धि पर निभर करता है जिसम मौसम विशेष का कोई योगदान नही होता है।

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भावनात्मक कुसमायोजन ही अपराध का मुख्य कारण पाया गया। भावनात्मक कुसमायोजन मे पति का चारित्रिक रूप से भ्रष्ट होने से लेकर शराबी व अत्याचारी होना भी सम्मिलित है। महिलाओ का अन्य पुरुषो से अवध सम्बन्ध होना भी भावनात्मक कुसमायोजन का कारण बना। निकट सम्बन्धियो से अवध सम्बन्ध होना अधिक पाया गया। कम आयु मे विवाह होना इच्छा के विपरीत विवाह होना पति का कम आयु का होना भावनात्मक कुसमायोजन के मुख्य कारण प्रकट हुए। नारी का भटकाव-बहकाव भी चारित्रिक दृष्टि से भावनात्मक कुसमायोजन के मुख्य कारक रहे जो हत्या के कारण बने।

(ब) स्वय के बच्चो की हत्या

अध्ययनागत 42 महिलाओ मे से 3 अभागी महिला भी हैं जो स्वय के बच्चो की हत्याओ के अपराध मे आजीवन कारावास के दण्ड से दण्डित हैं। ये हृदयविदारक प्रकरण उन महिलाओ के हैं जो आक्रोश/निराशावश अपने बच्चो को गोद मे लेकर आत्महत्या करने के उद्देश्य से कुए म कूद गई उनको तो बचा लिया गया किन्तु बच्चे मर गये जिनके हत्या के अभियोग म ये तीनो महिलाए दण्डित की गई। एक प्रकरण म महिला के भाई का विवाह उसकी ननद से हुआ। ननद (पति की बहिन) ने महिला के भाई को छोड दिया व अन्य व्यक्ति से नाता कर गई। अब महिला पीहर गई तो उसके माता पिता न महिला को उसकी ननद के बारे मे बुरा भला कहा। आक्रोश मे महिला अपनी बच्ची को लेकर कुए म कूद गई। वह तो बच गई किन्तु बच्ची मर गई। दूसरे प्रकरण मे महिला के साथ उसका ससुर अवध सम्बन्ध स्थापित करना चाहता था। उसका देवर भी उसके पिता का साथ देता था। पति सीधा प्राणी था जो अपनी पत्नी की सहायता नही कर पाता था। अपने ससुर के गलत इरादे से परेशान व दुखी होकर अपनी जीवन लीला समाप्त करने के उद्देश्य से अपने तीन बच्चो को लेकर कुए म कूद गई। बच्चे मर गए किन्तु स्वय बच्चो की हत्या के अपराध मे दण्डित की गई। तीसरा प्रकरण भी है एक विवश महिला का जो स्वय अन्धी है पति आजीविका कमाने म अक्षम परिवार पर निर्भर जहा उसको प्रतिदिन सयुक्त परिवार मे ताने सुनने पडते अन्धा होने से अपनी अक्षमता पर रोना आता। तग आकर निराश होकर वह भी अपने तीन बच्चो को लेकर कुए म कूद गई वह तो बचा ली गई किन्तु बच्चो की मृत्यु हो गई। आयु की दृष्टि से घटना के समय ये अभागी महिलाए 22 25 व 30 वर्ष की थी। भाग्यहीन विवश नारी जो मातृत्व के लिय न जाने क्या क्या करने को तत्पर होती है मातृत्व को मिटाने पर दण्डित की जाती हैं। सतान को साथ लेकर आत्महत्या करने का उद्देश्य यह बताया गया कि उनकी मृत्यु के पश्चात् उनकी सतान को कोई कष्ट न हो और मातृत्व विहीन नारकीय जीवन न व्यतीत करना पडे और इस प्रकार माँ और सतान को एक साथ जीवन के कष्टो से त्राण मिल सके।

(स) अन्य व्यक्ति हत्या

वतमान 42 अपराधी महिला अध्ययन म 4 महिलाए अन्य असम्बद्ध व्यक्तियो की हत्याम्रो म सिद्ध दोषी हैं। इन प्रकरणो म हत्या के शिकार म तीन हत्याए पडौस के खेत वाले व्यक्तियो की हुई। जबकि एक प्रकरण म गाव के चौधरी की लडकी की हत्या हुई। पडौस के खेत हत्या प्रकरण म महिलाए हत्या मे सहयोगी थी। एक प्रकरण मे सहयोग मे 2 पुत्र व एक प्रकरण म सहयोग मे पति व एक मे पति व पुत्र सहयोगी है। केवल स्वय द्वारा की गई हत्या प्रकरण मे एक महिला दण्डित है उसम गाव की चौधरी की लडकी का तालाब म डुबाकर चोरी के उद्देश्य से हत्या कर दी। इन प्रकरणो मे 2 महिलाम्रो ने अपराध करना स्वीकार किया जबकि दो महिलाम्रो न अस्वीकार किया। ग्रामीण क्षेत्रो मे भूमि विवाद सिंचाई साधन विवाद प्राय होते रहते हैं और उसम परिजनो का सहयोग एक आवश्यक व निश्चित कारक है जो हत्या का कारण बन जाता है। हत्या के सहयोग म सभी महिलाम्रो की आयु 57 58 व 65 वप की अपराध की घटना के समय बताई गई केवल मात्र चोरी के उद्देश्य से चौधरी की पुत्री की हत्या करने वाली महिला की आयु 35 वप की घटना के समय थी बताई गई।

(द) सम्बन्धी हत्या

अध्ययनान्तगत 42 महिलाम्रो मे से 8 महिलाए अपने सम्बन्धियो की हत्या के अपराध से दण्डित हैं। जिन सम्बन्धियो की हत्या की गई उनका विवरण इस प्रकार है—2 प्रकरणो म मामी भाई का साला ससुर व स्वय की पुत्री देवर की पत्नी जिठानी मामा, चाचा व सौत प्रत्येक प्रकरण मे हत्या के शिकार हुए। इन 8 प्रकरणो म से 6 प्रकरणा मे हत्या म अन्य सहयोगी थे जबकि 2 प्रकरणो म महिलाम्रा द्वारा स्वय ही हत्या की गई। जिन दो प्रकरणो मे स्वय ही हत्या की गई, उनम से एक पकरण म महिला की मानसिक स्थिति ठीक नही होने से ससुराल से आकर पीहर मे रहने लगी जो उसकी मामी को अच्छा नही लगा। दोना म अनबन रहने लगी। एक दिन मामी लगभग 9 बजे प्रात आग लगाकर जल गई और मृत्यु से पूव इस महिला के विरुद्ध जलाकर मारने सम्बन्धी बयान दे गई। इस समय महिला की आयु 26 वप थी। दूसरे प्रकरण मे महिला की अपनी जिठानी (पति के बडे भाइ की पत्नी) से अनबन रहती थी। सयुक्त परिवार मे रहने से यह अनबन और अधिक थी। एक दिन प्रात 11 12 बजे के लगभग जिठानी ने आग लगाकर जल गई और इसकी हत्या के अभियाग म यह महिला सजा भुगत रही है।

शेप 6 महिलाए जो सम्बन्धियो की हत्या के अपराध म दण्डित हैं उनम से एक प्रकरण घोर जघन्य अपराध का है जा सहज ही विश्वास नही दिलाता कि

वस्तुत नारी इतनी घोर अपराधी हो सकती है। घटना विवरणानुसार महिला की भाभी ससुराल से तग आकर अपने पीहर चली गई। समझौता कराने के उद्देश्य से भाभी के पिता चाचा व भाई भाभी के ससुराल आये। महिला के भाई व इन व्यक्तियो मे आपस मे वार्तालाप हो रहा था कि इसी बीच इस महिला ने भाभी के भाई पर गण्डास से वार किया और उसकी हत्या कर दी और इसी क्रम मे भाभी के पिता व चाचा की हत्या कर दी जिसमे महिला के भाई ने भी सहयोग दिया। यह हत्या प्रात 9 10 बजे के बीच की थी। जब पडौसियो ने हत्या करते देखा तो अपना अपराध छिपाने के लिये महिला ने अपनी स्वय की पुत्री की भी हत्या कर दी ताकि मृतको पर इसका दोष लग जाये। घटना के समय महिला की आयु 44 वर्ष की थी। यह हृदय विदारक जघन्य अपराध घटना बहुत ही सनसनीपूर्ण है जिसमे मा स्वय अपने मातृत्व का गला भी अपने को निर्दोष साबित करने हेतु घोट सकती है। दूसरे प्रकरण मे प्रात 5 बजे देवर की पत्नी जलकर मर गई। सास व उस (जिठानी) पर जलाकर मारने का आरोप लगाया गया जिस कारण दोनो (सास जिठानी) को सजा हुई। घटना के समय महिला की आयु 34 वर्ष बताई गई। तीसरे प्रकरण मे भाभी का अन्य व्यक्ति से सम्बन्ध था जिसने महिला के मामा को अपने प्रेमी से मरवा दिया और दोष इस महिला पर इसके पति पर व छोटे मामा (देवर) पर लगवा दिया। तीनो ही सजा भुगत रहे है। चौथे प्रकरण मे महिला विधवा होने से मायके मे रहने लगी। भाइयो का झगडा चाचा से हो गया। झगडे का कारण भूमि सम्बन्धी था। झगडे मे भाइयो का साथ दिया। चाची की हत्या हो गई। साथ मे हत्या के अभियोग मे सिद्ध दोष हुई।

पाचवें प्रकरण मे विवाह मे सम्मिलित होने के लिये यह महिला ससुराल गई। विवाह के पश्चात् पीहर मे रुक गई। एक दिन भाभी ने कपडों मे आग लगा ली। वह जल गई। 6 7 दिन तक वह जीवित रही। मृत्यु से पूर्व भाभी ने इस महिला इसकी मा व बहिन को हत्या का अभियोगी बताया। मा व बहिन तो बरी हो गयी किन्तु यह महिला जिसकी आयु घटना के समय 30 वर्ष थी दोषी सिद्ध हुई। घटना का समय दोपहर 12 बजे आषाढ माह का बताया गया। छठे प्रकरण मे रात्रि के 11 बजे अपने चचेरे भाई के सहयोग से अपनी सौत (पति की दूसरी पत्नी) को धन के लालच मे आकर मार दिया। पति की दूसरी पत्नी इस महिला ने घटना के समय 19 वर्ष की कम आयु की होने से चाचा के लडके के कहने मे आकर अपराध स्वीकार भी कर लिया। चाचा के लडके व इस महिला दोनों को सजा हुई।

उक्त विवरण के आधार पर अपराध के विविध कारणो के रूप मे एक प्रकरण मे जमीन के झगडे मे सहयोगी के रूप मे चाचा की हत्या एक प्रकरण मे

धन के लाभ में सौत की हत्या के अपराध की घटनाए घटित हुई । एक प्रकरण म जघन्य अपराध महिला द्वारा किये गये जिसमे स्वय की पुत्री तक की हत्या की । इस अपराध मे महिला की अविवेकपूर्ण अह दम्भी भूमिका स्पष्ट हुई जिसमें उसने निदयता का परिचय देकर स्वय की पुत्री तक की हत्या कर दी । शेष 5 प्रकरणो मे महिलाओ ने अपराध करना स्वीकार नही किया और अपराध मे फसाया जाना बताया । दो प्रकरणों जिनमे भाभियो की हत्याओ का अभियोग सिद्ध हुआ है उनमे मृत्यु से पूव बयानो के आधार पर दण्डित किया जाना बताया गया है विवाहित ननदो की भाभियो की मृत्यु मे क्या भूमिका है ? उनके द्वारा स्पष्ट जानकारी नही दी गई । जिस आयु क प्रकरण है उसमे दहेज जैसा कारक भी स्पष्ट नही हुआ । इसी क्रम मे मामा की हत्या मे महिला की अपराध भूमिका कारक भी स्पष्ट नही हुआ जबकि एक प्रकरण म जिठानी से अनबन होना कारण बताया गया जो कि सयुक्त परिवार म सम्भव हो सकता है जबकि देवरानी की हत्या मे महिला की भूमिका यद्यपि स्पष्ट नही बताई गई तथापि सास के सहयोग मे सयुक्त परिवार की त्रासदी ही प्रतीत होती है ।

(य) बहू हत्या

अध्ययनान्तगत 42 अपराधी महिलाओ म 10 प्रकरण बहू हत्या के हैं । 10 महिलाओ मे से तीन महिलाओ द्वारा हत्या करना स्वीकार किया जबकि 7 महिलाओ द्वारा बहुओ की हत्या करना अस्वीकार किया । उपलब्ध सूचना के आधार पर 4 महिलाओं द्वारा स्वय ही बहू हत्या की गई जबकि 6 प्रकरणो मे हत्या मे अन्य व्यक्ति भी सहयोगी पाय गये । इन 10 महिलाओ म एक महिला अधविक्षिप्त है किन्तु उसने भी हत्या करना स्वीकार नही किया । हत्या के समय आयु सम्बन्धी जानकारी के आधार पर बहू हत्या म सबसे कम आयु वाली महिला हत्या करन के समय 37 वर्षीया थी जबकि सबसे अधिक आयु की एक 60 वर्षीया महिला थी । आयु वग के अनुसार 35—40 वग मे एक महिला 40—45 आयु वग मे 2 महिलाए 46—50 आयु वग मे 3 महिलाए 51—55 आयु वग में एक महिला व 55—60 आयु वग की तीन महिलाए हैं । इन 10 प्रकरणो मे 8 महिलाए बहू हत्या के अपराध मे आजीवन कारावास से दण्डित हैं जबकि 2 महिलाए बहुओं को आत्महत्या के लिय दुष्प्रेरित करने के अपराध म 4 वष के दण्ड से दण्डित हैं । समय सम्बन्धी सूचना के विश्लेषण के आधार पर प्रात लगभग 5 बजे 2 प्रकरण प्रात 6-7 बजे 2 प्रकरण प्रात लगभग 9 बजे एक प्रकरण दोपहर लगभग 12 बजे एक प्रकरण सायकाल 4 बज 2 प्रकरण रात्रि को लगभग 11 बजे 2 प्रकरण घटित हुए बताये गये ।

प्रात 5 बजे घटित घटना के दोनो प्रकरणों म हत्या जलाकर की गई बताई प्रात 6-7 बजे के दो प्रकरणो में से एक म हत्या जलाकर व दूसरे प्रकरण म कुए

में धक्का देकर की गई, प्रातः 9 बजे के प्रकरण में कुल्हाड़ी से मरना बताया गया दोपहर 12 बजे घटित घटना में जलाकर मारना बताया गया सायं 4 बजे के दो प्रकरणों में से एक प्रकरण में जलाकर व दूसरे प्रकरण में फांसी लगाकर मरना बताया गया। रात्रि 11 बजे के लगभग घटित प्रकरणों में से एक प्रकरण में जहर देकर हत्या करना बताया गया जबकि दूसरे प्रकरण में पेट दर्द व उल्टी दस्त से मरना बताया। इस प्रकार 5 प्रकरणों में जलाकर 1 में जहर देकर 2 में कुए में धक्का देकर हत्या की गई। समय और घटनाओं के सम्बन्ध का जहां तक प्रश्न है, कोई तादात्मय स्थापित नहीं हो सका क्योंकि आपराधिक घटनाएं विभिन्न समय पर हुई हैं और विभिन्न प्रकार से हुई हैं।

बहू हत्या के 10 प्रकरणों में 4 प्रकरण में कोई सहयोग नहीं लिया गया बताया जबकि 6 प्रकरणों में विभिन्न व्यक्तियों का सहयोग है। एक प्रकरण में सास व उसकी दूसरी बहू दो प्रकरणों में पुत्रों का सहयोग व एक प्रकरण में पति का सहयोग बताया गया शेष दो प्रकरणों में सहभागियों की सूचना उपलब्ध नहीं हुई। इन 10 बहू हत्या प्रकरणों में से 8 सास महिलाएं तो सीधे ही व दो सास महिलाएं बहुओं को आत्महत्या करने के लिये दुष्प्रेरित करने के अपराध में सिद्ध दोष हैं, उनमें 3 महिलाओं द्वारा बहू हत्या करना स्वीकार किया है। विवेचनानुसार प्रकरण में बहू दुश्चरित्रा थी पर पुरुष से अवैध सम्बन्ध थे समझाने पर भी न मानने पर जहर देकर बहू की हत्या की गई। एक प्रकरण में सास व बहू में अक्सर झगड़ा होता रहता था। एक दिन पानी भरते समय सास ने बहू को धक्का दे दिया जिससे बहू कुए में गिरकर मर गई। सास भी कुए में कूद गई किन्तु वह बच गई। तीसरे प्रकरण में सास अपने पति की दूसरी पत्नी थी। उसके अवैध सम्बन्ध अपने सौतेले पुत्र से हो गये जो कि पुत्र की पत्नी (बहू) को पसन्द नहीं थे। यह कलह का कारण था। एक दिन ईर्ष्यावश सास ने जलाकर सौतेले बेटे की बहू को मार दिया। घटना के समय सौतेली सास की आयु 37 वर्ष बताई गई।

इस प्रकार इन तीनों प्रकरणों में हत्या के विविध कारण रहे बहू का बद-चलन होना, सास का बदचलन होना व एक में सास व बेटे के बीच कुसमायोजन होना। शेष 7 प्रकरणों जिनमें अपराध करना अस्वीकार किया गया है उनमें दो प्रकरण सीधे हत्या के नहीं हैं अपितु बहुओं को आत्महत्या प्रोत्साहित करना है जिनमें

चाहती थी। उसने आत्महत्या फासी का फन्दा लगाकर कर ली। बाद म हत्या का आरोप सास पर लगाया गया। सास को 4 वर्ष के कारावास से दण्डित किया। बहू को आत्महत्या करने के लिये दुष्प्रेरित करने के अपराध म इससे स्पष्ट है कि सास व बहू म कुसमायोजन इस सीमा तक था कि सास की यन्त्रणा सहन न कर बहू आत्महत्या करने पर विवश हो गई।

इस प्रकार उक्त दानो प्रकरणो म पारिवारिक कुसमायोजन व सास महिलाग्रो का बहुग्रो के प्रति क्रूर व्यवहार ही आत्महत्या के कारण बने। इस क्रूर व्यवहार की पृष्ठभूमि म क्या कारण रहे—इन दण्डित महिलाग्रो द्वारा नही बताया गया। इस प्रकार पारिवारिक कुसमायोजन आपराधिक कारण रहे।

शेष 5 प्रकरणो म जिनमे बहू हत्या करना अस्वीकार किया गया उनमे से 4 प्रकरणो मे बहुग्रो का जलाकर हत्या करने का सिद्ध दोष है जबकि एक प्रकरण मे हरिजन जाति की सास महिला द्वारा पेट दद व उल्टी मे बहू का मरना बताया है। एक प्रकरण म घटना के समय 49 वर्षीया सिंधी जाति की सास महिला द्वारा बताया कि उसकी छोटी बहू अलग रहना चाहती थी। पति पर पर स्त्रियो से अवध सम्ब ध होने का लाछन लगाती रहती थी। इस कारण पति द्वारा तिरस्कृत रहती थी। परिवार मे कलह का वातावरण, पति पत्नी म असामन्जस्य के कारण था। एक दिन प्रात 5 बजे आग लगाकर जल मरी। आरोपित हुई सास व उसकी बडी बहू। दूसरे प्रकरण मे वश्य जाति की 53 वर्षीया सास द्वारा बताया गया कि उसका पुत्र सन्तानोत्पत्ति मे अक्षम था। बहू स तान चाहती थी। पति व पत्नी एक दूसरे से असन्तुष्ट थे। पत्नी अलग रहने पर जोर देती थी। पति का उपचार हो रहा था। वह अलग नही रहना चाहता था। निराश पत्नी ने जल कर आत्महत्या की। सास व परिवार के अन्य सदस्य हत्या के अभियोग मे दण्डित हैं। तीसरे प्रकरण म हरिजन जाति की सास महिला द्वारा बताया गया कि वह उल्टी व दस्त से मर गई। इस महिला की उसके देवर से वमनस्य था जिसने महिला के विरुद्ध बहू को मारने की रिपोट लिखवा दी। चौथे प्रकरण मे दारोगा जाति की सास द्वारा बताया गया कि बहू ने जलकर आत्महत्या करली। जलने के पश्चात् 7-8 दिन जीवित रही। मृत्यु से पूव बयान मे बहू न बताया कि सास ने तेल डाला व ससुर ने आग लगाई जिसस दोनो पति-पत्नी सजा भुगत रहे हैं। इस महिला द्वारा वह द्वारा आत्म-हत्या करन का कारण नही बताया। इस प्रकरण म मृतिका ने अपने पति का नाम भी नही लिया। इससे स्पष्ट है कि पति-पत्नी म तो सामन्जस्य था किन्तु सास व ससुर मे कुसामन्जस्य की स्थिति थी। पाचवें प्रकरण मे सास महिला अद्ध विक्षिप्त है। अपराध म उसका पुत्र भी सिद्ध दोष है। अपराध करना स्वीकार नही करती।

उक्त पाच प्रकरणो मे 2 प्रकरणो मे वहू हत्या का कारण नही बताया गया जबकि 3 प्रकरणो मे बहू हत्या अस्वीकार करते हुए भी एक प्रकरण में सयुक्त परिवार में असन्तोषपूर्ण अशान्त कलहपूर्ण वातावरण, जिसमें पति व पत्नी में आपसी असामन्जस्य दूसरे प्रकरण में पति सन्तानोत्पत्ति में अक्षम होने से पति व पत्नी में भावनात्मक असामन्जस्य की स्थिति व तीसरे प्रकरण में परिवार के सदस्यो मे असामन्जस्य व वमनस्य के कारण स्वाभाविक मृत्यु को हत्या का रूप दिया जाना बताया गया।

इस प्रकार उक्त 42 हत्या के अपराध प्रकरणो का विवेचन किया गया जिससे हत्या के मुख्य कारण विभिन्न स्थितियो मे विभिन्न प्रकट हुए। अन्य व्यक्तियो की हत्या के सन्दभ मे भूमिगत विवादो मे सहयोगी की भूमिका के रूप मे हत्याए हुई तो पति हत्या म पत्नी की चरित्रहीनता बेमेल विवाह आदि मुख्य कारण स्पष्ट हुए। अन्य सम्बन्धियो की हत्या मे सहयोगी के रूप मे हत्या प्रकरण म भूमिकाए प्रकट हुई तो वहुओ की हत्या म दहेज जसे आर्थिक कारण के विपरीत पारिवारिक कुसमायोजन दुश्चरित्रता सयुक्त परिवार आसदी मुख्य कारण स्पष्ट हुए।

वस्तुत भारतीय समाज एक परम्पराओ का समाज है एक व्यवस्था का समाज है जिसमे धार्मिक आर्थिक सास्कृतिक व सामाजिक रीतिया है रिवाज है व प्रचलित आस्थाए है। भारतीय समाज की मुख्य आधारशिला है उसकी विवाह सस्था जिसके अनुसार किसी भी स्त्री को विवाहोपरान्त पतिव्रत धम का पालन करना हाता है जीवनपयन्त पति के परिवार म जीवन यापन करना होता है। पति के परिवार की सम्पत्ति के रूप म जीवन यापन करना होता है। परम्परा एक व्यव स्था को ज म देती है और व्यवस्था व्यक्तिगत जीवन का कितनी अनुशासित कर सकती है कर पाती है यह व्यक्तिगत सामन्जस्य पर निभर करता है जो कि व्यक्ति के वयक्तिक गुण व पर्यावरण के बीच हुई अन्तर्नियात्मक सम्बन्धो की देन है। समाज म व्यक्ति अपना जीवन जीता है अपनी वयक्तिक इच्छाओ की पूर्ति करत हुए सामाजिक कल्याण को सर्वोपरि मान कर जीवन जीता है किन्तु ऐसे भी सामाजिक प्राणी हैं जो इन सामाजिक व्यवस्था के साथ व्यक्तिगत इच्छा पूर्ति के साथ समायोजन नही बिठा पात और वे सामाजिक न्याय व्यवस्था के विपरीत विचलित व्यवहार कर बठते हैं। एसा वे इस कारण कर पाते हैं कि सामाजिक परिवेश व उनके वयक्तिक गुण व इच्छाओ मे सामन्जस्य नही बठता। व्यक्ति का समाज उसका परिवेश है जिसम व्यक्ति को एक इकाई के रूप म व्यक्तिगत जीवन जीना होता है जब जीवन की अगडाई कमर तोड हो जाती है तो व्यवस्था को दोष न दियाजाकर व्यक्ति को दोषी माना जाता है और उसको अपराधी आरोपित किया जाता है।

महिला आपराधिकता के विविध कारणों के विवेचन के सन्दर्भ में भारतीय ग्रामीण समाज में जहां जातिगत पारिवारिक मान्यताएं अभी भी सम्माननीय हैं माननीय हैं उनके अन्तर्गत जीवन जीती कुछ महिलाएं अपराधी हो जाती हैं। कुछ तो वैयक्तिक चारित्रिक कमियों के कारण कुछ संयुक्त परिवार सह जीवन यापन में कुसमायोजन के कारण कुछ रूढिगत वैवाहिक बन्धनों में इच्छा विपरीत बेमेल रूप में बंध जाने के कारण कुछ परिवार में अपना वर्चस्व आयु व स्थिति के रूप में अहंकारी भूमिका निभाने के कारण कुछ परिवार के कल्याण के साथ जी जान से सम्बद्ध होने के कारण तो कुछ मायके के साथ अत्यधिक मोह होने के कारण व कुछ वैयक्तिक नैराश्यपूर्ण मानसिक स्थिति के कारण महिलाओं द्वारा अपराध होते हैं।

आपराधिक कृत्य को तो विधि की भाषा अपराध ही कहेगी चाहे कर्ता पुरुष हो या महिला। सामाजिक व्यवस्था में तो जो व्यवधान आता है उसमें लिंग भेद नहीं होता। व्यक्ति से सामाजिक व्यवस्था ऊपर है और व्यवस्था के लिये व्यक्ति का बलिदान किया जा सकता है। इस सामाजिक न्यायिक नीति के अन्तर्गत महिलाओं को भी पुरुषों के समान एक ही दण्डनीय विधानान्तर्गत दण्डित किया जाता है। हमारी दण्ड नीति यह देखती व सिद्ध करती है कि अपराध कैसे हुआ और किसने किया यह नीति यह नहीं देख पाती कि वस्तुतः अपराध क्यों हुआ? अपराध के नियन्त्रण के लिये कारावास के दण्ड के अतिरिक्त अन्य भी उपाय हो सकते हैं। परिस्थिति के वैवश्यपूर्ण दबाव में हुआ अपराध या किया गया अपराध किस प्रकार न्याय की तुला में तोला जाये यह अभी भी केवल चिन्तनीय विषय ही है इसकी नियामिति अभी कल्पना के धरातल पर है।

महिला आपराधिकता के सन्दर्भ में आपराधिक परिस्थितियों पर विचार करना एक आवश्यकता है। अपराध तो समाज में है व्यक्ति तो अपराध करता है यह कथन महिला अपराधियों के सन्दर्भ में बहुत ही सम्यक रूप से विचारणीय है। भारतीय संविधान में कमजोर प्राणियों की श्रेणी में आने वाली महिला वर्ग के प्रति दण्ड नीति में उदार दृष्टिकोण परिवेशगत परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में अपनाया जाना न्यायगत नीति विधान स्वागत योग्य होगा। महिलाओं को अपराधी होने से रोका जाये न्यायगत निरोधात्मक उपाय किये जायें और अपराध होने पर अपराध नियन्त्रण कार्यक्रम में अपराधी महिलाओं को सुधार कर उनको समाज में पुनर्स्थापित किये जाने की नीति अपनाई जानी आवश्यक है।

———

अध्याय - 3

अपराधी नारी पुनर्स्थापन

पूर्वोक्त दण्डित महिला आपराधिक वर्णन व विवेचन से तो स्पष्ट है कि महिलाएं भी अपराध तो करती ही हैं। इन अपराधी महिलाओं के साथ क्या किया जाये ? क्या अपराधी पुरुष व अपराधी महिलाओं में अन्तर किया जाये ? क्या एक प्रकार का अपराध करने पर पुरुष व महिला अपराधियों को समान रूप से दण्डित किया जाये ? महिलाओं को परीवीक्षा पर छोड़ा जाय या फिर सभी प्रकरणों में कारावासीय दण्ड से दण्डित किया जाये ? दण्डित करने का क्या उद्देश्य हो ? उक्त सभी प्रश्नों पर विचार करना आवश्यक है।

अपराधी कोई भी हो चाहे पुरुष या महिला—वह अपराधी ही है और आपराधिक व्यवहार के फलस्वरूप सामाजिक न्यायिक व्यवस्था के सन्दर्भ में आपराधिक नियन्त्रण हेतु अपराधी को दण्डित भी किया जाना आवश्यक है चाहे दण्ड का रूप स्वरूप प्रकार कुछ भी हो। आज के प्रबुद्ध समाज की मान्यता है कि अपराधी को दण्डित तो किया जाना है किन्तु दण्ड का स्वरूप बदले की भावना से प्रेरित होकर प्रतिशोधात्मक नहीं होना चाहिये। अपराध की गम्भीरता को देखते हुए यदि अपराधी को निरुद्ध करना आवश्यक है तो भी करना होगा किन्तु निरुद्ध करने के पश्चात् अभिरक्षा में उसके साथ ऐसा व्यवहार किया जाये—ऐसे कार्यक्रम क्रियान्वित किये जायें कि वह अभिरक्षा से निरुद्ध काल को व्यतीत करने के पश्चात् समाज की न्यायिक व्यवस्था में विश्वास करने वाला उत्तरदायी सामाजिक सदस्य बने, जो समाज में पुनर्स्थापित होकर स्वयं के लिये एवं समाज के लिये उपयोगी जीवन यापन करे। यह दण्ड विधान पुरुष एवं महिला अपराधियों के लिये समानजनक रूप से मान्य है।

इस उदार दण्ड नीति के सन्दर्भ में महिला और पुरुष अपराधियों के लिये जो समान नीति अपनाई गई है महिला अपराधियों के लिए और उदार नीति अपनाई जाना आवश्यक है। महिला अपराधी को यथा सम्भव परीवीक्षा पर रखकर ही उसको आपराधिक उपचार कर सुधार करना चाहिये ताकि सामाजिक परिवेश में

जुड़े रहकर वह परीवीक्षा अधिकारी के संरक्षण पर्यवेक्षण व मार्गदर्शन में अपने आपराधिक मनोवृत्ति से छुटकारा पा सके। परीवीक्षा से सुधारात्मक उपायों की क्रियान्वित के कारण अपराधी महिला पुनर्स्थापन सरल हो जायेगा किन्तु अपराध की गम्भीरता के सन्दर्भ में निरोधात्मक उद्देश्य से कारावासी दण्ड देना आवश्यक हो तो कारावास काल में दण्डित अपराधी महिला के पुनर्स्थापन हेतु नीति अपनाई जानी चाहिये। दण्डित महिला अपराधी के सन्दर्भ में दण्ड नीति क्या होनी चाहिये ? उसके पुनर्स्थापना हेतु क्या किया जाना चाहिये ? इस सम्बन्ध में निम्नांकित बिन्दुओं पर विचार आवश्यक है—

महिला अपराधी पुनर्स्थापना की रूपरेखा

पुनर्स्थापना के अर्थ महत्व व विविध विधियों पर विचार करने के पश्चात् यह विवेचना करना आवश्यक है कि महिला अपराधियों का पुनर्स्थापन किस प्रकार किया जाये ? इसके लिए क्या नीति अपनाई जाये ? क्या विधियां काम में ली जावें ? क्या साधन जुटाये जायें और क्या कार्यक्रम निर्धारित किये जायें व क्रियान्वित किये जावें ?

उक्त प्रश्नों के प्रत्युत्तर के रूप में महिला बन्दियों के पुन स्थापन कार्यक्रम की रूपरेखा निम्नाङ्कित रूप से प्रस्तुत की जाती है।

(1) दण्ड नीति (Penal Policy)

प्रत्येक पुरुष अपराधी को दण्ड दिया जाता है। इसी प्रकार प्रत्येक सिद्धदोष महिला अपराधी को भी दण्ड दिया जाता है। वर्तमान भारतीय दण्डनीति निरोधात्मक है, जिसके उद्देश्य मूलत अपराधी को कारावासीय दण्ड देकर अपराध की पुनरावृत्ति करने से रोका जाना और इस प्रकार अन्य समाज के व्यक्तियों में भय की भावना उत्पन्न कर उनको अपराध करने से रोका जाना है। इस प्रकार वर्तमान दण्ड नीति का एकमात्र उद्देश्य कारावासीय दण्ड के प्रावधान के द्वारा अपराध पर नियन्त्रण करना है।

आपराधिक न्याय व्यवस्था में अपराधियों को दो प्रकार का कारावासीय दण्ड देने का प्रावधान है। कठोर (सश्रम) कारावासीय दण्ड एवं साधारण (अश्रम) कारावासीय दण्ड। इस दण्ड व्यवस्थान्तर्गत अपराधानुसार पुरुष एवं महिलाओं को समान रूप से दण्डित किया जाता है। यदि निरोधात्मक दण्ड नीति की विवेचना महिला अपराधियों के सन्दर्भ में की जाये, तो दण्ड की निरोधात्मक नीति न तो उपयोगी प्रतीत होती है और न ही न्यायोचित और न उपयुक्त ही क्योंकि महिला

अपराधियों के निरोधात्मक उद्देश्यों को ध्यान में रखकर दण्डित करने पर निरोधात्मक नीति के दोनों उद्देश्य (1) अपराध की पुनरावृत्ति की रोकना एवं (2) समाज के सदस्यों में अपराधी को दण्ड देकर डर की भावना उत्पन्न करना, की पूर्ति नहीं होती। इस सम्बन्ध में निम्नांकित तर्क प्रस्तुत हैं—

(1) महिला स्वभाव—आंकड़ों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि पुरुषों की तुलना में महिला अपराधियों की संख्या नगण्य है। महिलाएँ अपराध करने की आदी नहीं होतीं व परिस्थितियों के वशीभूत होकर ही अपराध जैसा कृत्य करती हैं और सामान्यता एक बार अपराध करने पर नारी दुबारा अपराध विपरीत परिस्थितियों के कारण ही करती है। उन परिस्थितियों की समाप्ति पर नारी अपराध नहीं करेगी—ऐसा विश्वास है। नारी के लिए आपराधिकता एक विवशता है पुरुष के समान आत्म सम्मान शक्ति प्रदर्शन आजीविका साधन या रुग्ण मानसिक अवस्था का परिणाम नहीं है। इसके साथ-साथ महिलाएँ स्वभाव से भीरु व धार्मिक प्रवृत्ति की सामाजिक होती हैं वे व्यवस्था में विश्वास करने वाली होती हैं। अतः महिला अपराधियों को दण्ड की पुनरावृत्ति को रोकने के उद्देश्य से दिया गया दण्ड निरर्थक है और इसके साथ साथ महिला अपराधी को दण्ड देकर अन्य महिलाओं में भय की भावना उत्पन्न करना नैतिक दृष्टिकोण से अनुचित है।

(2) नारी शरीर संरचना—निरोधात्मक उद्देश्य से दिये गये दण्ड नीति के अन्तर्गत दो प्रकार का कारावासीय दण्ड दिया जाता है (1) कठोर (सश्रम) कारावास (2) साधारण (अश्रम) कारावास। यह दण्ड विधान पुरुषों एवं महिलाओं के लिए अपराधानुसार समान ही है। जैविक दृष्टि से विचार करें तो पुरुष की अपेक्षा नारी की काया कोमल होती है। उसकी शारीरिक बनावट एवं ऐन्द्रीय स्राव उसको मनुष्य की अपेक्षा कम श्रम करने के लिए विवश करते हैं। दूसरे शब्दों में नारी की शारीरिक बनावट ऐसी है कि वह पुरुष के समान कठोर श्रम करने में सक्षम नहीं है। इसी कारण पारिवारिक व्यवस्था में भी बाह्य जगत के कठोर सश्रम कार्य स्त्रियों के द्वारा न किये जाकर पुरुषों के द्वारा ही किये जाते हैं। स्त्रियों को घर की चार दीवारी के अन्दर ही कामकाज का उत्तरदायित्व दिया जाता है। स्त्रियां केवल कारखाने एवं सरकारी/अर्द्ध सरकारी क्षेत्रों में भी लिपिक, टेलीफोन गर्ल स्टेनो अध्यापक के रूप में ही काम करती हैं। अधिकारी के रूप में कार्य करने वाली स्त्रियों को भी साधारणतया एवं सामान्यतया वे कार्य नहीं दिये जाते जिनमें (फील्ड ड्यूटीज) बाह्य क्षेत्र के कर्तव्य निष्पादित करने होते हैं। इस प्रकार शारीरिक बनावट को दृष्टिगत रखते हुए महिलाओं के लिए पुरुषों के समान सश्रम कठोर कारावास का प्रावधान रखना न्यायसंगत नहीं है। व्यवहार में महिला अपराधियों से पुरुष

प्रकृति वाले काय नही कराये जाते हैं किन्तु न्यायिक दृष्टिकोण से दोनो वग के जनो के लिए दण्ड प्रावधान समान ही है। अत पुरुष के समान कठोर सश्रम कारावास के उद्देश्य से ही महिला को दिया गया दण्ड न्यायोचित नही है।

(3) नारी मानसिकता—मनोवज्ञानिक दृष्टि से दखने पर भी पुरुष व नारी की मानसिक सरचना (Mental f ame work) मे भी अन्तर है। नारी का पालन-पोषण करते समय उसको मानसिक रूप से समाज म एक अच्छी पुत्री व गृहिणी व माता की भूमिका निभाने के लिए तयार किया जाता है। स्त्री शिक्षा म यह प्रावधान विशेष रूप से रखा जाता है कि उनको परिवार म (dominating role) अधिशासी भूमिका निभाने के लिए तयार न किया जाकर सहचरी की भूमिका निभाने के लिए तयार किया जाये, उनम समपण की भावना अधिक पाई जाती है जो पारिवारिक सामजस्य के लिए आवश्यक समझा जाता है। इसके अतिरिक्त महिलायें पुरुषो की अपेक्षा अधिक सवेदनशील (sensitive) एव भावुक (emotional) तथा (sentimental) सवेगात्मक होती हैं। किसी न ठीक ही कहा है—

'The power of men is the patience of women'

पुरुष की शक्ति महिला की सहिष्णुता होती है किन्तु व्यवहारिक रूप से यह देखा जाता है कि पुरुष की शक्ति के सामने नारी की सहिष्णुता की एक सीमा होती ह। उस सहिष्णुता की लक्ष्मण रेखा के अतिक्रमण होने पर नारी की सहनशीलता की पराकाष्ठा उसका आशातीत रूप से विद्रोही बना देती है किन्तु यह नारी मनोविज्ञान की विशिष्टता है कि भावात्मक रूप स नारी जितनी शीघ्रता से उत्तेजित होती है उतनी ही गति से शान्त भी होती है। सवेगात्मक दृष्टि से नारी की भावना का ज्वार शान्ति रूपी निधि की कलाओ के तिरोहण के साथ-साथ त्वरित गति से मन्द हो जाता है। यदि भावावेश म नारी अपराध जसा कृत्य करती है तो दूसरे क्षण ही वह टूट भी जाती है और पश्चाताप की अग्नि मे जलने लगी है। उसका भरवी रूप शीघ्र तिराहित हो जाता है। उसका मन आपराधिक भार को अधिक समय तक वहन नही कर सकता और वह टूट जाती है। इस प्रकार देखते हैं कि नारी अपराध को बहुत जल्दी स्वीकार करती है और नारी के विरुद्ध लगाये गये अभियोग बहुत जल्दी सिद्ध होते हैं। इस प्रकार निरोधात्मक दृष्टि से लम्बी अवधि के लिए दिये गये कारावसीय दण्ड की आवश्यकता महिलाओ के सदभ मे सम्यक प्रतीत नही होती है।

(4) सामाजिक भूमिका—सामाजिक दृष्टिकोण से विचार करने पर नारी किसी समाज की सस्कृति की धरोहर है वह परिवार की मुखिया तो नही अपितु

आधारशिला अवश्य है। भारतीय नारी की परिवार म मुख्य भूमिका गृहिणी की होती है जबकि आजीविका उपाजन का काय पुरुष को करना होता है। वह अपने काय द्वारा परिवार की आय मे वृद्धि कर सकती है किन्तु उसका मुख्य काय परिवार की देखभाल करना है न कि भरण पोषण के साधन जुटाना। उसकी मुख्य भूमिका एक पत्नी व मा के रूप मे है और वह पति के परिवार के सदस्यो के बीच सम्बन्ध सूत्र की कडी भी होती है। पति की सामाजिक प्रतिष्ठा की धनी भी होती है। उसके चरित्र के आधार पर ही पति का परिवार जाति समूह व समुदाय म आदर होता है और उसकी मान प्रतिष्ठा भी बढती है। एक गृहिणी की भूमिका के साथ साथ स्त्री को मा की भूमिका भी निभानी पडती है। उसके उदर म राष्ट्र की भावी (future generation) सतति पलती है उसके आचल म ही राष्ट्र की भावी संस्कृति हिलोरे लेती है। उसके आगन मे ही राष्ट्र की भावी समृद्धि खेलती है। एक माता के रूप म वही स्त्री अधिक कमनीय है जो अपनी सन्तान को (emotional security) भावनापूण सुरक्षा द सके सुखद भविष्य के निर्माण के लिए प्रेरणा दे सके सद्चरित्रता का व्यवहारिक पाठ पढा सके। माता पिता के सम्बन्ध जितने मधुर होगे उनका प्रेम व सामीप्य जितना अधिक व मधुर होगा उनके सम्बन्ध जितने सुखद व सुदृढ होगे उस परिवार के बालको का सामाजिक व मनोवैज्ञानिक विकास उतना ही अच्छा होगा। अत उक्त के सन्दभ मे परिवार के लिए स्त्री की जितनी आवश्यकता होती है, उतनी पुरुष की नही। पिता का अभाव तो माता पूरा कर सकती है, किन्तु माता का अभाव सन्तान के लिए पिता पूरा नही कर सकता। जसा कि कहा गया है कि ससार म मा का कोई विकल्प नही है। मा के रूप मे स्त्री को परिवार से अलग करने पर सन्तान पर नियन्त्रण समाप्त हो जाता है और देखरेख के अभाव म परिवार नष्ट हो जाता है। यदि अपराध करने पर महिला को कारा-वासीय दण्ड से दण्डित किया जाता है तो महिला को परिवार से अलग होना पडता है जिसके अभाव म सन्तान दण्डित होती है परिवार कुसयोजित होता है और विश्रृखलित हो जाता है।

अत निरोधात्मक दृष्टिकोण से महिला को दिया जाने वाला कारावासीय दण्ड अपराध को रोकने के स्थान पर अपराध को और बढावा देता है। पत्नी की अनुपस्थिति मे पति निरकुश हो जाता है अपनी अविवेकीय काम इच्छाओ की पूर्ति हेतु अपराध करता है। माता के अभाव मे सन्तान सरक्षणहीन हो जाती है और बुरे व्यक्तियो के ससग मे आकर अपराध करने लग जाते हैं।

उक्त तथ्यो के आधार पर यह कहा जा सकता है कि वतमान निरोधात्मक दण्डनीति के अन्तगत अपराधी पुरुषो के समान ही जो महिला अपराधियो को दण्ड

दिया जाता है वह उपयोगी नहीं है। अत आवश्यकता है कि महिला अपराधियो के सम्बन्ध मे अपनायी जाने वाली दण्डनीति मे परिवतन होना चाहिए। यह परिवर्तित दण्ड नीति किस प्रकार की होनी चाहिए इसका विवेचन निम्नांकित है—

उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्ति माननीय कृष्णा अय्यर महोदय ने दण्ड नीति पर विचार व्यक्त करते हुए बताया है—

दण्ड देने की प्रक्रिया मनुष्य के अन्दर छिपे हुए मनुष्य की खोज है।'

The process of sentencing is the discovery of man'

अत दण्ड देते समय मानवीय पक्ष को दृष्टिगत रखते हुए दण्ड का उद्देश्य अपराधी मनुष्य को दण्ड की यातना देकर मनुष्यत्व को समाप्त करना नही, अपितु अपराधी पुरुष मे छिपी हुई मानवता को उभार लाना है अपराधी पुरुष से उस मानवता का परिचय कराना है जो उसके अन्दर छिपी हुई है, ताकि अपराधी पुरुष अपने अमानवीय कृत्रिम अपराधी स्वरूप को भूले और अपने स्वाभाविक मानवीय स्वरूप का परिचय पा सके।

बर्नाड शा (Bernard Shaw) महान नाटककार ने दण्डनीति के सम्बन्ध मे अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है—

हम अपराधी को सुधारने हेतु दण्ड देते हैं। दण्ड देने की प्रक्रिया मे हम चोट पहुचाते हैं। क्या हम किसी को चोट पहुचाते हुए उसको सुधार सकते हैं?

We punish to correct while punishing we inflict injuries Can we correct one while inflicting injuries?'

बर्नाड शा द्वारा दण्डनीति के उद्देश्य पर लगाया गया प्रश्न चिन्ह इसका आगे उत्तर ढूढने के लिए प्रेरित करता है। ऐसी दण्डनीति की आवश्यकता पर बल देता है जिसके अन्तगत अपराधी को सुधार कर समाज मे स्थापित करने के उद्देश्य की पूर्ति हो सके। अत दण्ड को केवल दण्ड के लिए नही दिया जाकर दण्ड को अपराधी को समाज म पुनर्स्थापित करने के उद्देश्य से दिया जाना चाहिए यद्यपि इस उद्देश्य से दिये जाने वाले दण्ड की आवश्यकता पुरुष महिला व किशोर सभी अवस्था वाले अपराधियो के लिए समान है तथापि महिला अपराधियो को पुनर्स्थापना के दृष्टिकोण से दिये जाने वाले दण्ड की अधिक आवश्यकता है। अत वतमान निरोधात्मक दण्डनीति सामाजिक सरक्षण के सिद्धान्त पर आधारित होनी चाहिए जिसके अन्तगत दण्ड के निरोधात्मक पक्ष भी सम्मिलित हैं। इस परिवर्तित दण्ड नीति के अन्तगत

दण्ड का उद्देश्य केवल निरोधात्मक न होकर सुधारात्मक होगा। दण्ड का निरोधात्मक पक्ष साधन के रूप में होगा और सुधारात्मक पक्ष साध्य के रूप में।

(2) स्थान (Place)

वर्तमान में महिला अपराधियों को रखने के लिए जो भवन बने हुए हैं वे अधिकतर स्वतन्त्र रूप से नहीं बनाये गये। पुरुष बन्दी कारागार के किसी एक भाग को ही महिला कारागार के रूप में काम में ले लिया जाता है। भारत जैसे विशाल देश में आज केवल तीन ही राज्यों में स्वतन्त्र रूप से महिला बन्दी गृह या सुधारगृह हैं ये राज्य हैं—पंजाब, महाराष्ट्र एवं तामिलनाडु। उत्तर प्रदेश में आदर्श कारागार के एक भाग में नारी निकेतन के नाम से महिला बन्दी गृह है। राजस्थान में भी महिला बन्दी सुधारगृह भवन स्वतन्त्र रूप से बनाया जा रहा है जिसके कुछ माह में ही पूर्ण होने की आशा है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि महिला अपराधियों के लिए स्वतन्त्र भवनों का देश के विभिन्न राज्यों में नितान्त अभाव है। इन परम्परागत भवनों में थोड़ा परिवर्तन करने पर महिला अपराधियों के लिये सुधारात्मक कार्यक्रमों को लागू नहीं किया जा सकता क्योंकि वर्तमान महिला बन्दी गृहों का निर्माण अभिरक्षा के दृष्टिकोण से किया हुआ है न कि सुधारात्मक कार्यक्रमों को लागू करने के दृष्टिकोण से जिससे वर्तमान महिलागृहों में न तो पर्याप्त भावी आवश्यकता युक्त आवासीय व्यवस्था उपलब्ध है और न खुला स्थान। किसी कारागार के किसी वार्ड में महिलाओं को कम से कम बाईस फीट ऊँची चार दीवारों में निरुद्ध कर लिया जाता है जहां उनकी दृष्टि शताब्दियों पूर्व बनी पुरानी दीवारों से टकराकर आपस में ही केन्द्रित हो जाती है न ही इन गृहों में चिकित्सा व्यवस्था व मनोरंजन व अन्य कार्यक्रमों के साधन उपलब्ध होते हैं। इस प्रकार पर्याप्त दमघोंट वातावरण का प्रभाव महिला के मन व मस्तिष्क पर अच्छा नहीं पड़ता। यह वातावरण उनके एकाकीपन व चिन्ताओं को और अधिक बढ़ाता है। वे ऐसे वातावरण में रहकर किसी पुनर्स्थापना कार्यक्रम में रुचि नहीं लेती। इनकी एकमात्र इच्छा ऐसे वातावरण से शीघ्रातिशीघ्र बाहर जाना होती है।

अतः आवश्यकता है कि महिला अपराधियों के पुनर्स्थापना कार्यक्रमान्तर्गत स्वतन्त्र महिला बन्दीगृहों का निर्माण किया जाये जो पुरुष बन्दीगृहों की परिधि में भी न होकर उनसे दूर हों। इन भवनों की वास्तुकला ऐसी हो कि ये बन्दीगृह की तरह दिखाई न दें। इनके निर्माण में कारागार के समान बड़े बड़े लोहे के जंगले व दरवाजे न हों और न ही बाहर गेट पर कोई राइफलधारी सन्तरी खड़ा रहे। जितने

भी सुरक्षा प्रबन्ध हो वे अन्दर ही हो। अन्दर स्वतन्त्रता का वातावरण हो जिसके अन्दर हरियाली हो पेड पौधे व हरी घास के मैदान तथा फूलो की क्यारियां पर्याप्त मात्रा में होना चाहिए। इस प्रकार के सुरम्य प्राकृतिक वातावरण का महिला मन पर बडा स्वस्थ प्रभाव होगा। भवन के अन्दर जो आवासीय स्थान बरकों के निर्माण हो वह पुरुष बन्दीगृह के समान लम्बी कतारो मे न होकर कमरेनुमा होना चाहिए जिसमे तीन चार महिलाओं को एक साथ रखा जा सके। शिक्षा व्यवसाय व मनोरजन के लिए पर्याप्त स्थान उपलब्ध होना चाहिए। दण्डित महिला बन्दी माता के साथ अवयस्क बालको को रखने की भी व्यवस्था होनी चाहिए। इस प्रकार महिला कारागार भवन की बनावट, व्यवस्था एव स्थिति ऐसी हो वहा पर महिलाबन्दी को घरेलू वातावरण जैसा महसूस हो ताकि वह वहा की परिस्थितियो के साथ यथाशीघ्र समायोजित कर सके। मानसिक रोगी व सक्रामक रोग से ग्रसित महिला बन्दियो को अन्य से काफी अलग व दूर रखने का स्थान उपलब्ध हो।

इसके साथ साथ महिला बन्दीगृहो के विभिन्न राज्यो मे विभिन्न नामकरण हैं किन्तु मुख्य रूप से महिलाबन्दी सुधारगृह नारी निकेतन नामो से पुकारे जाते हैं। वस्तुत इन नामा के पीछे जो भावना या उद्देश्य व्यक्त किया जाता है उसकी प्रतिक्रिया समाज मे अच्छी नही है। महिला सुधारगृह नाम देकर यह बताया जाता है कि वस्तुत सारी अन्तर्वासी महिलायें बिगडी हुई हैं जिनको सुधारा जा रहा है। इन नामा का प्रभाव बन्दी महिलाओं के मस्तिष्क पर भी अच्छा नही पडता। उनके चतन्य मस्तिष्क मे यह धारणा घर कर जाती है कि वे समाज व न्याय की दृष्टि मे बुरी महिलायें हैं और उनका सुधार किया जा रहा है। यह मन स्थिति सभी सुधारवादी कार्यक्रम के विपरीत मानसिक प्रतिक्रिया एव प्रतिरोध उत्पन्न करती है जो मनोवज्ञानिक दृष्टिकोण से समायोजन की प्रक्रिया मे बाधक हो सकती है।

वास्तव मे सुधार की प्रभावी प्रक्रिया सदा ही अचेतन प्रक्रिया (unconscious process) होती है, जिसकी यह जानकारी उस व्यक्ति को नही होनी चाहिए जिसको सुधारा जा रहा है। यह मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि किसी भी मानसिक रोगी को मानसिक रोगी नाम से बार-बार पुकारे जाने पर और इस बात का एहसास दिलाते रहने पर कि वह मानसिक रोगी है वह मानसिक रोग निदान मे सहयोग नही कर पाता। यही बात महिलाओ के पुनर्स्थापना हेतु सुधारात्मक कार्यक्रम लागू करने पर भी लागू होती है। इसी प्रकार नारी निकेतन जसे शब्द भी महिलाओ को दया की पात्र के रूप म प्रस्तुत करते हैं। यह दया की भावना भी पतित व पथभ्रष्ट नारी समाज के लिये प्रस्तुत की जाती है जिनके नारी निकेतन जैसी सस्थाओ म रखा जाता है। ऐसे नामकरण वाली सस्था म रहने वाली नारी

के आत्म सम्मान एव अह को ठेस पहुचती है। अत महिला बन्दीगृहो का नाम नारी निकेतन या बन्दी सुधारगृह के स्थान पर महिला प्रशिक्षण केन्द्र (Women Training Centre) या महिला प्रशिक्षण सस्थान (Women Training Institute) या महिला पुनर्स्थापन केन्द्र या महिला गृह रखना उचित होगा। यहा यह बताना उचित होगा कि आस्ट्रेलिया के राज्य न्यू साउथ वेल्स की कारागृहो के नाम भी प्रशिक्षण केन्द्र (Training Centre) रखे हुये हैं।

(3) जन शक्ति (Personnel)

वर्तमान महिला बन्दीगृहो म जिन अधिकारी व कर्मचारियो को नियुक्त किया जाता है उनका मुख्य उद्देश्य महिला बन्दियो को सुरक्षित अभिरक्षा (custody) म रखना होता है। उनके कर्तव्य महिलाओ को इन बन्दीगृहो म निरुद्ध रखना एव कारागार के निर्धारित कार्यक्रमानुसार उनसे काय लेना है। वर्तमान मे बन्दीगृहो म अभिरक्षा से सम्बद्ध स्टॉफ (custodial staff) का ही नियुक्त किया हुआ है। महिला अपराधी पुनर्स्थापना अवधारणा का क्रियान्वित करने के लिए ऐसे स्टाफ की आवश्यकता है जिनका दृष्टिकोण सुधारवादी हो। महिला अपराधियो के सन्दर्भ म कारावासीय दण्ड का प्रथम उद्देश्य सुरक्षित अभिरक्षा (safe custody) एव अंतिम उद्देश्य अपराधी महिला को समाज मे पुनर्स्थापित करना है। सुरक्षित अभिरक्षा एक आवश्यकता है किन्तु एकमात्र आवश्यकता नही है। अंतिम आवश्यकता है— महिला अपराधी का समाज म पुनर्स्थापन। उचित अभिरक्षा साधन रूप है जिसके कारण महिला बन्दी को अभिरक्षा से पलायन करने से रोका जाता है और उसको स्वय को असामाजिक तत्वो से भी अभिरक्षित किया जा सके ताकि उसको समाज मे पुनर्स्थापित करने के लिए कार्यक्रम क्रियान्वित किया जा सके। वर्तमान स्टाफ का दृष्टिकोण सीमित है और वे सुरक्षित अभिरक्षा को ही अपने कर्तव्यो की इति श्री मानते हैं।

अत आवश्यकता इस बात की है कि महिला अपराधियो का पुनर्स्थापित करने के लिए ऐसा स्टॉफ नियुक्त हो जो अभिरक्षा व पुनर्स्थापना दोनो उद्देश्यो की पूर्ति के लिए प्रयत्नशील हो। अभिरक्षा के दृष्टिकोण को ध्यान मे रखकर अभिरक्षा स्टाफ का होना भी आवश्यक है किन्तु इसके साथ-साथ सुधार सेवाओ के लिए अलग स्टाफ की व्यवस्था करनी आवश्यक होगी जिनमे मुख्यत सुरक्षा अधिकारिया एव चिकित्सक के साथ-साथ मनोचिकित्सक केस वर्कर (case worker) शिक्षक पाकाहाराधिकारी व्यावसायिक प्रशिक्षण एव कल्याण अधिकारी आदि का होना आवश्यक है, जो महिलाओ के विविध पुनर्स्थापना सम्बन्धी कार्यक्रमो को क्रियान्वित करेंगे।

इसके साथ-साथ एक आवश्यक विचारणीय बिन्दु यह भी है कि वतमान महिला ब दी गृहो मे अधिकाश कमचारी पुरुष वग होता है जो न तो पूणतया महिलाओ की आवश्यक्ता का समझ पाता है और न ही इनके सुधारवादी कायक्रम म रुचि ले पाता है। महिला बन्दी भी पुरुष अधिकारी एव कमचारियो के सामने अपनी पूरी आवश्यक्ताओ समस्याओ एव कठिनाइयो को नही रख पाती है।

पुनर्स्थापना कायक्रम की सफलता इस बात पर निभर करती है कि महिला ब दियो मे व स्टाफ मे तादात्मय भाव उत्पन्न हो एव भावनात्मक सम्बन्ध स्थापित हो, यह केवल तभी सम्भव हो सकता है जबकि महिला बन्दीगृहो की अभिरक्षा एव सुधार सेवाओं से सम्ब धित सभी अधिकारी एव कमचारी महिलाएँ ही हो जो उनके साथ तारतम्यता (rapport) स्थापित कर सकें, उनकी शारीरिक मानसिक व सामाजिक आवश्यक्ताओ को पूणतया समझकर उनकी पूर्ति करने के प्रयत्न कर सके।

(4) कार्यक्रम (Programmes)

महिला अपराधियो के पुनर्स्थापन हेतु वाछित कायक्रमो को सुविधा के दृष्टि-कोण से तीन भागा मे विभक्त किया जा सकता है—

1 व्यक्तिगत कायक्रम (Individualized Programmes)
2 पारिस्थितिकी कायक्रम (Situational Programmes)
3 सस्थागत कायक्रम (Institutional Programmes)

क्रमानुसार विवरण निम्नाकित है—

1 व्यक्तिगत कायक्रम (Individualized Programmes)—महिला अपराधी पुनर्स्थापन के लिए व्यक्तिगत कार्यक्रमो से तात्पय उन कायक्रमो से है, जो महिला अपराधी की व्यक्तिगत आवश्यकताओ के आधार पर तय किये जाकर लागू किये जा सकते है। इन कायक्रमो के अ तगत मनोचिकित्सक पद्धतियाँ आती ह जिनके द्वारा महिला अपराधी के व्यवहार को इस प्रकार ढाला जाये कि वह आपराधिक वृत्ति को छोड दे। उसके मस्तिष्क पर अपराध करने पर मानसिक बोझ आ जाता है वह दूर हो और वह कारागार के नवीन जीवन मे स्वय को समायोजित कर सके। मुख्यत य विधियाँ दो प्रकार की होती हैं—(1) व्यक्तिगत उपचार पद्धति (2) सामूहिक उपचार पद्धति। व्यक्तिगत उपचार पद्धति भी दो प्रकार की होती है—(अ) व्यवहार परिवतन पद्धति (Behaviour modification method) (ब) यथाथता चिकित्सा पद्धति (Reality Therapy)।

(1) व्यक्तिगत उपचार पद्धति (अ) व्यवहार परिवतन पद्धति—प्रत्येक महिला अपराधी एक व्यक्ति है अर्थात् वह एक स्वतन्त्र व्यक्तित्व है। अत स्वतन्त्र इकाई के रूप मे उसके व्यक्तित्व का अन्वेषण कर यह जानकारी करना आवश्यक है कि वस्तुत महिला अपराधी के आपराधिक व्यवहार की पृष्ठभूमि म कौन से मनोवैज्ञानिक सामाजिक या जविक तत्व रहे हैं जो अभी भी उसके व्यवहार को प्रभावित करते हैं। इस जानकारी के पश्चात् ही महिला अपराधी के आपराधिक व्यवहार को परिवर्तित करने के प्रयत्न किये जा सकते हैं। यह अन्वेषण व्यक्तिगत उपचार पद्धति के अन्तगत व्यवहार परिवतन विधि (behaviour modification method) द्वारा किया जाता है।

(ब) यथार्थता उपचार पद्धति (Reality Therapy)—अपराध करने के पश्चात् महिला का व्यवहार काफी प्रभावित हो जाता है और उसके क्रियाकलाप वास्तविकता से दूर हो जाते हैं। यह मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि महिला स्वभावतया जन्म से अपराधी नही होती और न वह आदतन अपराधी होती है। परिस्थितियों के वशीभूत होकर जब वह अपराध कर बठती है तो उसका मन व आत्मा दोनों ही आपराधिकता क बोझ से दब जाते है। उसका व्यवहार सामान्य नही रह पाता। उसकी विचार प्रक्रिया प्रभावित हो जाती है। अपराध भाव उसके व्यक्तित्व को उद्वेलित कर देता है। वह चिन्ताग्रस्त होकर कुण्ठित हो जाती है और ऐसी मन स्थिति से उसको स्वय का जीवन बोझ स्वरूप प्रतीत होता है। वह अपराध भाव से ग्रसित जीवन की यथार्थता से भागने लगती है। अत ऐसी मन स्थिति के उपचार हेतु यथार्थता उपचार पद्धति (Reality Therapy) काम म ली जाती है जिसके द्वारा उसके व्यक्तित्व की भूली बिसरी रुडियो को वास्तविक जीवन की गतिविधियों से जोडा जाये जिससे वह जीवन की यथार्थता को स्वीकार कर सके एव परिस्थितियों से समायोजन कर सके।

(2) सामूहिक चिकित्सा पद्धति (Group Therapy)—जसा कि कहा गया है और माय भी है कि दु ख मिलकर बठने से कट जाता है। यह बात अपराधी महिलाओं के सम्बन्ध म बहुत अथपूर्ण है। कोई भी महिला अपराधी अपने अन्त करण से अपराध करन के पश्चात् प्रसन्न नही होती। उसको प्रतिशोध लेकर सामयिक सन्तोष अवश्य मिल जाता होगा किन्तु सदा के लिये उसका सुख-चन उससे छिन जाता है। अतीत की कडवी स्मृतियाँ उसको सदा चिन्तित करती रहती हैं अनिश्चित भविष्य उसको और भी दु खी करता है। वह अपने बारे म परिवार के बारे म व सामाजिक मान्यताओं के बारे म चिन्तित रहती है। कारागार का अवसादपूर्ण नीरस जीवन उसके मन को और भी बोझिल बना देता है। यहाँ पर सब अजनबी

व पराये होते हैं यहा तक इनका रहन सहन मान्यताएँ व भाषा तक भिन्न होती है। ऐसे वातावरण मे कोई किसी को अपना माने तो कसे ? मन का बोझ या तो आसू बहाकर कम किया जाये या किसी की सहानुभूति या सान्त्वना प्राप्त कर। अत कारागार अन्त वासिनियो की चिन्ताग्रस्त मनोवृत्ति को दूर करने के लिये सामूहिक उपचार पद्धति (group psycho therapy) काम मे लाई जावे जिसके अन्तगत किसी मनोवैज्ञानिक के पयवेक्षण मे समान रुचि व विचार वाली महिलाओ को समूह बनाकर उनकी पारस्परिक चिन्ताओ व दु खो पर वार्ता करने व उपाय ढूढने के लिए प्रोत्साहित किया जाये तो एक ही मन स्थिति के व्यक्ति परस्पर खुलकर वार्ता कर अपने रहस्य एक दूसरे पर नि सकोच प्रकट कर सकते है। ऐसे समूह मे आपसी सहायता (self help) के आधार पर वे अपनी चिन्ता मुक्ति की युक्तिया भी ढूढ लेती है। इसका लाभ यह है कि महिला बन्दी की वास्तविक मन स्थिति का पता लग जाता है और आपस मे सौहाद्रपूण एव सहानुभूतिपूण वातावरण मे वार्ता करने पर घनीभूत पीडा भी शन शन कम हो जाती है।

परामश एव पथ प्रदशन कायक्रम (Counselling and guidance Programme)—अपराधिया की कारागार म प्रविष्टि के पश्चात् प्रथम आवश्यकता यह है कि वे मानसिक रूप से स्वस्थ रहें कारागार का बन्धनमय जीवन खुले बाहरी सामाजिक जीवन से भिन्न होता है और यहा आने के पश्चात् शारीरिक स्वतन्त्रता पर प्रतिब ध लग जाता है, बाहर से साक्षात्कार भी नियमबद्ध है और भोजन वस्त्र भी व्यक्तिगत इच्छा के आधार पर उपलब्ध नही कराये जाते। सोने व जागने सम्बन्धी समय भी बधा हुआ है। ऐसे वातावरण मे जब कोई महिला बन्दी नई नई आती है तो समायोजन सम्बन्धी समस्या आती है। इस वातावरण मे वह कुण्ठित हो जाती है और वह चिन्ताओ से घिर जाती है। प्रत्येक महिला अपने पीछे सामाजिक उत्तरदायित्व भी किसी न किसी रूप मे छोडकर आ जाती है जिसके लिए वह कारागार म आकर चिन्तित रहती है। कोई महिला अपनी सन्तान के बारे मे चिन्तित रहती है तो कोई अपने पति के बारे मे कोई सम्पत्ति के बारे मे तो कोई बिना सहारे के होती है तो वह सहारा ढूढने के बारे मे चिन्तित होती है तो कोई अपने भविष्य के बारे म चिन्तित रहती है, तो कोई अपने माता पिता के परिवार की प्रतिष्ठा के बारे मे चिन्तित रहती है। इस प्रकार आपराधिकता का बोझ व्यक्तिगत विकार सारी चिन्ताए एव नवीन बन्धनमय जीवन की कुण्ठायें महिला बन्दी की मानसिकता को प्रभावित करती है। अत उनको कारागार जीवन की परिस्थितिया से समायोजित करने के लिए पथ प्रदशन व सलाह की आवश्यकता रहती है जिसका लाभ उठाकर वे वतमान चिन्ताओ से छुटकारा पाने के लिए आशान्वित भविष्य की रूपरेखा तयार करें। इसके लिए समय-समय पर उनको परामर्श

एव माग प्रदशन की आवश्यकता हो सकती है जिसको सस्या म नियुक्त मनोवज्ञानिक प्रशिक्षक व शिक्षक द सकने हृ ।

2 परिस्थिति सम्ब धी कार्यक्रम (Situational Programmes)—पुनर्स्थापना के लिए प्रत्येक महिला अपराधी की वैयक्तिक आवश्यकताओ की जानकारी के पश्चात् यह जानना आवश्यक है कि प्रत्येक महिला अपराधी की सामाजिक आर्थिक व सास्कृतिक आवश्यकताए क्या हैं ? इस जानकारी के आधार पर ही पुनर्स्थापना हेतु कायक्रम तयार किया जा सके । किसी भी महिला के अपराधी व्यक्तित्व की कल्पना बिना वातावरण के नही की जा सकती । अपराधी व्यक्ति के निर्माण म परिवेश का योगदान सर्वाधिक होता है जिसकी जानकारी केस हिस्ट्री विधि द्वारा प्राप्त की जा सकती है ।

केस हिस्ट्री (Case history) विधि—किसी महिला अपराधी के सामाजिक जीवन का अ वेषण (social investigation) करना पुनर्स्थापना के लिए उतना ही आवश्यक है जितना कि यायालय से दण्डित कराने के लिए आपराधिक अ वेषण । प्रत्येक महिला अपराधी क पुनर्स्थापन के लिए केस हिस्ट्री विधि द्वारा यह जानना आवश्यक है कि इस महिला अपराधी का सामाजिक आर्थिक व सास्कृतिक परिवेश कसा है ? वह किस परिवार की सदस्या है उसके परिवार के सम्ब ध कसे हैं वह किस पर आश्रित है उसके सामाजिक उत्तरदायित्व क्या हैं ? उसके पारिवारिक ब धन क्या हैं ? उसके परिवार मे कितने पुरुष सदस्य हैं और उसका उनसे कमा सम्ब ध है ? परिवार मे उसका क्या स्थान है ? क्या मुक्ति के पश्चात् भी परिवार उसको अपना लेगा ? क्या उसकी सन्तान को पूण सरक्षण उपलब्ध है या नहीं ? महिला अपराधी के परिवार की आर्थिक स्थिति कसी है ? क्या महिला अपराधी निधन परिवार से सम्ब धित हैं ? क्या वह निराश्रित है ? क्या उसके परिवार के पास आजीविका के पूण साधन उपलब्ध हैं ? क्या उसको आर्थिक स्वावलम्बनता की आवश्यकता है ? क्या उसका परिवार उसका भार वहन करने मे सक्षम है ? क्या मुक्ति के पश्चात् भी उसको आर्थिक चि तायें नही सतायेंगी ? क्या उसको कारागार म रहकर भी कारागार को आर्थिक सहायता करने की आवश्यकता है ? क्या महिला ब दी को आर्थिक रूप से स्वावलम्बी बनाना आवश्यक है ? उसकी व्यक्तिगत रुचियां क्या हैं ? आदि ।

इसके साथ साथ महिला के सास्कृतिक परिवेश की जानकारी भी करना आवश्यक है । यह जानना आवश्यक है कि महिला ब दी अपराधी के समाज की नैतिक मा यतायें क्या हैं ? उसकी जाति की परम्परायें क्या हैं ? उसका समाज किस

सांस्कृतिक मूल्यों एवं आदर्शों में विश्वास रखता है? उसके समाज में कौनसा आचरण क्षम्य एवं सहनीय है? उसके समाज में व्यक्ति के विकास या उसको कल्याण के लिए कौन से साधन वध माने गये है? उसके समाज की साहित्यिक एवं कलात्मक मान्यतायें क्या है और उसका समाज किन गुणों का आदर करता है?

केस हिस्ट्री विधि के माध्यम से प्रत्येक महिला अपराधी के बारे में एकत्रित सामाजिक परिवेश सम्बन्धी सूचना के आधार पर ही प्रत्येक महिला अपराधी की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, भावनात्मक कलात्मक आवश्यकताओं की जानकारी मिल सकती है जिसकी पूर्ति करने पर ही उनका पुनर्स्थापन सम्भव हो सकता है।

3 संस्थागत कार्यक्रम (Institutional Programmes)—महिला अपराधी की वयक्तिक व सामाजिक आवश्यकताओं की जानकारी के संदर्भ मे कारागारों में किस प्रकार के कार्यक्रम चालू किये जायें? इस सम्बन्ध मे निम्नांकित संस्थागत कार्यक्रम प्रस्तावित किये जाते है—

(1) **महिला अपराधी वर्गीकरण** (Classification of Woman Offenders)—अपराधी महिलाओं की पुनर्स्थापना के लिए संस्थागत प्रथम आवश्यकता यह है कि महिला अपराधियों को समुचित रूप से वर्गीकृत किया जाये। प्रथमतः विचाराधीन महिला अपराधियों का सिद्ध दोष महिला अपराधियों से अलग रखा जाय। इसी प्रकार बीमार महिला अपराधियों को स्वस्थ महिला अपराधियों से अलग रखा जाय। साथ मे यह परम आवश्यक है कि यौन तस्करी तथा चोरी जसे अपराधों से सम्बद्ध महिलाओं को अन्य प्रकार की महिला अपराधियों से अलग रखा जाये। युवा किशोर व वयस्क महिला अपराधियों को उन महिला अपराधियों के सम्पर्क में नहीं आने दिया जाये जो कि वेश्यालय शराब के अड्डे चलाने वाले अपराध से सम्बद्ध है।

इसके साथ साथ समान आवश्यकता व रुचि के अपराधियों को एक साथ सामूहिक रूप से रखना उचित होगा ताकि समरूप कार्यक्रम लागू किये जा सकें। यह वर्गीकरण संस्था प्रभारी मनोवैज्ञानिक चिकित्सक केस वर्कर शिक्षक एवं प्रशिक्षक मिलकर कर सकते हैं।

(2) **व्यावसायिक प्रशिक्षण** (Vocational Training)—महिला अपराधियों के बारे मे व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रम निर्धारित करते समय हम उनको तीन वर्गों मे विभाजित कर सकते हैं (अ) कमजोर आर्थिक पृष्ठभूमि वाली अपराधिक महिलायें। (ब) मध्यम आय वर्ग से सम्बन्धित महिलायें। (स) सुदृढ़ आर्थिक पृष्ठभूमि वाली महिलायें।

प्रथम वर्ग की कमजोर आर्थिक पृष्ठभूमि वाली महिलाओं को ऐसे व्यावसायिक प्रशिक्षण की आवश्यकता है कि जिससे वे आर्थिक रूप से स्वावलम्बी बन सकें। कारागार में व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त कर अधिक कार्य कर अपने परिवार के लिए भी कुछ बचाकर भेजें और कारागार से मुक्ति के पश्चात् स्वतंत्र व्यवसाय कर अपना व आश्रितों का भरण पोषण कर सकें। ऐसी महिलाओं के लिए कारागृहों में पारिश्रमिक योजनाएँ चालू करना होगा जिनके अन्तर्गत कार्य कर महिलाएँ कुछ राशि कमा सकें और परिवार के लिए भी कुछ राशि भेज सकें। उदाहरणार्थ—राजस्थान की कारागारों में यह योजना चालू है जिसके अन्तर्गत निर्धारित कार्य से अधिक कार्य करने वाले बन्दी को अधिक कार्य के लिए पारिश्रमिक रूप में राशि दी जाती है। इस योजना का लाभ सिद्ध दोष पुरुष व महिला बन्दी समान रूप से उठा सकते हैं। हमारे विचार से महिला बन्दियों को उनके द्वारा किये गये कार्य पर भी पारिश्रमिक राशि दी जानी चाहिए पुरुषों के समान अधिक कार्य करने वाली शर्तें महिलाओं पर लागू नहीं की जानी चाहिए। इसका लाभ यह होगा कि महिला द्वारा इस प्रकार कार्य करने से अर्जित राशि उसके अभावग्रस्त परिवार के लिए बड़ा सम्बल होगा और परिवार की सहायता करते रहने पर महिला मानसिक रूप से सन्तुष्ट रहेगी तथा परिवार भी उसकी आवश्यकता महसूस करता रहेगा।

दूसरे वर्ग की महिला अपराधियों को पूर्ण रूप से आर्थिक स्वावलम्बन की आवश्यकता तो नहीं रहती, किन्तु फिर भी व्यावसायिक प्रशिक्षण देने पर उनमें आत्म निर्भरता की भावना उत्पन्न होती है। परिवार की आय में वृद्धि करने पर परिवार में उनकी प्रतिष्ठा बढ़ सकती है। इसके साथ साथ इस वर्ग की महिलाओं को इस प्रकार के व्यवसायों में भी प्रशिक्षण दिया जा सकता है जिससे कि वे पारिवारिक आवश्यकताओं की चीजें—वस्तुएँ घर पर तैयार कर सकें।

तीसरे वर्ग की महिलायें जो आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न हैं उनको व्यावसायिक प्रशिक्षण की आवश्यकता अर्थ कमाने व परिवार द्वारा सहयोग देने के कारण नहीं हो सकती। ऐसी महिलाओं के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम उनको व्यस्त रखने के लिए दिया जाना आवश्यक है किन्तु उनको दिया गया कार्य कलात्मक प्रवृति का हो ताकि उसको कर वे अपनी सृजनशीलता की प्रवृत्ति को सन्तुष्ट कर सकें। ऐसी वर्ग की महिलायें अन्य दोनों वर्ग की महिलाओं से अपने को बड़ा समझ सकती हैं। अतः इस भावना को स्वभाव में बदलने के लिए उनको व्यावसायिक प्रशिक्षण दिया जाना आवश्यक है किन्तु इस प्रशिक्षण का उद्देश्य पारिश्रमिक कमाना न होकर अपने मन को सुरुचिपूर्ण कलात्मक काम में लगाना हो।

उक्त तीनों वर्ग की महिलाओं के व्यावसायिक प्रशिक्षण तय करने के पूर्व वर्तमान में बन्दी गृहों में प्रचलित व्यवसायों पर दृष्टिपात करना होगा। वर्तमान महिला गृहों में सूत खोलना, टेप बुनाई निवार बुनाई प्रहरी वर्दी में काज बटन करना आदि हैं। हाबी वर्क में कढाई-बुनाई का काम सिखाया जाता है। वर्तमान व्यावसायिक प्रशिक्षण अपर्याप्त है।

महिला अपराधी पुनर्स्थापन के लिए ऐसे व्यवसायों का प्रशिक्षण दिया जाना होगा जो समाज की मूलभूत आवश्यकताओं से जुड़े हों जिनकी बाजार में मांग हो, जिनको सीखने पर आसानी से समाज में काम मिल सके जिसको करने पर महिला को इतनी आय हो कि वह अपनी आजीविका आसानी से कमा सके। प्रथम वर्ग की आर्थिक रूप से निबल महिला वर्ग के लिए सिलाई कढाई ऊन से वस्त्र बुनाई, साबुन बनाना तेल बनाना खिलौने बनाना मोमबत्ती बनाने के काम में महिला बन्दियों को प्रशिक्षण दिया जा सकता है। दूसरे वर्ग की महिलायें जो मध्यम आय वर्ग से सम्बन्धित हों उनको गृह कार्य में दक्ष करना आवश्यक है ताकि वे परिवार को सुनियोजित ढंग से चला सकें। इनके लिए पापड मगोडी बनाना बुनाई कढाई कशीदाकारी कार्य पोषाहार कार्यक्रम शिशुपालन आदि का प्रशिक्षण दिया जाये। इस वर्ग की शिक्षित महिलाओं को सेवा प्रशिक्षण अध्यापन प्रशिक्षण टंकण प्रशिक्षण परिचारिका प्रशिक्षण आदि दिये जा सकते हैं। महिलाओं में स्काउटिंग की भावना उत्पन्न करना भी आवश्यक है जिसके लिये सेवा कार्यों में उनको लगाया जाये।

तृतीय वर्ग की महिलाओं को सुरुचिपूर्ण कलात्मक कार्य में प्रशिक्षण देना आवश्यक है। ऐसी महिलाओं के लिए चित्रकारी कशीदाकारी गृह कार्य में दक्षता पाक शास्त्र आदि में प्रशिक्षण देना उपयुक्त होगा।

(3) शिक्षा (Education)—अपराधी महिलाओं को दी जाने वाली शिक्षा का उद्देश्य सैद्धान्तिक होने के स्थान पर व्यावहारिक होना आवश्यक है। अशिक्षित महिलाओं के लिये प्रौढ शिक्षा कार्यक्रम लागू करना उपयुक्त होगा। सामाजिक शिक्षा एक व्यापक कार्यक्रम है जो प्रौढ शिक्षा कार्यक्रम को भी सम्मिलित करता है। प्रौढ शिक्षा कार्यक्रम का उद्देश्य लिखना पढना, हिसाब करना आदि सिखाना होता है जबकि सामाजिक शिक्षा अक्षर व शब्द ज्ञान के साथ-साथ व्यक्ति में सामाजिक चेतना जाग्रत करती है। शिक्षा का मूल उद्देश्य हमारे दृष्टिकोण से व्यक्ति में आत्म निर्भरता आत्मविश्वास आत्मविवेचन एवं आत्मसम्मान की भावनायें उत्पन्न करना है। महिला अपराधियों को इस प्रकार की शिक्षा दी जानी उचित होगी जिससे उनको अक्षर ज्ञान भी हो अंक ज्ञान भी हो, इनके साथ साथ उनको समाज

मे अपने स्थान कर्त्तव्य एव अधिकारो की जानकारी हो उनको शिक्षा के माध्यम से यह सिखाना आवश्यक होगा कि भारतीय समाज मे नारी की वास्तविक भूमिका क्या है ? उसमे यह सामाजिक चेतना जगानी होगी जिससे कि वह अपने कर्त्तव्यो के प्रति सजग हो और अपने अधिकार क्षेत्र को भी जान सके । नैतिक शिक्षा को भी महिलाओ के शिक्षण पाठयक्रम मे सम्मिलित करना होगा । महिलाओ की आयु व रुचि के अनुसार शैक्षणिक कार्यक्रम निर्धारित करना होगा । महिलाओं के दृष्टिकोण को अधिक व्यापक करने के लिए उनको धार्मिक व ऐतिहासिक एव राष्ट्रीय महत्ता के स्थानो का भ्रमण कराया जा सकता है ।

(4) सामुदायिक जीवन मे भाग लेना—कारागार मे महिला अपराधी का आवास अस्थाई है उसका स्थाई वास तो उसी समाज, समुदाय व परिवार मे है जहाँ से वह कारागार मे आई है और जहाँ पुन उसे उसी समाज समुदाय व परिवार मे लौट जाना है । पेड से कटकर डाली सूखती ही है । वह प्राकृतिक व नैसर्गिक रूप मे हरी तभी रह सकती है जबकि उस पेड से पुन उसे जोड दिया जाये । यही बात महिला अपराधियो पर लागू होती है । महिला अपराधी रूपी कटी डाली को हम जीवित कारागार मे अवश्य रखते हैं किन्तु उसको पुष्पित व पल्लवित नही कर सकते जब तक कि उसको सही स्थान पर नही रखा जाय । अत आवश्यक है कि महिला अपराधी को सामुदायिक जीवन मे भाग लेने के लिए उसे समय समय पर सुविधायें दी जाती रहे । महिला बन्दियो के साक्षात्कार के लिए आने वाले सम्बन्धियो के लिए पुरुष बन्दी के साक्षात्कार के समान दिन निश्चित न हो । उनका प्रत्येक दिन कारागार मे साक्षात्कार की सुविधा बिना किसी रुकावट के दी जानी चाहिए । उनके साक्षात्कारकर्त्ता के लिये यदि सम्भव हो तो निश्चित सख्या मे नि शुल्क यात्रा करने के लिए प्रावधान किया जाना चाहिए । महिला बन्दियो के लिये साक्षात्कार का समय भी पुरुष बन्दियो की अपेक्षा अधिक होना चाहिए । महिला अपराधियो का पत्र व्यवहार की सुविधा यथावश्यक होनी चाहिए ।

महिला बन्दी पारिवारिक जीवन से दूर न हो वह अपने प्राकृतिक वातावरण को न भूल जाये इसके लिए आवश्यक है कि महिला बन्दी को परिवार के विवाह आदि उत्सवो मे सम्मिलित होने बीमार परिवारजनों की सेवा सुश्रुषा करने व किसी निकटतम सम्बन्धी की मृत्यु होने पर परिवार की व्यवस्था ठीक करने के लिए कारावास कालीन अवकाश प्रदान किया जाय और यात्रा व्यय भी विभाग द्वारा वहन किया जाये ।

पुरुष बन्दियों के समान महिला बन्दियो को खुले शिविरो मे रखकर पुन-र्स्थापित नहीं किया जा सकता, क्योंकि भारतीय महिला सदा से सरक्षण व आत-

म्बन प्रिय है। खुले शिविरो मे इनकी सुरक्षा का प्रश्न आता है जिसकी व्यवस्था करने मे अनेको प्रश्न उत्पन्न हो जाते हैं किसी एक के साथ महिला बंदियो को खुले शिविर मे रखने का विचार व्यावहारिक नही हो पाता। अत हमारे विचार से महिला बन्दियो के लिए खुले शिविरा के स्थान पर कायकारी महिला प्रवास व्यवस्था हो जहा पर अन्य कायकारी महिलाओ के साथ इनको भी रखकर व्यावसायिक काय कराय जायें जिससे कि उनके व परिवार दोनो के बीच कारावासीय काल मे कडी स्थापित हो सके जहाँ कारावास के कृत्रिम वातावरण से दूर रहकर वह स्वावलम्बी, आत्मनिर्भर आत्मविश्वासी हो सके। जहाँ पर उसको परिवारजनो से अधिकाधिक सम्पर्क करने की छूट हो। महिला बदियों को समय समय पर नैतिक धार्मिक एव सास्कृतिक कायक्रमो मे भाग लेने की छूट दी जानी चाहिए। महिला बन्दियो को किसी सामाजिक या राजकीय उत्सवो के अवसरो पर स्काउटिंग के अनुरूप स्वेच्छा-चारी सेवायें करने का अवसर प्रदान किया जाना चाहिए।

(5) कलापूर्ण एव उदात्तीकरण कार्यक्रम—*काम भावना जीवन की एक* प्राथमिक आवश्यकता है। फ्राईड का यह कथन सभी प्राणियो पर समान रूप से लागू होता है महिला अपराधी भी इसका अपवाद नही हो सकती। काम इच्छा एक जविक भूख है जिसकी तुष्टि सामान्य व्यवहार व मानसिक स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। अत महिला अपराधियो के मानसिक स्वास्थ्य को ठीक रखने के लिए उनकी काम इच्छाओ को उदात्त करना होगा। काम इच्छाओ के उदात्तीकरण का अथ यह है कि निम्न कोटि की इच्छाओ को सुसस्कृत ढग से प्रकट किया जाय। उदाहरणाथ—काम की इच्छा जो शारीरिक भूख है और जिसकी तुष्टि शारीरिक सम्पर्क से होती है उन इच्छाओ को जसे सगीत नृत्य चित्रकारी आदि कलाओ के माध्यम से प्रकट किया जा सकता है। यह प्रस्तुतीकरण काम इच्छाओ का प्रतीकात्मक प्रस्तुती-करण है।

अत पुनस्थापना के दृष्टिकोण से स्वस्थ मानसिकता के लिए आवश्यक है कि उदात्तीकरण के माध्यम से महिलाओ मे निम्न काम भावनाओं को चित्रकारी सगीत नृत्य आदि कलात्मक क्रियाओ द्वारा प्रकट कराई जाये जिनके लिए महिला गृहा मे सगीत चित्रकारी, नृत्य व खेल खेलन आदि सीखने की सुविधायें दिया जाना होगा।

(6) पारितोषिक एव छूट (Rewards and Concessions)—यह मनो वज्ञानिक सत्य है कि व्यक्ति वह व्यवहार अधिक जल्दी सीखता है जिसके करने पर उसको पुरस्कृत किया जाता हो व्यक्ति वह व्यवहार करना नहीं सीखता जिसका

करने पर उसको दण्डित किया जाता है। यह सीखने का स्वीकारात्मक सिद्धान्त महिला अपराधियों को समाजोन्मुखी सामान्य व्यवहार सिखाने में अत्यन्त लाभकारी सिद्ध हो सकता है। वर्तमान में सद्व्यवहार सीखने व करने के उपलक्ष में पुरुष बन्दियों को भी सजा में छूट दी जाती है जिसकी सीमा निर्धारित है। इस प्रावधान के परिणाम अच्छे निकलते है, किन्तु हमारे दृष्टिकोण से यह पर्याप्त नहीं है। आशानुरूप परिणाम मनुष्य को प्रतीक्षारत बना देते हैं। अप्रत्याशित लाभकारी परिणाम मनुष्य को सच्ची लगन उत्साह व मेहनत करने के लिए प्रेरित करते हैं। महिला अपराधियों के सम्बन्ध मे इस परिणाम की प्राप्ति अनिश्चितकालीन दण्ड नीति (Indeterminate Sentencing Policies) लागू करने पर की जा सकती है। महिला अपराधी के व्यवहार में आशातीत परिवर्तन हो सकते हैं यदि उसको यह विश्वास दिलाया जाय कि उसकी कारागार से मुक्ति कभी भी हो सकती है, यदि वह पुनर्स्थापन कार्यक्रम में पूर्ण रूप से भाग लेकर अपने आपको पुनर्स्थापित के योग्य बनाती है। इसके साथ कारागार पुनर्स्थापना कार्यक्रम मे रुचि लेकर अपने को जल्दी पुनर्स्थापना के योग्य बनाने वाली अपराधी महिलाओं को पारितोषिक रूप मे समय-समय पर कारावास कालीन अवकाश बिना उनकी प्रार्थना के भी दिया जाता रहे तो वे और अधिक रुचि उत्साह व मन से पुनर्स्थापना कार्यक्रमों मे भाग लेंगी।

(7) उत्तर रक्षा सेवा कार्यक्रम (After Case Programmes)—महिला अपराधी पुनर्स्थापना के लिए अन्तिम कार्यक्रम उत्तर रक्षा सेवाएँ है जिनके अभाव में पूरा संस्थागत उपचार कार्यक्रम निष्फल हो सकता है। महिला को समाज में आत्म-निर्भर बनाकर पुनर्स्थापित करने से ही पुनर्स्थापन उद्देश्य की इतिश्री नहीं है। महिला को कारागार से मुक्ति के पश्चात् एक परिवार मे पुनर्स्थापित करना है एक समुदाय मे पुनर्स्थापित करना है एक जाति मे पुनर्स्थापित करना है। महिला बन्दी को न केवल समाज में एक उत्तरदायी सदस्य के रूप में ही पुनर्स्थापित करना है अपितु उसको भावनात्मक रूप से भी जोडना है। उसका समाज में ... आलोचना व तिरस्कार से भी बचाना होगा। जिसके लिए आवश्यक है, ... तो के दृष्टिकोण को बदला जाये, जाति की मान्यताओं की जकडन ... या जाये व समाज की मान्यताओं को महिला अपराधी के ...

उपसंहार

इस सम्पूर्ण विवेचन मे स्पष्ट है कि महिला अपराध के घेरे मे है। महिला के विरुद्ध अपराध किये जाते हैं महिलाओ के कारण अपराध होते हैं, महिला स्वय भी अपराध करती है।

महिला को अपराध के घेरे से बाहर निकालना होगा। महिला के प्रति किये जा रहे महिला के लिये किये जा रहे व महिला द्वारा किये जा रहे अपराधो को नियन्त्रित किया जाना होगा। स्वय महिला को अपराध करने से रोकना होगा व अपराध करने की त्रासदी से त्राण दिलाया जाना होगा।

सामान्यतया अपराध निवारण व नियन्त्रण क्षेत्र मे यह महसूस किया जाता रहा है कि केवल मात्र कठोर कानून पारित करने से अपराध निवारण व नियन्त्रण सम्भव नही है जब तक कानून की पालना करने वाले विधि तन्त्र व कानून की पालना की उपयोगिता के बारे मे चेतनापूर्ण वातावरण नहो बनाया गया हो महिला अपराध निवारण व नियन्त्रण के सन्दर्भ मे भी यह बात सम्यक् मानी जाती है।

15 फरवरी 1988 को नई दिल्ली म फेमिली वाइलेन्स अगेन्स्ट वीमेन (महिलाओ के विरुद्ध पारिवारिक अत्याचार) विषय पर गोष्ठी आयोजित की गई जिसम एकीकृत मानवीय विकास भारतीय सेवाएँ प्रतिष्ठान (इन्टेग्रेटेड ह्यूमन डिवलपमन्ट सर्विसेज फाउण्डशन आफ इण्डिया) की निदेशक श्रीमती प्रमिला कपूर, माननीय उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्ति डी ए दसाई, श्रीमती सुशीला रोहतगी मिनिस्टर ऑफ एनर्जी भारत सरकार, श्रीमती मारगेरेट अलवा मन्त्री भारत सरकार श्रीमती आजाद आदि न प्रमुख वक्ताओ के रूप में विचार व्यक्त किये।

वक्ताओ के विचारानुसार महिला के विरुद्ध परिवार म अत्याचार अनेक प्रकार से किया जाता है, जिसका मुख्य कारण महिला की आर्थिक निर्भरता है।

भारतीय पारिवारिक समाज सरचना में महिला आर्थिक रूप से पुरुष आजीविका पर निभर है वह कमाता है, वह खच करती है, वह गृहस्वामी है वह गृह लक्ष्मी है घर म जो कुछ पुरुष लाता है उस पर उसका अधिकार है। वह घर मे कुछ नही लाती। अत उसे घू घट निकाल कर रहना पडता है घूमना पडता है बाहर निकलना पडता है चलना पडता है। आर्थिक दासी की यह विवशता है जिसके कारण ही उस पर अत्याचार होते हैं और उसे जाल मे फसी हिरणी की तरह सहना पडता है।

न्यायमूर्ति डी ए देसाई के मतानुसार सभ्यता के प्रादुर्भाव के साथ ही नारी शोषण व नारी के प्रति अत्याचार की सामाजिक स्थितिया उत्पन्न कर दी गई, जिनको नारी सदा मूक दशक की तरह देखती रही और उसन कभी सगठित होकर विद्रोह नही किया। वही स्थिति आज भी है जबकि नारी के साथ हर क्षेत्र म भेद-भाव किया जाता है चाह वह समान अवसरो का क्षेत्र हो चाहे सम्पत्ति उत्तराधिकार का। यही नही नारी पर अनेक अत्याचार किये जाते हैं उसको पीटा जाता है विवश नारी के साथ बलात्कार किया जाता है और कई प्रकार से प्रताडित किया जाता है तथा दहेज न लाने पर मार तक दिया जाता है। मूक दशक नारी सदा ही पुरुष समाज व्याधि का शिकार बनी है। शिक्षा के क्षेत्र म समान अवसर न दिये जाने के फलस्वरूप नारी को आर्थिक आत्मनिभरता व स्वावलम्बन के अधिकार नही मिल पाते जिससे वह आर्थिक रूप से पुरुष आश्रिता रहकर अ याय व अत्याचार को चुपचाप सहती है।

जस्टिस देसाई के अनुसार महिला सरक्षण के लिये बनाये कानून केवल मात्र कागजी हैं क्योकि न्याय पाने के लिये महिलाओ को लम्बी कानूनी प्रक्रियाओ से गुजरना पडता है अ यमनस्क याय पालक का सामना करना पडता है। महिला मानसिकता शिकायत न कर चुपचाप अन्याय सहने की है जिसके फलस्वरूप वह विद्रोह न कर, चुपचाप अत्याचार व अन्याय सहन करना अधिक पसन्द करती है।

श्रीमती सुशीला रोहटगी राज्य मन्त्री, ऊर्जा विभाग भारत सरकार ने अध्यक्षीय भाषण मे विचार व्यक्त किये कि नारी अत्याचार उत्पीडन जसी बुराई को समाज मे कानून द्वारा समाप्त करना सम्भव नही ह। कानून बनाने से अधिक महत्त्वपूर्ण है जन-जागृति व जन चेतना जागृत करना उन सब बुराइयो के प्रति जो नारी उत्पीडन मूलक हैं और पुरुष मनोवृत्ति के प्रति जो कि पुरुष को सहारा देने

वाला होने के स्थान पर अत्याचारी बनाती है। स्वर्गीया श्रीमती इंदिरा गांधी के विचारों म विश्व म सबस बडा अल्पसंख्यक समुदाय, नारी समुदाय है नारी वर्ग की क्षमता के पुष्पों को पूर्ण रूप से खिलने से सदा रोका जाता रहा उन पर वैचारिक व अभिव्यक्तात्मक अत्याचार किये जाकर।

उद्घाटन भाषण म बोलते हुए श्रीमती मारगेरेट अलवा मन्त्री नारी उत्थान व कल्याण विभाग भारत सरकार ने विचार व्यक्त किये कि केवल मात्र कानून का होना ही पर्याप्त नही जब तक कि महिलाओं को यह जानकारी नही हो कि उनके सरक्षण के लिये कानून बने हुए हैं। इन कानूनो की जानकारी छोटे से छोटे स्तर की पुलिस महिला कर्मचारी को भी हो जिसका उपयोग महिला द्वारा शिकायत किये जाने पर केस रजिस्टर करने व अन्वेषण करने मे कर सके। इस काय हेतु भारत सरकार का महिला कल्याण मन्त्रालय महिलाओ के लिए पैरा लीगल ट्रेनिंग समानान्तर कानूनी प्रशिक्षण काँसलिंग सेन्टर (सलाह केन्द्र) स्थापित करने पर विचार कर रही है। एक पुस्तक वेमेन एण्ड दी ला (महिला एव कानून) का प्रकाशन विचाराधीन है, जिसम महिलाओ को कानूनी मार्गदर्शन अपनी आवश्यकतानुरूप मिलेगा। उनके अनुसार महिलाओ का न्यायपालिका म अधिक प्रतिनिधित्व देने की आवश्यकता है।

डॉ नन्दिनी आजाद (इन्स्टीटयूट आफ वीमेन्स डवलपमेन्ट एण्ड चिल्ड्रेन्स वेलफेयर) ने महिला उत्पीडन निवारक दीर्घकालिक व अल्पकालिक उपाय बताते हुए कहा कि प्रथम तो सदियो से चले आ रहे परिवार काय विभाजन मे जो नारी को काय दिये जा रहे हैं उनका परिवर्तन आवश्यक है। बालक का सामाजीकरण करते समय महिला बालक के कार्यों का सकारात्मक चित्र प्रस्तुत करना होगा। सदियो से चले आ रहे चूल्हे-चक्की सफाई के कार्यों को ही महत्त्व नही दिया जाना चाहिये। राष्ट्रीय नीति बनाई जाये जिसम नारी के सामान्य कमजोर स्थिति को सावजनिक रूप से प्रदर्शित करने पर रोक लगनी चाहिये। गभ मे भ्रूण परीक्षण पर रोक लगायी जानी चाहिये। पुरुष द्वारा पत्नियो की पिटाई के सन्दभ में कठोर कानून बनाया जाये जिसकी पालना हेतु पुलिस को सवेदनशील बनाया जाना चाहिये।

सन्दर्भित विचारशाला मे जो विचार नारी उत्पीडन अत्याचार के विरुद्ध व्यक्त किये गये, वे नारी उत्पीडन रोकथाम के सन्दभ म महत्त्वपूर्ण हैं। सामाजिक चेतना, कानूनी चेतना व आर्थिक आत्मनिभर चेतना नारी उत्पीडन व नियन्त्रण के सन्दभ मे अत्यन्त प्रभावी व महत्त्वपूर्ण हैं। साथ म नारी के लिये किये जा रहे

अपराध नियन्त्रण के सन्दर्भ मे स्वय नारी चेतना जागृत करने की आवश्यकता है कि वह अपराध का हेतु न बने वह समाज मे अपनी सकारात्मक मूल्य प्रेरक भूमिका अभिनीत करे। अन्त म अपराधी नारी जो अपराध के भवरजाल मे फस गई है उसकी मानसिकता का उपचार कर अपचार से बचाई जाय व समाज मे पुनस्थापित किया जाये।

नारी अपराध के सन्दम म अपराध वृत्त को आवृत करने हेतु क्या करना होगा ? नारी क प्रति सामाजिक दृष्टिकोण को वदलना आवश्यक है। नारी को दासी न मान कर सहयोगी मानना होगा। नारी को सही अर्थों मे समानता व समता का गौरवमय पद समाज मे दना होगा। नारी की मानसिकता मे बदलाव लाने की आवश्यकता है।

नारी उत्पीडन का समाप्त करना होगा। नारी उत्पीडन सम्बन्धी कानून और कठोर बनाये जाने हाग नारी के शोषण को रोकना होगा। नारी के मानसिक स्वास्थ्य की भी रक्षा करनी होगी नारी को स्वावलम्बी बनाना होगा उसको यह विश्वास दिलाना होगा कि वह गृहस्थ जीवन रथ का सुदृढ पहिया है जिसके बिना पारिवारिक जीवन रथ आगे नही बढ सकता उसका कार्यक्षेत्र चूल्हा चक्की तक सीमित नही अपितु समाजप्रिय चारित्रिक व्यक्तित्व निर्माण ही है उसको अपनी सतान को राष्ट्रीय चारित्रिक गुणसम्पन्न व्यक्तित्ववान बनाना होगा। नारी मे जन चेतना लाना होगा। अस्तित्व बोध करना होगा। अपराध का हेतु बनने वाली अपराध की उत्प्रेरक प्रेरक बनने वाली नारी को समझाना होगा। उसकी भूमिका सामाजिक व्यवस्था व अनुशासन बनाने मे ही श्रेयस्कर होगी ऐसी चेतना जागृत करनी होगी।

अपराधी नारी के कल्याण के सन्दभ मे उस विचलन/फिसलन को समाप्त करने हुतु नारी को समाज की मुख्य धारा से पुन जोडना होगा उनमे खोया आत्म-विश्वास पदा करना होगा उसको आत्मबल की पहिचान करानी होगी समाज मे उसकी उपयोगिता है समाज उसको चाहता है। उसको यह विश्वास दिलाना होगा। समाज मे उसको पनर्स्थापित करना होगा। समाजोपयोगी बनाना होगा। उसको आर्थिक रूप से स्वावलम्बी बनाना होगा। जीवन मूल्यो का मूल्याकन करना सिखाना होगा। अच्छे व बुरे की पहिचान शुभ व अशुभ का ज्ञान कराना होगा। आत्म बोध। अस्तित्व बोध मानवीय मूल्यो के सन्दभ मे एक साफ सुथरा अनुराग-मय जीवन जीने का आत्मविश्वास पदा करना होगा। अन्तमन के तार लयबद्ध होकर झकृत हो जिससे सरस जीवन रागिनी प्रस्फुटित हो। ऐसे भावनात्मक

जीवन जीने के लिये प्रेरित करना होगा। सहिष्णुता साहस व प्रतिरोध के गुण उत्पन्न करने होंगे। समाज के प्रति सच्चा विश्वास पदा करना होगा। सामाजिक व्यवस्था मूल्य व मानदण्डों के प्रति आस्था विश्वास व श्रद्धा उत्पन्न करनी होगी।

मनुष्य जीवन कितने तप व तपस्या के बाद प्राप्त होता है उसको निरर्थक नही जाने देना है, अपितु सार्थक बनाना है—एसा विश्वास नारी म जाग्रत करना होगा। हमारे सारे विधिक तन्त्र, सामाजिक व्यवस्था सांस्कृतिक संस्थाए, धार्मिक मान्यताओं को एक साथ नारी उत्थान नारी कल्याण नारी सरक्षण म योगदान देना होगा। नारी को बचाना होगा समाज को बचाना होगा नारी का सशक्त बनाकर समाज को सशक्त बनाना होगा।